वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

Pedagogy of Sanskrit

संस्कृत का शिक्षण शास्त्र

पाठ्यक्रम अभिकल्प समिति

संरक्षक	अध्यक्ष
प्रो. अशोक शर्मा	**प्रो. एल.आर. गुर्जर**
कुलपति	निदेशक (अकादमिक)
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा	वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

संयोजक एवं सदस्य

** संयोजक	* संयोजक
डॉ. अनिल कुमार जैन	**डॉ. रजनी रंजन सिंह**
सह आचार्य एवं निदेशक, शिक्षा विद्यापीठ	सह आचार्य एवं निदेशक, शिक्षा विद्यापीठ
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, **कोटा**	वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

सदस्य

प्रो. (डॉ) एल.आर. गुर्जर	**प्रो. जे. के. जोशी**
निदेशक (अकादमिक)	निदेशक, शिक्षा विद्या शाखा
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा	उत्तराखंड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी
प्रो. दिव्य प्रभा नागर	**प्रो. दामीना चौधरी (सेवानिवृत्त)**
पूर्व कुलपति	शिक्षा विद्यापीठ
ज.रा. नागर राजस्थान विद्यापीठ विश्वविद्यालय, उदयपुर	वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा
प्रो. अनिल शुक्ला	**डॉ. रजनी रंजन सिंह**
आचार्य शिक्षा ,	सह आचार्य एवं निदेशक, शिक्षा विद्यापीठ
लखनऊ **विश्वविद्यालय**, लखनऊ	वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा
डॉ. अनिल कुमार जैन	**डॉ. कीर्ति सिंह**
सह आचार्य, शिक्षा विद्यापीठ	सहायक आचार्य, शिक्षा विद्यापीठ
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा	वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा
डॉ. पतंजलि मिश्र	**डॉ. अखिलेश कुमार**
सहायक आचार्य, शिक्षा विद्यापीठ	सहायक आचार्य, शिक्षा विद्यापीठ
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा	वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

*डॉ. रजनी रंजन सिंह,सह आचार्य एवं निदेशक, शिक्षा विद्यापीठ 13**.06.2015** तक

डॉ. अनिल कुमार जैन ,सह आचार्य एवं निदेशक, शिक्षा विद्यापीठ14 **.06.2015 से निरन्तर

आभार

प्रो विनय कुमार पाठक .

पूर्व कुलपति

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

अकादमिक एवं प्रशासनिक व्यवस्था

प्रो. अशोक शर्मा	**प्रो .एलगुर्जर .आर.**
कुलपति	निदेशक (अकादमिक)
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा	वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा
प्रो. करण सिंह	**डॉ. सुबोध कुमार**
निदेशक	अतिरिक्त निदेशक
पाठ्य सामग्री उत्पादन एवं वितरण प्रभाग	पाठ्य सामग्री उत्पादन एवं वितरण प्रभाग
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा	वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

पुनः उत्पादन 2015 ISBN : 978-81-8496-532-2

इस सामग्री के किसी भी अंश को व.वि.वि.खु.म., कोटा, की लिखित अनुमति के बिना किसी भी रूप में अन्यत्र पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है। व.वि.वि.खु.म., कोटा के लिए कुलसचिव, व.वि.वि.खु.म., कोटा द्वारा मुद्रित एवं प्रकाशित ।(राजस्थान)

BED–112

संस्कृत शिक्षण

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा (राज.)

अनुक्रमणिका

इकाई		पृष्ठ संख्या
	खण्ड - 1	
	संस्कृत पाठ्यक्रम एवं विधियां	
1.	संस्कृत की विषय वस्तु की संरचना, इतिहास, आधारभूत संप्रत्यमक योजनाए(भावी परिपेक्ष्य मै)	06
2.	संस्कृत शिक्षण के भावियोंमुखी उद्देश्य	36
3.	विद्यालय पाठ्यक्रम में संकृत का स्थान, विभिन्न स्तरो पर अन्य विषयो के साथ संबंध, पाठ्यचर्चा का एकीक्रत/विशिष्टिक्रत उपागम	50
4.	संप्रत्यों का संज्ञानात्मक मानचित्र एवं पाठ्यक्रम के तत्व	68
5.	संस्कृत शिक्षण के उपागम एवं विधिया - विषय आधारित विधियो के उदाहरण, संस्कृत विषय शिक्षण से संबन्धित कौशल	92
6.	संचार माध्यमों का संस्कृत शिक्षण में अनुप्रयोग एवं एकीकरण	111
	खण्ड - 2	
	संस्कृत शिक्षण - नियोजन, क्रियान्वयन व मूल्यांकन	
7.	संस्कृत शिक्षण मे नियोजन: वार्षिक, इकाई, दैनिक पाठ योजना	129
8.	विशिष्ट उदाहरणो सहित छात्र का संस्कृत मे मूल्यांकन....	146
9.	पाठ्य पुस्तक के निर्माण एवं मूल्यांकन के संदर्भ मे संस्कृत की अनुदेशात्मक सामग्री का विकास	169
10.	संस्कृत - पाठ्यवस्तु से संदर्भित सहायक सामग्री, निर्माण एवं मूल्यांकन	181
11.	संस्कृत अध्यापक के गुण, संस्कृत शिक्षण मे आने वाली बाधाएँ एवं उनका निराकरण	197
12.	संस्कृत शिक्षण मे प्रयोगशाला, कक्षा - कक्ष, संग्रहालय, समुदाय, वातावरण एवं पुस्तकालय	206
13.	नवाचार - संस्कृत शिक्षण मे नवाचार एवं उनका भविष्य	224
परिशिष्ठ - आदर्श पाठ योजनाएँ		
1.	संस्कृत गद्य शिक्षण	254
2.	संस्कृत पद्य शिक्षण	260
3.	व्याकरण शिक्षण	263

पाठ्यक्रम अभिकल्प समिति

अध्यक्ष

प्रो. नरेश दाधीच
कुलपति
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय,
कोटा (राज.)

संयोजक / समन्वयक

संयोजक

डॉ. दामीना चौधरी

सह आचार्य, शिक्षा

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय. कोटा (राज.)

सदस्य

1. प्रो. पी. के. साहू
   शिक्षा विभाग
   इलाहाबाद विश्वविद्यालय (उप्र.)
2. प्रो. आर. पी. श्रीवास्तव (से.नि.)
   जामिया मिलिया इस्लामिया विश्वविद्यालय, नई दिल्ली
3. प्रो. आर. जे. सिंह
   लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ (उ प्र.)
4. प्रो. डी. एन. सनसनवाल
   देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
5. प्रो. एस. बी. मेनन
   दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली
6. प्रो. स्नेह. एम. जोशी
   एम. एस. विश्वविद्यालय, बड़ौदा
7. प्रो. सोहनवीर सिंह चौधरी
   इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, नई दिल्ली
8. डॉ. एम. एल. गुप्ता
   सह आचार्य शिक्षा (से. नि.)
   वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा
9. डॉ. अनिल शुक्ला
   लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ (उप्र.)

संम्पादन तथा पाठ लेखन

संपादक

डा आर. एल. शर्मा
रीडर
सूरज नारायण महिला प्ररिशिक्षण महिला महाविद्यालय
पुष्कर, अजमेर

पाठ लेखक

1. डा. संतोष मित्तल
   रीडर (शिक्षण)
   राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान (डीमड यू यूनिवर्सिटे)
   जयपुर
2. श्री डी. आर. श्रीमाली
   क्षेत्रीय शिक्षा संस्थान, अजमेर
3. डा पुष्पा सोढ़ी
   उपचार्य
   महात्मा गांधी शिक्षा महाविद्यालय, सीतापुरा, जयपुर
4. डा. तारुणी कारिया, कोटा

पाठ्यक्रम निदेशन एवं उत्पादन

निदेशक (शैक्षणिक)
प्रो. अनाम जैटली
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय,
कोटा (राजस्थान)

निदेशक (सामग्री उत्पादन एवं वितरण)
प्रो. पी. के. शर्मा
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय,
कोटा (राजस्थान)

उत्पादन जुलाई 2007

सर्वाधिकार सुरक्षित :–

इस सामग्री के किसी भी अंश की व.म.खु.वि. कोटा की लिखित अनुमति के बिना किसी भी रूप मैं मिमियोग्राफी (चक्र मुद्रण) द्वारा या अन्यत्र पुनः प्रस्तुत करने के अनुमति नहीं है

व.म.खु.वि. कोटा की और से की निदेशक (शैक्षणिक) द्वारा मुद्रित एवं प्रकाशित

इकाई –1 (Unit–1)
संस्कृत की विषयवस्तु की संरचना, इतिहास आधारभूत सम्प्रत्यात्मक योजनाएँभा) वी परिपेक्ष्य में)
)Structure of the Content of Sanskrit,History,Basic Conceptual Schemes, in Future Perspective)

इकाई की रूपरेखा

1.0 उद्देशय
1.1 प्रस्तावना
1.2 संस्कृत की प्रकृति
1.3 संस्कृत भाषा में शब्द संरचना
1.4 संस्कृत की विषयवस्तु की संरचना
1.5 संस्कृत लौकिक साहित्य, विषय वस्तु संरचना एवं इतिहास
1.6 आधारभूत सम्प्रत्यात्मक योजनाएँ
1.7 सारांश
1.8 स्वपरख प्रश्नों के उत्तर
1.9 मूल्यांकन प्रश्न
1.10 संदर्भ ग्रन्थ सूची

1.0 इकाई के उद्देश्य (Objective of the Unit)

इस इकाई के अध्यनोपरांत आप–

- संस्कृत भाषा की संरचना से परिचित हो सकेंगे ।
- संस्कृत भाषा में शब्द रचना से परिचित हो सकेंगे ।
- संस्कृत की विषय वस्तु की संरचना का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे ।
- संस्कृत लौकिक साहित्य, विषय वस्तु संरचना एवं इतिहास से परिचित हो सकेंगे ।
- आधारभूत सम्प्रत्यात्मक योजनाओं को समझ सकेंगे ।
- संस्कृत ध्वनियों के वर्गीकरण को समझ सकेंगे ।
- शुद्ध उच्चारण के महत्व को समझ सकेंगे ।
- अशुद्ध उच्चारण के प्रकार, कारण एवं निराकरण के उपाय जान सकेंगे ।

1.1 प्रस्तावना (Introduction)

संस्कृत के अध्यापन और अध्ययन को सफल, प्रभावी तथा उद्देश्यपरक बनाने के लिए संस्कृत भाषा की संरचना तथा उसकी विषय वस्तु की संरचना का ज्ञान नितान्त आवश्यक है । संस्कृत शिक्षण के सन्दर्भ में यह तथ्य महत्वपूर्ण है कि संस्कृत वर्तमान में आम बोलचाल या

सामान्य जन व्यवहार की भाषा नहीं है । अन्य आधुनिक भारतीय भाषाओं की तरह संस्कृत के शिक्षार्थियों को दैनन्दिन सामाजिक व्यवहार और वातावरण में संस्कृत का दिग्दर्शन नहीं होता परिणामत : सुनकर या बोलकर संस्कृत भाषा सीखने के अवसर अल्प ही होते हैं । अत: संस्कृत के अध्ययन और अध्यापन की सफलता सुनिश्चित करने के लिए सर्वप्रथम संस्कृत की संरचना का ज्ञान आवश्यक है । यह भी स्मरण योग्य है कि 'संस्कृत की संरचना' और 'संस्कृत साहित्य' की संरचना दो पृथक् बिन्दु हैं और इन्हें इस परिप्रेक्ष्य में ही समझना आवश्यक है । 'संस्कृत की विषय वस्तु संरचना' के अन्तर्गत पूर्वोक्त दोनों बिन्दुओं को समझना लाभप्रद होगा ।

1.2 संस्कृत भाषा की प्रकृति

संरचना या आकृति के आधार पर भाषा–वैज्ञानिकों और भाषा शास्त्रियों ने विश्व की सभी भाषाओं को मुख्यत: दो भागों में विभाजित किया है

1. योगात्मक भाषाएँ, व
2. अयोगात्मक भाषाएँ ।

भाषा की मौलिक इकाई शब्द है और शब्द निर्माण के मूल घटक हैं प्रकृति (धातु), उपसर्ग तथा प्रत्यय । जिन भाषाओं में प्रकृति (धातु या मूल शब्द) के साथ उपसर्ग या प्रत्यय जोड़कर 'पद' (सार्थक शब्द) बनाया जाता है उन्हें 'योगात्मक' भाषाएँ कहा जाता है । हिन्दी भाषा में जैसे 'साधु' से 'साधुता' साधुत्व, 'दुष्ट' से 'दुष्टता' में 'ता' या 'त्व' जोड़कर नये शब्द बनाये जाते हैं या कि इस उदाहरण में – छात्र शिक्षक से पढ़ने के लिए विद्यालय (में)जाते हैं, से, के लिए, में, आदि प्रत्यय जोड़कर वाक्यार्थ स्पष्ट किया जाता है । ऐसी भाषाएँ योगात्मक कहलाती हैं, अर्थात् जिनमें कोई उपसर्ग, प्रत्यय आदि नहीं जोड़ा जाता हो और शब्द अपनी मौलिक आकृति में ही सार्थक 'पद' बन जाते हों, वे अयोगात्मक भाषाएँ हैं ।

उपर्युक्त वर्गीकरण के परिप्रेक्ष्य में संरचना की दृष्टि सें संस्कृत न केवल 'योगात्मक' अपितु 'श्लिष्ट योगात्मक' भाषा है जिसमें उपसर्ग और प्रत्यय का तो प्रचुर योग होता ही है, साथ ही 'विकरण' में भी प्रयुक्त होता है । यह विकरण भाषा के सामान्य सरंचना चरित्र की जानकारी हेतु ही दिया गया है क्योंकि संसार की कोई भी भाषा एकान्तिक रूप से 'योगात्मक' या 'अयोगात्मक' नहीं होती । जिस वर्ग का वैशिष्ट्य जिसमें पाया जाये, वह उसी वर्ग की भाषा मानी जाती है । शास्त्रीय व्यवस्था भी यही है– ' प्राधान्येन न व्यपदेशा: भवन्ति: ' । अत: यह निष्कर्ष निकलता है कि मुख्य रूप से संस्कृत श्लिष्ट योगात्मक भाषा है पर गौणरूप से इसमें अश्लिष्ट तथा प्रश्लिष्ट योगात्मक भाषा के गुण भी विद्यमान हैं । संस्कृत भाषा में प्रयुक्त होने वाले अव्यय शब्द सर्वथा अयोगात्मक होते हैं । इन शब्दों में किसी प्रकार का योग अथवा रूप परिवर्तन नहीं होता है ।

अव्यय भी दो प्रकार के होते हैं– प्रथम वे, जो स्वतन्त्र रूप से प्रयुक्त नहीं होते; जैसे प्र, परा आदि उपसर्ग, और दूसरे वे जो 'कृत' प्रत्यय के योग से बनते हैं ।

1.2.1 सुप् और तिङ्प्रत्यय

व्याकरण की दृष्टि से ' सप् और 'तिङ्' प्रत्यय का योग होने पर ही शब्द ' पद' बनते हैं, और 'पद' ही वाक्य में प्रयुक्त होते हैं । ' सुप्' प्रत्यय के योग से संज्ञा, सर्वनाम और विशेषण यह बनाकर वाक्यों में प्रयोग किये जाते हैं और ' तिङ्' प्रत्यय से क्रिया पद निष्पन्न हाते हैं । सार्थक वाक्य का निर्माण 'क्रियापद' के बिना प्राय: संभव नहीं ।

1.2.2 क्रिया

प्रत्येक 'क्रिया या पद ' स्वरूप से कोई न कोई धातु विद्यमान रहती है । ' धातु' में ही 'तिङ्प्रत्यय के योग से विविध क्रिया रूप बनाये जाते हैं ।

क्रिया में रूपों का विभाजन दो आधारों पर किया जाता है; यथा –एक वचन, द्विचन, बहुवचन । इस तरह संख्या के आधार पर एक संख्या के लिए एक वचन, दो संख्या के लिए द्विचन, दो से अधिक संख्या के लिए बहुवचन–इस तरह संस्कृत भाषा में तीन वचन होते हैं । क्रिया का दूसरा विभाजन वक्ता, श्रोता और इन दोनों से अन्य के आधार पर किया जाता है जिसे 'पुरूष' कहते हैं । वक्ता को ' उत्तम पुरूष ' मैं, हम दोनों, हम सब, श्रोता को ' मध्य पुरूष' तूँ, तुम दोनों, तुम सब, तथा दोनों सें अतिरिक्त किसी अन्य को 'प्रथम पुरूष' या ' अन्य पुरूष' वह, वे दोनों, वे सब कहते हैं । इस प्रकार 'तीन वचन' और 'तीन पुरूष' के विभाजन के आधार पर क्रिया के 9 रूप होते हैं ।

इनके अतिरिक्त क्रिया पदों के विभाजन का अन्य आधार भी है, जिसे 'उपग्रह' कहते हैं। जब क्रिया का फल स्वयं वक्ता को प्राप्त हो रहा हो तो क्रिया का ' आत्मने पद' रूप प्रयुक्त होता था और जब किसी अन्य को प्राप्त हो रहा हो, तो क्रिया का परस्मैपद रूप प्रयुक्त होता था । ऐसा विश्वास है कि आत्मने पद और परस्मैपद क्रिया रूपों के इस आधार पर प्रयोग की व्यवस्था उस समय थी जब संस्कृत लोकभाषा थी । कालान्तर में यह प्रयोग अर्थ पर आधारित न होकर रूढ हो गया और क्रियाओं (धातुओं) का प्रयोग ' आत्मने पद' और 'परस्मैपद' में नियत हो गया।

इस प्रकार ' धातु' में तिङ्प्रत्यय के योग से पूर्वोक्त 9 रूप ' आत्मने पद' और 'परस्मैपद' के विभाजन के आधार पर 18 प्रकार के होते हैं । सभी लकारों में (काल) भी क्रिया रूपों का यही वर्गीकरण होता है अत: वाक्य रचना में तीन वचन और तीन पुरूष भेदो के विभाजन के अनुरूप ही आत्मनेपद और परस्मैपद प्रत्येक क्रिया विभाजन के आधार पर 9 कर्ता पदों की 9 क्रिया–पदों के साथ संगति के अनुसार सार्थक प्रयोग होते हैं ।

1.3.3 नाम शब्दों में सुप् प्रत्यय

संस्कृत भाषा की संरचना में 'तिङ्' प्रत्यय के संक्षिप्त विवेचन के पश्चात् दूसरे प्रमुख प्रत्यय 'सुप्' का संक्षिप्त विवेचन इस प्रकार है।

क्रिया पद और अव्यय के अतिरिक्त संस्कृत भाषा के मुख्य घटक ' नाम' शब्द हैं । नाम शब्दों में ' सुप् ' के प्रयोग से 'कारक' या विभक्तियाँ निष्पन्न होती हैं। इन्हीं से संस्कृत भाषा की संरचना बनती है। 'सुप्' प्रत्ययों का भी सर्वप्रथम संख्या के आधार पर ही विभाजन

होता है, जिसमें क्रिया के समान ही एक वचन, द्विचन और बहुवचन– ये तीन वचन होते हैं । दूसरा विभाजन कारक–सम्बन्ध को अभिव्यक्त करने के लिए किया जाता है, जिसमें सात विभक्तियाँ या सात कारक होते हैं जो क्रमशः : प्रथमा–द्वितीया–तृतीया–चतुर्थी–पञ्चमी–षष्ठी–सप्तमी नाम से जानी जाती है । ये विभक्तियाँ क्रमश: कर्ता– कर्म–कारण–सम्प्रदान–अपदान–सम्बन्ध और अधिकरण कारक–सम्बन्ध अभिव्यक्त करती हैं । इसके अतिरिक्त पद विशेष के सन्दर्भ में प्रयुक्त होने वाली विभक्ति को उपपद–विभक्ति कहते हैं । इस प्रकार 'नाम शब्द' में सुप् के प्रयोग से जो 'पद' बनते हैं वे तीन वचन और सात विभक्तियों के विभाजन के आधार पर कुल 21 पद होते हैं ।

यहाँ यह स्मरणीय है कि बिना 'सुप्' या 'तिङ् ' का प्रयोग किये संस्कृत भाषा में किसी भी (अपद) शब्द का प्रयोग नहीं किया जा सकता– ' अपंद न प्रयुज्जीत ' । 'सुप् ' और ' तिङ् प्रत्ययों के योग से बनने वाली संरचना ही 'पद' कहलाती है– ' सुप् तिङन्त पद्म' । इस विवरण से यह स्पष्ट है कि ' सुप्' विभक्ति (विभाजन) के आधार पर ही नाम शब्दों और धातुओं से संस्कृत भाषा के पदों की संरचना होती है, ये ' पद् ' ही वाक्य रचना में प्रयुक्त होते हैं । यही संस्कृत भाषा की संरचना का मुख्य आधार भी है । अत : संरचना की दृटि से संस्कृत भाषा के सभी शब्द (पद) ' सुवन्त' (सुप् अन्तवाले) या 'तिङन्त' (तिङ् अन्त वाले) होते हैं। अव्यय भी इसी श्रेणी में आते हैं, यद्यपि उनमें प्रत्यय का योग होते ही लोप हो जाता है ।

1.3 संस्कृत भाषा की संरचना

संस्कृत अन्य भाषाओं की तरह एक भाषा है। कोई भी भाषा चार तत्वों से संरचित होती है– ध्वनि, अर्थ, रूप एवं व्याकरण । संस्कृत के भी ये ही चार तत्व हैं। अत: संस्कृत की भाषा के रूप में संरचना की दृष्टि से इसके इन तत्वों पर विचार करना अनिवार्य हो जाता है। सर्वप्रथम संस्कृत के ध्वनि, तत्व पर विचार करना सार्थक होगा।

संस्कृत भाषा का ध्वनि विचार

संस्कृत भाषा में ध्वनियों पर वैज्ञानिक ढंग से विचार किया गया है । महर्षि पाणिनि के मतानुसार जब वायु सिर पर टकराकर नीचे की ओर आती है तब उसका स्पर्श कण्ठ, तालु, मूर्धा, दन्त, ओष्ठ आदि स्थानों से होता है। वायु के उपर्युक्त अंगों से टकराने पर वर्णो की उत्पत्ति होती है । वर्णो के मूल रूप में दो भेद होते हैं – स्वर एवं व्यञ्जन।

(क) **स्वर** – स्वर वे अक्षर हैं जिनके उच्चारण में ध्वनि फेफड़ों से स्फुटित होकर कंठ से होती हुई मुख विवर के उच्चारण अवयवों को स्पर्श करते हुए मुख द्वार से निकल जाती है । स्वरों का उच्चारण बिना किसी दूसरे अक्षर की सहायता से स्वतंत्र रूप से होता है । हिन्दी में स्वरों की संख्या ग्यारह हैं । इन स्वरों को तीन वर्गों में विभाजित किया जाता है । ये वर्ग हैं:–

1. ह्रस्व स्वर – अ, इ, और ऋ ।
2. दीर्घ स्वर – आ, ई ,ऊ ।
3. सन्धि स्वर – ए, ऐ , ओ, औ ।

(ख) **व्यञ्जन** – व्यञ्जन वे अक्षर होते हैं जिनके उच्चारण में स्वरों का सहयोग लिया जाता है। इनका उच्चारण करते समय ध्वनि फेफड़ों से अनुस्फुटित होकर मुख विवर के उच्चारण स्थानों को स्पर्श करती हुई मुख द्वार से निकलती है । संस्कृत में इन व्यञ्जनों की संख्या 33 हैं । ये हैं :

क वर्ग – क, ख, ग, घ ङ

च वर्ग – च, छ, ज, झ, ञ

ट वर्ग – ट, ठ, ड, ढ, ण

त वर्ग – त, थ, द, ध, न

प वर्ग – प, फ, ब, भ, म

वर्गहीन अन्तस्थ – य, र, ल, व

वर्गहीन उष्माण –श, ष, स, ह

संयुक्ताक्षर – क्ष, त्र, ज्ञ

नोट – संस्कृत में अनुस्वार व विसर्ग, जैसे अं और अः भी होते हैं । स्वरों पर चन्द्र बिन्दु (ँ)का भी प्रयोग होता है ।

आगे के पृष्ठों में ध्वनि का वर्गीकरण विभिन्न दृष्टियों से किया गया है। इसी के साथ अशुद्ध उच्चारण के प्रभाव, कारण एवं निकराकरण पर विशद् विवेचन किया गया है। ध्वनि के सम्बन्ध में आगे वर्णित तथ्यों की जानकारी भाषा शिक्षक के लिए आवश्यक है ।

(1) **उच्चारण अवयव** – जिन अंगों से ध्वनियों का उच्चारण किया जाता है वे हैं–श्वास नलिका, कण्ठ, स्वर यन्त्र, उपालि, कौआ, कोमल, तालु, कठोर तालु, वर्त्स ,जिह्वा, मूर्धा, दन्त, ओष्ठ, नासिका और मुख विवर। नीचे इन अवयवों का चित्र दिया गया है।

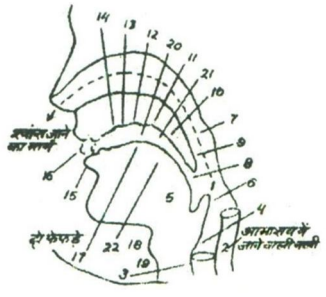

उपर्युक्त चित्र में निम्नलिखित भाग दर्शाये गये हैं–

1. कंठमार्ग 2.भोजननली 3.स्वरयंत्र 4. काकल 5.स्वरतन्त्री 6.अभिकाकल

7. नासिका विवर 8. मुख विवर 9. कौआ 10. कंठ 11. कोमल तालु 12. मूर्द्धा 13. कठोर तालु 14. वर्त्स 15. दांत 16. ओष्ठ 17. जिह्वा मध्य 18. जिह्वालोक 19. जिह्वाणु 20.जिह्वा 21. पश्च जिह्वा 22. जिह्वा मूल ।

जब वायु श्वासनली द्वारा बिना किसी अवरोध के बाहर निकलती है तो स्वरों का उच्चारण होता है तथा जब वायु का अन्य अवयवों द्वारा अवरोध हो तो व्यंजनों का उच्चारण होता है ।

(2) **ध्वनियों का वर्गीकरण** – संस्कृत ध्वनियों का वर्गीकरण निम्नांकित आधार पर किया गया है–

(क) **स्वरकृत भेद** – उदात्त (उच्च स्वर से), अनुदात्त (नीचे या मन्द स्वर से) और स्वरित (न बहुत उच्च और न बहुत मन्द स्वर से) ।

(ख) **कालकृत भेद** - स्वर के उच्चारण में लगने वाले समयानुसार स्वर ह्रस्व (अ, इ,उ,ऋ) व् दीर्घ (आ,ई, ऊ, ए, ओ, औ,) होते हैं ।

(ग) **स्थानकृत भेद**– उच्चारण अवयवों के आधार पर व्यञ्जनों के भेद हैं–

1. कंठ्य – क, ख, ग, घ, ङ (क वर्ग)
2. तालव्य – च, छ, ज, झ, ञ (च वर्ग)
3. मूर्धन्य – ट, ठ, ड, ढ, ण (ट वर्ग)
4. दंत्य– त, थ, द, ध, न (त वर्ग)
5. ओष्ठ्य – प, फ, ब, भ, म (प वर्ग)
6. अन्तस्थ– य, र, ल, व
7. उष्माण – श, ष, स, ह

(घ) **आभ्यन्तर प्रयत्नकृत भेद** – ध्वनि को उच्चरित करने में मुख के भीतर जिह्वा के संयोग से जितना प्रयन्त करना पड़े उसके अनुसार ध्वनियाँ होती हैं–

1. स्पर्श या स्फोट – क, ख, ग, घ, ट, ठ, ड, ढ, त, थ, द, ध तथा प, फ, ब, भ
2. स्पर्ष–संघर्षी – च, छ, ज, झ ।
3. अनुनासिक - ङ,ञ, ण, न, म ।
4. पार्श्विक – ल
5. लुंठित – र
6. उत्क्षिप्त - ड़, ढ़
7. संघर्षी या उष्माण – ख़ , ग़ ,ज़ , फ़, व, श, स, ह, विसर्ग
8. अर्द्धस्वर – य, व, इन्हें ईषत्–विवृत भी कहते हैं ।
9. विवृत – आ, आँ
10. अर्द्धविवृत – अ
11. संवृत – इ, ई, उ, ऊ
12. अर्द्ध–संवृत – ए, ओ

सुविधा की दृष्टि से संस्कृत वर्णमाला के उपर्युक्त वर्गीकरण का चार्ट निरंजन कुमार सिंह के अनुसार निम्नानुसार प्रस्तुत किया है :

देवनागरी वर्गमाला -उच्चारण की दृष्टि से

	आघोष		घोष								
स्थान	स्पर्श		ऊष्म	ऊष्म	स्पर्श				स्वर		
	अल्प–प्राण	महा–प्राण	महा–प्राण	महा–प्राण	अल्प–प्राण	महा–प्राण	अल्प–प्राण अनु–नासिक	अंतस्थ	ह्व्सव	दीर्घ	संयुक्त
कण्ठ तालु मूर्धा दन्त ओष्ठ	क च ट त प	ख छ ठ थ फ	 श ष स		ग ज ड द ब	घ झ ढ ध भ	ङ अ ण न म	 थ र ल व[1]	अ इ ऋ उ	आ ई ऊ	ए ,ऐ[2] ओ, औ
नोट:–	ङ = द्विस्पृष्ट	ढ = द्विस्पृष्ट	ज= फ=	दन्त तालव्य दंतोष्ठ्य			मध्य नासिका	1दन्त ओष्ठ			2कण्ठ +तालु 3कण्ठ +ओष्ठ

(ङ) बाह्य प्रयत्न की दृष्टि से व्यञ्जनों के भेद हैं–

1. अल्पप्राण – हल्के श्वास के साथ उच्चरित होने वाली ध्वनियाँ हैं– प्रत्येक वर्ग का प्रथम व तृतीय वर्ण, अनुनासिक वर्ण एवं य, र, ल, व ।
2. महाप्राण – द्विगुणित श्वास के साथ उच्चरित होने वाली ध्वनियाँ हैं– वर्गो के दूसरे व चौथे वर्ण तथा श, ष, स, ह ।
3. सघोष – जिन व्यजनों के उच्चारण में स्वरतन्त्रियों में कंपन होता है वे घोष या सघोष ध्वनियाँ कहलाती हैं । वर्गो की तीसरी, चौथी, पाँचवी ध्वनि, अर्द्ध स्वर तथा ह नाद या घोष ध्वनियाँ हैं ।
4. अघोष – जिन व्यञ्जन ध्वनियों के उच्चारण में स्वर तन्त्रियों में कंपन नहीं होता वे अघोष कहलाती हैं–

   क, च, ट, त, प, फ, श, ष, स आदि अघोष ध्वनियाँ हैं ।

(3) **मात्रा तथा लय** – छात्रों को यह जानकारी देनी चाहिए कि मात्रा की दृष्टि से स्वर ह्रस्व, दीर्घ तथा प्लुत होते हैं जिनमें क्रमश: एक, दो और तीन मात्रायें होती हैं । कभी–कभी लय की दृष्टि से ह्रस्व स्वर दीर्घ और दीर्घ स्वर ह्रस्व की तरह उच्चरित होते हैं ।

(4) **बलाघात या बल** – बल या स्वराघात शक्ति की वह मात्रा होती है जिसके द्वारा कोई ध्वनि या वर्ण बोला जाता है । बालाघात के परिवर्तन से अर्थ में परिवर्तन हो जाता है; जैसे मुझे एक ही गुणी पुत्र चाहिए । इसमें यदि एक शब्द पर बल होगा तो अर्थ होगा

कि मेरे लिए एक ही पुत्र पर्याप्त है और यदि बल 'गुणी' पर हो तो इसका अर्थ होगा केवल गुणवान और यदि 'पुत्र' पर बल हो तो तात्पर्य होगा कि केवल पुत्र ही, पुत्री नहीं।

(5) **विराम तथा यति** – उच्चारण में विराम और यति का भी बड़ा महत्व होता है । इनका ध्यान न रखने पर अर्थ में अन्तर आ जाता है ।

उच्चारण – शिक्षण

भाषा मूलतः 'बोलना' है अर्थात् भाषा ध्वनियों की एक सार्थक प्रणाली है। बोलने की सार्थकता एवं प्रभविष्णुता उच्चारण पर निर्भर करती है । अत : उच्चारण का महत्व सभी भाषा–शास्त्रियों द्वारा स्वीकार किया गया है । भारतवर्ष में प्राचीन काल से ही शुद्ध उच्चारण की शिक्षा पर बल दिया जाता रहा है । अशुद्ध उच्चारण तो एक प्रकार से पाप माना जाता था। याज्ञवल्क्य एवं पाणिनीय शिक्षा में शुद्ध उच्चारण पर यथेष्ट लिखा मिलता है ।

प्राचीनकाल में शिक्षा (ध्वनिशास्त्र) का वेदांग के रूप में गम्भीर अध्ययन होता था। आज भी शुद्ध उच्चारण के महत्व को कौन नकार सकता है। शुद्ध उच्चारण की महत्व को हम निम्नांकित बिन्दुओं के आधार पर प्रतिपादित कर सकते हैं ।

उच्चारण का महत्व

(1) सर्वप्रथम शुद्ध उच्चारण के बिना पाठक संस्कृत भाषा का वास्तविक ज्ञान प्राप्त नहीं कर सकता। अशुद्ध ध्वनि भाषा के अशुद्ध रूप को ही प्रस्तुत करती है।

(2) दूसरी बात यह है कि अशुद्धोच्चारण शब्दार्थ में परिवर्तन उत्पन्न कर देता है। संस्कृत के एक श्लोक में इस बात को इस प्रकार कहा है–

'यद्यपि बहुनाधीपे तथापि पठ पुत्र व्याकरणम ।

स्वजन: श्वजनों मा भूत, सकलं शक्ल सकृच्छकृत् ।।

यदि 'स्वजन' को 'श्वजन' बोला जायेगा तो अर्थ कुता हो जायेगा और यदि 'सकल' को 'शक्ल' बोला जायेगा तो 'पाखाना' अर्थ हो जायेगा।

(3) यदि प्रारम्भिक अवस्था में ही शुद्ध उच्चारण का अभ्यास कराया जाय तो वक्ता की भाषा में सार्थकता और प्रभविष्णुता उत्पत्र हो ही जायेगी।

(4) अशुद्ध उच्चारण ही अशुद्ध अक्षर विन्यास का कारण है; जैसे –यदि जनता को 'जन्ता' बोला जायेगा तो यह लिखा भी इसी तरह जायेगा।

(5) अशुद्ध उच्चारण अशुद्ध अभिव्यक्ति एवं अबोध–गम्यता का भी कारण बनता है।

उच्चारण शिक्षण का महत्व

उपरोक्त तथ्यों से उच्चारण का महत्व प्रमाणित है । अत: उच्चारण–शिक्षण की समुचित व्यवस्था करना भाषा शिक्षक के लिए नितान्त महत्वपूर्ण कार्य हो जाता है। उच्चारण–शिक्षण का संस्कृत–शिक्षण में तो और भी अधिक महत्व है। इसके हम निम्नांकित कारण गिना सकते हैं–

(1) बालक की पूर्वार्जित अशुद्ध उच्चारण सम्बन्धी आदत को तोड़ने के लिए उच्चारण–शिक्षण की व्यवस्था करना आवश्यक है।

(2) स्थानीय बोलियों के प्रभाव से संस्कृत के उच्चारण–दोषों को दूर करने के लिए।

(3) विभिन्न प्रदेशों में वर्णमाला की प्रारम्भिक शिक्षा देते समय प्रत्येक वर्ण के उच्चारण में आई भिन्नता के कारण दोषों को दूर करने के लिए।

(4) संस्कृत ध्वन्यात्मक अथवा नादानुगामिनी भाषा है। अत: उसमें वर्ण का नाम एवं उसकी उच्चरित ध्वनि एक ही होती है । इसलिए ध्वनि का अभ्यास कराने हेतु भी उच्चारण–शिक्षण का महत्व है।

(5) भाषा के शुद्ध लेखन की दृष्टि से भी अशुद्ध उच्चारण की आदत को तोड़ने के लिए उच्चारण–शिक्षण का महत्व है क्योंकि संस्कृत ध्वन्यात्मक भाषा है, इस कारण अशुद्ध–उच्चारण का प्रभाव वर्तनी पर भी पड़ता है।

उच्चारण शिक्षण के महत्व को जान लेने के पश्चात् हमें यह जानना भी आवश्यक है कि शुद्ध उच्चारण का अभिप्राय क्या है।

शुद्ध उच्चारण का अभिप्राय – शुद्ध उच्चारण का तात्पर्य परिनिष्ठित अथवा मानक उच्चारण से लिया जाता है। मानक उच्चारण वह है जिसको सर्वमान्यता प्राप्त है । यज्ञवल्क्य शिक्षा में यह दर्शाया गया है कि उच्चारण किस प्रकार से करना चाहिए –

'व्याग्री यथा हरेत्पुत्रान् दष्ट्रभ्यां ने च पीडयेत् ।
मीता पतनभेदाभ्याम् तद्वद्वर्णान प्रयोजयेत् ।।

अर्थात् शब्दोच्चारण इस प्रकार करना चाहिए कि जिससे न शब्दों को चबा–चबाकर बोला जाय और न मुख से गिर पड़े और एक–दूसरे से अलग–अलग सुनाई दें ।

उपरोक्त तथ्य से यह सारांश निकलता है कि शुद्ध उच्चारण में ध्वनि, अक्षर व्यक्ति, सुर, बलाघात, स्वराघात, मात्रा और लय आदि तत्व–सम्मिलित होते हैं । इस दृष्टि से यदि हम विचार करें तो हम पायेंगे कि हमारे छात्रों का उच्चारण दोषपूर्ण होता है । इन दोषों के निम्नांकित कारण हो सकते हैं–

उच्चारण दोषों के कारण

(1) **ध्वनि–विषयक अज्ञानता** – ध्वनियों की अक्षर–व्यक्ति तथा उनके उचित स्वरूप के सम्बन्ध में अज्ञानता के कारण उच्चारण–दोष उत्पन्न हो जाता है; – जैसे, श, स, ष, ब, ब, न, ण आदि में अन्तर न कर पाना अशुद्धि का कारण बनता है ।

(2) **स्वल्प प्रयत्न तथा प्रयत्न लाघव** भी उच्चारण को अशुद्ध बनाते हैं; जैसे–ब्राह्मण के लिए बराह्मण या प्रमेश्वर परमेश्वर के लिए बोलना ।

(3) **आदत** – बुरी आदत के कारण भी उच्चारण में दोष आ जाता हैं; जैसे रुक–रुक कर बोलना, शीघ्रता से बोलना, इतराकर बोलना, शब्दों को चबा–चबाकर बोलना आदि ।

(4) **शारीरिक विकार** – उच्चारण अवयव; जैसे–कण्ठ, तालु, होठ, दाँत आदि में विकार होने पर उच्चारण दोष आ जाता है ।

(5) **भौगोलिक कारण** – भिन्न–भिन्न भौगोलिक परिस्थितियों में रहने वाले व्यक्तियों के स्वर–तन्त्र में भिन्नता होने के कारण उच्चारण में भिन्नता आ जाती है ।

(6) **प्रान्तीयता या स्थानीय प्रभाव** – स्थानीय भौतिक तथा सामाजिक वातावरण के प्रभाव के कारण उच्चारण में भिन्नता आती है; जैसे–पंजाब में रामायण को रमायण, यू.पी. में योग को जोग बोला जाता है ।

(7) **पर्यावरण का प्रभाव** – भाषा अनुकरण द्वारा सीखी जाती है अत: यदि पर्यावरण ठीक नहीं होगा तो उच्चरण में अशुद्धता आयेगी ही ।

(8) **शुद्धोच्चारण का ज्ञान न होना** – बहुत से छात्रों को शुद्ध उच्चारण का ज्ञान नहीं होता, अत: वे प्रश्न को 'प्रशन' और 'प्रताप' को परताप बोल जाते हैं ।

(9) **संध्या अक्षरों** को तोड़कर बोलने के कारण भी उच्चारण दोष आ जाते है।

(10) **मनोवैज्ञानिक कारण** – संकोच, भय, अति शीघ्रता तथा अति–विलम्ब के कारण उच्चारण में अनेक त्रुटियाँ आ जाती हैं ।

(11) **अध्यापक का अशुद्ध उच्चारण** - अध्यापक का त्रुटि पूर्ण उच्चारण भी छात्रों के अशुद्ध उच्चारण का प्रमुख कारण बनता है ।

उच्चारण दोषों के प्रकार

सामान्यतः छात्र निम्नांकित प्रकार की उच्चारण अशुद्धियाँ करते हैं –

(1) अशुद्ध वर्ण लोप, जैसे – 'परमात्मा' के लिए 'प्रमात्मा' ।

(2) अशुद्ध आगम, जैसे – 'स्थापित' के लिए 'अस्थापित ', 'स्मारक' के लिए 'इस्मारक' बोलना।

(3) अशुद्ध स्वर भक्ति, जैसे – 'पूर्व' के लिए 'पूरब' तथा 'जन्म' के लिए 'जनम' बोलना।

(4) वर्ण पिपर्यय, जैसे – ' अजमेर ' के लिए ' अमजेर ' तथा ' परशुराम ' के लिए 'परुशुराम' बोलना।

(5) अशुद्ध समीकरण, जैसे 'यजमान' के लिए 'जजमान', 'सूर्य' के लिए 'सूरज' कहना ।

(6) अशुद्ध विषमीकरण, जैसे 'कागज' को 'कागद' तथा 'दरिद्र' को 'दलिद्र' कहना ।

(7) अशुद्ध अनुनासिकता, जैसे 'अश्रु' को 'अँश्रु' 'महाराज' को महांराज बोलना ।

(8) अशुद्ध मात्रा भेद, ह्रस्व की जगह दीर्घ और दीर्घ के स्थान पर ह्रस्व स्वर बोलना; जैसे – 'ईश्वर' के स्थान पर, 'ईश्वर' तथा 'चिकित्सा' के स्थान पर 'चिकीत्सा' बोलना ।

(9) अशुद्ध मात्रा भेद, जैसे 'सुर' के लिए 'स्वर' तथा कैकेयी के लिए केकेयी बोलना ।

(10) अशुद्ध घोषीकरण, अर्थात् कठोर वर्णो के स्थान पर कोमल व्यञ्जनों का प्रयोग करना; जैसे 'प्रकट ' को ' प्रगट ' तथा 'दृष्टा' को ' दृष्ठा ' बोलना ।

(11) अशुद्ध अधोषीकरण, जैसे कोमल वर्ण के लिए कठोर वर्ण का प्रयोग करना; जैसे – 'जाग्रति' को 'जाक्रति' बोलना ।

(12) अशुद्ध प्राणीकरण, महाप्राण की जगह अल्प्राण और अल्पप्राण की जगह महाप्राण का प्रयोग करना; जैसे – 'कप्ट' के लिए 'कष्ट', 'सप्त' के लिए सपत तथा' लघुतम' के लिए लगुतम बोलना।

(13) आनुनासिक दोष, जैसे 'कारण' को 'कारन', 'प्रणाम' को 'प्रनाम' बोलना ।

(14) श, ष, स में भ्रान्ति, जैसे 'अनुशंसा' को 'अनुशंषा' तथा 'कौशल' को 'कौसल' एवं 'शशि' को 'ससि' कहना।

(15) ऋ त था र में भेद करना, जैसे 'गृह' के स्थान पर 'ग्रह' तथा 'पृथक' को 'प्रथक' बोलना

(16) ध तथा ब में भेद न करना, जैसे 'वकील' को 'बकील', 'वन' को 'बन' कहना

(17) ज्ञ तथा क्ष की अशुद्धि, जैसे ' शिक्षा ' को 'शिछा' 'ज्ञान' को 'ज्यान' या 'ग्यान' बोलना

(18) ण और ड़ का भ्रम, जैसे 'गणेश' को 'गड़ेश' और 'गरूड़' को 'गरूण' बोलना

(19) द्य द्य(द्य) का, उच्चारण ध्य के रूप में प्राय : किया जाता है; जैसे – 'विद्यार्थी' विध्यार्थी कहना।

(20) विसर्ग (:) तथा चन्द्र बिन्दु (ँ) सम्बन्धी अशुद्धियाँ - 'अन्त:करण' को 'अन्तकरण' बोलना तथा 'हँसना' को 'हंसना' बोलना।

(21) शब्दान्त के य तथा ईय प्रत्यय युक्त शब्दों के य को पूरा न बोलना; जैसे – 'सत्य' को ' सत्य् ' तथा 'पर्वतीय' को 'पर्वतीय्' बोलना।

(22) इसके अतिरिक्त स्वाराघात आदि की अशुद्धियाँ भी अवलोकनीय हैं।

उच्चारण अशुद्धियों के निराकरण के उपाय

उच्चारण दोष के निराकरण के उपाय प्रारम्भ से किये जाने चाहिए। पहली बात तो यह है कि अशुद्ध उच्चारण का अवसर ही नहीं दिया जाये, फिर भी यदि कोई छात्र अशुद्ध उच्चारण करे तो उसके उच्चारण को शुद्ध करने के उपाय करने चाहिए। इस हेतु अग्रांकित उपाय करने चाहिए–

(1) **उच्चारण अंगों को चिकित्सा** – करवाना यदि कोई आंगिक विकार हो तो।

(2) **मनोवैज्ञानिक उपचार** – छात्रों के भय, संकोच तथा हिचक को सहानुभूति एवं प्रेम पूर्ण व्यवहार से दूर करना चाहिए । बोलने की गलत आदत को भी इसी तरह दूर करवाना चाहिए ।

(3) **शुद्ध बोलने वालों की संगत** – भाषा श्रवण, अनुकरण एवं अभ्यास से सीखी जाती है । कहा भी है– Language is caught, not taught भाषा पढ़ाई नहीं जा सकती, यह संसर्ग से आती है । अत : बालक को शुद्ध बोलने वालों की संगत में रखना चाहिए । ग्रामोफोन, रेडियो तथा टेप–रिकार्डर द्वारा भी शुद्ध उच्चारण की शिक्षा दी जा सकती है।

(4) **उच्चारण अवयवों का ज्ञान** – उच्चारण दोषों के निराकरण के लिए बालकों को उच्चारण अवयवों की जानकारी करानी चाहिए तथा बताना चाहिए कि किसी विशेष ध्वनि के उच्चारण में किस अवयव का योग रहता है ।

(5) **विराम तथा यति** – उच्चारण में विराम और यति का भी बड़ा महत्व है । इनका ध्यान न रखने पर अर्थ में अन्तर आ जाता है ।

(6) **उच्चारण में स्वराघात** व बलाघात के महत्व को भी बताया जाना आवश्यक है ।

(7) छात्रों को समान ध्वनियों का भेद अच्छी तरह समझाना चाहिए; जैसे–श, ष, स, व, और ऋ,र आदि का अन्तर स्पष्ट किया जाना चाहिए ।

(8) कठिन ध्वनियों का परिचय देने के लिए पर्याप्त अभ्यास करवाना चाहिए ।

(9) कठिन ध्वनियों की व्याख्या व विश्लेषण भी अत्यावश्यक है ।

(10) उच्चारण प्रतियोगिताओं का भी आयोजन करना ठीक रहता है ।

(11) भाषा के पाठ पढ़ाते समय सस्वर–वाचन के प्रसंग में भाषा, कार्य के प्रसंग में उच्चारण–शिक्षण करना चाहिए ।

(12) मौखिक रचना के समय तथा अतिरिक्त शिक्षण की व्यवस्था करके भी उच्चारण का अभ्यास करवाना चाहिए ।

1.4 संस्कृत भाषा में शब्द संरचना

सार्थक ध्वनि समूह को शब्द कहते हैं– ' प्रतीत–पदार्थको लोके ध्वनि: शब्द इत्युच्यते' –महाभाष्य । मूल रूप से संस्कृत भाषा में तीन प्रकार के शब्द माने गये हैं– धातु, प्रत्यय और प्रातिपदिक, 'अर्थवद–धातुप्रत्यय: प्रतिपदिकम् 'क्रिया शब्दों, का मूल धातु होते हैं और नाम शब्दों का मूल 'प्रातिपदिक' । विभिन्न प्रायोजनों से शब्दों के अन्त में जिनका योग होता है उन्हें 'प्रत्यय' कहते हैं । 'प्रत्यय' के दो मुख्य प्रयोजन हैं– 1. शब्द निर्माण, और 2 पद निर्माण । जैसा कि संस्कृत की प्रकृति के अन्तर्गत विवेचन किया जा चुका है– ' पद निर्माण के लिए 'सुप्' और 'तिङ्' प्रत्ययों का प्रयोग होता है । मूल शब्दों– अर्थात् धातुओं और प्रातिपदिकों से किसी विशेष अर्थ को अभिव्यक्त करने के लिए भी प्रत्ययों का प्रयोग किया जाता है और नये शब्दों की संरचना की जाती है । धातुओं से विशेष अर्थ अभिव्यक्त करने के लिए नये शब्दो निर्माण हेतु जिन प्रत्ययों का प्रयोग किया जाता है, उन्हें 'कृत' प्रत्यय कहते हैं और प्रातिपदिकों से विशेष अर्थ अभिव्यक्त करने के लिए नये शब्द निर्माण हेतु जिन प्रत्ययों का प्रयोग किया जाता है उन्हें 'तद्धित' प्रत्यय कहते हैं । विविध अर्थ विशेष अभिव्यक्त करने के लिए 'कृत' और ' तद्धित' इन दो प्रत्यय वर्गो में नियत अर्थ विशेष के लिए पृथक–पृथक् कई अन्य नियत 'प्रत्यय' निर्धारित है ।

संस्कृत भाषा में 'कृत' और 'तद्धित' प्रत्ययों के अतिरिक्त नये शब्द–निर्माण के लिए एक और प्रक्रिया है जिसमें दो पदों को मिलाकर एक नये शब्द का निर्माण किया जाता है । इस प्रक्रिया का नाम 'समास' है । 'समास' प्रक्रिया हेतु प्रयुक्त होने वाले दो पदों में पहले पद को 'पूर्वपद' और दूसरे शब्द को उत्तर पद कहते हैं । समास प्रक्रिया से बनने वाले नये शब्द में पुन : 'सुप्' प्रत्यय लगाकर वाक्य में प्रयोग संभव होता है ।

संस्कृत भाषा संरचना की दृष्टि से यहाँ किया विवचेन दिङ्मात्र निर्देश है । पद संरचना, वाक्य संरचना के विशद विवेचन के लिए संस्कृत व्याकरण शास्त्रों में विस्तार से विचार किया गया है, जो अध्ययन का एक उच्चस्तरीय पृथक विषय है । संरचना और प्रयोग की दृष्टि से विशेषण, सर्वनाम, क्रिया–विशेषण आदि की भी नियम प्रक्रियाएँ हैं, लेकिन सभी के मूल में तीन घटक तत्व ही महत्त्वपूर्ण हूँ– वे हैं धातु, प्रत्यय और प्रातिपदिक । संस्कृत भाषा की पूरी

संरचना इन्हीं तीन पर आधारित है, क्योंकि ये तीन ही पद संरचना और शब्द संरचना के आधार भूत घटक हैं । किसी भी संस्कृत शिक्षण के प्रति जिज्ञासु शिक्षक और छात्र को यह मूलभूत जानकारी सहायक होती है । विषय–विशेषज्ञता की चाह रखने वाले शिक्षक या छात्र के लिए तो पूरी प्रक्रिया समझने के लिए व्याकरण शास्त्र, भाषा विज्ञान का अध्ययन आवश्यक है ही ।

यह अवश्य है कि भाषा संरचना के सन्दर्भ में यहाँ विवेचित मूलभूत घटकों और अवधारणाओं के संकेत विषय को सही परिप्रेक्ष्य में समझने में सहायक हो सकते हैं ।

संस्कृत भाषा विश्व की प्राचीनतम भाषा मानी जाती है और अपनी सुनियोजित एवं सुनिश्चित संरचना प्रक्रिया के कारण यह भाषा अपने मौलिक रूप में विद्यमान रही है । वैयाकरण, भाषा विज्ञानी, भाषा–शास्त्री, और भाषाओं के जानकार यह मानते हैं कि शब्दनिर्माण और संरचना की जो क्षमता संस्कृत भाषा में विद्यमान है वह संसार की किसी अन्य भाषा में उपलब्ध नहीं है ।

स्व परख प्रश्न (Self–Check Questions)

1. संस्कृत को 'श्लिष्ट योगात्मक' भाषा क्यों कहा गया है ?
2. 'सुप्' प्रत्यय से कौन से शब्द बनते है?
3. 'तिङ्' प्रत्यय से कौन सा शब्द बनता है?
4. संस्कृत में शब्द निर्माण की कौन–कौन सी विधियाँ हैं?
5. पदों की संरचना कैसे होती है?
6. संस्कृत ध्वनियों के वर्गीकरण के कौन–कौन से आधार हैं?
7. अशुद्ध उच्चारण के कारणों की सूची बनाइए ।

1.5 संस्कृत की विषय–वस्तु (वाङमय) की संरचना

संस्कृत भाषा साहित्य

भारतीय भाषाएँ मुख्यत : दो भाषा परिवारों से सम्बद्ध मानी जाती हैं । दक्षिण की भाषाएँ द्रविड़ भाषा परिवार से सम्बद्ध हैं, तो उत्तर की भाषाएँ भारोपीय परिवार से सम्बद्ध, ऐसी भाषा शास्त्रीयों की मान्यता है । भारतीय भाषाएँ संस्कृत भाषा से उत्पन्न हुई हैं– ऐसी मान्यता भी प्रचलित है । संस्कृत भाषा प्राचीनतम तो है ही, इसका साहित्य भण्डार भी अति विशाल और व्यापक है ।

विषय वस्तु की संरचना और भाषागत विशेषताओं की दृष्टि से संस्कृत साहित्य को दो भागों में विभाजित करने की परम्परा रही है । ये हैं 1. वैदिक साहित्य और 2. लौकिक साहित्य।

सर्वप्रथम वैदिक साहित्य की विषय वस्तु का संक्षिप्त विवेचन प्रस्तुत है ।

1.5.1 वैदिक साहित्य

'वेद' शब्द की व्युत्पति संस्कृत भाषा के 'विद्' धातु से मानी जाती है, जिसका अर्थ है– 'ज्ञान' । इस तरह वेद भारतीय मनीषा के चिन्तन एवं ज्ञान का संकलन है। ऋग्वेद, यजुर्वेद,

सामवेद और अर्थवेद के अतिरिक्त ब्राह्मण ग्रन्थ, आरण्यक, उपनिषद् तथा वेदांग साहित्य का समावेश भी वैदिक साहित्य के अन्तर्गत माना जाता है । चारों वेदों को संहिता भी कहते हैं।

(क) **ऋग्वेद संहिता** – ऋग्वेद संसार का प्राचीनतम उपलब्ध ग्रन्थ माना जाता है। इसमें विभिन्न देवी देवताओं की स्तुति में संगृहीत ऋचाएँ हैं। ऋचाओं का मन्त्र नाम से व्यवहार की परम्परा है। ऋचाओं के संग्रह को 'सूक्त' कहते हैं और सूक्तों का संग्रह' मण्डल' कहलाता है । इस प्रकार ऋवेद का विभाजन 10 मण्डलों में किया जाता है, मण्डलों में कुल सूक्त 1028 है, एवं सूक्तों में संग्रहीत कुल ऋचाओं (मन्त्रों) की संख्या 10580 है । वेद की चारों संहिताओं में ऋग्वेद प्राचीनतम है इसकी छाया किसी न किसी रूप में प्रत्येक वेद में दिखलायी देती है।

(ख) **सामवेद संहिता** – सामवेद एक प्रकार से ऋवेद का ही संगीतात्मक रूप है । सामवेद के अन्य गीत–परम्परा में पढ़े जाते हैं । प्राचीन परम्परा के अनुसार सामवेद की 1000 शाखाएँ थीं । वर्तमान में केवल तीन शाखाएँ ही उपलब्ध हैं । भारतीय संगीत का आदि स्रोत 'सामवेद' ही माना जाता है ।

(ग) **यजुर्वेद संहिता** – इसमें यज्ञ प्रक्रिया से सम्बन्धित मंत्रों का संग्रह है । एक मान्यता के अनुसार यजुर्वेद की 101 शाखाएँ थी, पर अधिकांश अब लुप्त हो चुकी हैं । यजुर्वेद के दो रूप उपलब्ध होते हैं– कृष्ण यजुर्वेद और शुक्ल यजुर्वेद । यजुर्वेद की विशेषता है कि इसमें गद्य एवं पद्य दोनों का मिश्रण है, जबकि ऋग्वेद और सामवेद पद्यात्मक है।

(घ) **अथर्ववेद संहिता** – अथर्ववेद पूर्वोक्त तीनों वेदों से परवर्ती, विषय की दृष्टि से बहुआयामी और ऐतिहासिक दृष्टि से अधिक सूचनात्मक है । विषय वस्तु की दृष्टि से अथर्ववेद में लौकिक विषयों से सम्बन्धित सूक्त उपलब्ध होते हैं । कई विद्वान् अथर्ववेद को अन्य वेदों से पृथक मानते है । 'वेदत्रयी' नाम से प्रचलित परम्परा भी इस बात की परिचायक है। अथर्ववेद के 20 काण्डों में 731 सूक्त हैं, जिनमें 6000 मन्त्र हैं । वेद कालीन सामाजिक इतिहास के अध्ययन में अथर्ववेद एक महत्वपूर्ण स्त्रोत है ।

(ङ) **ब्राह्मण** – वैदिक मन्त्रों की कर्मकाण्ड परक व्याख्या करने वाले ग्रन्थ 'ब्राह्मण ग्रन्थ' कहलाते हैं । परम्परा के अनुसार वैदिक मन्त्रों एवं ब्राह्मणों को सम्मितिरूप से वेद नाम भी दिया जाता है– ' मन्त्र ब्राह्मणयोर्वेद नाम धेयम' ब्राहण ग्रन्थ एक प्रकार से संहिता के पूरक ग्रन्थ भी कहे जा सकते हैं, क्योंकि इनमें संहिता मंत्रों की कर्मकाण्ड की दृष्टि से की गई विवेचना संगृहीत है। इस तरह प्रत्येक संहिता से सम्बन्धित पृथक–पृथक ब्राहण ग्रन्थ हैं ।

(च) **आरण्यक** – आरण्यक शब्द संस्कृत के अरण्य (जंगल)शब्द से निष्पन्न है, जिसका अर्थ है अरण्य (जंगल) से सम्बन्धित । अरण्य – शान्ति, नीरवता, एकान्त के सूचक हैं। आरण्यक में वैदिक ऋषियों के कर्मकाण्ड से युक्त चिन्तन–मनन का समावेश है और यह कर्मकाण्ड की आध्यात्मिक व्याख्या प्रस्तुत करता है। आरण्यक की विषय वस्तु को विशुद्ध कर्मकाण्ड और विशुद्ध आध्यात्मिक चिन्तन के बीच की कड़ी माना जा सकता है। ब्राह्मण ग्रन्थों की ही तरह प्रत्येक संहिता के भी पृथक–पृथक् आरण्यक हैं, और संहिता

से सम्बन्धित 'ब्राह्मण ग्रंथो' और आरण्यकों' में कहीं कहीं नाम की भी समानता है; जैसे– 'ऐतरेय ब्राह्मण' और 'ऐतरेय आरण्यक', या 'तैत्तिरीय ब्राह्मण' और 'तैत्तिरीय आरण्यक'। एक में संहिता के मन्त्रों की कर्मकाण्ड परक व्याख्या है, तो दूसरे में कर्मकाण्ड परक आध्यात्मिक चिन्तन–मनन।

(छ) **उपनिषद** – उपनिषद् शब्द 'उप' और 'नि' उपसर्ग पूर्वक 'सद्' धातु से निष्पन्न हुआ है। इसका अर्थ है ज्ञान प्राप्ति के लिए गुरु के समीप जाकर बैठना । उपनिषद् ऐसे अर्थ हैं जिनमें आध्यात्मिक तत्व विवेचना का उत्कृष्टतम निचोड़ (सार) उपलब्ध होता है। उपनिषदों में विषय वस्तु की दृष्टि से आत्मा, परमात्मा, जीव, जगत् प्रलय आदि का विवेचन संगृहित है। इन विषयों से संबन्धित गूढ़, गम्भीर और गहन प्रश्नों और जिज्ञासाओं का सरल भाषा में उत्तर और समाधान उपनिषदों में मिलता है। उपनिषदों की सही संख्या के बारे में विद्वानों में मतभेद है, पर 11 प्रमुख उपनिषदों को सभी ने स्वीकार किया है। उपनिषद् भारतीय चिन्तन–मनन परम्परा के अमूल्य एवम् उत्कृष्टतम ज्ञान– भण्डार हैं।

(ज) **वेदांग** – वैदिक साहित्य (संहिता–ब्राह्मण–आरण्यक–उपनिषद्) के सम्यक् अध्ययन और ज्ञान के लिए जिन शास्त्रों का ज्ञान आवश्यक माना गया है उन्हें वेदांग (वेदों के अंग) कहते हैं । वेदांग छह हैं– 1.शिक्षा, 2.कल्प, 3. व्याकरण, 4. निरुक्त, 5. छन्द और 6. ज्योतिष । इन छह शास्त्रों के ज्ञान के बिना वेदों में अन्तर्निहित अर्थो और रहस्यों को समझ पाना संभव नहीं ।

1. **शिक्षा –** उच्चारण को भारतीय शिक्षण परम्परा में सर्वोच्च स्थान दिया गया है । शिक्षा शास्त्र में वर्णो का उच्चारण, उच्चारण प्रक्रिया, उच्चारण पद्धति एवम् उच्चारण भेदों का निरुपण किया गया है। ये सैद्धान्तिक ध्वनि विज्ञान के ग्रन्थ हैं ।
2. **कल्प** – वैदिक यज्ञानुष्ठान की प्रक्रिया से सम्बन्धित नियमावली को कल्पसूत्रों में उपस्थापित किया गया है।
3. **व्याकरण** – भाषा का विश्लेषण कर जो नियमावली प्रस्तुत की जाती है ,वही व्याकरण है। व्याकरण शास्त्र के अन्तर्गत ध्वनि, शब्द, पद, वाक्य और अर्थ का विश्लेषण किया जाता। भाषा में परिवर्तन के साथ–साथ व्याकरण शास्त्र के नियमों में भी परिवर्तन होता है। यही कारण है कि वैदिक संस्कृत और लौकिक संस्कृत की नियामक वैदिक संस्कृत व्याकरण और लौकिक संस्कृत व्याकरण ये दो धाराएँ विद्यमान हैं ।
4. **निरुक्त** – शब्दों की व्युत्पति और तत्परक अर्थ पर विचार के लिए निरुक्त शास्त्र प्रचलित है ।
5. **छन्द** – वैदिक साहित्य का अधिकांश भाग छन्दोबद्ध है। अत: छन्दों के सम्यक् ज्ञान के लिए छन्द: शास्त्र आवश्यक है ।
6. **ज्योतिष** – यज्ञ प्रक्रिया में काल निर्धारण के लिए ज्योतिष शास्त्र के ज्ञान से ग्रह–नक्षत्र आदि की स्थिति जानने के लिए ज्योतिष शास्त्र का विधान है ।

संक्षेप में संस्कृत की विषयवस्तु संरचना की दृष्टि से संस्कृत के वैदिक साहित्य का संक्षिप्त विवेचन उपर्युक्त प्रकार से प्रस्तुत किया गया है ।

स्व–परख प्रश्न (Self Check Question)

1. वैदिक साहित्य के अन्तर्गत क्या–क्या आता है?
2. वेदांग कौन–कौन से हैं?
3. उपनिषद् पद का क्या अर्थ है?
4. अरण्यक का अर्थ लिखिए।
5. संहिता क्या है?

1.6 संस्कृत लौकिक साहित्य विषय वस्तु संरचना एवं इतिहास

हिन्दी भाषा में जिसके लिए आज 'साहित्य', शब्द का प्रयोग होता है, उसी के लिए संस्कृत में 'काव्य' शब्द का प्रयोग हुआ है– 'कवे: कर्म काव्यम्' । अत: 'काव्य' शब्द से संस्कृत साहित्य की समस्त विधाओं का बोध होता है । सर्वप्रथम काव्य के दो भेद बताये गये हैं, 'श्रव्य काव्य' एवं 'दृश्य काव्य' – ' श्रव्यदृश्यत्वभेदेन पुन: काव्यं द्विधा मतम् ।' यहाँ विधाओं के भेद पर आधारित लौकिक संस्कृत की विषय–वस्तु संरचना का क्रम प्रस्तुत है ।

1.6.1 गद्य काव्य

'छन्दों रहितं गधम' – छन्द विहीन रचना को गद्य कहते हैं । संस्कृत गद्य रचना की परम्परा यजुर्वेद से आरम्भ होती है । ब्राह्मण, आरण्यक, उपनिषदों में परिष्कार के साथ गद्यलेखन की पराकाष्ठा ' बाणभट्ट' (सातवीं शताब्दी) की 'कादम्बरी' में परिलक्षित होती है । संस्कृत की परम्परा में गद्य काव्य का विभाजन दो विधाओं में किया गया है, जिन्हें क्रमश : 'कथा' और 'आख्यायिका' कहते हैं । काल्पनिक वस्तु पर की गई रचना 'कथा' एवम् ऐतिहासिक वस्तु पर की गई रचना 'आख्यायिका' कहलाती है। आधुनिक युग की गद्य रचनाओं– कहानी, उपन्यास, नीतिकथा, आदि का समावेश 'कथा' में तथा ऐतिहासिक विषय वस्तु पर आधारित रचना का समावेश आख्यायिका में किया जा सकता है।

संस्कृत के तीन प्रमुख गद्यकारों में 'सुबंधु' (7वीं शताब्दी), 'दण्डी' (6ठी शताब्दी) और ' बाणभट्ट' (7वीं शताब्दी) के नाम गद्य की उत्कृष्ट रचना के लिए आदर के साथ लिये जाते हैं। इनकी रचनाएँ 'वासवदता' , 'दशकुमारचरित' और 'कादम्बरी' संस्कृत गद्य लेखन के गौरव हैं। जन सामान्य के लिए रोचक गद्य काव्य की भी लम्बी परम्परा है । इनमें 'पञ्चतंत्र' के लेखक विष्णु शर्मा (दूसरी से छठी शताब्दी के मध्य), 'हितोपदेश' के लेखक नारायण पण्डित (14वीं शताब्दी), ' बृहत्कथा के लेखक गुणढ्य (प्रथम शताब्दी), 'कथासरित्सागर' के सोमदेव के नाम आदरणीय हैं। 'वेतालपञ्चविंशतिका ' एवं ' शुकसप्तति' का समावेश भी लोकप्रिय कथाओं में हुआ है।

ऐतिहासिक विषय वस्तु पर आधारित आख्यायिकाओं में बाणभट्ट का 'हर्षचरित' (स्थाण्वीश्वर के राजा हर्षवर्धन के जीवन पर आधारित) और पं. अम्बिकादत्त व्यास (1900 ई.) का 'शिवराजविजय' (शिवाजी के जीवन पर आधारित) प्रमुख है।

1.6.2 पद्य काव्य

'छन्दोबद्धं पद्यम'– अर्थात् छन्द में निबद्ध रचना को पद्य कहते हैं। पद्य के दो प्रमुख भेद हैं– महाकाव्य एवं खण्डकाव्य । महाकाव्य सर्गों में निबद्ध होता है । इसका नायक उत्कृष्ट कोटि के चरित्र वाला मनुष्य या कोई देवता होता है । इसमें श्रृंगार या वीर रस प्रधान होता है और कथा विस्तार के साथ प्रकृति का बहुआयामी वर्णन इसका अभिन्न अंग होता है । **वाल्मीकि** (500 ई.पूर्व.) कृत 'रामायण' सर्व प्रथम महाकाव्य माना जाता है ।इसे 'आदी काव्य' भी कहते हैं। **महर्षि व्यास** (400ई.पूर्व.) का महाभारत भी महाकाव्य की श्रेणी में परिगणित है । महाभारत का दूसरा नाम 'शतसाहस्त्री संहिता' भी प्रसिद्ध है । आधुनिक विद्वान इसे किसी एक व्यक्ति या एक काल की रचना होना नहीं मानते हैं । 8000 श्लोकों में निबद्ध 'भारत' नामक ग्रन्थ क्रमश: परिवर्तित होकर 100000 श्लोकों के 'महाभारत' मे परिणत हुआ ऐसी भी मान्यता है। आज उपलब्ध अन्य महाकाव्यों में अश्वघोष (प्रथम शताब्दी) का 'बुद्धचरित' और 'सौन्दरनन्द' प्राचीनतम है। अश्वघोष के बाद अद्यावधि संस्कृत महाकाव्यों की लम्बी, विकसित तथा अविच्छिन्न परम्परा उपलब्ध है ।

कुछ प्रमुख महाकाव्यों का संक्षिप्त उल्लेख इस प्रकार है, जिन्हें संस्कृत के विषय वस्तु की दृष्टि से प्रतिनिधि रचनाएँ माना जा सकता है ।

कालिदास (पहली शताब्दी ई.पू. से छठी शताब्दी के मध्य) का नाम संस्कृत के अध्येताओं के लिए जाना–पहचाना नाम है । इनके (रघुवंश) और 'कुमार संभव' नाम के दो महाकाव्य उपलब्ध हैं। कालिदास 'उपमा' अलंकार के प्रयोग के लिए प्रसिद्ध हैं । 'उपमा' कालिदासस्य।

भारवि (छठी शताब्दी) का 'किरातार्जुनीयम्' महाकाव्य अर्थ गौरव के लिए प्रसिद्ध है। 'भारवेरर्थ गौरवम्।

माघ का 'शिशुपालवध' महाकाव्य विद्वानों में समादर का स्थान रखता है । यह 'महाकाव्य' उपमा, अर्थ गौरव और पदलालित्य के लिए प्रसिद्ध है । "माघे सन्तित्रयो गुणा: ।" माघ का समय 7वीं शताब्दी माना जाता है ।

श्री हर्ष (12वीं शताब्दी) ने 'नैषधीयचरित' महाकाव्य की रचना की। इसमें कवि के उत्कृष्ट पाण्डित्य और विद्वता का बोध होता है ।

संस्कृत में इतिहास पर आश्रित महाकाव्यों की भी रचना हुई है। इनमें **बिल्हुणं** (11वीं शताब्दी) का विक्रमाङ्क देवचरित, **कल्हण** (12वीं शताब्दी) का राजतरंगिणी और **पदमगुप्त** 11वी शताब्दी) का **नवसाहसांक** चरित्र आदि महाकाव्य प्रमुख हैं।

1.6.3 खण्डकाव्य

महाकाव्य के अतिरिक्त संस्कृत में निबद्ध अन्य सभी छन्दोमय रचनाओं की गणना 'खण्डकाव्य' श्रेणी में होतीहै । इसमें मुक्तक, गीतिकाव्य, स्तोत्र काव्य, दूत काव्य, नीति काव्य आदि जैसी रचनाओं का समावेश होता है । **कालिदास** का 'ऋतुसंहार' एवं 'मेघदूत' **जयदेव** (12वीं शताब्दी) का 'गीतगोविन्द', **भर्तृहरि** (छठी–7वीं शताब्दी) के 'शतक', **अमरुकवि** (7वीं शताब्दी) का 'अमरुशतक' खण्डकाव्य श्रेणी की प्रमुख रचनाएँ हैं ।

1.6.4 चम्पु काव्य

'महाकाव्य' और 'खण्डकाव्य' के अतिरिक्त संस्कृत में 'चम्पूकाव्य' भी उपलब्ध हैं । 'गद्य' और 'पद्य' के मिश्रण वाली रचना को 'चम्पूकाव्य' कहते हैं । 'चम्पूकाव्य' की संख्या अधिक नहीं है । उपलब्ध चम्पू काव्यों में **त्रिविक्रमभट्ट** (10वी शताब्दी) का 'नलचम्पू एवं 'मदालसाचम्पू तथा **सोमवेद सूरी** (10वीं शताब्दी) का 'यशस्तिलक चम्पू' प्रमुख चम्पू काव्य हैं।

संस्कृत पद्य काव्य परम्परों में 'श्रव्य काव्य' श्रेणी के अन्तर्गत 'महाकाव्य' 'खण्डकाव्य' और 'चम्पूकाव्य' का अति संक्षिप्त उल्लेख उनके अनुमानित या संभावित रचनाकाल सहित उपर्युक्त पंक्तियों में दिया गया है । 'पद्य काव्य' की परम्परा में अब 'दृश्य काव्य' और उनकी विषय वस्तु संरचना का संक्षिप्त परिचय प्रस्तुत है ।

1.6.5 दृश्य काव्य

जिस प्रकार श्रवण (सुनने) की वस्तु होने के कारण पूर्व विवेचित विधाओं का समावेश 'श्रव्यकाव्य' की श्रेणी में किया गया है, उसी प्रकार दर्शन (देखने) की वस्तु होने के आधार पर अभिनय पूर्वक मंच पर उपस्थापित की जाने योग्य रचनाओं को 'दृश्यकाव्य' की श्रेणी में रखा जाता है । इस विधा का दूसरा नाम 'रूपक' भी है । अभिनेताओं पर पात्रो के रूप का आरोप होने के कारण इसका नाम रूपक, औंर अभिनय अंश पर बल देने के कारण इसका अपर नाम 'नाट्य' भी है–

'अवस्थानुकृतिर्नाट्यमू, रूपारोपातु रूपकम',

'नाट्य शास्त्र' के आदि आचार्य भरतमुनि ने दृश्य काव्य के दशभेद बतलाये हैं । ये क्रमश: इस प्रकार हैं, – नाटक, प्रकरण, भाण, व्यायोग, समवकार, डिम, इहामृग, अंक, वीथी, और प्रहसन ।– 'नाटकमथप्रकरणं भाणव्यायोग समनेकार डिमा:, इहामृगांकवोय्य: प्रहसनमिति रूपकाणि दश ' । इन दस भोदों में नाटक सर्वाधिक प्रचलित हुआ। अन्य भेदों में उपलब्ध साहित्य की संख्या नगण्य है । नाटक की कथावस्तु इतिहास प्रसिद्ध एवं लोकपरिचित होती है और प्रकरण की कथावस्तु सामाजिक विषय पर आधारित होती है । नाटक का नायक देवता या राजा होता है, जिसमें विशेष उदात्त गुणों का आधान अनिवार्य हैं । संस्कृत के सुप्रसिद्ध नाटककारों में भास, कालिदास, विशाखदत्त, हर्ष, भवभूति, भट्टनारायण आदि प्रमुख है ।

उपलब्ध नाटक साहित्य में भास सर्वाधिक प्रचालित नाटककार हैं। इनके 13 नाटक उपलब्ध हैं।

भास के नाटक (100 ई. पू. - 200 ई. पू.)

विषयवस्तु के आधार पर भास के नाटकों का निम्नानुसार वर्गीकरण किया जा सकता है।

1. रामायण पर आश्रित नाटक – (1) प्रतिभा, (2) अभिषेक
2. महाभारत पर आश्रित नाटरक – (3) बाचरित, (4) पञ्चराय, (5) मध्यभव्यायोग, (6) दूतवाक्य, (7) दूतघटोत्कच (8) कर्णभर, (9) उरूभङ्
3. उदयन की कथा पर आश्रित नाटक (10) स्वप्नवासयदत्ता, (11) प्रतिज्ञा सौगन्ध

4. कल्पितरुपक (12) अविमारक, (13) चारूदत्त

कालिदास के नाटक (दूसरी से छठी शताब्दी)

महाकाव्य एवं खण्ड काव्य की तरह ही नाटकों की रचना में भी कालिदास अद्‌वितीय हैं । इनके 3 नाटक उपलब्ध है जो श्रृंगार रस प्रधान है– 1. मालविकाग्निमित्र, 2. विक्रमोर्वशीय, 3. अभिज्ञानशाकुन्तल

1. भालविकाग्निमित्र – यह पाँच अंकों का नाटक ऐतिहासिक कथानक पर अधारित है। इसमें शुंगवंश के राजा अग्निमित्र और दासी के वेश में रहने वाली विदर्भ की राजकुमारी मालविका का प्रेम वर्णन है।
2. विक्रमोर्वशीय – यह पाँच अंकों का नाटक है । इसमें राजा पुरुरवा और अप्सरा उर्वशी की प्रेमकथा का वर्णन है।
3. अभिज्ञानशाकुन्तल – यह कालिदास का न केवल सर्वश्रेष्ठ अपितु विश्व साहित्य में भी प्रमुख नाटक के रूप में सुविख्यात है। 7 अंकों के इस नाटक मे राजा दुष्यन्त और शकुन्तला के प्रेम का वर्णन है ।

विशाखदत्त (15वीं–छठी शताब्दी)

मुद्राराक्षस – विशाखादत्त का यह सात अंकों का नाटक चन्द्रगुप्त के मन्त्री चाणक्य और नन्द के मन्त्री राक्षस की राजनीति को आधार बना कर लिखा गया है । इनमें नायिका पात्र का सर्वथा अभाव है।

हर्ष (7वीं शताब्दी)

नागानन्द – हर्ष ने जीमूतवाहन की कथा को आधार बनाकर पाँच अंकों का नाटक लिखा।

प्रियदर्शिका एवं रत्नावली भी इन्हीं की नाट्यकृतियाँ हैं । इनकी नाट्य कृतियों में बौद्ध धर्म का प्रभाव है ।

भवभूति (7वीं शताब्दी)

संस्कृत नाटककारों में कालिदास के बाद अन्य नाटककारों से विलक्षण एवं मूर्धन्य नाटक कार हैं । इन्होंने करुण रस को जीवन का मुख्य रस माना है ।

महावीर चरित – भवभूति ने इस नाटक में राम के चरित के पूर्वार्द्ध को आधार बनाया है ।

उत्तररामचरित – यह नाटक भी राम की कथा पर आधारित है और इसका आधार राम के चरित का उत्तरार्द्ध है ।

मालतीमाधव – यह भी भवभूति का ही नाटक है जिसकी गणना समालोचक दृश्य काव्य की 'प्रकरण' विधा में करते हैं ।

भट्टनारायण (7वीं 8वीं शताब्दी)

वेणीसंहार – भट्टनारायण कृत यह नाटक वीररस प्रधान है । इसमें महाभारत की कथा के उस प्रसंग को आधार बनाया गया है जिसमें दु:शासन के रक्त से भीम द्रौपदी की खुली हुई वेणी (चोटी) का पुन: संहरण करता है ।

राजशेखर (7वीं शताब्दी)

महानाटक – रामायण को आधार बनाकर राम के राज्याभिषेक तक के वर्णन वाला राजशेखर का यह नाटक दस अंकों वाला है ।

बालभारत – इसमें महाभारत की कथा को नाटकीय रूप दिया गया है, पर यह नाटक पूर्णरूप में उपलब्ध नहीं है ।

विद्धशालभखिका – यह एक नाटिका है।

अश्वघोष (प्रथम शताब्दी)

शारीपुत्र प्रकरण – अश्वघोष के इस नाटक (प्रकरण) में शारीपुत्र एवं मौद्गलायन द्वारा बौद्धधर्म स्वीकार किये जाने की कथा है ।

शूद्रक (तीसरी–चौथी शताब्दी)

मृच्छकटिक– शूद्रक कृत यह प्रकरण सर्वाधिक प्रसिद्ध है । इसमें तत्कालीन समाज एवं राजनीतिक विश्रृंखलता का अत्यधिक स्पष्ट एवं सशक्त तथा मनोहारी वर्णन किया गया है ।

इन पंक्तियों में संस्कृत दृश्यकाव्य विधा का विषयवस्तु संरचना की दृष्टि से दिङ्मात्र निर्देश किया गया है ।

स्व–परख प्रश्न (Self–Check Questions)

1. गद्य एवं पद्य का क्या अर्थ है?
2. संस्कृत के तीन प्रसिद्ध ग्रंथकार कौन हैं? उनकी रचनाओं के नाम लिखिए।
3. संस्कृत के प्रसिद्ध महाकाव्यों के नाम लिखिए।
4. चम्पु काव्य का क्या अर्थ है?
5. खण्ड काव्य की परिभाषा दीजिए।

1.6.6 पौराणिक साहित्य

पुराण शब्द का अर्थ है – प्राचीन या पुराना, किन्तु संस्कृत के लौकिक साहित्य की श्रेणी में 'पुराण' के नाम से जिस साहित्य की रचना की जाती है, वे काल की दृष्टि से 'पुराण' नहीं कहे जाते, अपितु एक विशिष्ट शैली में रचित साहित्य को 'पुराण' नाम दिया गया है । इस साहित्य का धार्मिक महत्त्व है । जैसे वैदिक धर्म के लिए वेदों का महत्त्व हैं वैसे ही उत्तरकालीन वैष्णव मत एवं शैवमत के लिए लोक में पुराणों का महत्व है ।

पुराणों का आधार अनेक वैदिक गाथाएँ हैं, किन्तु रचना की दृष्टि से इनका मुख्य विषय कथाओं के माध्यम से सम्बद्ध देवता की उत्कृष्टता, शक्तिमत्ता और प्रभुता को स्थापित करना है। इसीलिए वैष्णव पुराणों में जहाँ विष्णु को सर्वशक्तिमान बतलाया गया है, वहीं शैव पुराणों में शिव का प्रभुत्व स्थापित किया गया है । पुराणों की विषय वस्तु केवल धार्मिक ही नहीं, सामाजिक एवम ऐतिहासिक भी है, किन्तु धार्मिक प्रकरणों पर विशेष बल के कारण अन्य वस्तुएँ दब कर रह गई हैं । पुराणों की विषय वस्तु के बारे में कहा जाता है कि – सर्ग अर्थात् सृष्टि, प्रतिसर्ग अर्थात् पुन: सृष्टि, मन्वन्तर (विभिन्न मनुओं के युग), वंश, वंशानुचरित (सूर्यवंशी, चंद्रवंशी आदि) ये पुराण के पाँच लक्षण हैं ।

'सर्गरच प्रतिसर्गश्च वंशों मन्वन्तराणिच ।

वंशानुचरित चैव पञ्चलक्षणम् । । '

इस तरह सृष्टि विषयक मान्यताओ, देवताओं एवं महापुरुषों के कृत्यों, मानव जाति के पूर्वजों, राजाओं की वंशावलियों आदि का वर्णन ही पुराणों का मुख्य विषय है । पुराणों की संरचना या संकलन का श्रेय महर्षि व्यास (तीसरी शताब्दी ई.पू.) को देने की मान्यता रही है; यथा – 'अष्टादशपुराणेषु व्यासस्य वचनद्वयम् ।' पौराणिक साहित्य को 'महापुराण' एवं 'उपपुराण' नामक दो भागों में विभक्त किया जाता है । महापुराणों की संख्या 18 हैं, जबकि उपपुराणों की संख्या के विषय में विद्वानों में मतभेद है ।

18 महापुराणों की संख्या एवं नाम के बोध के लिए यह श्लोक प्रसिद्ध है–

'मद्वयं भद्वयं ब्रचैव त्रय व चतुष्टयम् ।
अनाप लिंग कूस्कानि पुराणानि पृथक् पृथक् । ।

अर्थात् 'म' वर्ण से प्रारम्भ होने वाले दो पुराण - मत्स्या एवं मार्कण्डेय 'भ' से प्रारंभ दो पुराण – भागवत एवं भविष्य, 'ब्र' से तीन पुराण – ब्रह्म, ब्रहवैवर्त, ब्रह्माण्ड, 'व' से चार – विष्णु, वराह, वामन, वायु, 'अ' से – अग्नि, 'ना' से नारद, 'प' से पद्म, 'लि' से लिंग, 'ग' से गरुड, 'कू' से कूर्म और 'स्क' से स्कन्द – ये 18 पुराण हैं ।

ऐसी परम्परा है कि विष्णु, नारद, भागवत, गरुड़, पद्म और वराह वैष्णव पुराण हैं। ब्राह्मण, ब्रसवैवर्त, मार्कण्डेय, भविष्य, वामन और ब्रह्म बह्मपुराण हैं । मत्स्य, कूर्म, लिंग और अग्नि शैवपुराण हैं । तथापि शिवपुराणों में वैष्णव परिच्छेद और वैष्णव पुराणों में शिव परिच्छेद मिलते हैं । अत: शैव एवं विष्णव पुराणों का विभाजन देवताओं की प्रमुखता पर आधारित है अन्य किसी विषय पर नहीं । पुराण भूत काल की घटनाओं का वर्णन करते हैं । इनमें राजवंशों का भी उल्लेख है । प्राचीन भारत के राजनैतिक इतिहास की जानकारी के साथ–साथ वर्णो और आश्रमों के कर्त्तव्य, अधिकार, संस्कार, उत्सव, अनुष्ठान आदि के अध्ययन की दृष्टि से पुराणों का महत्त्व है । पुराण लोक–शिक्षण की दृष्टि से भी महत्त्वपूर्ण हैं । कथाओं के सामान्यजन बोधगम्य वर्णन से समाज की लोकमान्यता भी संस्कृत साहित्य में पुराणों की प्रतिष्ठा की द्योतक है । नीति परक उपदेशों और उद्धरणों के लिए भी पुराण प्रमुख स्रोत हैं । संक्षेप में यह कहना समीचीन लगता है कि पुराण भारतीय समाज के अतीत के दर्पण हैं ।

1.6.7 शास्त्रीय साहित्य

'काव्य शास्त्र विनोदेन कालो गच्छति धीमताम् ।
व्यसनेनतु मूर्खाणां निद्रया कलहेन वा ।।'

श्लोकार्थ – काव्य और शास्त्र के विनोद (मनन–अध्ययन) से बुद्धिमान व्यक्ति अपना समय व्यतीत करते हैं, जबकि मूर्खों का समय व्यसन, निद्रा और कलह (झगड़ों) में बीतता है ।

उपर्युक्त श्लोक में काव्य और शास्त्र में विभेद स्पष्ट प्रतीत होता है । अब तक संस्कृत के 'लौकिक साहित्य' के अन्तर्गत काव्य (श्रव्य–दृश्य, या पद्य–गद्य चम्पू–नाटक आदि) की विवेचना की गई । काव्य का प्रयोजन रसास्वाद या रसानुभूति है, सामान्य ज्ञान की उपलब्धि भी काव्य से होती है । काव्य के अतिरिक्त भी संस्कृत में ऐसे विपुल साहित्य भण्डार विद्यमान हैं जिनमें दार्शनिक– अध्यात्मिक–वैज्ञानिक धार्मिक विषयों पर गहन एवं अतिसूक्ष्म अध्ययन

और अनुभूतिजन्य ज्ञान संगृहीत है । इस विधा को 'शास्त्रीय साहित्य' शीर्षक से जाना जाता है। शास्त्रीय साहित्य पद्य–गद्य–प्रश्नोत्तर–विवेचना शैलियों में निबद्ध है। भारत के मनीषियों के उच्चस्तरीय ज्ञान–विज्ञान की जानकारी और भारतीय अस्मिता के सम्यक् अवबोध के लिए प्रत्येक व्यक्ति को संस्कृत में निबद्ध विभिन्न प्रकार के शास्त्रीय साहित्य की योग्यता और क्षमतानुरूप जानकारी आवश्यक है । संस्कृत शिक्षण और अध्ययन से जुड़े व्यक्तियों के लिए तो शास्त्रीय साहित्य की थोड़ी बहुत जानकारी सर्वथा अनिवार्य है । शास्त्रीय साहित्य का महत्व इस पद्य में स्पष्ट है–

'अनेक संशयच्छेदि परोक्षार्थस्य दर्शकम् ।

सर्वस्व लोचनम शास्त्र यस्य नास्त्यांध एवं स: ।'

अर्थात् – शास्त्र अनेक प्रकार के संशयों (मानसिक–वैचारिक–बौद्धिक संदेहों एवं शंकाओं) को नष्ट करने वाला और परोक्ष सत्य (वह वास्तविकता जो प्रत्यक्ष देखने में नहीं अती, जो अप्रत्यक्ष है) को दिखाने वाला नेत्र है। जिसके पास शास्त्ररूपी नेत्र (लोचन) नहीं हैं, वह व्यक्ति तो (आँखे होते हुए भी) अन्धा ही है । संस्कृत वाड्मय में उपलब्ध विपुल शास्त्रीय साहित्य और विषय वस्तु का संक्षेप में परिचात्मक विवरण प्रस्तुत है ।

प्राचीन भारतीय समाज व्यष्टि और समष्टि की दृष्टि से वर्ण (व्यवसाय) और आश्रम (अवस्था) के गुण–कर्म पर आधारित था और प्रत्येक व्यक्ति के जीवन का उद्देश्य चार पुरुषार्थों (धर्म–अर्थ–काम–मोक्ष) को प्राप्त करना था। इन पुरुषार्थो की विवेचना, एतन्निमित प्रयत्न, इनके शास्त्रीय साहित्या की विषयवस्तु संरचना के आधार हैं ।

1.6.8 दर्शनशास्त्र

उपनिषदों में आध्यात्मिक चिन्तन का जो स्वरूप उपलब्ध होता है, वह वेदों से प्रेरित है । बाद के समय में आध्यात्मिक चिन्तन की परम्परा दो दिशाओं में विकसित हुई ,–एक वह जिसमें वेद प्रमाणस्वरूप माने गये, तथा दूसरी वह जिसमें वेदों को प्रमाण नहीं माना गया । दर्शन शास्त्र ऐसा शास्त्र है जिसमें भौतिक जगत् (दृश्य जगत्) से अतिरिक्त शक्तियों एवं उन शक्तियों का मानव से सम्बन्ध विचारणीय विषय होता है । इस प्रकार यह शास्त्र स्थूल जगत् को बाहर से देखने के बजाए सूक्ष्म जगत् के आन्तरिक (वास्तविक) स्वरूप को देखने (दर्शन करने), पहचानने और समझने की कोशिश करता है । इसीलिए इस शास्त्र का नाम ही 'दर्शन शास्त्र' पड़ गया । वेद को प्रमाण मानने वाले प्रमुख दर्शन छ : हैं– 1. सांख्य, 2. यौग, 3. न्याय, 4. वैशेषिक, 5 मीमांसा, और 6. वेदान्त। वेद को प्रमाण नहीं मानने वाले प्रमुख दर्शन तीन हैं– 1. चार्वाक् 2. जैन, और 3. बौद्ध ।

इन दर्शनों के प्रत्येक के एक–एक प्रवर्तक महर्षि हैं। महर्षि द्वारा प्रवर्तित सिद्धान्तों और विचारों की परवर्ती अनुयायी आचार्यो ने टीका टिप्पणी – व्याख्या– भाष्य आदि की रचना करके विस्तार किया और इस तरह प्रत्येक दर्शन का विपुल शास्त्रीय साहित्य अस्तित्व में आया । समय के साथ–साथ इन दर्शनों की शाखाएँ और सामान्तर सिद्धान्त और विचारधाराएं भी विकसित हुईं, पर इनका मूल आधार प्रवर्तक महर्षि के सिद्धान्त ही थे, तथा व्याख्या भेद से शाखाओं की स्वतन्त्र पहचान अस्तित्व में आई ।

सांख्य दर्शन

भारतीय दर्शनों में सांख्य सबसे प्राचीन दर्शन है । सांख्य दर्शन के सिद्धान्त उपनिषद् महाभारत आदि प्राचीन ग्रन्थो में उपलब्ध होते हैं । सांख्या दर्शान के प्रवर्तक महर्षि कपिल (700 ई.पू.) माने जाते हैं । सांख्य में प्रकृति और पुरुष इन दो तत्वों की सत्ता मानी गई है । इन दोनों के परस्पर सहयोग से सृष्टि होती है ।

योग दर्शन

योग के प्रवर्तक महर्षि पतञ्जलि (185 ई.पू.) हैं । सांख्य और योग परस्पर पूरक दर्शन हैं । सिद्धान्त का बोध सांख्य द्वारा और प्राप्ति का उपाय योग के माध्यम से उपलबध होता है । मोक्ष प्राप्ति हेतु योग में आठ साधन– 1. यम, 2. नियम, 3. आसन, 4. प्राणायाम 5. प्रत्याहार, 6. धारणा, 7. ध्यान और 8. समाधि बताये गये हैं ।

न्याय दर्शन

न्याय के प्रवर्तक महर्षि गौतम (5वी ई.पू.) हैं । न्याय दर्शन में तर्क और विश्लेषण की पद्धति से सत्य तक पहुँचने का प्रयास किया गया है, इसलिए इसे तर्कशास्त्र भी कहते हैं । इसमें प्रमाण और प्रमेय (जानने योग्य तत्व) पर विचार किया गया है ।

वैशेषिक दर्शन

न्याय में जहाँ प्रमाण का विशेष विवेचन है, वहीं वैशेषिक में प्रमेय पदार्थो का विवेचन मुख्य है । वैशेषिक के प्रवर्तक महर्षि कणाद (500 ई.पू.) हैं । न्याय और वैशेषिक अनेक बिन्दुओं पर परस्पर प्रभावित करते हैं अत: दोनों को एक साथ ही 'न्याय और वैशेषिक दर्शन' से अभिहित करते हैं ।

मीमांसा दर्शन

मीमांसा के प्रवर्तक महर्षि जैमिनि (600 ई.पू.) हैं । कर्मकाण्ड के सन्दर्भ में वेदों की व्याख्या सम्बन्धी नियमों को स्थापित करना मीमांसा दर्शन का उद्देश्य है । मीमांसा दर्शन के अनुसार मोक्ष का एकमात्र साधन है– वेदविहित यज्ञयाग का विधिवत् अनुष्ठान करना ।

वेदान्त दर्शन

वेदान्त के प्रवर्तक महर्षि बादरामण व्यास (300 ई.पू.) हैं । वेदान्त दर्शन का दूसरा नाम उत्तरमीमांसा या ब्रह्ममीमांसा भी है । वेदान्त के अनुसार जगत् की सत्ता तभी तक रहती है जब तक मानव को ब्रह्मज्ञान नहीं हो जाता । वेदान्त में एकमात्र सत्ता ब्रह्मा की ही मानी गई है, जिसे माया तिरोहित कर लेती है और तब ब्रह्म में अनेकता का बोध होनें लगता है । बादरायण के ब्रह्मसूत्र पर सर्वाधिक आचार्यो ने भाष्य लिखे हैं– जिनमें आचार्य शंकर प्रमुखतम हैं।

चार्वाक दर्शन

आचार्य बृहस्पति प्रणीत चार्वाक दर्शन भौतिकतावादी और भोगवादी विचार धारा को प्रतिपादित करता है । दैहिक सुख को ही यह दर्शन परम सुख मानता है। परलोक के सुख की कामना में इहलोक के सुख का परित्याग यह दर्शन स्वीकार नहीं करता।

बौद्ध दर्शन

बौद्ध दर्शन गौतम बुद्ध के सिद्धान्तों का अनुसरण करता है। बुद्ध के उपदेश 'त्रिपिटक' नाम से पालि भाषा में निबद्ध है ।

जैन दर्शन

जैन दर्शन के सिद्धान्तों का अन्तिम रूप से प्रतिपादन तीर्थकर वर्धमान महावीर के उपदेशों से हुआ है । जैन दर्शन के अनुसार 'ज्ञान' जीव में विद्यमान रहता है, किन्तु पूर्व कर्मो के प्रभाव से प्रकाश में नहीं आता । जैन दर्शन में सम्यक् दर्शन, सम्यक् ज्ञान और सम्यक् चरित्र मोक्ष प्राप्ति के साधन हैं ।

इस तरह शास्त्रीय साहित्य की श्रेणी में 'दर्शन शास्त्र' का संक्षिप्त विवेचन किया गया है।

1.6.9 धर्मशास्त्र

'धर्म' शब्द संस्कृत की 'धृ' धातु से निष्पन्न है जिसका अर्थ होता है– धारण करने वाला। जो लोक को धारण करे अथवा जिसके द्वारा लोक धारण किया जाए, उसे संस्कृत में धर्म कहते हैं । धर्म के अन्तर्गत उन शाश्वत् नियमों का विधान किया गया जिनके आधार पर यह संसार सम्यक् प्रवर्तित होगा । धर्म शब्द का अँग्रेजी के रिलिजन (Religion) शब्द का पर्याय मान लने से धर्म शब्द की सही अवधारणा एवं धर्मशास्त्र सम्बन्धी अनेक भ्रम आज व्याप्त हो गये हैं ।

धर्मशास्त्र में वैसे नियमों का विधान किया गया है जो समाज के मर्यादा पूर्वक आदर्श परिचालन के लिए आवश्यक है । धर्मशास्त्र विषयक ग्रंथो में जिन विषयों की विवेचना की गई है उनमें प्रमुख हैं– जगत् की उत्पत्ति, युग, धर्मशास्त्र की विषयवस्तु, धर्म के लक्षण, संस्कार, कर्त्तव्य, विवाह संस्कार, ब्रह्मचारी–गृहस्थ–सन्यासी आदि के कर्त्तव्य, जीवनचर्या, राजधर्म, राजा के गुण–दोष, उत्तराधिकार, धन सम्बन्धी अधिकार, पाप, पुण्य, प्रायश्चित, आत्मा ज्ञान की विधि आदि । धर्मशास्त्रों को 'स्मृति' भी कहा जाता हैं– जैसे कि वेदों को 'श्रुति' – 'श्रुतिवस्तु वेदो विज्ञेयो धर्मशास्त्रतु वै स्मृति'। श्रुति और स्मृति दोनों को मिलाकर आदर्श आचार का विधान किया गया था, अत: धर्मशास्त्र के सभी शब्दों में प्राय: 'स्मृति 'शब्द लगा हुआ है । स्मृतियों की संख्या 150 से भी अधिक है जिनमें कुछ प्रमुख हैं– मनुस्मृति, याज्ञवल्ल स्मृति, नारद स्मृति, पाराशर स्मृति, बृहस्पति स्मृति आदि । स्मृतियों का रचना काल ई. पू. का माना जाता है ।

1.6.10 व्याकरण शास्त्र

व्याकरण को वेदांग माना जाता है । व्याकरण को वेदों का मुख भी माना जाता है– 'मुखं व्याकरण प्रोक्तम'। वेदों से लेकर पुराणों तक भाषिक चिन्तन सम्बन्धी सूत्र बिखरे मिलते है, लेकिन प्राचीन काल के व्याकरण ग्रन्थ काल कवलित हो चुके हैं ।

पाणिनि (5000 ई.पू.) की 'अष्टाध्यायी' व्याकरण ग्रंथो में विशिष्ट स्थान रखती है । पाणिनि के पूर्व भी व्याकरण के आचार्य थे पर उनका कोई ग्रन्थ आज उपलब्ध नहीं है । पाणिनि व्याकरण परम्परा में तीन आचार्यो को प्रमाणभूत माना जाता है– सूत्रकार पाणिनि, 2

वार्तिककार कात्यायन (300 ई.पू.) और, भाष्यकार पतञ्जलि (185 ई.पू.)। संस्कृत भाषा की संरचना, नियम, विकास, शब्दनिर्माण और व्याकरण सम्ब–धी सभी सन्दर्भो के लिए ये तीनों ही आचार्य प्रमाण माने जाते हैं । पाणिनि के सूत्रों पर ही आधारित प्रक्रिया पद्धति का विकास हुआ जिससे संस्कृत व्याकरण का अध्ययन और शिक्षण अपेक्षाकृत भट्टोजी दीक्षित की सिद्धान्त कौमुदी चरमोत्कर्ष की रचनाएँ हैं । पाणिनीय व्याकरण के अतिरिक्त विभिन्न क्षेत्रों में प्रचलित अन्य व्याकरण पद्धतियाँ भी विकसित हुई जिनमें ऐन्द्र, चान्द्र, शाकटायन, सारस्वत, हैम आदि पद्धतियाँ प्रचलित रही ।

शब्द रूपों व सिद्धि, अर्थ का स्वरूप एवम् अर्थ सम्प्रेषण की प्रक्रिया पर व्याकरण शास्त्र में विस्तार से विचार किया जाता है । आधुनिक काल में 'भाषाविज्ञान' नामक शास्त्र के अन्तर्गत जिन पक्षों पर विचार किया जाता है, प्राय: वे सभी संस्कृत की व्याकरणीकृत परम्परा में चिन्तन और अध्ययन का विषय रहे हैं । सच तो यह है कि आधुनिक भाषा विज्ञान का उदय संस्कृत भाषा एवं व्याकरण की प्रेरणा से अनुप्राणित है । शब्द निर्माण, ध्वनि एवम् अर्थ विज्ञान, उच्चारण सम्बन्धी विषयों की व्याकरण सम्मत सुस्पष्ट परम्परा के अनुरूप विकसित होने के कारण ही संस्कृत भाषा को वैज्ञानिक पद्धति पर विकसित विश्व की प्रमुखतम भाषा का गौरव प्राप्त है, और वैज्ञानिक पद्धति पर आधारित व्याकरण के कारण ही संस्कृत का स्वरूप अविच्छिन्न और अक्षुण्ण बना रह पाया है!

1.6.11 काव्य शास्त्र

कवि की कृति को काव्य कहते हैं । काव्य की समीक्षा, समालोचना और सैद्धान्तिक स्थापना के लिए जिस शास्त्र की रचना हुई उसे काव्यशास्त्र, साहित्यशास्त्र या अलंकार शास्त्र के नाम से जाना जाता है । काव्य के मूल्यांकन के लिए काव्य के उपादेयों – रस, ध्वनि, रीति, गुण अलंकार, दोष आदि का अनुशीलन काव्याशास्त्र करता है । भरतमुनि (100 ई. पू. से 300 ई.पू) का नाट्यशास्त्र काव्य शास्त्र का सबसे प्राचीन उपलब्ध ग्रन्थ है । काव्यशास्त्र पर लिखने वाले आचार्यो की लम्बी परम्परा रही है । कुछ प्रमुख कृतियाँ इस प्रकार हैं– भामह का 'काव्यालंकार', दण्डी का 'काव्यादर्श' वामन का काव्यालंकार सूत्र', आनन्दवर्धन का ' ध्वन्यालोक', राजशेखर की ' काव्यमीमांसा ', क्षेमेन्द्र की 'औचित्य विचार चर्चा', मम्मट का 'काव्य प्रकाश' पण्डितराज जगन्नाथ का 'रसगंगाधर' और विश्वनाथ का 'साहित्य दर्पण' आदि ।

1.6.12 कामशास्त्र

भारतीय परम्परा में पुरुषार्थ चतुष्टय के अन्तर्गत मनुष्य के लिए धर्म–अर्थ–काम–मोक्ष का महत्त्वपूर्ण स्थान है । जीवन को समग्रता में देखने की भारतीय दृष्टि 'काम' को भी उतना ही महत्व देती है जितना कि धर्म– अर्थ–मोक्ष को । इसलिए काम शास्त्र का विवेचन प्राचीन काल से ही होता आया है । कामशास्त्र का विवेच्य विषय स्वस्थ, सक्रिय, नीरोग, सन्तुलित एवम् आनन्दायक जीवन का प्रतिपादन करना है । कामशास्त्र का सबसे प्राचीन उपलब्ध ग्रन्थ महर्षि वात्स्यायन (तीसरी शताब्दी) का 'कामसूत्र' है ।

1.6.13 अर्थशास्त्र

आज के सन्दर्भ में जिसे राजनीतिशास्त्र कहते हैं, उसके लिए संस्कृत में ' अर्थशास्त्र' शब्द का प्रयोग हुआ है । यह अँग्रेजी के शब्द Economics इकोनोमिक्स से भिन्न है । अर्थशास्त्र के लिए राजशस्त्र, राजनीति, या दण्डनीति शब्दों का भी प्रयोग हुआ है । कौटिल्य (चाणक्य) (400ई. पू.) का अर्थशास्त्र इस विषय का प्राचीनतम ग्रन्थ है जो प्राचीन भारत के सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक और धार्मिक जीवन के अध्ययन का महत्वपूर्ण स्रोत है ।

1.6.14 आयुर्वेदशास्त्र

जिस विज्ञान के लिए आज चिकित्सा विज्ञान अथवा चिकित्सा शास्त्र शब्दों का प्रयोग होता है संस्कृत में उसके लिए 'आयुर्वेद' शब्द का प्रयोग किया गया है । यह शास्त्र केवल रोगों की चिकित्सा का विधान ही नहीं करता अपितु मनुष्य की सम्यक् स्वास्थ्य व्यवस्था को आधार बनाकर चलता है । आयुर्वेद का मूल विवेच्य विषय है– स्वस्थ रहने की प्रक्रिया, आहार–व्यवहार आदि और यदि किन्हीं कारणों से व्यक्ति अस्वस्थ हो जाता है तो उसके रोग की चिकित्सा का विधान करना । आज आयुर्वेद का प्राचीनतम ग्रन्थ आचार्य चरक (500 ई. पू. से 200 ई. पू. के मध्य) का 'चरक संहिता' है । दूसरा प्रमाण भूत ग्रन्थ आचार्य सुश्रुत (500 ई.पू.) का 'सुश्रुत संहिता' है, जिसमें शल्य चिकित्सा का विशेष उल्लेख मिलता है । इनके अतिरिक्त भी रोगों की प्रकृति, निदान, औषधि विधान, वनस्पतियों– औषधियों की पहचान, शरीर विज्ञान आदि से सम्बन्धित अनेक प्रसिद्ध ग्रन्थ परवर्ती काल में लिखे गये हैं ।

1.6.15 ज्योतिष शास्त्र

ज्योतिष की परिगणना वेदांग के अन्तर्गत की गई हैं । यह वेद का नेत्र माना गया है । ज्योतिष शास्त्र के अन्तर्गत तीन क्षेत्र आते हैं– सिद्धान्त ज्योतिष, फलित ज्योतिष, और गणित ज्योतिष शास्त्र । ज्योतिष शास्त्र के अन्तर्गत ग्रहों–नक्षत्रों की गति का अध्ययन, भूमण्डलीय वातावरण पर उनका प्रभाव, ग्रह–नक्षत्रों की विभिन्न स्थितियों में जन्म लेने वाले व्यक्तियों के जीवन पर पड़ने वाले प्रभाव और सौरमण्डल का अध्ययन आदि विषय आते हैं । ज्योतिष शास्त्र के प्रसिद्ध आचार्य और उनकी कृतियाँ हैं– आर्यभट्ट (पाँचवी शताब्दी) की ' आर्यभटीय', 'दशगीतिका सूत्र', अर्माष्टक, वराहमिहिर (छठी शताब्दी) की 'पञ्चसिद्धान्तिका', भास्कराचार्य की 'सिद्धान्त शिरोमणी'। ज्योतिष शास्त्र के कुछ अन्य उल्लेख्य आचार्यों के नाम हैं– लल्ल (शिष्यधीवृद्धितंत्र)ब्रह्मगुप्त (ब्रह्म स्फुट सिद्धान्त ओर भोज (राजमृगांक) परवर्ती काल में ज्योतिष शास्त्र पर अनेक रचनाएँ लिखी गई जिनका ज्योतिष के अध्ययन में रुचि रखने वाले अध्येताओं के लिए विशेष महत्त्व है ।

इनके अतिरिक्त भी संस्कृत में अन्य विषयों से संबन्धित शास्त्रों का भण्डार विद्यमान है। उनका अति संक्षिप्त विवरण निम्नानुसार है–

– **तन्त्रशास्त्र** (आगम शास्त्र) वेदों पर आश्रित शास्त्रों के समानान्तर ही ज्ञान–विज्ञान की एक अन्य धारा भी विकसित हुई । परम्परा में भी निगम और आगम की मान्यता स्वीकार की गई है। शैव–वैष्णव–शाक्त मतों में उपासना पद्धति आधारित अनेक आगम भी संस्कृत में लिखे गये हैं ।

– **कोश शास्त्र** – वैदिक और लौकिक संस्कृत शब्दों के संग्रह और विवेचना करने वाले शास्त्रों का नाम कोशशास्त्र है ।

– **छन्दःशास्त्र** – छन्द की गणना वेदांग में की गई है । छन्द को वेद का चरण माना गया है । वैदिक और लौकिक संस्कृत वाङ्मय में प्रयुक्त छन्दों की विवेचना और उनके लक्षणों का प्रतिपादन 'छन्दशास्त्र' मे उपलब्ध होता है ।

– **वास्तुशास्त्र** – मन्दिर – प्रासाद– आवास आदि के निर्माण में विचारणीय विषयों का विवेचन 'वास्तुशास्त्र' में मिलता है । इसी तरह 'शिल्प' से सम्बन्धित विषयों का उल्लेख 'शिल्प शास्त्र' में मिलता है ।

विगत पृष्ठों में संस्कृत की विषय वस्तु संरचना से सम्बन्धित संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत किया गया है । ऋग्वेद (2000 ई.पू. से 1300 ई. पू.) से प्रारंभ होकर ब्राह्मण, उपनिषद् आरण्यक, वेदांग, सहित वैदिक वाङ्मय और लौकिक साहित्य के अन्तर्गत रामायण, महाभारत, पुराण, पद्यकाव्य, गद्यकाव्य, नाटक, विविध विधाओं में रचित शास्त्रीय साहित्य का उनके अनुमानित रचनाकाल के उल्लेख सहित परिचयात्मक विवरण यहाँ दिया गया है । किसी विशेष विधा के विशेष परिचय और विद्वतापूर्ण अध्ययन के लिए उस विधा, काव्य, या ग्रंथो के महत्व का तो कोई विकल्प है नहीं, सिवाए इसके कि सन्दर्भान्तर्गत मौलिक ग्रन्थ का ही अध्ययन किया जाए, तथापि, संस्कृत भाषा और संस्कृत वाङ्मय के शिक्षकों और अध्येताओं को इस संक्षिप्त विवरण से संस्कृत की विषयवस्तु सरंचना का विहंगम दृष्टि से परिचय तो हो ही सकेगा–ऐसा विश्वास है ।

1.7 आधारभूत सम्प्रत्यात्मक योजनाएँ

आधारभूत सम्प्रत्ययात्मक योजनाओं के भावी प्ररिप्रेक्ष्य में निर्धारण के लिए दिशा एवं सीमाओं का नियत किया जाना आवश्यक है । उनकी स्पष्टता के बिना यही समझ कर उल्लेख किया जा रहा है कि कदाचित् इस पक्ष का अभिप्राय भावी शिक्षण और भावी पाठ्यक्रम से है । बिन्दुवार सकंल्पनाएँ इस प्रकार हैं–

– किसी कवि ने ठीक ही कहा है–

'अंधकार है वहाँ जहाँ आदित्य नहीं है ।
मुर्दा है वह देश जहाँ साहित्य नहीं है ।।'

इस कथन के परिप्रेक्ष्य में विचार' करें तो भारत की स्थिति गौरवपूर्ण अवस्था में है। साहित्य की दृष्टि से भारत अति समृद्ध है। न केवल मानव जाति अपितु सृष्टि के समग्र विकास की दृष्टि से प्रामाणिक चिन्तन विश्व के प्राचीनतम् साहित्य 'वेद' में मिलता है जो भारत की अमूल्य निधि है।

– यह साहित्य संस्कृत में निबद्ध है अत: शिक्षा व्यवस्था और शिक्षण प्रक्रिया की भावी योजनाओं में संस्कृत को समुचित महत्व दिया जाना नितान्त अनिवार्य है ।

– मानव के भौतिक–मानसिक– आध्यात्मिक जीवन को समझने और भावी पीढ़ी के लिए सन्तुलित दिशा–निर्देशों का आदर्श उपस्थापन संस्कृत के ज्ञान भण्डार से अनुप्रणित हो तो भविष्य को सुन्दर विधि से संवारा जा सकता है ।

- विदेशी भाषा और पाश्चात्य संस्कृति के विकृत प्रभाव से भारतीय संस्कृति और जीवन शैली इस तरह आक्रान्त हो रही है, जो हमारी अस्मिता और जीवन मूल्यों को तिरोहित कर रही है। यह स्थिति राष्ट्र के लिए सर्वथा अहित कर है।
- वैज्ञानिक विकास और सूचना प्रोद्यौगिकी के दैनन्दिन जीवन में बढ़ते व्यापक प्रभाव से उचित तालमेल के लिए वैज्ञानिक आधार वाली संस्कृत भाषा के प्रयोग से उन्नति का मार्ग सरलता से प्रशस्त किया जा सकता है ।
- भौतिक (स्थूल जगत्) जीवन के लिए आरोग्य का नियामक आयुर्वेद विज्ञान, मानसिक आयाम की संभावनाओं को पुष्ट करने के लिए भारतीय दर्शन शास्त्र और आध्यात्मिक प्रगति को प्रशस्त करने के लिए समूचा संस्कृत वाङ्मय भारतीय समाज को नई स्कूर्ति दे सकता है ।
- संस्कृत में निबद्ध समूचा शास्त्रीय साहित्य अशेष योग– क्षेम का मार्ग प्रशस्त करने में सर्वथा उपयुक्त और सक्षम माध्यम बन सकता है ।

इन विचारणीय बिन्दुओं के परिप्रेक्ष्य में भावी पाठ्यक्रम की योजनाओं को इस प्रकार से निर्धारित किया जाना आवश्यक है जिसमें, संस्कृत भाषा–व्याकरण– भाषाविज्ञान, आयुर्वेद शास्त्र, योग दर्शन और काव्य शास्त्र का समुचित स्तर पर सुनियोजित निर्धारण हो सके ।

शिक्षा समाज का दर्पण ही नहीं, समाज के विकास, सामाजिक बदलाव का उपकरण भी है। भारतीय समाज में जो विषमताएँ और विसंगतियाँ पनप रही हैं, उससे समाज और नई पीढ़ी में निराशा, हताशा और आक्रोश बढ़ रहे हैं । धर्म–अर्थ– काम–मोक्ष की अवधारणाओं की शिक्षा के माध्यम से पुरनर्स्थापना द्वारा इस समस्या से निपटा जा सकता है ।

यह कार्य शिक्षाशास्त्री, शिक्षाविद् शिक्षक और छात्र वर्ग अधिक प्रभावी ढंग से कर सकते हैं।

अत: समाहार रूप में यह कहना उचित ही प्रतीत होता है कि शिक्षा से सम्बन्धित भावी योजनाओं में इन बिन्दुओं पर गंभीर चिन्तन–मनन करके भारतीय संस्कृति के वाहक संस्कृत वाङ्मय में उपलब्ध शाश्वत् स्रोतों से दिशानिर्देश प्राप्त कर सामाजिक–आध्यात्मिक मानवीय मूल्यों के समावेश हेतु प्रयास किया जाय। इस दृष्टि से विभिन्न बोर्डो द्वारा निर्धारित पाठ्यक्रमों का अवलोकन किया जा सकता है ।

स्व–परख प्रश्न (Self–Check Question)

1. दर्शनशास्त्र का प्रमुख उद्देश्य क्या है?
2. संस्कृत के प्रमुख दर्शन शास्त्रों के नाम लिखिए।
3. धर्म का क्या अर्थ है?
4. संस्कृत के प्रसिद्ध व्याकरण ग्रन्थ कौन–कौन से हैं?
5. कामशास्त्र एवं अर्थशास्त्र के रचनाकारों के नाम लिखिए।

1.7 सारांश

संस्कृत की संरचना

संस्कृत संरचना की दृष्टि से 'श्लिष्टयोगात्मक' है। इसमें उपसर्ग और प्रत्यय का योग होता है । साथ ही इसमें विकरण का भी प्रयोग होता है, पर संस्कृत में अव्यय शब्द अयोगात्मक होते हैं ।

शब्द संरचना

संस्कृत में सुप् तथा तिङ् योग से ही पद बनते हैं । सुप् से संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण पद बनते हैं, जबकि 'तिङ्' के योग से क्रिया पद बनते हैं ।

क्रिया पद का निमार्ण धातु तथा तिङ्के योग से होता है । संस्कृत धातुएँ आत्मने पदी एवं परस्मैपदी होती हैं ।

नाम पद सुप् के योग से बनते हैं ।

शब्द – सार्थक ध्वनि समूह को शब्द कहते हैं ।

नये शब्द कृत, तद्धति, समास आदि से निर्मित होते हैं ।

संस्कृत की विषय वस्तु के अन्तर्गत वैदिक साहित्य एवं लौकिक साहित्य आता है।

वैदिक साहित्य में वेद, संहिताएँ, ब्राह्मण, अरण्यक, उपनिषद् आदि आते हैं । वेदांग में शिक्षा, व्याकरण, छन्द, ज्योतिष सम्मिलित हैं ।

लौकिक साहित्य में गद्य, पद्य, महाकाव्य, खण्ड काव्य, चम्पू, नाटक, व्याकरण आदि सम्मलित हैं ।

पौराणिक साहित्य, शास्त्रीय साहित्य, दर्शन भी संस्कृत भाषा की विषय वस्तु की संरचना करते है। दर्शन में सांख्य, योग, न्याय, वैशेषिक, मीमांसा, वेदान्त, धार्मिक दर्शन, बौद्ध दर्शन को सम्मिलित किया जाता है ।

धर्मशास्त्र, अर्थशास्त्र, काव्य शास्त्र, काम शास्त्र, आयुर्वेदशास्त्र, ज्योतिष शास्त्र, वास्तु तंत्र, छन्द एवं कोश शास्त्र भी संस्कृत की विषय वस्तु की संरचना का निर्माण करते हैं ।

(1) **ध्वनि** – मानवमुख से उच्चरित एवं श्रवणेन्द्रिय द्वारा गृहीत शब्द लहरी ।

(क) **स्वर** – मुख विवर से अबाध रूप से निकलने वाली ध्वनि ।

(ख) **व्यञ्जन** – उच्चारण अवयवों से स्पर्श करती हुई मुख विवर से निकलने वाली ध्वनि ।

(ग) ध्वनियों का वर्गीकरण–

1. स्थानकृत– कंठ्य, तालव्य, मूर्धन्य, दंत्य, ओष्ठ्य, अन्तस्थ, उष्माण आदि ।
2. प्रयत्न की दृष्टि से – स्पर्श, स्पर्श संघर्षी, आनुनासिक आदि ।
3. बाह्य प्रयत्न की दृष्टि से घोष, अघोष, अल्प प्राण, महाप्राण आदि ।

(घ) **उच्चारण अवयव** – श्वासनली, कंठ, स्वरतंत्र, उपालि, जिह्वा, कौंआ. कोमल तालु, कठोर तालु, वर्त्स, मूर्धा, दन्त, ओष्ठ, नासिका आदि ।

(ङ) **उच्चारण दोष – कारण** 1. उच्चारणों की भिन्नता, 2. स्थानीय बोलियों का प्रभाव, 3. शिक्षकों के उच्चारण दोष आदि ।

निराकरण – ध्वनियों का ज्ञान, अवयवों का ज्ञान, अभ्यास, अनुकरण वाचन आदि

(2) **विषयवस्तु की संरचना** – संस्कृत साहित्य के विभिन्न रूप ।

1.8 स्व–परख प्रश्नों के उत्तर (Answer to Self–Check Question)

नोट :– इन प्रश्नों के उत्तर संबंधित खण्ड में से प्राप्त हो सकते हैं ।

1.9 मूल्यांकन प्रश्न (Unit End Questions)

(1) संस्कृति की प्रकृति पर टिप्पणी लिखिए ।

(2) संस्कृत की ध्वनियों का वर्गीकरण किन आधारों पर किया जाता है?

(3) उच्चारण दोषों के कारण एव निराकरण के उपाय लिखिए ।

(4) संस्कृत शब्दों की रचना कैसे होती है?

(5) संस्कृत की विषय वस्तु की संरचना को स्पष्ट कीजिये ।

(6) संस्कृत भाषा के पाठ्यक्रम में क्या सम्मिलित रहता है?

1.10 संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. दीक्षित, भट्टो जी – सिद्धात्त कौमुदी
2. सफाया, रघुनाथ – संस्कृत शिक्षण
3. पांडेय, रामशकल – संस्कृत शिक्षण
4. पातंजलि – महाभाष्य
5. उपाध्याय, बलदेव – संस्कृत साहित्य का इतिहास
6. गौरोला, वाचस्पति – संस्कृत साहित्य का इतिहास
7. कुमार, निरंजन सिंह – माध्यमिक शालाओं में हिन्दी शिक्षण
8. तिवाड़ी भोलानाथ – भाषा विज्ञान

इकाई - 2 (Unit–2)

– संस्कृत शिक्षण के भविष्योंन्मुखी उद्देश्य -

)Objective of Teaching of Sanskrit with futuristic vision(

इकाई की रूपरेखा

- उद्देश्य शब्द की व्यूत्पत्ति व अर्थ
- संस्कृत शिक्षण के उद्देश्यों का निर्धारण
- संस्कृत शिक्षण के सामान्य उद्देश्य
- संस्कृत शिक्षण के उद्देश्यों का लेखन
- भविष्योन्मुखी उद्देश्य
    i. विभिन्न स्तरानुसार उद्देश्य
    ii. मूल्यांकन प्रश्न
- संदर्भ ग्रन्थ सूची

20. इकाई के उद्देश्य (Objective of the unit)

- इस इकाई के समाप्त करने के बाद आप उद्देश्य शब्द की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे ।
- संस्कृत शिक्षण के उद्देश्यों के निर्धारण का आधार जान सकेगें ।
- संस्कृत शिक्षण के सामान्य उद्देश्यों की जानकारी प्राप्त कर संस्कृत अध्ययन की सार्थकता जान सकेंगे ।
- संस्कृत–शिक्षण के भविष्योन्मुखी उद्देश्यों के आधार पर पाठयोजना बना सकेंगे ।
- संस्कृत शिक्षण के विभिन्न आवश्यकतानुसार उद्देश्यों को जानकर स्तारानुसार अध्यापन कर सकेंगे
- उद्देश्यों को जानकर तदनुसार अध्यापन कर सकेंगे ।
- पाठाध्यापन में भविष्योन्मुखी उद्देश्यों को आधार बना सकेंगे ।

2.1 प्रस्तावना (Introduction)

संस्कृत अनेक प्रकार से उपयोगी एवं महत्वपूर्ण है। अत: संस्कृत शिक्षा के उद्देश्य भी अनेक हैं ।इन उद्देश्यों का हम कई दृष्टियों से वर्गीकरण कर सकते हैं; यथा – सांस्कृतिक, ऐतिहासिक, साहित्यिक आदि ।इन उद्देश्यों को जानने से पूर्व हम उद्देश्य पद का अर्थ जानने का प्रयास करते हैं ।

2.2 उद्देश्य शब्द की व्युत्पति तथा अर्थ (Etimological Meaning of Objectives)

उद्देश्य ऐसे कार्यो या बातों का बोध करवाते हैं जिन्हें हम शिक्षात्मक प्रयत्नों द्वारा प्राप्त करना चाहते हैं । उद्देश्य शब्द 'उत उपसर्ग 'दिश' धातु तथा 'ण्यत्' प्रत्यय से बना है जिसका

अर्थ है किसी कार्य को दिशा या निर्देश देना । शिक्षा के क्षेत्र में शिक्षण कार्य करते समय हमारी जो मूल धारणाएँ, इच्छाएँ, प्रवृत्तियाँ व प्रेरक तत्व होते हैं, वे ही शैक्षिक उद्देश्य हैं क्योंकि इन्हीं के माध्यम से शैक्षिक कार्यो की प्रगति होती है। संस्कृत विषय को पढ़ाने से पूर्व निर्धारित किये जाने वाले उद्देश्य संस्कृत शिक्षण के उदेश्य कहलाते हैं। शिक्षण उद्देश्य का अर्थ एन. सी.ई.आर.टी. द्वारा प्रकाशित मूल्यांकन तथा परीक्षा अंक में वर्णित है कि 'उदेश्य' वह बिन्दु अथवा अभीष्ट है, जिसकी दिशा में कार्य किया जाता है अथवा उद्देश्य वह व्यवस्थित परिवर्तन है जिसे क्रिया द्वारा प्राप्त किया जाता है अथवा जिसके लिए हम क्रिया करते हैं" ।

2.3 संस्कृत शिक्षण के उद्देश्यों का निर्धारण (Formulation of Objective of teaching of Sanskrit)

उद्देश्य विहीन क्रियाएँ अव्यवस्थित हो जाती हैं परिणामस्वरूप शिक्षक अपने छात्रों में अपेक्षित परिवर्तन नहीं कर पाते । इसलिए उद्देश्यों का निर्धारण विवेक से किया जाना चाहिए । संस्कृत शिक्षण के उद्देश्यों का निर्धारण करते समय विद्यालय की प्रकृति, कक्षा के स्तर और विधा का ध्यान रखना चाहिए; क्योंकि परम्परागत पद्धति पर आधारित पाठशाला में प्राय: कक्षा तीन से छात्र संस्कृत पढ़ना प्रारम्भ करते हैं और आधुनिक पद्धति पर आधारित विद्यालय में प्राय: कक्षा छ: से संस्कृत का पठन–पाठन प्रारंभ होता है । जहाँ कक्षा तीन से संस्कृत का पठन–पाठन प्रारम्भ होता है, वहाँ प्रारंम्भिक स्तर कक्षा तीन से पाँच तक, माध्यमिक स्तर कक्षा छ: से बारह तक तथा उसके पश्चात् उच्च स्तर आता है । जिन विद्यालयों में संस्कृत का पठन–पाठन कक्षा छ: से प्रारम्भ होता है वहाँ प्रारम्भिक स्तर कक्षा छ: से आठ तक, माध्यमिक स्तर कक्षा नौ से बारह तक तथा इसके बाद उच्च स्तर आता है । उच्च स्तर में विश्वविद्यालय की अंतिम परीक्षा तक को लिया जा सकता है । प्रत्येक विधा की अपनी विशेषताएँ व प्रकृति होती है उसी के अनुसार उसका शिक्षण किया जाता है, अत : गद्य, पद्य, कथा, व्याकरण, नाटक, रचना आदि के लिए शिक्षण उद्देश्यों का निर्धारण भी भिन्न–भिन्न होता है ।

2.4 संस्कृत शिक्षण के सामान्य उदेश्य

आज की शिक्षा उद्देश्य निष्ट शिक्षा है अत : प्रत्येक विषय के लिए उद्देश्य निर्धारण करने के पश्चात् ही शिक्षण कार्य प्रारम्भ किया जाता है । उद्देश्य विहीन शिक्षा उस नौका के समान है जिसका नाविक अपने निर्दिष्ट स्थान से अनभिज्ञ है, अत: मंजिल तक पहुँचने से पहले ही वह पथभ्रष्टं हो जाता है अथवा उसे अनेक बाधाओं से अलझना पड़ता है । शिक्षण में कोई बाधा या रुकावट न आए इसलिए शिक्षण उद्देश्य निश्चित किये जाते हैं ।

संस्कृत शिक्षण के सामान्य उद्देश्य इस प्रकार हैं –

i ज्ञानात्मक उद्देश्य
ii कलात्मक उद्देश्य
iii रचनात्मक उद्देश्य
iv मनोविनोद प्राप्ति का उद्देश्य
v अभिवृत्यात्मक उद्देश्य
vii बोधगम्यता का उद्देश्य
viii अभिव्यक्ति का उद्देश्य
ix सांस्कृतिक उद्देश्य
x अभिरुचात्मक उद्देश्य
xi सृजनात्मक उद्देश्य

2.4.1 ज्ञानात्मक उद्देश्य

संस्कृत शिक्षण में ज्ञानात्मक उद्देश्यों के अन्तर्गत अग्रांकित तीन बातों का ध्यान रखा जाता है - 1. भाषा तत्वो का ज्ञान प्राप्त करना, 2. विषयवस्तु का ज्ञान प्राप्त करना, 3. साहित्य की विविध विधाओं का ज्ञान ।

2.4.2 बोधगम्यता का उद्देश्य

संस्कृत के अध्ययन द्वारा संस्कृत भाषा को ग्रहण करने की क्षमता का विकास होता है, जिसे निम्न बिन्दुओं के आधार पर समझा जा सकता है–

1. संस्कृत भाषा की लिपि का ज्ञान प्राप्त कर उसे सस्वर पढ़ना ।
2. संस्कृत व्याकरण के नियमों की जानकारी देकर संस्कृत से हिन्दी अनुवाद करना सिखाना ।
3. संस्कृत पढ़ने तथा समझने की योग्यता उत्पन्न करना तथा उसका विकास करना ।
4. शुद्ध उच्चारण की योग्यता उत्पन्न करना तथा नवीन शब्दों का ज्ञान प्रदान करना ।

2.4.3 कलात्मक उद्देश्य

इस उद्देश्य में अग्रांकित बातें निहित हैं – 1. संस्कृत गद्य व पद्य को समझने की योग्यता उत्पन्न करना, 2. संस्कृत साहित्य के अध्ययन द्वारा भाव पक्ष तथा कला पक्ष की विशिष्टताओं को समझने की क्षमता का विकास करना । 3. भावानुकूल उचित आरोह, अवरोह, लयपूर्वक काव्य पढ़ने की क्षमता का विकास करना । 4. संस्कृत में प्रयुक्त लोकोक्तियों, सूक्तियों तथा सुभाषितों का संग्रह कर उसकी विस्तृत व्याख्या करने की क्षमता का विकास करना ।

2.4.4 अभिव्यक्ति का उद्देश्य

संस्कृत अध्ययन करते हुए विचारों को समझने के साथ–साथ अभिव्यक्ति करने की क्षमताओं का विकास करने के लिए निम्नलिखित उद्देश्यों की पूर्ति होनी चाहिए -

1. मातृभाषा से संस्कृत में अनुवाद करने की क्षमता का विकास करना ।
2. शुद्ध व स्पष्ट ढंग से भाषा को पढ़कर बोलने की क्षमता का विकास करना ।
3. अपने विचारों को संस्कृत में लिखित व मौखिक रूप में अभिव्यक्त करने की क्षमता का विकास करना ।

2.4.5 रचनात्मक उद्देश्य

छोटी कक्षाओं में रचना कार्य करवाना एक कठिन कार्य है, लेकिन बड़ी कक्षाओं में इस दिशा में प्रयास किये जा सकते हैं जिसके लिए निम्नलिखित क्षमताओं का विकास किया जा सकता है –

1. श्लोकों के अर्थ तथा अन्वय करने की क्षमता का विकास करना ।
2. हिन्दी से संस्कृत तथा संस्कृत से हिन्दी में अनुवाद करना सिखाना ।

3. संस्कृत की सूक्तियों, प्रमुख काव्य खण्डों का अपने वाक्यों में प्रयुक्त करने का प्रयास करना सिखाना ।
4. बड़े–बड़े अनुच्छेदों का संक्षिप्तीकरण करना सिखाना ।
5. किसी भी विषय पर विचाराभिव्यक्ति या निबन्ध लेखन की क्षमता उत्पन्न करना ।

2.4.6 सांस्कृतिक उद्देश्य

संस्कृत एक सांस्कृतिक विषय है; यह भारतीय धर्म, दर्शन, कला और संस्कृति की खान है। संस्कृत द्वारा प्राचीन भारतीय धर्म और दर्शन का ज्ञान होता है । वेद, उपनिषद् गीता, रामायण, महाभारत, पुराण और षड्दर्शन भारतीय संस्कृति के विभिन्न अध्याय हैं । इन्हें समझने के लिए संस्कृत का ज्ञान नितान्त आवश्यक है ।

2.4.7 मनोविनोदात्मक उद्देश्य

संस्कृत का साहित्य मनोविनोद प्रदान करने का अनुपम साधन है । इसमें कथा सरित्सागर, हितोपदेश, पंचतंत्र की कहानियाँ अपना विशिष्ट स्थान रखती हैं । अवकाश के समय में संस्कृत–साहित्य के गद्य काव्य एवं पद्य काव्य मनोरंजन करने के अनुपम साधन हैं । इनके द्वारा निम्नलिखित उद्देश्यों की प्राप्ति होगी –

1. अवकाश के समय का सदुपयोग कर रसानुभूति करने का प्रयास ।
2. बालक के व्यक्तित्व का सर्वतोमुखी विकास करना ।
3. बालक के चरित्र निर्माण में अनुपम योगदान प्रदान करना ।

2.4.8 अभिरुच्यात्मक उद्देश्य

इस उद्देश्य के अन्तर्गत संस्कृत भाषा तथा साहित्य में विद्यार्थियों की रुचि को बढ़ाने के लिए प्रयास किया जाता है । इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु सरल संस्कृत में लिखे गये श्लोक, सूक्तियाँ आदि पढ़ने व कण्ठस्थ करने के लिए विद्यार्थीयों को प्रेरित किया जाता है । आज के वैज्ञानिक युग में संस्कृत के प्रचार व प्रसार में इस उदेश्य का विशेष महत्व है ।

2.4.9 सृजनात्मक या मौलिकता का उद्देश्य

विद्यार्थियों में पठित विषय–वस्तु, प्रत्यक्षदर्शी घटनाओं व स्वनुभूत विचारों के आधार पर मौलिक रचना करने की प्रेरणा देना, इस उद्देश्य में सम्मिलित हैं । मौलिकता की प्रेरणा उच्च कक्षाओं में, जहाँ विद्यार्थी में कुछ लिखने की प्रतिभा मुखरित हो वहीं दी जाती है । संस्कृत विषय में नये ज्ञान विज्ञान का प्रचार–प्रसार करने के लिए मौलिकता का उद्देश्य परमावश्यक है ।

2.4.10 अभिवृत्यात्मक उद्देश्य

प्रत्येक साहित्य का उद्देश्य सदप्रवृत्तियो का विकास करना है । संस्कृत शिक्षण में इसका और भी अधिक महत्व है; क्योंकि संस्कृत भाषा ही हमारी संस्कृति की भाषा है, सदप्रवृत्तियों के विकास में श्रद्धा, आस्था, देश प्रेम, सहृदयता, संवेदनशीलता आदि बातें सम्मिलित हैं ।

2.4.11 श्लाघात्मक उद्देश्य

इस उद्देश्य के अन्तर्गत निम्नलिखित बातें निहित हैं –

1. अच्छे श्लोकों का संग्रह करने का प्रवृति का विकास करना ।
2. उत्कृष्ट रचनाओं की सराहना करना ।
3. महान कवियों व लेखकों के प्रति श्लाघा तथा कृतज्ञता की भावना जागृत करना ।

2.5 संस्कृत शिक्षण के उद्देश्यों का लेखन

उद्देश्यों का लेखन दो प्रकार से किया जाता है –

i. उद्देश्यों के साथ अपेक्षित व्यवहारगत परिवर्तनों को लिखना भविष्योन्मुखी उद्देश्य अर्थात् अमुक उद्देश्य की पूर्ति करने के बाद उसके व्यवहार में परिवर्तन आएगा और उसका उपयोग भविष्य में अपने जीवन में कर सकेगा

ii. उद्देश्यों को विभिन्न स्तरानुसार लिखना ।

2.5.0 उदेश्यों का व्यवहारगत परिवर्तन के रूप में लिखना

उद्देश्य	**अपेक्षित व्यवहारगत परिवर्तन**
क. भाषातत्वों का ज्ञान प्राप्त करना	
उच्चारण	1. स्वर, व्यंजन तथा विसर्गो का स्थान प्रयत्न के अनुसार स्पष्ट उच्चारण कर सकेगा ।
	2. उचित आरोह–अवरोह के साथ उच्चारण कर सकेगा ।
वर्तनी	3. अशुद्ध रूपों को पहचान सकेगा ।
शब्दभेद	4. शब्द भेदों को पहचान सकेगा; यथा सकलम्–शकलम् ।
उपसर्ग, प्रत्यय	5. इन्हें पहचान सकेगा ।
सन्धि, समास	6. इनके अन्तर को पहचान सकेगा ।
शब्द भण्डार	7. उचित शब्दों का प्रयोग कर सकेगा।
वाक्य रचना	8. कर्ता आदि कारकों से सम्बन्धित वाक्यों को पहचान सकेगा ।
ख. विषय वस्तु का ज्ञान प्राप्त करना	
सांस्कृतिक मूल्य तथा भौतिक	1. छात्र इन मूल्यों को पहचान सकेंगे।
मूल्यों का ज्ञान करवाना	2. इन्हें अपने व्यवहारिक जीवन में लाने का प्रयास करेंगे ।
	3. अच्छे आचरण को ग्रहण कर सकेंगे
तथ्य एवं घटनाएँ	4. छात्र इनकी तुलना कर सकेंगे ।
ग. रचना कार्य के विभिन्न रूप	
मौखिक वार्तालाप	1. छात्रों में संवाद योजना एवं वाद–विवाद की प्रबल

भावना जागृत होगी ।

सस्वर वाचन	2. छात्र आरोह–अवरोह का ध्यान रखते हुए सस्वर वाचन कर सकेंगे ।
अन्त्याक्षरी	3. छात्र भाषा शिक्षण को बल देते हुए उसकी सहायक क्रियाओं के रूप मे अन्त्याक्षरी करेंगे ।
साक्षात्कार	4. छात्रों में प्रत्यक्ष रूप से बोलने की क्षमता उत्पन्न होगी ।
भाषण	5. छात्रों में किसी विषय पर स्पष्ट रूप से बोलने की प्रवृत्ति जाग्रत होगी ।
संवाद	6. छात्रों में वाद–विवाद प्रतियोगिता में भाग लेने के लिए साहस उत्पन्न होगा ।
निबंध लेखन	7. किसी भी विषय पर निबन्ध लिखने की क्षमता प्राप्त कर सकेंगे ।
सारांश लेखन	8. किसी भी विषय के सार को लिखने की योग्यता प्राप्त कर सकेंगे ।
कहानी	9. सहायक सामग्री के रूप में कहानी लिखने की क्षमता उत्पन्न कर सकेंगे ।
पत्र–लेखन	10. भाषा ज्ञान के अन्तर्गत संस्कृत में पत्र लिख सकेंगे ।

घ. <u>सरल संस्कृत सुनकर अर्थ ग्रहण करने की योग्यता प्राप्त करना</u>

सस्वर वाचन	1. छात्र धैर्य पूर्वक सुन सकेंगे ।
वार्तालाप	2. छात्र सुनने में शिष्टाचार का पालन करेंगे ।
वाद–विवाद	3. छात्र मनोयोग पूर्वक सुन सकेंगे ।
प्रवचन	4. छात्र ग्रहणशीलता की मन: स्थिति बनाए रखेंगे ।
भाषा	5. छात्र शब्दों, मुहावरों व उक्तियों का प्रसंगानुकूल अर्थ व भाव समझ सकेंगे ।
आदेश	6. छात्र स्वराघात, बलाघात व आरोह– अवरोह के अनुसार अर्थ ग्रहण कर सकेंगे ।
निर्देश	7. छात्र प्रस्तुत सामग्री के विषय में जान सकेंगे ।
कविता	8. छात्र महत्वपूर्ण विचारों, भावों एवं तथ्यों का चयन कर सकेंगे ।
आकाशवाणी से प्रसारित	9. छात्र विचारों, भावों एवं तथ्यों का परस्पर सम्बन्ध समझ सकेंगे ।
कार्यक्रम	10. वे सारांश ग्रहण कर सकेंगे ।

	11. केन्द्रीय विचार या भाव को ग्रहण कर सकेंगे ।
	12. छात्र वक्ता के मनोभावों को समझ सकेंगे ।
	13. वे भावानुभूति कर सकेंगे ।
	14. भावों, विचारों एवं तथ्यों का तुलनात्मक महत्व समझ सकेंगे ।
	15. वे अभिव्यक्ति के ढंग को समझ सकेंगे ।
आत्मकथा	16. छात्र केन्द्रीय भाव ग्रहण कर सकेंगे ।

ड. <u>सरल संस्कृत का शुद्ध वाचन कर सकना</u>

गद्य	1. छात्र धैर्य पूर्वक पढ़ सकेंगे ।
	2. कठिन शब्दों का शुद्ध उच्चारण कर सकेंगे ।
	3. छात्र मनोयोग पूर्वक पढ़ सकेंगे ।
	4. आरोह, अवरोह, लय, यति, गतिपूर्वक पढ़ सकेंगे।
नाटक	5. ग्रहण शीलता बनाए रखेंगे ।
	6. पात्रानुकूल वाचन की क्षमता उत्पन्न कर सकेंगे ।
कहानी	7. छात्र उचित स्वराघात, बलाघात व आरोह– अवरोह के साथ पढ़ सकेंगे ।
समाचार पत्र	8. छात्र विरामदि चिह्नों का समुचित ध्यान रख सकेंगे।
	9. छात्र व्यवहारिकता के बारे में जान सकेंगे ।
पत्र	10. विषयानुसार गतिपूर्वक पढ़ सकेंगे ।
	11. सम्बन्धों को समझ सकेंगे ।
पाण्डुलिपि	12. विषयानुसार उचित गति व ध्वनि के साथ वाचन कर सकेंगे।
	13. छात्र भावानुरूप वाचन कर सकेंगे ।
	14. वे लयपूर्वक वाचन कर सकेंगे ।
	15. छात्र समुचित अनुमान को प्रदर्शन पूर्वक वाचन कर सकेंगे ।

च. <u>संस्कृत पढ़कर अर्थ ग्रहण करना</u>

रचना	1. शब्दों, मुहावरों, उक्तियों का प्रसंगानुसार अर्थ कर सकेंगे ।
कहानी	2. छात्र शब्दों, मुहावरों, उक्तियों तथा वाक्यांशों का स्थानीयभाव समझ सकेंगे ।
	3. उचित शीर्षक दे सकेंगे ।

नियमबद्ध	4. छात्र किसी विषय पर अपने स्वतंत्र नियमबद्ध तरीके से विचार प्रस्तुत कर सकेंगे ।
	5. छात्र विचार, भाव एवं तथ्यों का चयन कर सकेंगे।
आत्मकथा	6. वे विचारों, भावों व तथ्यों का परस्पर संबन्ध समझ सकेंगे ।
	7. छात्र सारांश ग्रहण कर सकेंगे ।
काव्य	8. वे केन्द्रीय भाव व विचार ग्रहण कर सकेंगे ।
	9. वे लेखक के भावों को ग्रहण कर सकेंगे ।
	10. छात्र भाषा–शैली को समझ सकेंगे ।
	11. वे भावों, विचारों, तथ्यों का तुलनात्मक महत्व समझ सकेंगे ।

छ. <u>सरल और शुद्ध संस्कृत बोलकर अपने भाव अभिव्यक्त कर सकना</u>

वार्तालाप	1. छात्र सुश्रव्य वाणी में बोल सकेंगे ।
भाषण	2. प्रसंगानुसार उचित गति के साथ बोल सकेंगे ।
कविता पाठ	3. वे शुद्ध उच्चारण व उचित स्वराघात, बलाघात, आरोह, अवरोह के साथ बोल सकेंगे ।
आदेश–निर्देश	4. वे प्रवाह के साथ बोल सकेंगे ।
	5. वे शुद्ध भाषा का प्रयोग कर सकेंगे ।
	6. वे प्रसंगानुसार शब्दों, मुहावरों तथा सूक्तियों का प्रयोग कर सकेंगे ।
	7. वे सरल मुहावरेदार भाषा का प्रयोग कर सकेंगे ।
	8. छात्र क्रमबद्ध रूप से विषयवस्तु की अभिव्यक्ति कर सकेंगे ।
	9. वे अभीष्ट सामग्री प्रस्तुत कर सकेंगे ।
	10. वे अभिव्यक्ति में क्रमबद्धता ला सकेंगे ।
	11. वे विषय की एकता को अक्षुण्ण बनाए रखेंगे ।
	12. छात्र उचित हाव भाव पूर्वक बोल सकेंगे
	13. वे आवश्यक पुनरावृत्ति कर सकेंगे ।
	14. छात्र प्रसंग तथा विषय के अनुकूल भाषा का प्रयोग कर सकेंगे ।

ज. <u>सरल और शुद्ध संस्कृत लिखकर अपने भाव व्यक्त कर सकना</u>

पत्र	1. छात्र सुपाठ्य लेख लिख सकेंगे ।
प्रार्थना पत्र	2. छात्र प्रसंगानुसार लिख सकेंगे ।

	3. शब्दों की शुद्ध वर्तनी लिख सकेंगे ।
निबन्ध	4. वे विराम चिह्नों का उचित प्रयोग कर सकेंगे ।
	5. परिच्छेद की रचना करने में समर्थ हो सकेंगे ।
सुभाषित वचन	6. शुद्ध भाषा का प्रयोग कर सकेंगे ।
	7. छात्र उचित शब्द, मुहावरे, सूक्तियों आदि का प्रयोग कर सकेंगे ।
	8. छात्र अर्थानुकूल भाषा का प्रयोग कर सकेंगे ।
	9. छात्र अभीष्ट सामग्री प्रस्तुत कर सकेंगे ।
	10. वे विषय की एकता को बनाए रखेंगे ।
	11. वे सुभाषित वचनों में क्रमबद्धता ला सकेंगे ।
	12. वे लिखित अभिव्यक्ति में विभिन्न विधाओं का प्रयोग कर सकेंगे ।

झ. <u>वाक्यों का अनुवाद करना</u>

मूलभाषा	1. छात्र मूल भाषा के शब्दों तथा प्रयोगों के लिए अनुदित भाषा के पर्यायवाची शब्दों का प्रयोग कर सकेंगे ।
अनुवादित भाषा	2. वे धैर्य पूर्वक अनुदित भाषा का प्रयोग कर सकेंगे ।
	3. छात्र मूल भाषा के क्रम को बनाए रखेंगे ।
विषय वस्तु	4. वे मूल भाषा के भाव को बनाए रखेंगे ।
	5. छात्र अनुदित भाषा की प्रवृत्ति के अनुसार वाक्य रचना कर सकेंगे ।
	6. छात्र सरल सुबोध भाषा में अनुवाद कर सकेंगे ।

ञ. <u>भाषा और साहित्य में रुचि लेना</u>

भाषा और साहित्य	1. छात्र संस्कृत पाठ्यक्रम के अतिरिक्त अन्य संस्कृत पुस्तकों को पढ़ सकेंगे ।
	2. वे सूक्तियों और श्लोकों को भी कण्ठस्थ कर सकेंगे।
	3. विद्यालय–पत्रिका लेखन में अपना योगदान दे सकेंगे।
	4. विद्यालय के बाहर आयोजित होने वाली संस्कृत प्रतियोगिताओं में भाग ले सकेंगे ।
	5. छात्रों में संस्कृत समझने की योग्यता उत्पन्न होगी।

ट. <u>सद् प्रवृर्तियों का विकास करना</u>

आस्था	1. छात्र संस्कृति और सौंदर्य में आस्था रख सकेंगे ।
	2. वे आदर्शो के प्रति आस्था रख सकेंगे ।
श्रद्धा	3. वे साहित्य, देश व मानव प्रेम की ओर अग्रसर हो सकेंगे ।
	4. वे जीवन मूल्यों के प्रति श्रद्धा रख सकेंगे ।
साहित्य व देश प्रेम	5. छात्रों में देश प्रेम व मानव मूल्यों की भावना जाग्रत हो सकेगी ।
	6. छात्रों में साहित्य व देशप्रेम की भावना जाग्रत हो सकेगी ।
	7. वे मानव के प्रति दयालु प्रवृत्ति को अपना सकेंगे ।
	8. छात्र सहृदय हो सकेंगे ।
	9. छात्र सद् प्रवृत्तियाँ सम्मत क्रियाएँ कर सकेंगे ।

ठ. <u>मनोविनोद करते हुए संस्कृत के प्रति अनुराग उत्पन्न करना</u>

हितोपदेश व पंचतंत्र	1. लघु कथाओं द्वारा छात्रों का मनोरंजन होगा ।
	2. संस्कृत पठन के प्रति रुचि विकसित होगी ।
अन्त्याक्षरी व शब्द खेल	3. छात्रों में संस्कृत समझने की योग्यता उत्पन्न होगी।
	4. छात्रों में संस्कृत के प्रति अनुराग उत्पन्न हो सकेगा।
	5. छात्र अवकाश के क्षणों का सदुपयोग कर सकेंगे ।

स्व परख प्रश्न (Self Check Questions)

i. भाषा तत्वों के अन्तर्गत आप क्या सम्मिलित करना चाहेंगे?

ii. सुनकर अर्थ ग्रहण करने से क्या अभिप्राय है?

iii. अभिव्यक्ति के दो प्रकार कौन –कौन से हैं?

iv. विषय – वस्तु के ज्ञान का क्या अभिप्राय है?

v. अभिवृत्यात्मक उद्देश्य का आप लेखन किस तरह करेंगे ।

2.6 विभिन्न स्तरों के आधार पर संस्कृत शिक्षण के उद्देश्य

हमारी शिक्षा तीन प्रमुख स्तरों में विभक्त की जाती है –

1. प्रारम्भिक शिक्षा
2. माध्यमिक शिक्षा
3. उच्च शिक्षा

2.6.1 प्रारम्भिक स्तर पर संस्कृत शिक्षण के उद्देश्य (Objectives of Teaching at Primary Stage)

प्रारम्भिक स्तर पर छात्रों को संस्कृत की ओर आकृष्ट करना ही प्रमुख उद्देश्य होना चाहिए । इस स्तर अर्थात् कक्षा 6, 7, 8 के छात्र बाल्यावस्था के अंतिम भाग तथा किशोरावस्था के प्रारंभिक अवस्था के होते हैं जिसमें मानसिक उथल–पुथल स्वाभाविक है; इस समय उपयुक्त आदर्श व मार्गदर्शन की आवश्यकता होती है । संस्कृत साहित्य ऐसे आदर्शो से परिपूर्ण है । यदि छात्रों को उचित प्रेरणा प्रदान की जाए तो संस्कृत भाषा को छात्र रुचिपूर्वक पढेंगे । ध्यातव्य है कि इस समय छात्र संस्कृत अध्ययन को प्रारम्भ करते हैं, अत: उनसे बहुत अधिक आशा नहीं करनी चाहिए । इस दृष्टि से इस स्तर पर निम्नलिखित उद्देश्य होने चाहिए –

1. सरल संस्कृत खण्डों को शुद्ध व स्पष्ट पढ़ने की योग्यता का विकास करना ।
2. संस्कृत शिक्षण में अभिरुचि बढ़ाने के लिए सरल वाक्यांश अथवा श्लोकों को कण्ठस्थ करवाना ।
3. प्रारम्भिक व्याकरण का ज्ञान देना; सन्धि, कारक, शब्द रूप तथा धातु रूपों का ज्ञान प्रदान करना ।
4. संग्रथन उपागम द्वारा एक से वाक्यों का उच्चारण करना तथा उनका प्रयोग करना सिखाना ।
5. नवीन संस्कृत शब्दों का संचय करना ।
6. संस्कृत से मातृभाषा में तथा मातृभाषा से संस्कृत में (सरल वाक्यों का) अनुवाद करने की योग्यता उत्पन्न करना ।
7. अति लघु वाक्यों में वार्तालाप करने की योग्यता उत्पन्न करना ।

माध्यमिक स्तर के दो भाग हैं –

अ. माध्यमिक स्तर (कक्षा 9 एवं 10) जिसमें संस्कृत अनिवार्य विषय के रूप में पढ़ाई जाती है ।

ब. उच्च माध्यमिक स्तर (कक्षा 11 व 12) जिसमें संस्कृत वैकल्पिक विषय के रूप में पढ़ाई जाती है ।

2.6.2 माध्यमिक स्तर पर संस्कृत शिक्षण के उद्देश्य (Objectives of Teaching Sanskrit at Secondary Stage)

उच्च प्राथमिक स्तर के बाद माध्यमिक स्तर पर आते– आते छात्र संस्कृत भाषा से सामान्यत: परिचित हो जाते हैं । तृतीय भाषा के रूप में संस्कृत शिक्षण के उद्देश्य निम्नलिखित हैं –

1. संस्कृत भाषा के प्रति रुचि उत्पन्न करना ।
2. संस्कृत अनुच्छेदों को उचित ढंग से पढ़ना तथा उनके अर्थो को पढ़कर समझने की योग्यता उत्पन्न करना ।
3. संस्कृत के शब्द भण्डार में वृद्धि करना ताकि भाषा परिमार्जित हो सके ।
4. सरल लोकोक्तियों, प्रहेलिकाओं तथा सुभाषितों को पढ़ने की क्षमता उत्पन्न करना ।

5. संस्कृत में किसी विषय पर 8 से 10 वाक्य लिखने की क्षमता उत्पन्न करना ।
6. मुख्यत: आदर्शोन्तुख श्लोकों का तथा भारतीय संस्कृति से ओत–प्रोत श्लोकों का अध्ययन करना
7. संस्कृत से मातृभाषा तथा मातृभाषा से संस्कृत में अनुवाद करने की योग्यता का विकास करना ।
8. संस्कृत के सरल साहित्य से छात्रों को परिचित करवाना जिससे वे संस्कृत साहित्य के अक्षयकोष से कुछ रत्न स्वयं प्राप्त कर सकें और आनन्द की अनुभूति कर सकें ।

2.6.3 उच्च माध्यमिक स्तर पर संस्कृत शिक्षण के उद्देश्य (Teaching of Sanskrit at Senior Secondary Stage)

वैकल्पिक विषय के रूप में उच्च माध्यमिक स्तर पर संस्कृत शिक्षण के उद्देश्य निम्नलिखित हैं –

1. संस्कृत अनुच्छेदों को उचित ढंग से पढ़ना तथा उनके अर्थो को पढ़कर समझने की योग्यता उत्पन्न करना ।
2. संस्कृत में लघु निबन्ध, लेख तथा पत्र आदि लिखने की क्षमता का विकास करना तथा मौलिक लेखों में संस्कृत श्लोकों को उद्धृत कर छात्रों की भावाभिव्यक्ति की शैली को सशक्त बनाना ।
3. छात्रों को संस्कृत में अपने स्तर के अनुकूल शुद्ध, प्रभावोत्पादक, मधुर एवं रमणीय ढंग से विचारों को अभिव्यक्त करने योग्य बनाना ।
4. संस्कृत से मातृभाषा तथा मातृभाषा से संस्कृत में अनुवाद करने की योग्यता का विकास करना ।
5. संस्कृत श्लोकों को उचित लय, यति, गति पूर्वक पढ़ने की योग्यता उत्पन्न करना जिससे छात्र विभिन्न छंदों के पाठों में भेद कर सकें तथा मात्रानुसार छंदों को पहचान सकें ।
6. छात्रों में श्लोकों की ससंदर्भ व्याख्या करते समय श्लोक में निहित रस, अलंकार, छंद, अन्त: कथा, सूक्ति आदि का विश्लेषण करने की योग्यता का विकास करना ।
7. संस्कृत कवियों तथा लेखकों की जीवनियों से परिचित करवाना ।
8. संस्कृत के स्वाध्याय के माध्यम से मनोविनोद तथा रसानुभूति की प्रवृत्ति जाग्रत करना।
9. संस्कृत के शब्द भण्डार में वृद्धि करना ताकि भाषा साहित्यिक बन सके ।
10. सभी प्रकार के सुभाषितों, लोकोक्तियों तथा प्रहेलिकाओं के अध्ययन की क्षमता उत्पन्न करना ।

2.6.4 उच्च स्तर पर संस्कृत शिक्षण के उद्देश्य

आधुनिक महाविद्यालयों की बी.ए., एम.ए. कक्षाएँ और शास्त्रीय महाविद्यालयों की शास्त्रीय, आर्चाय कक्षाएँ इस स्तर में सम्मिलित की जाती हैं । इस स्तर पर छात्रों का संस्कृत भाषा व साहित्य में अच्छा प्रवेश हो जाना चाहिए । इस स्तर पर संस्कृत शिक्षण के निम्नलिखित उद्देश्य होने चाहिए –

1. संस्कृत के अथाह साहित्य को अधिकाधिक पढ़ने की क्षमता प्रदान करना ।

2. संस्कृत भाषा व साहित्य के प्रति छात्रों में अनुसन्धानात्मक दृष्टिकोण उत्पन्न करना ।
3. छात्रों में मौलिक रचना करने की क्षमता उत्पन्न करना ।
4. संस्कृत रचनाओं का समालोचनात्मक विवेचन करने की क्षमता का विकास करना ।
5. छात्रों को संस्कृत संबंधी विविध प्रतियोगिताओं में भाग लेने का अवसर देकर प्रोत्साहित करना ।
6. संस्कृत के ध्वनि विज्ञान की पूर्ण जानकारी देना ।
7. संस्कृत की दुर्लभ पाण्डुलिपियों का अध्ययन कर उनका संपादन करने की योग्यता का विकास करना, जिससे वे समाज को अमूल्य भेंट दे सकें ।
8. संस्कृत में धारा प्रवाह अपने विचारों को अभिव्यक्त करने की क्षमता का विकास करना ।
9. छात्रों में शास्त्रार्थ करने की योग्यता विकसित करना ।
10. संस्कृत प्रचार प्रसार करने वाली संस्थाओं से छात्रों को परिचित करवाना ।
11. संस्कृत पत्र–पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रेषित करने के लिए छात्रों को प्रोत्साहित करना।
12. छात्रों को संस्कृत में पत्र लिखने, समाचार प्रेषित करने या अन्य प्रकार की सामयिक रचनाएँ करने के लिए प्रोत्साहित करना ।
13. संस्कृत में आधुनिक भाषाओं में तथा इन भाषाओं से संस्कृत में अनुवाद करने की योग्यता का विकास करना ।
14. संस्कृत भाषा में संगणक के लिए साफ्टवेयर तैयार करने की क्षमता उत्पन्न करना ।
15. छात्रों को संस्कृत के पुस्तकालयों का उपयोग करने की ओर प्रवृत्त करना ।

स्व परख प्रश्न (Self Check Questions)

i. प्राथमिक स्तर पर संस्कृत शिक्षण का प्रमुख उद्देश्य क्या है?
ii. माध्यमिक स्तर पर संस्कृत शिक्षण के कोई दो उद्देश्य लिखिए?
iii. उच्च माध्यमिक स्तर पर शिक्षण के कोई दो उद्देश्य लिखिए?
iv. उच्च माध्यमिक स्तर पर संस्कृत का शिक्षण किस रूप में किया जाता है?
v. उच्च स्तर पर संस्कृत शिक्षण के कोई दो उद्देश्य लिखिए?

2.7 सारांश (Summary)

प्रस्तुत इकाई में आपने उद्देश्य पद का अर्थ, संस्कृत शिक्षण के सामान्य एवं विशिष्ट उद्देश्यों, उद्देश्यों का व्यवहारगत परिवर्तन के रूप में लेखन तथा विभिन्न स्तरों पर संस्कृत शिक्षण के उद्देश्यों के संबंध में अध्ययन किया है । संस्कृत का शिक्षण विभिन्न रूपों में किया जा रहा है। प्राथमिक एवं माध्यमिक स्तर पर संस्कृत का शिक्षण प्रमुखत: तृतीय भाषा के रूप में किया जा रहा है, जबकि उच्च माध्यमिक स्तर एवं उच्च स्तर पर इसका शिक्षण वैकल्पिक विषय (साहित्य रूप में) किया जा रहा है ।

2.8 स्व परख प्रश्नों के उत्तर (Self Check Questions)

इस हेतु संबंधित खण्ड को पुन: पढ़िये और अपने उत्तरों की जाँच कीजिये ।

2.9 मूल्यांकन प्रश्न (Unit End Questions)

1. उद्देश्य शब्द का अर्थ स्पष्ट करते हुए शिक्षण में इसका महत्व बताइये ।
2. माध्यमिक स्तर पर संस्कृत शिक्षण के प्रमुख उद्देश्यों का निरूपण कीजिए ।
3. उच्च स्तर पर संस्कृत शिक्षण के उद्देश्यों का विवेचन कीजिए ।
4. संस्कृत शिक्षण के सामान्य उद्देश्यों का उल्लेख कीजिए ।
5. भावाभिव्यक्ति उद्देश्य के अन्तर्गत छात्रों के व्यवहार में क्या परिवर्तन करवाये जा सकते हैं और कैसे?
6. अर्थ ग्रहण उद्देश्य की पूर्ति हेतु कौन सी पाठ्य सामग्री का प्रयोग किया जा सकता है?
7. प्राथमिक स्तर पर संस्कृत शिक्षण के उद्देश्यों को स्पष्ट कीजिए ।

2.10 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. संस्कृत शिक्षण – रामशकल पाण्डेय – विनोद पुस्तक मन्दिर आगरा– 2
2. संस्कृत शिक्षण – डा. शैलजा गौतम, डा. रजनी गौतम – विनोद पुस्तक मन्दिर आगरा– 2
3. संस्कृत शिक्षण – सन्तोष मित्तल – आर. लाल बुक डिपो – मेरठ
4. संस्कृत शिक्षण – डा. प्रभा गुप्ता – साहित्य प्रकाशन, आगरा
5. संस्कृत शिक्षण – डा. पुष्पा सोढ़ी – जैन प्रकाशन मन्दिर, चौड़ा रास्ता जयपुर
6. संस्कृत व्याकरण – डा. प्रीति प्रभा गोयल, राजस्थानी ग्रंथागार, जोधपुर
7. संस्कृत शिक्षण – पं. मोती लाल जोशी, डा. मंजु शर्मा, देवनागरी प्रकाशन, चौड़ा रास्ता, जयपुर
8. भावी शिक्षकों हेतु आधार भूत कार्यक्रम – जे एन. पुरोहित, एच व्यास, एम एम. शर्मा – राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर
9. संस्कृत शिक्षण – राधेश्याम शर्मा, "गौड़", पुनीत प्रकाशन, कांति नगर, जयपुर
10. संस्कृत शिक्षण – रघुनाथ सफाया, विनोद प्रकाशन, आगरा

इकाई –3 (Unit–3)

विद्यालयी पाठ्यक्रम में संस्कृत का स्थान, विभिन्न स्तरों पर अन्य विषयों के साथ सम्बन्ध, पाठ्यचर्या का एकीकृत/विशिष्टीकृत उपागम

)Place of Sanskrit in School Curriculum,Linkage with other Subject Snified/Specialized Approach to Curriculum)

इकाई की रूपरेखा

3.0 उद्देश्य एवं लक्ष्य

3.1 प्रस्तावना

3.2 पाठ्यक्रम का अर्थ एवं सिद्धान्त

3.3 विद्यालयी पाठ्यक्रम में संस्कृत का स्थान

3.4 विद्यालयी पाठ्यक्रम में संस्कृत का स्थान : प्रचलित मत

3.5 विभिन्न आयोगों एवं शिक्षानीतियों के अनुसार पाठ्यक्रम में संस्कृत का स्थान

3.6 विद्यालयी पाठ्यक्रम में संस्कृत का स्थानवर्तमान स्थिति एवं आवश्यकता

3.7 विभिन्न स्तरों पर अन्य विषयों के साथ संस्कृत का सम्बन्ध

3.8 संस्कृत पाठ्यचर्या केएकीकृत विशिष्टीकृत उपागम

3.9 सारांश

3.10 स्वपरख प्रश्नों के उत्तर

3.11 मूल्यांकन प्रश्न

3.11 संदर्भ ग्रन्थ सूची

30. ईकाई के उद्देश्य (objectives of the Unit)

- इस इकाई की समाप्ति पर आप विद्यालयी पाठ्यक्रम का अर्थ, सिद्धान्त एवं उसमें संस्कृत के स्थान की विशिष्ट जानकारी प्राप्त कर सकेंगे ।
- इस इकाई की समाप्ति पर आप विभिन्न स्तरों पर अन्य विषयों के साथ संस्कृत के सम्बन्धों की विस्तृत जानकारी प्राप्त कर सकेंगे ।
- इस इकाई की समाप्ती पर आप पाठ्यचर्या के एकीकृत/विशिष्टीकृत उपागमों की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे ।
- आप विद्यालयी पाठ्यक्रम में संस्कृत के स्थान से सम्बन्धित विभिन्न मतों को समझ सकेंगे ।

- आप विभिन्न आयोगों एवं शिक्षानीतियो के द्वारा प्रस्तुत संस्कृत के पाठ्यक्रम में स्थान सम्बन्धी संस्तुतियों एवं विचारों को जान सकेंगे ।
- आप विद्यालयी पाठ्यक्रम में संस्कृत का क्या स्थान हो इस विषय पर अपना मत प्रस्तुत कर सकेंगे ।
- आप विभिन्न स्तरों पर अन्य विषयों के साथ संस्कृत के सम्बन्धों को बता सकेंगे ।
- आप पाठ्यचर्या के एकीकृत एवं विशिष्ट उपागमों का आशय स्पष्ट कर सकेंगे ।

3.1 प्रस्तावना (Introduction)

जॉन एडमस्मिथ के अनुसार शिक्षा के दो ध्रुव होते हैं– शिक्षक एव शिक्षार्थी । इनके मध्य अन्तक्रिया को ही शिक्षा कहा जाता है । पाठ्यक्रम वह साधन है जिसकी सहायता से अध्यापक छात्रों के व्यक्तित्व में वांछित परिवर्तन लाता है । वस्तुत : शिक्षक का अधिकांश समय पाठ्यक्रम को पूरा करने में ही व्यतीत होता है । अत : पाठ्यक्रम के बारे में जानना अत्यावश्यक
हो जाता है ।

3.2 पाठ्यक्रम का अर्थ एवं सिद्धान्त (Meaning of Curriculum & Basic Principal)

पाठ्यक्रम का सामान्य अर्थ है– जो कुछ पढ़ाने के लिए निर्धारित किया जाए । इसमें किसी परीक्षा के लिए कुछ निर्धारित पाठ या पाठ्यसामग्री का विधान किया जाता है । वह पाठ्य सामग्री एक निर्धारित अवधि अर्थात् सत्र या उप सत्र में पढ़ाई जाती है । सत्रान्त में उसका मूल्यांकन किया जाता है, पर आज पाठ्यक्रम का अर्थ विस्तृत हो गया है । अब पाठ्यक्रम का अर्थ व्यक्ति के अनुभवों के संगठित रूप से लिया जाता है । यह केवल मूलभूत कुशलताओं तथा ज्ञान तक ही सीमित नहीं होता । केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय द्वारा निर्मित शिक्षा परिभाषा कोष के अनुसार पाठ्यक्रम किसी अध्ययन की रूप रेखा है । माध्यमिक शिक्षा आयोग के अनुसार, पाठ्यक्रम से तात्पर्य परम्परागत ढंग से विभिन्न विषयों का ज्ञान कराना ही नहीं है वरन् यह तो अनुभवों की समग्रता है, इस समग्रता को छात्र विद्यालय, कक्षा, पुस्तकालय, प्रयोगशाला, कार्यशाला, क्रीड़ाओं के माध्यम से प्राप्त करता है । इस प्रकार विद्यालय का सम्पूर्ण वातावरण ही पाठ्यक्रम बन जाता है जो छात्र के जीवन के प्रत्येक पहलू को स्पर्श करता है और उनके व्यक्तित्व को संतुलित बनाता है ।"

3.3 पाठ्यक्रम के निर्माण के मौलिक सिद्धान्त (Basic Principles of Curriculum & Construction)

1. लोच का सिद्धान्त ।
2. व्यापकता का सिद्धान्त ।
3. प्रेरणा का सिद्धान्त ।

4. अस्थाई प्रकृति का सिद्धान्त ।
5. क्रिया का सिद्धान्त ।
6. विविधता का सिद्धान्त ।
7. जीवन से सम्बद्धता का सिद्धान्त ।
8. सह संबंध का सिद्धान्त ।
9. उपयोगिता का सिद्धान्त ।
10. व्यक्तिगत भिन्नता का सिद्धान्त ।
11. व्यावहारिकता का सिद्धान्त
12. मानसिक स्तर का सिद्धान्त
13. आवश्यकता आधारित होने का सिद्धान्त ।

3.4 विद्यालयी पाठ्यकम में संस्कृत का स्थान (Place of Sanskrit in School Curriculum)

विद्यार्थियों के सर्वागीण विकास हेतु विद्यालय का सम्पूर्ण जीवन पाठ्यक्रम होता है । यह विद्यार्थियों के जीवन के सभी पक्षों को प्रभावित करता है और उनके संतुलित विकास में सहायता देता है । भारतीय संस्कृति एवं आध्यात्मिकता संस्कृत साहित्य में सुरक्षित हैं । संस्कृत भाषा द्वारा हम अपने वास्तविक स्वरूप को पहचान सकते हैं । संस्कृत भारत भूमि की वह अजस्र ज्ञानधारा है जो क्षीण भले ही हुई हो पर अभी निष्प्राण नहीं हुई है । जहाँ एक ओर, इसके कण–कण में भारतीय संस्कृति भरी है वहीं दूसरी ओर इसकी समृद्धि के स्तर को विश्व की कोई भी नवीनतम भाषा नहीं पा सकी है । कतिपय विगत शताब्दियों के राजनैतिक उलट फेरों और झंझावातों ने बरबस इसकी प्राधान्यता पर कुठारघात किया, किन्तु स्वाधीनता के पश्चात् इसकी गौरव–गरिमा पुन: स्थापित करने के प्रयास हो रहे हैं । वर्तमान समय में विद्यालयी पाठ्यक्रम में संस्कृत का क्या स्थान हो इसकी चर्चा भी लगातार होती आ रही हें । फलत: इस सम्बन्ध में मुख्यरूप से तीन मत प्रचलित हैं ।

3.5 विद्यालयी पाठ्यक्रम में संस्कृत का स्थान : प्रचलित मत (Place of Sanskrit in School Curriculum :Existing Views)

3.5.1 प्रथम मत

प्रथम वर्ग के मानने वालों के अनुसार संस्कृत की शिक्षा अनावश्यक एवं हानिकारक है क्योंकि यह एक नीरस तथा क्लिष्ट भाषा है । इनके अनुसार यह केवल ब्राह्मणों की भाषा है, इसलिए इसके अध्ययन की आवश्यकता केवल कर्मकाण्ड की पद्धतियाँ सीखने के लिए होती है । इस वर्ग के मतावलम्बियों के अनुसार संस्कृत एक मृत भाषा है जो अब व्यावहारिक बोलचाल की भाषा नहीं रह गयी है । इसलिए इसको विद्यालयी पाठ्यक्रम में स्थान न देने से कोई हानि नहीं होगी ।

3.5.2 द्वितीय मत

इस वर्ग के मतावलम्बियों में वे विद्वान् आते हैं जो संस्कृत को अनावश्यक तो नहीं मानते हैं, किन्तु आधुनिक विषयों को अधिक महत्व देते हुए संस्कृत के अध्ययन के प्रति तटस्थ या उदासीन भाव रखते हैं । ये संस्कृत को पाठ्यक्रम में एक वैकल्पिक विषय के रूप में स्थान दिलाना चाहते हैं । इनके अनुसार भी संस्कृत एक जटिल व क्लिष्ट भाषा है, अत: इसको अनिवार्य बनाने में पाठ्यक्रम बोझिल हो जायेगा । इसे ध्यान में रखते हुए संस्कृत का शिक्षण अनिवार्य नहीं होना चाहिए, संस्कृत में जिनकी रुचि हो वे इसे पढ़ें, जो न पढ़ना चाहें उन्हें यह नही पढ़ायी जाये ।

3.5.3 तृतीय मत

तृतीय मत के विद्वान् संस्कृत को अनिवार्य रूप से पढ़ने–पढ़ाने पर जोर देते हैं । संस्कृत आयोग (1956– 57) ने भी इस बात पर विशेष बल दिया है कि संस्कृत की शिक्षा अनिवार्य रूप से दी जानी चाहिये । संस्कृत केवल प्राचीन भाषा ही नहीं, बल्कि यह आधुनिक युग की भाषा है । आज एक बड़ी संख्या में विद्यार्थी इसका अध्ययन करते हैं । संस्कृत पाठशालाओं में तो यह शिक्षा का माध्यम भी है । केन्द्र सरकार तथा कई राज्यों की सरकारें संस्कृत के पठन–पाठन को प्रोत्साहित करने के लिए छात्रवृत्तियाँ व पुरस्कार भी प्रदान कर रही हैं । संस्कृत शिक्षा की अनिवार्यता को स्वीकार करते हुए राजस्थान में संस्कृत विश्वविद्यालय की स्थापना की जा चुकी है तथा कई राज्य सरकारें अपने– अपने राज्यों में संस्कृत विश्वविद्यालय की स्थापना करने पर विचार कर रही हैं ।

3.6 विभिन्न आयोगों एवं शिक्षानीतियो के अनुसार पाठ्यक्रम में संस्कृत का स्थान) Place of Sanskrit in Curriculum According To Various Commissions and Eductional Policies)

विभिन्न आयोगों एवं राष्ट्रीय शिक्षा नीतियों में विद्यालयी पाठ्यक्रमों में संस्कृत के स्थान के विषय में जो संस्तुतियाँ या विचार प्रस्तुत किये गये हैं, उनका संक्षिप्त विवरण अग्रानुसार है–

3.6.1 विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग (1948–49)

विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग ने कक्षा 9 एवं 10 के पाठ्यक्रम में संस्कृत को एक शास्त्रीय भाषा के रूप में स्थान दिया । राधाकृष्णन् आयोग के नाम से प्रसिद्ध इस आयोग द्वारा निर्धारित मुख्य विषय इस प्रकार थे– (1) मातृभाषा (2) संघीय भाषा या एक शास्त्रीय भाषा या एक आधुनिक भारतीय भाषा (3) अँग्रेजी (4) प्रारम्भिक गणित (5) सामान्य विज्ञान (6) सामाजिक अध्ययन ।

इस आयोग ने इन्टरमीडिएट स्तर पर पाठ्यक्रम में शास्त्रीय भाषा को स्थान दिया ।

3.6.2 माध्यमिक शिक्षा आयोग (1952 – 53)

मुदालियर आयोग (1952 – 53) के नाम से भी प्रसिद्ध इस आयोग ने द्वि–भाषा सूत्र प्रस्तुत करते हुए मातृभाषा एवं क्षेत्रीय भाषा के संयुक्त पाठ्यक्रम में संस्कृत को स्थान दिया । इसने संस्कृत को भारतीय भाषा के रूप में पाठ्यक्रम में सम्मिलित करने का विचार रखा, लेकिन स्पष्टत: पाठ्यक्रम में संस्कृत का स्थान निश्चित नहीं किया पर इस आयोग ने संस्कृत की महत्ता को धार्मिक व सांस्कृतिक दोनों ही पक्षों से स्वीकार की ।

3.6.3 केन्द्रीय शिक्षा सलाहकार परिषद (1956)

इस परिषद् ने दो प्रारूपों में त्रिभाषा सूत्र प्रस्तुत किया–

प्रथम प्रारूप –

प्रथम – (अ) मातृभाषा या (ब) क्षेत्रीय भाषा या (स) मातृभाषा और क्षेत्रीय भाषा का मिश्रित पाठ्यक्रम या (द) मातृभाषा और सांस्कृतिक भाषा का मिश्रित पाठ्यक्रम

द्वितीय– हिन्दी अथवा अँग्रेजी

तृतीय – कोई आधुनिक भारतीय भाषा या यूरोपीय भाषा (जो बिन्दु संख्या 1 व 2 में न ली हो)

द्वितीय प्रारूप –

(1) प्रथम प्रारूप के सभी विकल्प

(2) अँग्रेजी या यूरोपीय भाषा

(3) हिन्दी (अ–हिन्दी क्षेत्रों के लिए) या कोई भी एक भारतीय भाषा (हिन्दी क्षेत्रों के लिए)

इससे स्पष्ट होता है कि शिक्षा की इस परामर्शदात्री समिति ने त्रिभाषा सूत्र में संस्कृत भाषा को विशेष महत्व नहीं दिया ।

3.6.3 संस्कृत आयोग (1958)

सुनीति कुमार चटर्जी की अध्यक्षता में गठित इस आयोग ने अपने प्रतिवेदन में स्पष्टत: कहा कि माध्यमिक विद्यालयों के पाठ्यक्रम में संस्कृत को अनिवार्य स्थान मिलना चाहिए । आयोग के अनुसार इस हेतु यदि आवश्यक हो तो त्रिभाषा सूत्र में परिवर्तन किया जाए । संस्कृत आयोग ने माध्यमिक विद्यालयों में भाषाओं के अध्ययन के विषय में तीन संस्तुतियाँ प्रस्तुत की।

प्रथम संस्तुति

(1) मातृभाषा या क्षेत्रीय भाषा (2) अँग्रेजी अथवा हिन्दी (अ–हिन्दी भाषी प्रदेशों के लिए) या आधुनिक भारतीय भाषा (हिन्दी भाषी प्रदेशों के लिए) (3) संस्कृत या कोई अन्य प्राचीन भाषा।

द्वितीय संस्तुती

(1) मातृभाषा या क्षेत्रीय भाषा, मातृभाषा एवं संस्कृत का मिश्रित पाठ्यक्रम (2) अंग्रेजी (3) हिन्दी या अन्य भारतीय भाषा या हिन्दी एवं संस्कृत का मिश्रित् पाठ्यक्रम ।

3.6.4 शिक्षा आयोग (कोठारी आयोग 1964 – 66)

कोठारी आयोग ने अपने त्रिभाषा सूत्र में संस्कृत या अन्य किसी शास्त्रीय भाषा को स्थान नहीं दिया । इस आयोग ने केन्द्रीय शिक्षा सलाहकार बोर्ड के त्रिभाषा इत्र को इस प्रकार संशोधित किया–

(1) मातृभाषा या प्रादेशिक भाषा

(2) संघ की राजभाषा या सहभाषा

(3) एक आधुनिक भारतीय भाषा या आधुनिक विदेशी भाषा जो विद्यार्थी द्वारा पाठ्यक्रम में न चुनी गयी हो और शिक्षा का माध्यम भी न हो ।

3.6.5 राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1968)

स्वतंत्र भारत की प्रथम शिक्षा नीति में भी संस्कृत को विद्यालयी पाठ्यक्रम में विशेष स्थान नहीं दिया । इस शिक्षा नीति में हिन्दी भाषी प्रदेशों के लिए निम्नलिखित भाषाओं के पठन–पाठन को प्रस्तावित किया–

(1) मातृभाषा

(2) हिन्दी

(3) अँग्रेजी

हिन्दी, अँग्रेजी के अतिरिक्त दूसरी एक आधुनिक भारतीय भाषा (प्रधानत: कोई द्रविड़ परिवार की भाषा)

अ–हिन्दी भाषी प्रदेशों के लिए प्रस्तावित प्रारूप –

(1) मातृभाषा (2) हिन्दी (3) अँग्रेजी

इससे स्पष्ट होता है कि 1968 की शिक्षा नीति में भी संस्कृत का स्थान स्पष्टत: निर्धारित नहीं किया गया, लेकिन यह विचार प्रकट किया गया कि संस्कृत भारतीय भाषाओं की जननी है, अत: विश्वविद्यालय स्तर पर संस्कृत अध्ययन की समुचित व्यवस्था होनी चाहिए ।

3.6.6 राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986)

इस शिक्षा नीति में संस्कृत के विषय में 1968 की राष्ट्रीय शिक्षा नीति के भाषा सम्बन्धी प्रावधानों को ही दोहराया गया।

(1) विश्वविद्यालयी स्तर पर इण्डोलॉजी भारतीय इतिहास तथा पुरातत्व अध्ययन के भाग के रूप में संस्कृत का अध्यापन करवाया जाए।

(2) पुस्तकों का अनुवाद करवाया जाए तथा द्विभाषी व बहुभाषी शब्द कोषों का विकास किया जाए।

(3) भारत में संस्कृत, पाली, प्राकृत तथा तमिल व अन्य शास्त्रीय भाषाओं में उपलब्ध ज्ञान, अनुभव व समकालीन वैज्ञानिक विचार एवं तकनीकी विकास के बीच में सम्बन्ध स्थापित किया जाए ।

इस शिक्षा नीति में 5+3+2 की कक्षा संरचना के अनुसार भाषा अध्ययन के लिए निम्नलिखित संस्तुति की गयी ?

- पहली से तीसरी कक्षा तक – मातृ भाषा

- तीसरी से पांचवी कक्षा तक – (क) मातृ भाषा (ख) अँग्रेजी
- छठी से आठवीं कक्षा तक – (क) मातृ भाषा (ख) अँग्रेजी (ग) संस्कृत भाषा अथवा अन्य श्रेष्ठ भाषा
- नवीं से दसवीं कक्षा तक –

  अ – हिन्दी भाषी क्षेत्रों के लिए (क) मातृ भाषा (ख) अँग्रेजी (ग) हिन्दी भाषा

  हिन्दी भाषी क्षेत्रों के लिए (अ) हिन्दी (ब) अँग्रेजी (स) तृतीय भाषा (संस्कृत अथवा अन्य श्रेष्ठ भाषा)।

स्व परख प्रश्न (Self–Check Questions)

1. पाठ्यक्रम का क्या अर्थ है?.
2. पाठ्यक्रम निर्माण के कोई तीन सिद्धान्त लिखिए ।
3. पाठ्यक्रम में संस्कृत के स्थान के संबंध में कौन से तीन मत प्रचलित हैं?
4. संशोधित त्रिभाष सूत्र क्या है ।
5. राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986) संस्कृत के पाठ्यक्रम में स्थान के बारे में क्या प्रावधान करती है?

ऊपर विभिन्न आयोगों, शिक्षानीतियों व परिषदों के विद्यालयी पाठ्यक्रम में संस्कृत के स्थान सम्बन्धी विचारों एवं प्रस्तावों की चर्चा के पश्चात् वर्तमान समय में प्रचलित विद्यालयी पाठ्यक्रम में संस्कृत के स्थान की विवेचना इस प्रकार की जा सकती है –

3.7 विद्यालयी पाठ्यक्रम में संस्कृत का स्थान: वर्तमान स्थिति एवं आवश्यकता (Place of Sanskrit in School Curriculum :Present Situation and Need)

(क) प्राथमिक स्तर या प्रारम्भिक अवस्था

भाषा अध्ययन को प्राथमिकता देते समय यह सुनिश्चित किया जाना चाहिए कि प्राथमिक स्तर पर शिक्षा का माध्यम मातृभाषा हो । प्राथमिक अवस्था पूर्ण होने तक राजकीय भाषा की शिक्षा आरम्भ कर देनी चाहिए । चौथी तथा पाँचवी कक्षा में आधुनिक भाषा सुगमता पूर्वक आरम्भ की जा सकती है । ऐसा करने पर विद्यार्थी संस्कृत की लिपि (देवनागरी) से ठीक तरह से परिचित हो जायेंगे । इस लिपि को लिखने, पढ़ने की योग्यता प्राप्त होने पर विभिन्न साधनों एवं माध्यमों द्वारा संस्कृत पठन– पाठन की वाँछनीय पृष्ठभूमि निर्मित की जा सकती है ।

(ख) निम्न माध्यमिक स्तर :

निम्न माध्यमिक स्तर अर्थात् कक्षा 6 से 10 तक के पाठ्यक्रम में संस्कृत का स्थान दो रूपों में होना चाहिए । इनमें से एक–अनिवार्य संस्कृत तथा दूसरा वैकल्पिक संस्कृत के रूप में होना चाहिए । अनिवार्य संस्कृत में साहित्य पर बल न देकर भाषा पर बल दिया जाना चाहिए, जिससे विद्यार्थी संस्कृत के आधार पर अपनी मातृभाषा में नये–नये शब्दों की रचना कर सकें । यह अनिवार्य संस्कृत मातृभाषा के साथ एक सम्बद्ध पाठ्यक्रम में रखी जा सकती है

। यह अवश्य ध्यान रखा जाना चाहिए कि संस्कृत का एक पृथक प्रश्न–पत्र हो और इसके अंक परीक्षा फल में सम्मिलित किये जायें । इसमें समसामयिक महत्वों के पाठों के अतिरिक्त साहित्य के रूप में सुभाषितों का अध्ययन किया जाये । कुछ प्रमुख संस्कृत साहित्यकारों की प्रमुख रचनाओं से भी विद्यार्थियों को परिचित करवाया जा सकता है । किन्तु केवल इतना ही पर्याप्त नहीं होगा, पाठ्यक्रम में इसे एक स्वतंत्र, पृथक् एवं वैकल्पिक विषय के रूप में स्थान दिया जाना चाहिए । सभी विद्यालयों में संस्कृत पठन–पाठन की व्यवस्था होनी चाहिए । वैकल्पिक रूप में पाठ्यक्रम में सम्मिलित करते समय आने वाली विषय समूह सम्बन्धी एवं संसाधन सम्बन्धित समस्याओं का उन्मूलन किया जाना चाहिए । वैकल्पिक रूप में संस्कृत का पठन–पाठन भाषा व साहित्य की दृष्टि से उच्च होगा ।

(ग) उच्च माध्यमिक स्तर

कक्षा नवमी एवं दशवीं कक्षा में जहाँ संस्कृत को एक अनिवार्य भाषा के रूप में पढ़ाया जाना चाहिए, वहीं उच्च माध्यमिक स्तर पर वैकल्पिक विषय के रूप में पाठ्यक्रम में मानविकी समूह के एक विषय के रूप में सम्मिलित किया जा सकता है । इस स्तर पर संस्कृत गद्य, पद्य, नाटक, संस्कृत व्याकरण, संस्कृत साहित्य का इतिहास, संस्कृत दर्शन आदि को सम्मिलित किया जा सकता है ।

सारत: संस्कृत को विद्यालयी पाठ्यक्रम में अनिवार्य एवं वैकल्पिक विषय के रूप में निश्चित स्थान मिलना चाहिए । माध्यमिक स्तर तक इसे सभी विद्यार्थियों के लिए एक अनिवार्य विषय के रूप में रखा जा सकता है । उच्च माध्यमिक स्तर पर इसे वैकल्पिक विषय के रूप में पढ़ाया जा सकता है । संस्कृत को पाठ्यक्रम में महत्व देने के साथ ही विद्यालयी पाठ्यक्रम की पूर्ति के विभिन्न स्तरों पर अन्य विषयों को पढ़ाते समय तथा पाठ्यसहगामी क्रियाओं में इस भाषा का प्रभाव अवश्य होना चाहिए, जिससे विद्यार्थियों में आध्यात्मिक मूल्यों का विकास किया जा सके ।

3.7 विभिन स्तरों पर अन्य विषयों के साथ संस्कृत के सम्बन्ध (Linkages with other subject at different stages)

भारतीय धर्म, दर्शन तथा संस्कृति की भाषा के रूप में बौद्धिक, भावनात्मक, आध्यात्मिक तथा कलात्मक निष्पत्ति के हितार्थ प्रेरणा की स्थायी तथा अजस्र धारा के रूप में संस्कृत भाषा का महत्व अवर्णनीय है । भारत के प्रथम राष्ट्रपति डॉ. राजेन्द्र प्रसाद के अनुसार – संस्कृत वाङ्मय भारत की ही क्यों सारी मनुष्य जाति के लिए अमूल्य निधि है । इसकी प्राचीनता, व्यापकता, विशदता, सौन्दर्य और मधुरता सभी तो ऐसी हैं, जिनसे न केवल मानव की आज तक की संस्कृति का सारा इतिहास ज्योतिर्मय हो उठता है वरन् मानव का हृदय आनन्द से विभोर हो जाता है और उसको एक ऐसे नये आदर्श लोक की झाँकी मिल जाती है, जिसमें पहुँचने पूर ही उसका जीवन सार्थक हो जाता है और उसे भवबाधा से मुक्ति मिल जाती है । संस्कृत भाषा की यह अनोखी विशेषता है कि यह वातावरण में उपस्थित सभी विषयों की भाषा है एवं सभी विषय इसकी विषयवस्तु हो सकते हैं । अब विभिन्न विषयों के साथ संस्कृत भाषा के सम्बन्धी व योजकता पर विचार करते हैं ।

3.7.1 संस्कृत एवं अन्य भाषाएँ (Sanskrit & Other Languages)

भारतवर्ष की अधिकतर भारतवर्ष की अधिकतर भाषाओं की जननी संस्कृत है । हिन्दी, मराठी, पंजाबी, गुजराती, बंगला, असमी, उड़िया आदि भाषाएँ तो संस्कृत से ही निकली हैं तमिल भी संस्कृत से अत्यधिक प्रभावित भाषा है । इस प्रकार आर्य एवं द्रविड़ परिवार की सभी भाषाएँ संस्कृत से प्रभावित हैं । इस विषय में संस्कृत आयोग लिखता है– आधुनिक आर्य भाषाएँ संस्कृत से ही उत्पन्न हुई हैं और जहाँ तक द्रविड़ भाषाओं का सम्बन्ध है, वे भी अपने साहित्यिक प्रयोग के आदि–काल से ही संस्कृत के द्वारा पालित–पोषित हैं ।

भाषा की दृष्टि से भारत की सभी भाषाओ में संस्कृत के अधिकांश शब्द तत्सम या तद्भव रूप में विद्यमान हैं । हिन्दी भाषा तो संस्कृत की ही शब्दावली मूलरूप से ग्रहण करती है । जब हिन्दी को संविधान में राजभाषा स्वीकृत किया गया, तब अनुच्छेद 351 के अधीन यह निश्चित किया गया कि जहाँ भी आवश्यक या वांछनीय होगा वहाँ इसके शब्द भण्डार के लिए मुख्यतया संस्कृत से शब्द ग्रहण करते हुए इसकी समृद्धि को सुनिश्चित किया जायेगा । संस्कृत भाषा में इतनी सामर्थ्य है कि वह आधुनिकतम ज्ञान–विज्ञान के लिए उपयुक्त प्रतिनिधि शब्द प्रदान कर सकती है । इस प्रकार शब्दों की रचना एवं प्रसार की दृष्टि से अन्य भाषाओं के साथ संस्कृत का सन्निकट सम्बन्ध है ।

3.7.2 संस्कृत एवं भारतीय इतिहास व संस्कृति (Sanskriti & Indian History/Culture)

संस्कृत भाषा भारतीय इतिहास एवं संस्कृति को समझने का एक आदि स्रोत है । इसी भाषा के माध्यम से ही भारतीय संस्कृति अक्षुण्ण बनी हुई है । इस भाषा के विशाल साहित्य में हमारी प्राचीन सामाजिक व्यवस्थाओं की प्रमुख विशेषताओं; जैसे – वर्णाश्रम, संयुक्त परिवार, सोलह संस्कारों, सामाजिक तथा धार्मिक पर्वों आदि का वर्णन हुआ है । प्राचीनतम प्रौढ़ साहित्य से विभिन्न ऐतिहासिक प्रमाण प्राप्त किये जा सकते हैं । वैदिक साहित्य भारत–योरोपीय संस्कृति से समवेत करके हमारी प्राचीन संस्कृति का चित्रण करता है । इसका अध्ययन तुलनात्मक धर्म और तुलनात्मक भाषाविज्ञान का आधार माना जाता है साथ ही भारतीय संस्कृति के इतिहास में संस्कृत नाटक तथा उससे उपलब्ध होने वाले रूपान्तर प्रधान स्रोत माने जाते रहे हैं । कल्हण की ' राजतरंगिनी' में काश्मीर का विस्तृत इतिहास लिखा गया है । बाण का 'हरिश्चरितमू' पद्मगुप्त का 'नवसहसांक चरितम्' विल्हण का विक्रमांक देवचरितमू आदि रचनाएँ ऐतिहासिक विषयवस्तु के दृष्टिकोण से विशेष महत्व रखती हैं ।

3.7.3 संस्कृत एवं दर्शन (Sanskriti & Philosophy)

जब पाश्चात्य सभ्यता अपनी शैशवास्था में थी, तब भारत में सुविख्यात तथा सर्वोत्कृष्ट उदात्त षददर्शन का उद्भव एवं विकास हुआ । पाश्चात्य देशों में प्लेटों के जिस दर्शन को सराहा जाता है उसका गहन विश्लेषण करने पर ज्ञात होगा कि उसका मूल आधार भी भारतीय दर्शन ही है । संस्कृत साहित्य भारतीय दर्शन की अमूल्य निधि को संजोये हुए है। (1) विश्वजननी सर्वव्यापक आत्मा का अस्तित्व (2) आत्मा का आवागमन (3) मानवीय आत्मा का अस्तित्व (4) कर्म का सिद्धान्त (5) मोक्ष प्राप्ति या मुक्ति इत्यादि लगभग समस्त शास्त्रों में मान्य हैं तथा ये सभी नियम भारतीय संस्कृति की अन्तर्निहित आत्मा हैं । उपनिषद् काल के याज्ञवल्ल और जनक

से लेकर महावीर, बुद्ध, बादरायण, शंकराचार्य, रामानुज, ध्यानेश्वर तथा माध्वाचार्य जैसे असंख्य महात्माओं, ऋषियों और दार्शनिकों की मौलिक रचनाएँ संस्कृत साहित्य की निधि हैं जो वर्तमान युग के तत्व वेत्ताओं के लिए दर्शन साहित्य के चिन्तन का मुख्य आधार है ।

संस्कृत आयोग के शब्दों में 'एक विशेष विचारधारा को धारण करने के कारण किसी व्यक्ति पर आरोप लगाना, उस व्यक्ति को तिरस्कार की दृष्टि से देखना भारतीय गुणों के विपरित है, क्योंकि हमारा दर्शन ही स्वतन्त्रता का पोषक रहा है, और यह दर्शन संस्कृत में विराजमान है ।

3.7.4 संस्कृत भाषा विज्ञान व व्याकरण (Sanskrit & Linguistics/Grammar)

भाषा विज्ञान का सबसे प्रथम प्राप्त ग्रंथ यास्क का 'निरुक्त' है, जिसकी रचना संभवत: ईसा से सौ वर्ष पूर्व हुई थी । निरुक्त में यास्क ने निघण्टु के शब्दों की व्याख्या की है तथा वैदिक पृष्ठ भूमि में उनके अर्थो पर विचार किया है । यास्क के पश्चात् पाणिनी और पतंजलि उच्चकोटि के भाषा वैज्ञानिक हुए हैं । पाणिनी ने ध्वनि विज्ञान, अर्थविज्ञान एवं वर्णनात्मक व्याकरण का वैज्ञानिक विवेचन प्रस्तुत किया । पतंजलि ने पाणिनी के सूत्रों पर महाभाष्य लिखा । अद्यपर्यन्त भी भाषा वैज्ञानिक भाषा की प्रकृति एवं उत्पत्ति का क्रमबद्ध अध्ययन करने के लिए संस्कृत भाषा साहित्य से लाभान्वित होते हैं ।

3.7.5 संस्कृत एवं भूगोल व खगोल (Sanskrit & Geography/Astronomy)

संस्कृत साहित्य की अमूल्य धरोहर वराहमिहिर का पंच सिद्धिान्तिका व सूर्यसिद्धान्त, आर्यभट्ट का आर्यभट्टीय, भास्कराचार्य का सिद्धान्त शिरोमणि आज भी भूगोल एवं खगोल का अध्ययन–अध्यापन करने वालों के लिए प्रामाणिक स्रोत ग्रंथ हैं । संहिता, ब्राह्मण, आरण्यक तथा उपनिषद् में उपलब्ध होने वाली भौगोलिक सामग्री में वैदिक युग की भौगोलिक स्थिति का ज्ञान होता है ।

3.7.6 संस्कृत एवं गणित (Sanskrit & Maths)

रेखागणित, बीजगणित इन तीनों की उत्पत्ति का विवरण संस्कृत साहित्य में ही मिलता है । युक्लिडियन ज्यामिति के जिस सैतालीसवें प्रमेय की खोज का श्रेय पाइथागोरस को दिया जाता हैं, उसकी वास्तविकता यह कि पाथागोरस से बहुत पहले इस प्रमेय का वर्णन बौद्धायन में मिलता है । रेखागणित का प्रत्यक्ष परिचय सिंधु सभ्यता के समय के रेखाचित्रों में मिलता है । सोलहवींशताब्दी तक पश्चिम को त्रिभुज का कोई ज्ञान नहीं था, जबकि इसके सैंकड़ों वर्ष पूर्व 'सूर्य सिद्धान्त' में इसका वर्णन मिलता है । ब्रह्मगुप्त के ' ब्राह्मस्फुट सिद्धान्त' में ज्यॉ निकालने की रीति बतायी गयी है । इसी ग्रंथ में शंकुच्छायादि ज्ञानाध्याय में त्रिकोणमिति की भी चर्चा है ।

बीजगणित का आरम्भ भारत में आज से लगभग पाँच हजार वर्ष पहले से माना जा सकता है, फिर भी आर्यभट्टीय में तो इसका दर्शन होता है । सातवीं शताब्दी की रचना ब्राह्मस्फुट सिद्धान्त के कुट्टकाध्याय में वर्ग–समीकरण, एक वर्ग–समीकरण, अनेक वर्ग समीकरण आदि साधनों की विधियों का वर्णन मिलता है । भास्कराचार्य द्वितीय ने 'सिद्धान्त शिरोमणि' नामक ग्रंथ में अत्यन्त सरल भाषा में बीजगणित को समझाया है । इसमें एक स्थान पर लिखा है–

खयोगे वियोगे धनर्ण तथैव च्युतम्

शून्यतस्य द्विपर्यासमेति ।

अर्थात् शून्य से कुछ जोड़ो या घटाओं कोई अन्तर नहीं होगा, पर शून्य से धन राशि घटाने पर ऋण और ऋण राशि घटाने पर धन राशि प्राप्त होती है । भास्कराचार्य की लीलावती, महावीराचार्य का गणित सार संग्रह, नेमिचन्द्र का त्रिलोक सारगणित तथा क्षेत्रमिति की प्रसिद्ध रचनाएँ हैं । अंकगणित में प्रयुक्त दशमलव पद्धति की खोज आर्यभट्ट ने की थी । इनका आर्यभट्टीय गणित का एक उच्च कोटि का प्रामाणिक ग्रंथ है ।

3.7.7 संस्कृत एवं ज्योतिष शास्त्र (Sanskrit & Astrology)

ज्योतिष शास्त्र के अस्तित्व को हम वेदों और वैदिक साहित्य में पाते है । आज भी पंचांगों में चन्द्रग्रहण, सूर्यग्रहण, चन्द्रोदय, शुक्रोदय, शुक्रास्त, बुद्ध और ब्रहस्पति नक्षत्रों के उदय और अस्त का समय भारतीय गणित ज्योतिष के आधार पर बताया जाता है । ज्योतिष के प्राचीन आचार्य आर्यभट्ट ने पांचवी शताब्दी में ही नक्षत्रों की वैज्ञानिक खोज कर ली थी । ग्रहण की भविष्यवाणी करने की पद्धति का ज्ञान संसार को प्रथमत: इन्होंने ही दिया । वराहमिहिर का सूर्य सिद्धान्त व भास्कराचार्य का 'सिद्धान्त शिरोमणि' ज्योतिष के आधारभूत प्रामाणिक ग्रंथ हैं ।

3.7.7 संस्कृत एवं चिकित्सा विज्ञान (Sanskrit & Medical Science)

भारत की उन्नत चिकित्सा पद्धतियों का प्रादुर्भाव ऋग्वेद काल में ही हो गया था । ऋग्वेद काल में जल चिकित्सा एवं रश्मि चिकित्सा का उल्लेख मिलता है । साथ ही इस समय अनेक प्रकार की औषधियों का ज्ञान था–

या फलिनीर्या अफला अपुष्पा याश्च पुष्पिणी: ।
बृहस्पतिप्रसूतास्ता नो मुंचन्र्स्वहस: ।

अथर्ववेद में अनेक रोगों के लक्षण, निदान और चिकित्सा का विवेचन उपलब्ध 'होता है । चिकित्सा विज्ञान में चरक, वाग्भट और भावमिश्र का योगदान सराहनीय है । उन्होंने रोगों के निदान एवं उपचार का जो वर्णन किया है, वह आज भी चिकित्सा के क्षेत्र में कल्याणकारी देन है। सुश्रुत संहिता के लेखक सुश्रुत आचार्य धन्वन्तरि के शिष्य और चरक कें परवर्ती आचार्य थे । चरक संहिता आयुर्वेद का उत्कृष्ट ग्रंथ है, जिससे आधुनिक चिकित्सा विज्ञान भी प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप से लाभान्वित हो रहा है । शल्य चिकित्सा का मुकुटायमान ग्रथ 'सुश्रुत संहिता' है जो धन्वतरि एवं सुश्रुत के मध्य संवाद पर आधारित है । भारतीय शल्य चिकित्सा की सराहना करते हुए ' हिस्ट्री ऑफ संस्कृत लिटरेचर' के रचनाकर्ता मैकडोनल ने पृ.स. 427 पर लिखा है कि नाक कट जाने पर पुन: मॉसल नाक की रचना की नीति यूरोप ने आधुनिक युग में भारत से ही सीखी है । इतना ही नहीं पशुचिकित्सा विज्ञान के क्षेत्र में भी 'शालिहोत्र' को इस विद्या का जनक माना जा सकता है । यह तथ्य इस बात को प्रमाणित करता है कि यह विद्या कभी भी उपेक्षित नहीं थी । पशुओं की अनेक बीमारियों का निदान एवं उपचार के विषय में शालिहोत्र ने प्रकाश डाला है। पालकाप्य रचित हत्मायुर्वेद में हाथियों के रोगों की परीक्षा, निदान व चिकित्सा का वर्णन है ।

3.7.8 संस्कृत एवं भौतिक विज्ञान (Sanskrit & Physics)

इस क्षेत्र में भी संस्कृत साहित्य में पर्याप्त सामग्री मिलती है । संस्कृत वाड्मय के अनुसार भौतिक विज्ञान के प्रवर्त्तक कणाद मुनि हैं । उनका मत था कि प्रत्येक वस्तु परमाणुओं से बनी है । कणाद् का अणुवाद भौतिकी की आधारशिला रहा है । भौतिक विज्ञानी उदयनाचार्य ने

प्रकाश एवं उष्णता का कारण सूर्य है, इसकी घोषणा की । भौतिक विज्ञानी वाचस्पति मिश्र ने प्रकाश को भी परमाणुओं से निर्मित माना था । ईसा की दूसरी शताब्दी में ही दिग्दर्शन यन्त्र का आविष्कार कर लिया गया था । लौह निर्मित इस 'मत्स यन्त्र ' को तेल में रखा जाता था । यह उत्तर दिशा की सूचना दिया करता था ।

3.7.9 संस्कृत एवं रसायन शास्त्र (Sanskrit & Chemistry)

रसायन शास्त्र के प्राथमिक विद्वानों में पतंजलि का नाम लिया जा सकता है। नागार्जुन ने 'रस–रत्नाकार' और 'रसेन्द्र मंगल' की रचना की । रस–रत्नाकर संवाद रूप में लिखित है। गंधक शोधन, सामान्य धातुओं से सोना बनाना एवं रत्नों को गलाने की विधि का वर्णन रस–रत्नाकर में किया गया है । रसेन्द्र चूड़ामणि नामक ग्रंथ में सोमदेव ने अनेक रासायनिक प्रयोगों का वर्णन किया है। बारहवीं शताब्दी में भूटान के समीप किरात प्रदेश में रस हृदय' ग्रंथ में पारद को रंगने और शुद्ध करने की विधियों का उल्लेख किया गया है। 'रसार्णव ' में रसक व ताम्र के योग से पीतल तथा रसक से जस्ता बनाने की विधि वर्णित है।

3.7.10 संस्कृत एवं वनस्पति विज्ञान (Sanskrit & Botany)

वनस्पति शास्त्र का अध्ययन ऋग्वैद काल से किया जा रहा है । ऋग्वेद के अनुसार –

यत्रौषधी: समग्मत राजान: समितावि‍व ।
विप्र: उच्यते भिषमू रक्षोहामीव चातन: ।। ऋग्वेद 10.19.76

विद्वान् आयुर्वेद एवं कृषि के कारण वनस्पतियों के अध्ययन में रुचि लेते रहें है । संस्कृत साहित्य में वृक्ष को मानव के समान सजीव माना गया है । वृक्षों की उपयोगिता एवं इनको लगाने के महत्व के विषय में अनेक स्थलों पर वृत्तान्त मिलते हैं । महाभारत काल में वैज्ञानिक पर्यवेक्षण के फलस्वरूप वनस्पतियों को एक शुङ्गा, प्रतन्वती, अंशुमति, काण्डिनी, विशाखा आदि श्रेणियों में रखा गया था ।

3.7.11 संस्कृत एवं जीव विज्ञान (Sanskrit & Biology)

संस्कृत साहित्य में उपलब्ध प्रमाणों से पता चलता है कि इसमें जीव विज्ञान का क्रमबद्ध अध्ययन करने के प्रयास हुए हैं । वैदिक साहित्य के शतपथ ब्रह्मण में मनुष्य शरीर में 360 अस्थियाँ बतायी हैं । संस्कृत साहित्य में 'कीटों' का वर्गीकरण ध्वनि, शरीर की बनावट, लिंगभेद, पाद, मुख, बाल आदि के आधार पर किया गया है ।

3.7.12 संस्कृत एवं यन्त्र विज्ञान (Sanskrit & Engineering)

संस्कृत साहित्य में विविध यन्त्रों तथा विभागों की रचना का उल्लेख मिलता है । अथर्ववेद में 'कृत्या' नामक मूर्ति का उल्लेख है जो यन्त्र से चलती थी । कौटिल्य ने 'अर्थशास्त्र' में अनेक युद्धोपयोगी यन्त्रों का वर्णन किया है । रामायण में राम के पुष्पक विमान का वर्णन भी मिलता है । समराङ्गण सूत्र नामक ग्रन्थ में विमान रचना की विधि बतायी गयी है । भारद्वाज द्वारा विरचित 'यन्त्र सर्वस्व' में विमान विज्ञान का विवेचन किया गया है जो विमान भौतिकी का एक उपयोगी ग्रंथ है ।

3.7.13 संस्कृत एवं समाजशास्त्र (Sanskrit & Sociology)

भारत के वर्तमान सामाजिक स्वरूप को समझने के लिए मनुस्मृति जिसकी रचना लगभग 300 ई.पू. की गयी थी, समाजशास्त्र के क्षेत्र की एक अनुपम रचना है । याज्ञवल्ल

स्मृति, पंचतंत्र एवं हितोपदेश आदि ऐसे कई ग्रंथ हैं, जिनमें समाजशास्त्र की उपयोगी सामग्री निहित है । मनुस्मृति में समाज को व्यवस्थित करने के प्रमाण तो मौजूद हैं ही, साथ हो समाज में नारियों का स्थान, गुरु एवं शिष्य का स्थान, माता–पिता, भाई–बन्धुओ आदि का स्थान एवं इनके कर्त्तव्यों का विवरण मिलता है ।

3.7.14 संस्कृत एवं राजनीतिक विज्ञान व अर्थशास्त्र (Sanskrit & Poltical Science / Economics)

ईसा से 300 वर्ष पूर्व रचित कौटिल्य (आचार्य चाणक्य) का 'अर्थशास्त्र' राजनीतिक विज्ञान एवं अर्थशास्त्र के क्षेत्र में एक प्रामाणिक ग्रंथ है। चाणक्यनीति, पंचतंत्र एवं हितोपदेश आदि ग्रंथ में भी राजनीति एवं अर्थशास्त्र की उपयोगी जानकारी प्राप्त होती है। भूतपूर्व राष्ट्रपति डॉ. शंकरदयाल शर्मा ने 10 जून 1983 को अखिल भारतीय संस्कृत सम्मेलन के उद्घाटन भाषण मैं कहा कि 'इतिहासकार और समाजशास्त्री हमारी राष्ट्रीयता की व्याख्या आज चाहे जिस रूप में करें, लेकिन उसकी मूल अवधारणा संस्कृत साहित्य में पहले से ही विद्यमान थी। पूरे विश्व को एक कुटुम्ब मानना, सम्पूर्ण जाति को एक जाति मानना तथा सबके सुख की कामना करने जैसे उदात्त एवं महान् विचार संस्कृत की ही देन है। इन्हें ही वर्तमान शब्दावली में राष्ट्रीयता, धर्म निरपेक्षता और मानव अधिकार कहा जाता है। '

3.7.15 संस्कृत एवं प्रबन्ध (Sanskrit & Management)

आधुनिकतम जाने माने विषय क्षेत्र प्रबन्ध के सम्बन्ध में भी संस्कृत साहित्य में प्रचूर सामग्री है जिसे प्रबन्ध की परम्परागत धारा की संचित धरोहर कहा जा सकता है । प्रबन्ध को बेहतर ढंग से करने के लिए मार्गदर्शक सूत्र रूप लोकोक्तियों से संस्कृत भाषा समृद्ध है, जिनका उपयोग आज भी सैद्धान्तिक एवं व्यावहारिक रूप में किया जा सकता है । अतिपरिचयादवज्ञा, सततगमनादनादरो भवति, निरस्तपादपे देशे एरण्डोअपि द्रुमायते, हिताहित वीक्ष्यं निकाममाचरेत्, जैसे हजारों सिद्धान्त प्रबन्ध के गुर सिखाते हैं । ये संस्कृत में निहित ज्ञान–विज्ञान और चिन्तन के अक्षय भण्डार के द्योतक हैं ।

3.7.16 संस्कृत एवं विधि विज्ञान (Sanskrit & Law)

संस्कृत – साहित्य विधि विज्ञान की दृष्टि से समृद्ध है । वैदिक साहित्य से लेकर याज्ञवल्क्य स्मृति (800 ई.पू.) गौतम धर्मसूत्र (400ई.पू.) बौधायन धर्मसूत्र (400ई. पू.) आपस्तम्ब धर्मसूत्र (400 ई.पू.) वशिष्ठ धर्मसूत्र (400 ई.पू.) एवं मनुस्मृति (300 ई.पू.) में विधि विज्ञान का वर्णन किया गया है । ये स्मृतियाँ एवं सूत्र विश्वज्ञान कोष तुल्य हैं । इनमें राजनीति, इतिहास, भूगोल, अर्थशास्त्र, स्वास्थ्य विज्ञान के साथ ही साथ विधि विज्ञान का गहन विवेचन किया गया है ।

3.7.17 संस्कृत एवं कामशास्त्र (Sanskrit & Sexology)

भारतीय संस्कृति की आधारभूत विशेषताओं में पुरुषार्थ चतुष्ट्य– धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष का वर्णन मिलता है । कामशास्त्र के आदि आचार्य प्रजापति माने जाते हैं । चारों पुरुषार्थों में काम पर वश करना आवश्यक माना जाता है । नन्दी, श्वेतकेतु, नन्दी, चारायण, सुवर्णनाम,

दत्तक, कोक, नागार्जुन, जयदेव तथा वात्सायन आदि अनेक विद्वानों ने कामशास्त्र की गहन विवेचना प्रस्तुत करते हुए इसे विज्ञान के रूप में विकसित किया ।

3.7.18 संस्कृत एवं संगीत (Sanskrit & Music)

संगीत शास्त्र का सर्वप्रथम ग्रंथ हमें सामवेद के रूप में मिलता है । सामवेद को संगीत का विज्ञान भी कहा जाता है । सामवेद से ही संगीत में सप्तस्वर की कल्पना हुई है । आचार्य भरत का नाट्यशास्त्र संगीत, नृत्य और काव्यशास्त्र का एक ऐसा ग्रंथ है, जिसमें इन तीनों विषयों पर विस्तार से चर्चा हुई है । 'नारद शिक्षा' नामक ग्रंथ में सामगान की विधियों क विस्तार से वर्णन किया गया है । नारद का संगीत मकरन्द, पार्श्वदेव का संगीत समय सार, शाङ्गरेव का संगीत रत्नाकर, राम अमात्य का स्वरमेल कला निधि, सोमनाथ का रागाविबोध, श्रीकण्ठ पण्डित की रस कौमुदी, विष्णुनारायण भातखण्डे की अभिनव रागमंजरी व लक्ष्य संगीत आदि अनेक ग्रन्ध भारतीय संगीत शास्त्र की परम्परा में, अनन्य महत्व रखते हैं ।

3.7.19 संस्कृत एवं काव्यशास्त्र (Sanskrit & Poetics)

छन्द, अलंकार, साहित्यिक समालोचना तथा ललित कलाओं के क्षेत्र में अभिनवगुप्त, आनन्दवर्धन, कुन्तक, मम्मट, विश्वनाथ, जगन्नाथ तथा क्षेमेन्द्र आदि समालाचक अपनी अनुपम देने के कारण रिचर्ड एवं मैन्यू आर्नल्ड जैसे अर्वाचीन आलोचकों की अपेक्षा किसी भी दृष्टि से कम नहीं हैं । इनके रस, ध्वनि, सामान्यीकरण तथा वक्रोक्ति के सिद्धान्त आज भी सर्वमान्य हैं तथा वर्तमान युग में भी अपनी अनूठी प्रतिभा और आलोचना सम्बन्धी क्षमता के परिचायक हैं । ये ग्रंथ न केवल समालोचकों के लिए प्रामाणिक ग्रंथ हैं वरन् आधुनिक साहित्यकारों के लिए भी अवलम्बन ग्रंथ हैं ।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट होता है कि संस्कृत भाषा अनेक भाषाओं की पोषक एवं उन्नयनकारी रही है, अनेक भाषाएँ इसके सम्पर्क से समृद्ध हुई हैं । संस्कृत भाषा में ही यह सामर्थ्य है कि वह अपने शब्द सामर्थ्य के बल पर अन्य भाषाओं को निरन्तर समृद्ध कर सकती है। इसके अतिरिक्त उपनिषद् ही षददर्शनों भगवद्गीता एवं विश्वविख्यात् दार्शनिक मीमांसा, वेदांतदर्शन का आधार रहे हैं । उपनिषदों में ही ईश्वर का सिद्धान्त, आत्मा का सिद्धान्त, आत्मा और ईश्वर का ऐक्य सिद्धान्त, कर्म सिद्धान्त, धर्म सिद्धांत, मोक्ष सिद्धान्त, मनोविज्ञान, सामाजिक सदाचार और नीति, जीवन के ध्येय का सिद्धान्त, मानव व्यक्तित्व की मीमांसा तथा परवर्ती भारतीय चिन्तन तथा दार्शनिक विचार निहित हैं। संस्कृत साहित्य, धर्म और दर्शन, व्याकरण, छन्द अलंकार, ध्वनि विचार एवं शब्द विवेचन की भाषा नहीं है वरन् भारतीय संस्कृति एवं सभ्यता का इतिहास, भूगोल व खगोल, गणित, ज्योतिष शास्त्र, चिकित्सा विज्ञान, भौतिक विज्ञान, रसायन शास्त्र, वनस्पति शास्त्र, जीवविज्ञान, यन्त्र विज्ञान, सामाजिक विज्ञान, राजनीतिक व अर्थशास्त्र, प्रबन्ध, विधि विज्ञान, संगीत, कामशास्त्र (यौनशास्त्र) तथा संगीत शास्त्र की भी भाषा है। संस्कृत में वास्तुकला भूषण कला, कृषि, सिंचाई, नृत्य तथा अन्य चौसठ के लगभग कलाओं पर भी प्रचूर विषयक सामग्री उपलब्ध है । संस्कृत भाषा में मानवीय क्रिया–कलापों का सुन्दर चित्रण तो है ही, यह कविता और दर्शन में समृद्ध होते हुए नवीन बौद्धिक प्रयत्नों को प्रेरित और प्रोत्साहित करने की कामना रखती है । संस्कृत साहित्य के वृहद भण्डार में

संग्रहित ज्ञान को प्रकाश में लाने के लिए इसमें पठन–पाठन एवं अनुसंधान को विशेष रूप से प्रेरित किया जाना चाहिए । डॉ. राजेन्द्र प्रसाद ने इसे समझते हुए कहा है 'तकनीकी तथा आध्यात्मिक शिक्षा के मध्य खाई को जोड़ना होगा और इस मनोरथ सिद्धि के लिए संस्कृत एक सुन्दर पुल का काम करती है।' (संस्कृत आयोग, प्रतिवेदन, पृष्ठ 71) इसलिए यह कहना न्यायोचित होगा कि संस्कृत सभी विषयों की भाषा है और सभी विषय संस्कृत से अनुप्राणित हैं ।

स्व–परख प्रश्न (Self–Check Questions)

1. भाग 'अ' में ग्रंथो के नाम दिये गये हैं। जबकि भाग 'ब' में उनके लेखकों के नाम ऊपर नीचे दिये गये हैं । मिलान करिए तथा क्रमांक लिखिए ।

भाग– अ	भाग–ब	
1. सिद्धान्त शिरोमणि	1. कौटिल्य	.....
2. निरुक्त	2. नागार्जुन	.....
3. रागतरंगिनी	3. कल्हण	.....
4. भवसहसांक	4. चरितम् पद्मगुप्त	.....
5. रसरत्नाकर	5. यास्क	.....
6. अर्थशास्त्र	6. भास्कराचार्य	.....

3.8 संस्कृत पाठ्यचर्या के एकीकृत/विशिष्टीकृत उपागम (Unified,Specialized Approach to Curriculum)

पाठ्यक्रम का अर्थ केवल सैद्धान्तिक विषय से नहीं है जो विद्यालय में परम्परागत रूप से पढ़ाये जाते हैं, वरन् इनमें अनुभवों की सम्पूर्णता सम्मिलित है । पाठ्यक्रम शिक्षण को जिस प्रकृति एवं संदर्भ में संचालित एवं विकसित होना पड़ता है, उसे निर्देशित करता है । अधिगम अनुभवों को प्रभावी एवं लाभकारी बनाने के लिए व्यावसायिक ज्ञान एवं निर्णय आवश्यक है। पाठ्यक्रम व्यावसायिक ज्ञान एवं निर्णय दोनों को आधार प्रदान करता है । कनिंघम के अनुसार पाठ्यक्रम एक कलाकार (शिक्षक) के हाथों में एक यन्त्र (साधन) है, जिससे वह अपने कलाकक्ष (विद्यालय) में अपने उद्देश्य के अनुसार अपनी वस्तु (विद्यार्थी) को कोई भी रूप दे सकता है। विद्यालय की समस्त गतिविधियाँ पाठ्यक्रम से प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित व संचालित होती हैं । पाठ्यचर्या के उपागम शिक्षा व्यवस्था के लक्ष्य से सम्बद्ध होते है ।

संस्कृत के अध्ययन की दृष्टि से भारत में सामान्यत: पाठ्यचर्या के दो प्रकार के उपागम व्यवहार में हैं–

(1) एकीकृत उपागम

(2) विशिष्टीकृत उपागम

3.8.1 एकीकृत उपागम (Unified Approach)

संस्कृत पाठ्यचर्या के एकीकृत उपागम के अन्तर्गत संस्कृत अनेक विषयों के समूह में एक विषय है, अत: इसका अध्ययन इतना गहन नहीं हो सकता है जितना संस्कृत माध्यम की पाठशालाओं में हो सकता है । इस उपागम के अन्तर्गत विभिन्न स्तरों पर सभी विद्यालयी

विषय; जैसे –हिन्दी, अँग्रेजी, सामाजिक विज्ञान, सामान्य विज्ञान, गणित आदि की तरह संस्कृत वृहद् पाठ्यक्रम के एक अवयव के रूप में एकीकृत पाठ्यक्रम के निर्धारित उद्देश्य की पूर्ति में सहायक होती है एकीकृत उपागम में ग्रहण (सुनना व पढ़ना) मुख्य उद्देश्य होता है और अभिव्यक्ति गौण अर्थात् अभिव्यक्ति बहुत ही सीमित रूप से हो सकती है । आधुनिक विद्यालयों में जहाँ संस्कृत की शिक्षा कक्षा 6 से दी जाती है इसी उपागम का उपयोग करते हुए उत्तरोत्तर जटिलता के क्रम में पाठ्चर्चा विकसित की जाती है । इस उपागम से संस्कृत पढ़ने वाले विद्यार्थियों को माध्यमिक, उच्च माध्यमिक, स्नातक, अधिस्नातक आदि के प्रमाण पत्र व उपाधियाँ दी जाती हैं ।

3.8.1 विशिष्टीकृत उपागम (Specialized Approach)

पाठ्यक्रम के विशिष्टीकृत उपागम से आशय संस्कृत पठन–पाठन के उस उपागम से लिया जा सकता है जिनमें विशिष्ट रूप से संस्कृत भाषा एवं इसके साहित्य को केन्द्र में रखते हुए पाठ्यक्रम का विकास किया जाता है । इसमें विद्यार्थी कक्षा 1 से ही संस्कृत का पठन आरम्भ करते हैं । इस उपागम में विद्यार्थियों को उपाध्याय, शास्त्री, आचार्य, विद्यावारिधि आदि उपाधियाँ दी जाती हैं ।

इस उपागम के अंतर्गत संस्कृत शिक्षण के उद्देश्यों में ग्रहण (पढ़ना या सुनना) और अभिव्यक्ति (लिखना एवं बोलना) दोनों को बराबर महत्व दिया जाता है । इस उपागम में विद्यालयी स्तर पर हिन्दी, अँग्रेजी, गणित, सामाजिक अध्ययन एवं सामान्य विज्ञान आदि को भी रखा जाता है, ताकि पाठ्यक्रम एकांगी न हो । संस्कृत साहित्य की सभी विधाओं गद्य, पद्य व नाटक, संस्कृत व्याकरण, संस्कृत साहित्य का इतिहास, धर्म व दर्शन आदि सम्बन्धित विषय संस्कृत भाषा एवं साहित्य पर विद्यार्थी की पकड़ मजबूत बनाने की दृष्टि से रखे जाते हैं । विशिष्टीकृत उपागम में शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया का माध्यम संस्कृत भाषा होती है ।

3.9 सारांश (Summary)

पाठ्यक्रम का अर्थ – अनुभवों का संगठित रूप तथा उनकी समग्रता ।

पाठ्यक्रम निर्माण के सिद्धान्त – वैयक्तिक विभिन्नता, लचीलापन, आवश्यकता आधारित, जीवनोपयोगिता, जीवन से सम्बद्धता, विविधता आदि के सिद्धान्त ।

पाठ्यक्रम में संस्कृत का स्थान – मत 1. कोई स्थान न हो, 2. अनिवार्य न होकर वैकल्पिक हो, 3.अनिवार्य रूप में पढ़ाई जावे ।

विभिन्न आयोग एवं समितियाँ –

1. **संस्कृत आयोग** – प्रथम पांच वर्ष तक मातृभाषा, प्रारम्भिक स्तर पर सुभाषित श्लोकों को पढ़ना, कक्षा 7 से अनिवार्य रूप में शिक्षण किया जाये ।
2. **कोठारी आयोग** – 1. मातृभाषा या प्रादेशिक भाषा, 2. संघ की राज भाषा या सह भाषा (हिन्दी या अंग्रेजी), 3. आधुनिक भारतीय या यूरोपीय भाषा के (1) तथा (2) से तथा शिक्षा के माध्यम से भिन्न हो ।
3. **त्रिभाषा सूत्र** –

संस्कृत का अन्य विषयों से संबंध – संस्कृत भारतीय भाषाओं की जननी है । इसका संबंध विभिन्न विषयों; यथा– धर्म, दर्शन, ज्योतिषशास्त्र, खगोलशास्त्र, गणित, ज्यामिति, भौतिक शास्त्र, रसायन विज्ञान, आर्युविज्ञान, अर्थशास्त्र एवं राजनीतिशास्त्र से है ।

पाठयक्रम के उपागम –

1. एकीकृत – अन्य विषयों के समूह में संस्कृत एक विषय के रूप में ।
2. विशिष्टिकृत – संस्कृत भाषा एवं साहित्य का विशिष्ट स्थान ।

3.10 स्वपरख प्रश्नों के उत्तर (Answers to Self–Check Questions)

1.

अ	ब
(1)	6
(2)	5
(3)	3
(4)	4
(5)	2
(6)	1

2. ज्यामिति का 47 वां प्रमेय, त्रिभुज, बीजगणित, शून्य, दशमलव प्रणाली आदि।
3. ग्रहण की भविष्यवाणी करने की पद्धति, चन्द्रोदय, शुक्रास्त, बुद्ध एवं वृहस्पति नक्षत्रों के उदय एवं अस्त के समय का ज्ञान ।

3.11 मूल्यांकन प्रश्न (Unit End Questions)

(1) विद्यालयी पाठ्यक्रम में संस्कृत के स्थान सम्बन्धी प्रचलित मतों की विवेचना कीजिए ।

(2) विभिन्न आयोगों द्वारा प्रदत्त विद्यालयी पाठ्यक्रम में संस्कृत के स्थान विषयक सुझावों की विवेचना कीजिए ।

(3) राष्ट्रीय शिक्षा नीतियों में विद्यालयी पाठ्क्रम में संस्कृत के स्थान विषयक प्रस्तावों की विवेचना कीजिए ।

3.11 संदर्भ ग्रंथ सूची (References)

(अ) पुस्तकें

1. Apte,D.N.& Dongre,P.K. – Teaching of Sanskrit in Secondary School, Arya Book Depot.
2. गुप्ता प्रभा – संस्कृत शिक्षण, साहित्य प्रकाशन, आगरा,2001
3. सफाया, रघुनाथ – संस्कृत शिक्षण, हरियाणा साहित्य, अकादमी, चण्डीगढ़, 1997
4. पाण्डे, रामशकल – संस्कृत शिक्षण, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा।
5. मित्तल, संतोष – संस्कृत शिक्षण, आर लाल बुक डिपो, मेरठ, 2000
6. शर्मा, रीटा एवं जैन, – संस्कृत शिक्षण, आविष्कार पब्लिशर्स, जयपुर 2005

अमिता

7. जोशी मोतीलाल एवं शर्मा, मंजु – संस्कृत शिक्षण, देवनागरी, प्रकाशन, जयपुर 2001
8. चतुर्वेदी, सीताराम – संस्कृत शिक्षण पद्धति, नन्दकिशोर एण्ड ब्रदर्स, वाराणसी
9. Sharma, Bela Rani – Modern Method of Teaching Sanskrit, Sarup & Sons, New Delhi

(ब) प्रतिवेदन

1. माध्यमिक शिक्षा आयोग का प्रतिवेदन - 1953
2. राजभाषा आयोग का प्रतिवेदन – 1956
3. संस्कृत आयोग का प्रतिवेदन –1958
4. शिक्षा आयोग का प्रतिवेदन – 1966
5. राष्ट्रीय शिक्षा नीति - 1968
6. राष्ट्रीय शिक्षा नीति – 1986

इकाई - 4 (Unit– 4)

सम्प्रत्यों का संज्ञात्मक मानचित्र एवं पाठ्यक्रम के तत्व (Cognitive Map of Concepts and Curricular Elements)

इकाई की रूपरेखा

4.0 उद्देश्य

4.1 प्रस्तावना

4.3 संप्रतत्ययों का संज्ञात्मक मानचित्र

4.4 संज्ञानात्मक मानचित्र सम्प्रत्ययात्मक पृष्ठभूमि

4.4 संज्ञानात्मक मानचित्र की परिभाषाएँ

4.5 संज्ञान : तात्पर्य

4.6 संज्ञानात्मक आयाम : तात्पर्य

4.7 भाषा एवं संज्ञान का सम्बन्ध

4.8 सम्प्रत्यय: तात्पर्य, प्रकृति, वर्गीकरण, स्तर

4.9 अच्छे सम्प्रत्यय मानचित्र की विशेषताएँ

4.10 महत्व

4.11 पूर्वाकांक्षाये

4.12 पाठ्यक्रम के तत्व

4.13 सारांश

4.14 स्व–परख प्रश्नो ने उत्तर

4.15 मूल्यांकन प्रश्न

4.16 संदर्भ ग्रंथ सूची

40. इकाई के उद्देश्य (Objectives of the Unit)

- इस इकाई की समाप्ति पर आप सम्प्रत्ययों के संज्ञानात्मक मानचित्र की विस्तृत जानकारी प्राप्त कर
- आप संस्कृत पाठ्यक्रम के अवयवों की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे ।
- आप संज्ञानात्मक मानचित्र की सम्प्रत्ययात्मक पृष्ठभूमि की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे ।
- आप संज्ञानात्मक मानचित्र को परिभाषित कर सकेगें ।
- आप संज्ञान क्या है, यह समझ सकेंगे ।
- आप भाषा एवं संज्ञान के सम्बन्ध को स्पष्ट कर कसेंगे ।
- आप सम्प्रत्यय के तात्पर्य एवं इसकी प्रकृति को समझ सकेंगे ।
- आप सम्प्रत्ययों का वर्गीकरण कर सकेंगे ।
- आप सम्प्रत्ययों के विभिन्न स्तरों को समझ सकेंगे ।

- आप सम्प्रत्ययों के अधिगम की आवश्यकता को स्पष्ट कर सकेंगे ।
- आप सम्प्रत्ययों का संज्ञानात्मक मानचित्र बनाने की प्रक्रिया को जान सकेंगे ।
- आप अच्छे सम्प्रत्यय मानचित्र की विशेषताएँ बता सकेंगे ।
- आप शिक्षण– अधिगम प्रक्रिया में सम्प्रत्ययों के संज्ञानात्मक मानचित्रों के महत्व को स्पष्ट कर सकेंगे
- आप सम्प्रत्ययों का संज्ञानात्मक मानचित्र निर्मित करने के क्रम में पूर्वकांक्षाओं को समझ सकेंगे ।

4.1 प्रस्तावना (Introduction)

शिक्षा मनोविज्ञान में पिछले कुछ वर्षो से कई प्रयोग हुए हैं । इन प्रयोगों का श्रेय ब्रूनर , टालमैन, आसुवेल आदि मनोविज्ञानिकों को जाता है । इन लोगों के प्रयोगों से अधिगम के क्षेत्र में क्रान्तिकारी परिवर्तन आये हैं । ऐसे ही परिवर्तनों में सम्प्रत्यों का संज्ञानात्मक मानचित्र की अवधारणा एक महत्वपूर्ण परिवर्तन है । आगे के अनुच्छेदों में हम इस पर चर्चा करेंगे ।

4.2 संप्रत्ययों का संज्ञात्मक मानचित्र (Cognitive Map of Concepts)

विचारों एवं प्रक्रियाओं के दृश्य प्रस्तुतीकरण को समुदाय एवं शिक्षा में एक सशक्त माध्यम माना जाता है । कम्पनियों के चिन्ह, मार्ग एवं उपमार्ग प्रणाली के मानचित्र, रेखाचित्र और सड़क चिन्हों को दैनिक जीवन की जटिलताओं में विचारों के प्रस्तुतीकरण का एक प्रभावी रूप माना जाता है । दृश्य प्रस्तुतीकरण प्रविधियां शिक्षक के लिए एक महत्वपूर्ण प्रारूप प्रस्तुत करती हैं । यह दृश्य प्रस्तुतीकरण प्रविधियाँ सावधानी से निर्मित वस्तुओं एवं प्रक्रियाओं के बहुरंगी चित्र, कागज पर या दीवार तथा भूमि पर शीघ्रता से अंकित आकृतियाँ तक हो सकते हैं । दी इन्टरनेशनल एन्साइक्लोपीडिया ऑफ एज्यूकेशन के अनुसार विद्यार्थियों एवं शिक्षकों दोनों से ऐसे सशक्त साक्ष्य मिले हैं कि दृश्य प्रस्तुतीकरण अधिगम करने में सहयोग देता है । जोन्स एवं अन्य (1988–89) के अनुसार एक प्रभावी मानचित्रात्मक प्रस्तुतीकरण एक पूर्ण समझ का विकास करता है, जिसे केवल शब्दों में व्यक्त नहीं कर सकते हैं । ये मानचित्र किसी वस्तु के अंश एवं पूर्ण का प्रस्तुतीकरण इस प्रकार करते हँ कि विषय वस्तु की क्रमबद्ध संरचना में भी उपलब्ध नहीं हो पाता है । दृश्य प्रस्तुतीकरण का एक आकर्षक रूप संज्ञानात्मक मानचित्र के रूप में उभर कर आया है ।

4.3 संज्ञानात्मक मानचित्र की सम्प्रत्ययात्मक पृष्ठभूमि (Conceptual Frame Work of Cognitive Map)

संज्ञानात्मक मानचित्र के सम्प्रत्यय को सर्वप्रथम टोलमैन (Tolman;1948) ने प्रस्तावित किया जो बाद में संज्ञानात्मक मनोविज्ञान का आधार बना । अप्रत्यक्ष अधिगम (Latent Learning) के विषय में अध्ययन करते हुए इन्होंने प्रदर्शित किया कि चूहे भूलभूलैया में बेहतर प्रदर्शन करते हैं यदि उन्हें ऐसा करने के लिए पूर्व में अवसर दिया गया हो । टालमैन ने तर्क दिया कि चूहे भूलभूलैया का आन्तरिक प्रतिरूप कर लेते हैं जिसे ये उस समय उकेर

(Draw) लेते हैं, जब ऐसा ज्ञान उनके लिए उपयोगी हो । टोलमैन ने माना कि मानव के आन्तरिक प्रतिरूप (Internal Representation) को संज्ञानात्मक मानचित्रों की रचना के संदर्भ में विश्लेषित किया जा सकता है ।

निक्की हेयज के अनुसार एक संज्ञानात्मक मानचित्र एक मानचित्र प्रतिबिम्ब (Mental Image) है, जो हमें वातावरण के बारे में सूचनाओं को एकत्रित, संग्रहित, व्यवस्थित एवं उपयोग करने की अनुमति देता है । (A congnitive map is mental image which allows us to collect,store,organic and imformation about the environment.)

टोलमैन के विचार को पियाजे (Paiget; 1952) एवं ब्रूनर व अन्य से बल मिला । पियाजे के अनुसार बालकों (Infants) की तर्कशक्ति व सम्प्रत्यय में अपरिपक्वता होती है तथा प्रौढ़ होने के साथ–साथ परिपक्वता और संज्ञानात्मक विकास पहले मूर्त तथा सामान्य पदार्थो से होता है । तत्पश्चात् जटिल मानसिक क्रियाओं का विकास होता है । बालक खोज (Search), विभेदीकरण (Descrimination) एवं (Assimilation) आत्मीकरण द्वारा सम्प्रत्यय प्राप्त कर लेता है ।

ब्रूनर , गुडनोव व आस्टिन (Bruner,Goodonow,Austin;1956) के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति अपने वातावरण में उपलब्ध वस्तुओं को श्रेणीबद्ध कर सकता है । वह सादृश्य एवं विभेदक गुणों की पहचान कर उनके अलग–अलग वर्ग बना सकता है और उनके अनुकूलन मानसिक व्यवहार को प्रदर्शित कर सकता है । यह एक विलक्षण मानवीय गुण है जो जानवरों में इतना विकसित नहीं होता है । वस्तुओं, घटनाओं या क्रियाओं को श्रेणीबद्ध कर सकने की इस योग्यता को प्रत्यय निर्माण (Concept formation) की संज्ञा दी जाती है । अपने अध्ययन के आधार ब्रूनर ने भाषा का बोध तथा कौशल विकसित करने के लिए सप्रत्यय निष्पत्ति प्रतिमान का विकास किया ।

ब्रूनर के पश्चात् डेविड ऑसुबैल (Ausubel: 1968) ने सतप्रत्यय व तथ्यों का बोध कराने तथा संज्ञानात्मक आयाम (Congnitive domain) का विकास करने के लिए अग्रिम व्यवस्थापक प्रतिमान (Advance Organizer Model) का विकास किया, जिसमें सम्प्रत्ययों तथा तथ्यों के बोध से ज्ञान पुंज (Knowledge Cluster) का निर्माण किया जाता है ।

डेविड ऑसुबेल के इस प्रतिमान से प्रभावित होकर नोवाक व अन्य (Novak,et al; 1983) ने सम्प्रत्यय मानचित्र को संज्ञानात्मक मानचित्र का भाग मानते हुए विज्ञान के विद्यार्थियों के लिए सम्प्रत्यय मानचित्र का उपयोग किया । अपने अध्ययन में नोवाक व अन्य ने पाया कि इस उपागम से विद्यार्थी जटिल घटनाओं को आसानी से समझ लेते हैं ।

वस्तुत: जब हम किन्हीं वस्तुओं या व्यक्तियों के स्थानगत संगठन या व्यवस्था के बारे में विचार कर रहे हाते हैं, तब प्रत्येक समय हम संज्ञानात्मक मानचित्र का ही उपयोग कर रहे होते हैं । यहाँ तक कि हम किसी समस्या का समाधान करते समय जो प्रक्रिया अपनाते हैं, कोई क्रियाविधि अपनाते हैं, क्रमिक निर्देश देते हैं, विचार करते हैं, तब भी हम संज्ञानात्मक मानचित्र का ही उपयोग कर रहे होते हैं ।

संज्ञानात्मक मनोविज्ञान में संज्ञानात्मक चित्रों को मानव मस्तिष्क के अन्दर पायी जाने वाली गत्यात्मकता युक्त व्यवस्थाएँ (Schemes) माना जाता है । ये गत्यात्मकता युक्त व्यवस्थाएँ इस भौतिक दुनियाँ (Physical World) के प्रति हमारे प्रतिबिम्बन का हिस्सा होती हैं और निर्णय प्रक्रिया (Decision Mirror) में अभिप्रेरणा के रूप में उपस्थित रहती हुई हमारी अभिवृत्तियों की रचना करती हैं तथा इनमें परिवर्तन लाती हैं । संज्ञानात्मक मानचित्र मानव मस्तिष्क में वास्तविकताओं के साथ 'मानचित्र दर्पण' (Mental Mirror) की तरह ही काम नहीं करते हैं बल्कि ये भौतिक दुनियाँ के बारे में हमारे विचारों एवं संवेदनाओं के परिष्करण के लिए एक सक्रिय साधन हैं ।

4.4 संज्ञानात्मक मानचित्र की परिभाषाएँ (Definations of Cognitive Map)

डिक्शनरी ऑफ एज्युकेशन के अनुसार – 'व्यवहार की सुनियोजित श्रृंखला द्वारा अधिगम करना है, जिसमें संकेतों, ज्ञान एवं उद्दीपक को मस्तिष्क द्वारा ऐसी पद्धति में व्यवस्थित किया जाता है कि पूर्वस्थापित लक्ष्यों को प्राप्त किया जा सके ।"

ड्रू वेस्टन (Drew Westen) के अनुसार – "संज्ञानात्मक मानचित्र दृश्य स्थान का मानसिक प्रस्तुतीकरण है।" (Congnitive Map: Mental Repersentation of Visual Space)

स्टीफन क्लेयन (Stephen Klein) के अनुसार – "संज्ञानात्मक मानचित्र भौतिक वातावरण का स्थान सम्बन्धी ज्ञान है, जिसे अनुभवों द्वारा प्राप्त किया जाता है।" (Cognitive maps are spatial knowladge of the physical enviroment gained through experience)

इहुड शेरलिन व अन्य के अनुसार ' 'संज्ञानात्मक मानचित्रों को एक सम्पूर्ण मानसिक प्रतिकृति अथवा स्थान का प्रदर्शन और एक व्यवस्था निर्मित करने के खाके के रूप में परिभाषित किया जा सकता है । " (Cognitive maps can be defined as –an overall mental image or reperesentation of the space and layout of a setting)

डेल एफ.कूपर के अनुसार – ' एक संज्ञानात्मक मानचित्र किसी व्यक्ति के अपने स्वयं की दुनियाँ के बारे में दृष्टिकोणों और मान्यताओं का प्रदर्शन है । " (A Cognitive map is a repersentation of the perceptions and belifs of an individial about his own subjective world)

कारेल मल्स के अनुसार – "संज्ञानात्मक मानचित्र को सम्प्रत्ययों के समुच्चयों (Set of Cocepts) एवं इनके समुच्चयों के मध्य पाये जाने वाले हेतुक (Causal) सम्बन्धों से युक्त प्रणाली के रूप में परिभाषित किया जा सकता है । ऐसे में प्रत्येक सम्प्रत्यय अन्य सम्प्रत्यय को हेतुक सम्ब–ध होने के कारण सकारात्मक या नकारात्मक रूप से प्रभावित कर सकता है और यह भी सम्भव है कि स्वतंत्र सम्प्रत्यय (independent) के मध्य कोई अन्त: क्रिया नहीं

हो । एक संज्ञानात्मक मानचित्र को परम्परागत संकेतयुक्त निर्देशात्मक रेखाचित्र द्वारा प्रस्तुत किया जाता है । "

सम्प्रत्ययों के संज्ञानात्मक चित्र की संरचना को समझने के लिए आवश्यक है कि पहले हम संज्ञान व (Cognition) संज्ञानात्मक (Cognitive) से आशय क्या है? भाषा एवं संज्ञान का क्या सम्बन्ध है? एवं सम्प्रत्यय किसे कहा जाता है? सम्प्रत्यय का अधिगम क्यों आवश्यक है? सम्प्रत्यय अधिगम शिक्षण पर क्या प्रभाव डालता है? इसके बारे में जानकारी प्राप्त कर लें।

स्व–परख प्रश्न (Self –Check Questions)

1. दृश्य प्रस्तुतीकरण का क्या अर्थ है? इसके क्या लाभ हैं ।
2. संज्ञानात्मक भाव चित्रण का क्या अर्थ है?
3. पियाजे के अनुसार बालक सम्प्रत्यय का विकास कैसे करते हैं ।
4. संज्ञानात्मक मानचित्र की अपने शब्दों में परिभाषा दीजिए ।
5. संज्ञानात्मक युक्त व्यवस्थाओं के क्या कार्य हैं?

4.5 संज्ञान: तात्पर्य (Cognitive : Meaning)

संज्ञान एक मानसिक प्रक्रिया है जो ज्ञान को प्राप्त करने में सम्मिलित होती है । (Cognition is a mental process involved in acquiring knowledge)

स्टीफन क्लेइन (Stephen Klein) के अनुसार – "संज्ञान मनोवैज्ञानिक वातावरण की संरचना का ज्ञान अथवा समझ है ।"

निक्की हेयज (Nicky Hayes) के अनुसार - "संज्ञान मानसिक प्रक्रिया है । संज्ञान में बोध, स्मृति, चिन्तन, तर्कना, भाषा एवं कुछ प्रकार के अधिगम की प्रक्रियाएँ सम्मिलित होती हैं।" (Cognition is a mental process cognition includes the processes of perception,memory,thinking,reasoning,language and some types of learing)

उपर्युक्त परिभाषाओं के आधार पर यह माना जा सकता है कि संज्ञान एक मानसिक प्रक्रिया है, जिसमें वातावरण को समझने के क्रम में बोध, स्मृति, चिन्तन, तर्कना, भाषा एवं कुछ प्रकार की अधिगम प्रक्रियाएँ सम्मिलित होती हैं ।

4.6 संज्ञानात्मक पक्ष : तात्पर्य (Cognitive domain : Meaning)

संज्ञानात्मक पक्ष से तात्पर्य है संज्ञान सम्बन्धी (Pertaining to cognition) आयाम अर्थात् वह आयाम जो ज्ञान प्राप्ति की मानसिक प्रक्रिया से संबन्धित है । यह व्यक्तित्व के तीन आयामों, संज्ञानात्मक, भावात्मक (Affective) एवं क्रियात्मक (Psychomotor) में एक महत्वपूर्ण आयाम है । बी.एस.ब्लूम के अनुसार संज्ञानात्मक आयाम के अन्तर्गत ज्ञान (Knowledge),अवबोध(Comprehension),अनुप्रयोग(Application),विश्लेषण (Analysis), संश्लेषण (Synhtesis) व मूल्यांकन (Evaluation) की क्रियाएँ सम्मिलित होती हैं ।

4.7 भाषा एवं संज्ञान का सम्बन्ध (Realationship between Language and Cognition)

प्रसिद्ध भाषाविज्ञानी भर्तृहरि के अनुसार भाषा ही संज्ञान को प्रकाशित करती है । इसके बिना सविकल्पक (नाम रूपादि गुणयुक्त) ज्ञान सम्भव नहीं है ।

न सोऽस्ति प्रत्ययोलोके य : शब्दानुक्रमादृते ।

अनुविद्धमिवज्ञान सर्व शब्देन भासते ।। (वाक्यप्रदीयम् – ब्रह्मकाण्ड, 1/124)

बोरिस गोरबिस (Boris Gorbis) के अनुसार – भाषा हमारी संज्ञानात्मक प्रक्रियाओं को संरचित एवं संचालित (Frame & Mediate) करती है अर्थात् बोध, स्मृति, चिन्तन, तर्कना आदि प्रक्रियाओं को भाषा के स्थान संरचित तथा संचालित किया जाता है । दूसरी ओर संज्ञान के विकास के साथ – साथ व्यक्ति में भाषायी विकास होता है । इस दृष्टि से संज्ञान भाव ग्रहण करने को मानसिक प्रक्रिया है । वस्तुत: मनुष्य का एक विशेष गुण यह है कि वह अपने संज्ञान (Cognition) में आयी वस्तुओं, घटनाओं एवं संकेतों को तथा इनमें निहित सम्बन्धों को शाब्दिक रूप से व्यक्त कर सकता है । व्यक्ति के शाब्दिक व्यवहार की प्रकृति एवं स्वरूप उसके अपने संज्ञान पर निर्भर करते हैं । दूसरे शब्दों में देखी या सुनी गयी विषय सामग्री को हम तभी समझ सकते हैं, जब हमारा उस सामग्री को समझ सकने के लिए आवश्यक संज्ञानात्मक विकास(Cognitive Development) हो चुका हो । यही बात हमारी अभिव्यक्ति (लिखित, या मौखिक) पर भी लागू होती है । हम व्यवहार में उन्हीं शब्दों का उपयोग करते हैं जिनका संज्ञान हमें पूर्व में हो चुका हो । उदाहरण के लिए 'कुर्सी' यह कहने पर सामान्यत: हमारे मस्तिष्क में जो स्वरूप उभरता है उसमें, बैठने की एक वस्तु जिसके चार पैर होते हैं तथा जिसका पीछे का भाग पीठ को सहारा देने के लिए ऊपर उठा हुआ होता है, आता है । परन्तु, यदि यह विचार किया जाये की क्या सभी कुर्सियों में यही विशेषता पायी जाती है? क्या यह सम्भव नहीं कि कुर्सी तीन पैर की हो और पीठ को सहारा देने वाला भाग हो ही नहीं? वस्तुत: ऐसा इसलिए होता है क्योंकि शब्दों के अर्थ या भावानुकूल प्रतीको का सम्प्रत्यय हमारे संज्ञान में आ जाता है ।

4.8 सम्प्रत्यय : तात्पर्य, प्रकृति, वर्गीकरण, स्तर (Concept : Nature, Classification and Levels)

4.8.1 सम्प्रत्यय : तात्पर्य

सम्प्रत्यय को प्रत्यय, अवधारणा व संकल्पना आदि नामों से भी जाना जाता है । सम्प्रत्यय एक सामान्य शब्दावली (Term) है, जिसका उपयोग वस्तुओं, घटनाओ ,विचारों के समूह (Group) बनाने एवं वर्गीकरण करने के लिए किया जाता है ।

दी इन्टरनेशनल एन्साक्लोपीडिया ऑफ एज्यूकेशन के अनुसार – सम्प्रत्यय वस्तुओं, घटनाओं व विचारों को परिभाषित करने वाली विशेषताओं तथा इन विशेषताओं को कैसे संयुक्त किया जाये इससे सम्बन्धित नियमों का एक सामान्य समुच्चय (General Set) होता है ।

जॉय नोवाक (Joe Novak) के अनुसार – सम्प्रत्यय घटनाओं एवं वस्तुओं में निहित अनुभूत व्यवस्था है, जिन्हें शब्द या प्रतीकों में चिन्हित किया जाता है । (Concept is a perceived regularity in events or objects designated by a lable)

बोरिस गोरबिस (Boris Gorbis) ने सम्प्रत्यय को मनोविज्ञान एवं भाषा के संदर्भ में अलग– अलग परिभाषित किया । इनके अनुसार 'एक सम्प्रत्यय प्रथमत: और मुख्यत: एक मनोवैज्ञानिक घटना, एक आदर्श सामान्यीकरण है ।'(A concept first and fore most a psychological phenomenon,an ideal generalization) दूसरी और भाषाशास्त्र में प्रस्तुतत सम्प्रत्यय एक मूर्त (इन्द्रीय ग्राह्य) तत्व, एक भाषायी घटना है । (A concept as represented in lexicography)is a concrete element,a linguistic event.)

टी.के.एस. लक्ष्मी के अनुसार – सम्प्रत्यय को ऐसे शब्द या प्रतीक के रूप में परिभाषित किया जा सकता है, जो वस्तुओं, स्थितियों ओर घटनाओं की भिन्नता के बीच विद्यमान समानता को प्रकट करता है ।

4.8.2 सम्प्रत्यय : प्रकृति

(1) सम्प्रत्ययों में एक तरह के तत्वों से लेकर पूर्ण समुच्चय (Whole set) अथवा विशिष्ट वस्तुओं का एक वर्ग, प्रतीक और घटनाएँ हो सकती हैं ।

(2) एक सम्प्रत्यय में सदस्यों का एक विशिष्ट समुच्चय (Finite set) या एक अनिश्चित (Infinite) समुच्चय हो सकता है ।

(3) निश्चित एवं अनिश्चित वर्ग के अतिरिक्त सम्प्रत्यय अंशभागिक विशेषताओं के आधार पर एक साथ समूह बनाते हैं और इन्हें किसी नाम या प्रतीक के रूप में पुकारा जा सकता है ।

(4) किसी वर्ग के सदस्यों के अतिरिक्त सम्प्रत्यय या तो अच्छी तरह से परिभाषित आयामों को प्रकट करते हैं या अपरिभाषित आयामों को प्रकट करते हैं । ठीक तरह से परिभाषित किये जा सकने वाले सम्प्रत्ययों की यह विशेषता होती है कि वे किसी भी स्थिति या संदर्भ में दृढ़ या निश्चित अर्थ वाले होते हैं । परिभाषा में परिवर्तन किये बिना इन्हें विभिन्न स्थितियों में प्रयुक्त किया जा सकता है; यथा– गणितीय सम्प्रत्यय व पदार्थ विज्ञान के सम्प्रत्यय आदि । (Mathematical concepts physical science concept etc.) दूसरी ओर अपरिभाषित सम्प्रत्ययों की यह विशेषता होती है कि ये स्थितियों के अनुसार अलग अर्थ देते हैं एवं इन्हें आसानी से आन्तरिक नहीं किया जा सकता है । अन्य संदर्भो में प्रयोग करने पर इनका अर्थ प्रसंग के अनुसार निकाला जाता है; यथा– मानविकी के सम्प्रत्यय, भाषा के सम्प्रत्यय आदि ।

4.8.3 सम्प्रत्यय : वर्गीकरण

सम्प्रत्ययों को समझने के लिए उनका निम्न प्रकार से वर्गीकरण किया जा सकता' है ।

प्रथम वर्गीकरण

(क) श्रेण्य सम्प्रत्यय (Classical Concepts)

(ख) अनुमान सम्प्रत्यय (Probabilistic Concepts)

(क) श्रेण्य सम्प्रत्यय

वे सम्प्रत्यय जो विशिष्ट परिभाषित विशेषताएँ रखते हैं, जिनका कोई अपवाद नहीं होता है; जैसे– गणितीय सम्प्रत्यय त्रिभुज, कोण आदि । हालांकि सामान्य व्यवहार में श्रेण्य सम्प्रत्ययों के बहुत कम उदाहरण मिलते हैं । संस्कृत में भाषा तत्वों से संबन्धित सम्प्रत्यय इस श्रेणी में आ सकते है; यथा –शब्द, वाक्य, समास आदि ।

(ख) अनुमान सम्प्रत्यय

अनुमान सम्प्रत्यय से आशय उन सम्प्रत्यों से है, जिनको उनमें पायी जाने वाली अनुमानित विशेषताओं के संदर्भ में परिभाषित किया जाता है, जैसे 'कुर्सी' के सम्प्रत्यय में कुछ विशेषताएँ; यथा –इसके चार पैर तथा पीछे का भाग सहारा देने के लिए होता है, लेकिन यह आवश्यक नहीं कि सभी कुर्सियों में ये विशेषताएँ हों ।

द्वितीय वर्गीकरण

(क) मूर्त (Concrete) सम्प्रत्यय

(ख) अमूर्त (Abstract) सम्प्रत्यय

(क) मूर्त सम्प्रत्यय

वह शब्द या चिन्ह जिससे किसी विशेष प्रकार के पदार्थो के वर्ग का बोध होता हो मूर्त सम्प्रत्यय कहलाते हैं; यथा – शेर, पुस्तक आदि ।

(ख) अमूर्त सम्प्रत्यय

वह शब्द या चिन्ह जिससे किसी गुण या विशेषता का बोध हो; जैसे लम्बा, ईमानदारी आदि ।

4.8.4 सम्प्रत्यय के स्तर

रोश (Rosch;1975) के अनुसार सभी सम्प्रत्यय समान रूप से सार्थक नहीं होते हैं । कुछ सम्प्रत्यय अन्यों से सामान्य तो कुछ विशिष्ट होते हैं; जबकि कुछ समान रूप से सार्थक होते हैं । इस आधार पर रोस ने सम्प्रत्ययों को तीन स्तरों में वर्गीकृत किया–

(क) **उच्चक्रम सम्प्रत्यय (Superordinate Concepts)** – यह एक सामान्य वर्गीकरण होता है, जिसमें कई आधार–स्तर सम्बन्धी सम्प्रत्यय या और निम्नक्रम सम्प्रत्यय होते हैं; यथा–पुश ।

(ख) **आधार–स्तर सम्प्रत्यय (Basic leval concepts)** – उच्चक्रम सम्प्रत्यय के वर्गीकरण में आने वाले सम्प्रत्ययों को आधार–स्तर सम्प्रत्यय कहते हैं । उपर्युक्त उदाहरण के संदर्भ में 'बिल्ली' आधार स्तर सम्प्रत्यय का उदाहरण हो सकती है ।

(ग) **निम्नक्रम सम्प्रत्यय (Subordinate Concepts)** – के सम्प्रत्यय का वह स्तर जो उच्चक्रम सम्प्रत्यय की उपस्थिति में निमक्रम की स्थिति को प्रकट करता है; जैसे – 'स्यामीज बिल्ली' अर्थात् स्याम देश में रहने वाली बिल्ली निम्न कम के सम्प्रत्यय का उदाहरण हो सकती है ।

एक अन्य स्तरीकरण के अनुसार किसी विषयवस्तु या संदर्भ में प्रयुक्त सम्प्रत्ययों को उनमें पाये जाने वाले गुणों एवं अन्य सम्प्रत्ययों के साथ सम्बन्धों के आधार पर चार स्तरों में बांटा जा सकता है–

(1) **अतिव्यापक** (Most general) – इस वर्ग के अन्तर्गत किसी विषयवस्तु या संदर्भ मे उपस्थित वे सम्प्रत्यय आते हैं जो अतिव्यापक श्रेणी या वर्ग का प्रतिनिधित्व करते हैं; यथा - सजीव,निर्जीव ।

(2) **अति संयुक्त** (Most inclusive) – इस वर्ग में आने वाले सम्प्रत्यय कई सम्प्रत्ययों का प्रतिनिधित्व करते हैं; यथा – जन्तु, प्राणी, फर्नीचर ।

(3) **विशिष्टतर सम्प्रत्यय** (More Specific) – इस स्तर में वे सम्प्रत्यय आते हैं जो अतिसंयुक्त सम्प्रत्यय के अवयव या घटक होते हैं; यथा– कुत्ते, कुर्सी ।

(4) **विशिष्टतम सम्प्रत्यय** (Most Specific) – इस श्रेणी के अन्तर्गत आने वाले सम्प्रत्ययों को अपनी श्रेणी में विशिष्टतम माना जा सकता है; यथा – अलसेशियन कुत्ता, पमेरियन कुत्ता, हत्थे वाली कुर्सी, बिना हत्थे वाली कुर्सी ।

उपर्युक्त वर्गीकरण संज्ञानात्मक मानचित्र निर्माण करने के लिए सम्प्रत्ययों को परस्पर सम्बन्धों के आधार पर क्रमबद्ध करने तथा व्यवस्थित करने के लिए काम में लिये जा सकते हैं ।

स्व–परख प्रश्न (Self– Check Questions)

1. संज्ञान का क्या अर्थ है?
2. संज्ञानात्मक पक्ष में कौन– कौन सी दक्षताएँ आती हैं?
3. सम्प्रत्यय को परिभाषित कीजिए ।
4. सम्प्रत्ययों की प्रकृति को स्पष्ट कीजिए ।
5. सम्प्रत्यय के स्तर कौन–कौन से हैं?

4.8.5 सम्प्रत्यय अधिगम की आवश्यकता (Need of Concept Learing)

जैसा कि पूर्व में उल्लेख किया जा चुका है कि सम्प्रत्ययों को उन शब्दों या प्रतीकों के रूप में परिभाषित किया जाता है, जो वस्तुओं; प्रतीकों अथवा घटनाओं की अनुभूत् व्यवस्था (Perceiving Regularity) है और इन्हें या तो अच्छी तरह से परिभाषित आयामों; यथा– नित्य(Constant) के रूप में विश्लेषित किया जा सकता है या अपरिभाषित आयामों; यथा– चर(Variable) के रूप में व्यक्त किया जाता है । सम्प्रत्यय के अध्ययन में कुछ संज्ञानात्मक प्रक्रियाएँ (Congnitive Processes) सम्मिलित होती हँ –

(1) नवीन सम्प्रत्ययों की सम्प्राप्ति (Acquistion of newly encountered concepts)

(2) अधिगम सम्प्रत्यों का विस्तार (Elaboration of exiting concepts)

(3) पूर्व में सामने आयी व सामने न आया स्थितियों में सम्प्रत्ययों को नियोजित करने के लिए संज्ञानात्मक आव्यूहों का विकास करना । (Development of cognitive

strategies to employ concepts in previously encountered and encountered situations)

सम्प्रत्ययों की सम्प्राप्ति उदाहरणों से सूचनाओं को निकालने तथा किसी स्थिति विशेष पर या सान्दर्भिक संस्कृति (Contexual Culture) पर आधारित आदर्शमूलकों (Prototypes)के स्मृति में निर्मित होने से होती है । सम्प्रत्यय की प्रायोज्यता (Employment) अथवा अनुप्रयोग (Applications) सामान्यीकरण एवं विभेदीकरण के संज्ञानात्मक आव्यूह के द्वारा होती है ।

सम्प्रत्यय अधिगम के शिक्षण के लिए द्विमुखी प्रभाव (Implications)हो सकते हैं।

(1) अधिगमकर्ताओ द्वारा सम्प्रत्ययों को अर्थपूर्ण संदर्भो में प्राप्त किया जाता है जो उनके विद्यमान ज्ञान के ज्ञान सम्बद्ध (Associated) होते है।

(2) सम्प्रत्यय अधिगम के फलस्वरूप अनुदेश संज्ञानात्मक आव्यूह के विकास में सुधार लाया जा सकता है जो अधिगमकर्ता को स्वयं के ज्ञानाधार (Knowledge Base) की संरचना करने का अवसर प्रदान करता है ।

4.9 सम्प्रत्ययों के संज्ञानात्मक मानचित्र की रचना (Formation of Cogntive Map Concepts)

सम्प्रत्यय मानचित्रण की प्रक्रिया के प्रमुख सोपान इस प्रकार हैं :

4.9.1 पाठ्यसामग्री का चयन करना ।

4.9.2 पाठ्यसामग्री का विश्लेषण करना ।

पाठ्यसामग्री का विश्लेषण करने के लिए सामान्यत: निम्नलिखित क्रियाएँ की जाती हैं–

(क) पाठ्यसामग्री का गहन अधग्यन करना ।

(ख) पाठ्यवस्तु/कार्य का विश्लेषण करना ।

(i) ज्ञान तत्वों की पहचान करना ।

(ii) भाषा तत्वों की पहचान करना ।

(iii) अधिगम हेतु प्रासंगिक सम्प्रत्ययों की पहचान करना ।

(ग) संदर्भ का विश्लेषण कराना ।

(i) प्रासंगिक सम्प्रत्ययों के संदर्भ को परिभाषित करना ।

(ii) संदर्भ से सम्बद्ध जटिल समस्याओं को परिभाषित करना ।

(iii) समस्या समाधान में प्रयोज्य सम्प्रत्ययों की पहचान करना ।

4.9.3 सम्प्रत्यय योजकों का निर्माण करना ।

4.9.4 सम्प्रत्यय पुंजों का निर्माण करना ।

4.9.5 आरम्भिक मानचित्र (Preliminary Mapping)

4.9.6 मानचित्र का पुनर्निरीक्षण एवं अन्तर्योजक स्थापन (Review of Map and Crosslinks Formation)

4.9.7 पुर्नसंगठन (Reorganisations)

4.9.1 पाठ्यसामग्री का चयन करना (Content Selaction)

संज्ञानात्मक मानचित्र निर्माण करने के लिए प्रथम आवश्यकता है कि मानचित्र निर्माण के लिए उपयुक्त प्रकरण का चयन किया जाये । इस स्तर पर संस्कृत विषय की पाठ्यपुस्तक में से एक उपयुक्त प्रकरण का चुनाव किया जाता है ।

4.9.2 पाठ्यसामग्री का विश्लेषण करना (Reading Material Analysis)

अनुदेशन आकल्पन का एक महत्वपूर्ण तत्व अधिगम किये जाने वाले सम्प्रत्ययों का विश्लेषण करना होता है । इस विश्लेषण के दो आधार हो सकते हैं– (क) पाठ्यवस्तु कार्य विश्लेषण (ख) संदर्भ विश्लेषण ।

(क) पाठ्यसामग्री का गहन अध्ययन करना (Intensive Study of Reading Material)

पाठ्यवस्तु विश्लेषण के लिए पाठ्यसामग्री का गहन अध्ययन करना आवश्यक है । पाठ्यवस्तु की जटिलता के अनुसार हो सकता है कि पाठ्यसामग्री को कई बार पढ़नी पड़े । शिक्षक को चाहिए कि वह विषयवस्तु का अध्ययन इस प्रकार करे कि भाव, तात्पर्य, विचारों, परिभाषाओं, नियमों, सिद्धान्तों आदि की भली भाँति पहचान करना सम्भव हो जाये, साथ ही संस्कृत के भाषायी दृष्टिकोण से पाठ्यवस्तु में निहित भाषा तत्वों की पहचान करना भी सम्भव हो जाये ।

पाठ्यवस्तु का ठीक से अध्ययन करने के लिए शिक्षक का संस्कृत भाषा एवं विषयवस्तु पर पूर्ण अधिकार होना आवश्यक है । पाठ्यवस्तु से सम्बद्ध प्रामाणिक पुस्तकों का अध्ययन किया जाये । आरम्भ में आवश्यकतानुसार विषय विशेषज्ञ से भी परामर्श लिया जा सकता है ।

(ख) पाठ्यवस्तु/कार्य का विश्लेषण करना (Content Analysis)

पाठ्यवस्तु विश्लेषण सम्प्रत्ययों की विशिष्ट विशेषताओं और इन विशेषताओं के मध्य सम्बन्धों की उच्चक्रम, आधारस्तर व निम्नक्रम या और अतिव्यापक, अतिसंयुक्त, विशिष्ट, विशिष्टतम आदि व्यवस्थाओं (Organisations) के अनुसार परिभाषित करने पर केन्द्रित होता है। आई.के.डेवींज के अनुसार पढ़ायी जाने वाली विषयवस्तु के प्रकरण का उसके तत्वों में विश्लेषण करके उन्हें तार्किक ढंग से, क्रमबद्ध रूप में संश्लेषित करना विषय वस्तु विश्लेषण है ।

दी इन्टरनेशनल एनक्साइक्लोपीडिया ऑफ एज्यूकेशन के अनुसार पाठ्यवस्तु विश्लेषण सम्प्रत्ययों की बाह्य रचना अर्थात् वर्गीकरण (Taxonomy) या पदानुक्रम (Hierarchy) की पहचान उसी प्रकार, स्वतंत्र रूप से करता है जिस रूप में इनका मस्तिष्क में संग्रह किया जा सकता है ।

पाठ्यक्रम विश्लेषण में निम्नलिखित क्रियाएँ की जाती हैं –

(i) **ज्ञान तत्वों की पहचान** (Identifications of Knowledge Components)– पाठ्य वस्तु विश्लेषण के इस सोपान के अन्तर्गत: पाठ्यसामग्री में से ज्ञान तत्वों; यथा – विचारों (Ideas) तथ्यो (Facts), परिभाषाओं (Definitions), नियमों (Principles), विशेषताओं (Features), सम्बन्धों (Relationships), आदि की पहचान की जाती है

। यहाँ शिक्षक को यह अवश्यक ध्यान में रखना चाहिए कि प्रत्येक पाठ्यसामग्री में ये सभी तत्व मौजूद हों यह जरूरी नहीं हैं ।

(ii) **भाषा तत्वों की पहचान** (Identifications of Language Components) - पाठ्यवस्तु विश्लेषण के इस सोपान के अन्तर्गत पाठ्यसामग्री में समाविष्ट भाषा तत्वों; यथा –वर्णमाला, वर्ण या संयुक्त वर्ण, शब्दावली, वाक्यखण्ड या मुहावरा, वाक्य संरचना, शब्दभेद, अलंकार, लोकोक्तियाँ या कहावतें, छन्द आदि की पहचान की जाती है ।

(iii) **अधिगम हेतु प्रासंगिक सम्प्रत्ययों की पहचान** – पाठ्यवस्तु विश्लेषण के इस सोपान में ज्ञान तत्वों व भाषा तत्वों में से अधिगम हेतु प्रासंगिक सम्प्रत्ययों की पहचान की जाती है । इस स्तर पर पाठ्यवस्तु के विभिन्न तत्वों का परस्पर मिलान तथा तुलना करते हुए (by collating) अर्थपूर्ण संदेश प्राप्त करने का प्रयास किया जाता है । संदेश प्राप्त करने के क्रम में शिक्षक से यह भी अपेक्षा होती है कि वह पाठ्यवस्तु में निहित ज्ञानतत्त्वों व भाषा तत्त्वों के मध्य सम्बन्धों पर हर एक सम्भव दृष्टिकोण से विचार करते हुए संदेश/संदेशों की पहचान करे । इस प्रकार पाठ्यवस्तु में निहित प्रासंगिक सम्प्रत्ययों का चयन करते हुए अधिगम हेतु उनकी सूची बनायी जा सकती है ।

(ग) संदर्भ का विश्लेषण कराना

संदर्भ विश्लेषण ज्ञान आधार (Knowledge base) अथवा स्मृति (Memory) अथवा सम्प्रत्ययों की व्यवस्था (Organization of the Concepts) पर केन्द्रित होता है । फोडर (Foder;1983)के अनुसार मानव स्मृति (Human Memory) के विषय में संज्ञानात्मक मनोविज्ञान (Cognitive Psychology) में हुए अनुसंधान यह सुझाते हैं कि ज्ञान आधार में सम्प्रत्ययों की आन्तरिक व्यवस्था योगकारी गुणों अथवा वर्गीकरण/पदानुक्रम सम्बन्धों से अधिक इनके प्रयोग की आवश्यकता पर अधिक निर्भर करती है । दूसरे शब्दों में ज्ञान आधार का उपयोग सूचनाओं की मात्रा के कारण से ही नहीं होकर स्थितिजन्य व्यवस्था के फलस्वरूप होता है ।

दी इन्टरनेशनल एन्साइक्लोपीडिया ऑफ एज्यूकेशन के अनुसार संदर्भ का विश्लेषण उस समय किया जाना चाहिए, जब पाठ्यक्रम के लक्ष्य में संज्ञानात्मक कौशलों, आव्यूहों; (Strategies); यथा – समस्या समाधान (Problem Solving), निर्णय प्रक्रिया (Decision Making) और चुनौती निवारण आदि एवं इनका विकास करना सम्मिलित हो ।

गारनर (Garner;1990) के अनुसार – ज्ञान आधार संगठन (Knowledge base Organisation)के परिणाम स्वरूप सम्प्रत्ययों को व उनके सम्भावित संगठन को बेहतर ढंग से समझने के लिए सम्प्रत्ययों के संदर्भ विश्लेषण करने की आवश्यकता होती है ।

हारे (Harre;1984) के अनुसार - स्मृति (Mean) में बेहतर व्यवस्थापन उच्च स्तर की संज्ञानात्मक गतिविधियों (समस्या समाधान, सृजनात्मकता आदि) के लिए ज्ञान आधार में अपेक्षाकृत बेहतर प्रवेश क्षमता (Accessibility) विकसित कर सकता है ।

कल्हर व अन्य (Klahr et al;1987) के अनुसार – संज्ञानात्मक मनोवैज्ञानिक ज्ञान आधार के संगठन की प्रकृति का समझने के लिए समस्या की जटिलता (Problem Complexity) और व्यक्ति किस तरह से इन समस्याओं का समाधान करते हैं, इसका विश्लेषण करते हैं । इस विश्लेषण से समस्या की पहचान के साथ ही साथ समाधानों का विश्लेषण करने से प्रस्तुत समस्याओं स्थितियों में विभिन्न सम्प्रत्ययों की सम्बद्धता को पहचानने में मदद मिलती है।

संदर्भ विश्लेषण के अन्तर्गत निम्नलिखित क्रियाएँ की जाती हैं ।

(i) **प्रासंगिक सम्प्रत्ययों के संदर्भ का परिभाषिकरण (Defining the context of the concepts to be learned)** संदर्भ सम्प्रत्यय का अर्थपूर्ण अनुप्रयोग है । इस सोपान के अन्तर्गत पाठ्य सामग्री में से चयनित सम्प्रत्ययों के संदर्भ को परिभाषित किया जाता है ।

(ii) **संदर्भ से सम्बद्ध जटिल समस्याओं का परिभाषिकरण (Defining the complex problem associated with the context)** – इस स्तर पर उन समस्याओं को परिभाषित किया जाता है जिनके समाधान के लिए एक से अधिक सम्प्रत्ययों की आवश्यकता होती है । पाठ्यसामग्री में साहित्यिक, व्याकरणिक, व्यावहारिक आदि दृष्टियों से संदर्भ के साथ कई जटिल समस्याएँ सम्बद्ध हो सकती हैं, जिनका परिभाषीकरण आवश्यक होता है।

संदर्भ विश्लेषण के इस सोपान में ज्ञान अभियांत्रिकी उपागम का अनुप्रयोग किया जाता है।

(iii) **समस्या समाधान में प्रयोज्य समप्रत्ययों की पहचान** (Indentifications of concepts employed for the solution)– संदर्भ विश्लेषण के इस सोपान के स्तर पर शिक्षक विषयवस्तु के स्पष्टीकरण के लिए आवश्यक सम्प्रत्ययों की पहचान करता है । यदि लक्षणा शब्द शक्ति से भावार्थ प्राप्ति हाती है तो लक्ष्यार्थ, व्यंजना से अर्थप्राप्ति है तो व्यंग्यार्थ, अभिधा से अर्थ प्राप्ति सम्भव हो तो वाच्यार्थ और कोई अन्तर्कथा या सम्बद्ध घटना होने पर सम्बन्धित सम्प्रत्यय/ सम्प्रत्ययों की पहचान की जानी चाहिए । इस स्तर प्रर इतना ही नहीं साहित्यिक पक्ष; यथा–शैली सम्बन्धी या व्याकरण सम्बन्धी सम्प्रत्ययों की पहचान भी की जानी चाहिए ।

4.9.3 सम्प्रत्यय योजकों का निर्माण (Formation of Concepts Links)

पाठ्यवस्तु विश्लेषण एवं संदर्भ विश्लेषण द्वारा पहचाने गये सम्प्रत्ययों के मध्य किसी न किसी रूप में सम्बन्ध हो सकते हैं । एक सम्प्रत्यय से दूसरे सम्प्रत्यय के मध्य सम्बन्ध प्रदर्शित करने वाले शब्दों व चिह्नों को सम्प्रत्यय योजक कहा जाता है । सम्प्रत्यय योजकों का उपयोग दो या दो से अधिक सम्प्रत्ययों को जोड़ता है, तब प्रस्थापना निर्मित होती है अर्थात् सम्प्रत्यय को योजक की सहायता से सकारात्मक या नकारात्मक पूर्ण कथन के रूप में पढ़ा जा सकता है । सामान्यत: योजकों को एक या दो शब्दों के साथ (–) चिन्ह से या केवल (–) चिन्ह के द्वारा प्रदर्शित किया जाता है ।

4.9.4 सम्प्रत्यय पुंजों का निर्माण (Formations of Concepts Clusters)

एक जैसी प्रकृति एवं पारस्परिक सम्बन्धों के आधार पर सम्प्रत्ययों के एक समूह को सम्प्रत्यय पुंज कहा जाता है । सम्प्रत्यय योजकों की सहायता से पहचाने गये सम्प्रत्ययों को

परस्पर सम्बन्ध के आधार पर विभिन्न वर्गो में रखते हुए सम्प्रत्यय पुंजों की रचना की जाती है। एक प्रकरण में एक से अधिक सम्प्रत्यय पुंज निर्मित हो सकते हैं । सामान्यत: भाषा शिक्षण के संदर्भ में दो प्रकार के सम्प्रत्यय पुंज बनते हैं – (1) ज्ञान तत्व पर आधारित सम्प्रत्यय पुंज (2) भाषा तत्वों का उपयोग करने तथा इन्हें अलग– अलग वर्गो में विभाजित करने में अनेक मानसिक क्रियाएँ सम्मिलित होती हैं ।

4.9.5 आरम्भिक मानचित्रण (Preliminary Mapping)

सम्प्रत्ययों के संज्ञानात्मक मानचित्र के इस सोपान के अन्तर्गत अधिगम योग्य सम्प्रत्ययों को व्यवस्थित, संगठित, क्रमबद्ध करके दृश्यात्मक रूप में प्रस्तुत किया जाता है । मानचित्र करते समय यह ध्यान में रखा जाता है कि जिन सम्प्रत्ययों में सम्बन्ध है, उन्हें योजक रेखाओं से जोड़ा जाता है । तत्पश्चात् सम्बन्धों को परिभाषित करने के लिए प्रत्येक योजक रेखा के साथ योजक शब्दों को जोड़ा जा सकता है । योजक शब्द जोड़ते समय यह ध्यान रखा जाना चाहिए कि सटीक एवं कम से कम शब्द का प्रयोग हो । मानचित्र में सम्प्रत्यय को अण्डाकार या आयताकार जैसी आकृत्तियों में दर्शाया जाता है । इस आकृत्ति में सम्प्रत्यय का नामोल्लेख किया जाता है । नामांकन की इस क्रिया को लेबिल (Lable) करना कहा जाता है ।

4.9.6 मानचित्र का पुनर्निरीक्षण एवं अन्तर्योजक स्थापन (Review of Map and Formation of Crosslinks)

इस सोपान के अन्तर्गत आरम्भिक मानचित्र का पुनर्निरीक्षण किया जाता है । पुनर्निरीक्षण हेतु कतिपय प्रश्न इस प्रकार हैं -

(1) क्या सम्प्रत्ययों के मध्य प्रयुक्त योजक शब्द एवं चिन्ह सम्प्रत्ययों के मध्य पाये जाने वाले सम्बन्धों में भली भांति स्पष्ट रहे हैं?

(2) क्या सम्प्रत्ययों का क्रम निर्धारण ठीक से हुआ है?

(3) क्या योजक शब्दों का प्रयोग सटीक है?

(4) क्या सम्पूर्ण मानचित्र में प्रस्तुत सम्प्रत्ययों की स्थिति उपयुक्त है?

(5) उपर्युक्त प्रश्नों की सहायता से पुनर्निरीक्षण करने के साथ ही पाठ्य सामग्री में निहित सम्प्रत्यय पुंजों को अन्तर्याजकों (Crosslinks) से जोड़ा जाता है ।अन्तर्योजकों को ($\rightarrow$) चिन्ह द्वारा प्रदर्शित किया जाता है ।

इनसे यह पता चलता है कि प्रकरण के विभिन्न सम्प्रत्यय पुंज परस्पर किस तरह से सम्बन्धित हैं ।

4.9.7 पुर्नसंगठन (Revision)

सम्प्रत्यय मानचित्र के इस सोपान में आवश्यकतानुसार मानचित्र का पुर्नसंगठन किया जाता है । सम्प्रत्यय मानचित्र निर्मित करते समय पुनर्निरीक्षण एवं पुर्नसंगठन की क्रिया एकाधिक बार अवश्य करनी चाहिए ताकि उत्कृष्ट मानचित्र की रचना की जा सके ।

सम्प्रत्यय के संज्ञानात्मक मानचित्र को रचना को समझने की दृष्टि से उदाहरण के क्रम में प्रस्तुत इकाई में आये अधिगम योग्य सम्प्रत्ययों (ज्ञान आधारित) से मानचित्र की रचना की जा रही है । इस इकाई में प्रमुख सम्प्रत्ययों की सूची इस प्रकार है–

1. सम्प्रत्ययों का संज्ञानात्मक मानचित्र (Congnitive Map of Concepts)
2. व्यवस्थित ज्ञान (Organized Knowledge))
3. सम्प्रत्यय (Concepts)
4. अनुभूत व्यवस्थाएँ (Perceiving Regularies)
5. घटनाएँ (Events or Happenings)
6. वस्तुएँ (Objects or Things)
7. नामांकित (Labelled)
8. प्रतीक (Symbols)
9. शब्द (Words)
10. बाल्यावस्था (Infants)
11. प्रस्थापनाएँ (Propositions)
12. संदर्भ आश्रित (Contexts Dependent)
13. समन्वित अनुभव या प्रभाव (Associated Feeling or Affect)
14. प्रभावी शिक्षण (Effective Teaching)
15. प्रभावी अधिगम (Effective Learning)
16. उच्चोच्य श्रृंखलाएँ (Hierachically Structure)
17. सृजनात्मक (Creativity)
18. अंतर्योजक (Crosslinks)
19. अंतर्संबंध (Interrelationship)
20. मानचित्र के विभिन्न स्तर (Different Map Segments)

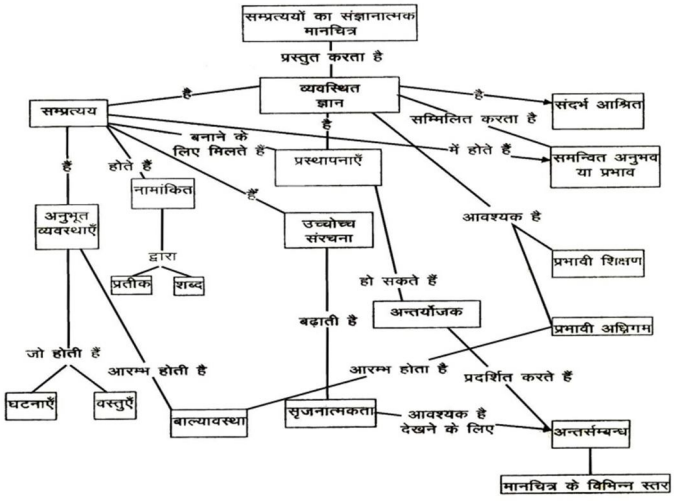

चित्र 4.1समप्रत्ययों के सज्ञानात्मक मानचित्र का सज्ञानात्मक मानचित्रण

4.9 अच्छे संप्रतत्य मानचित्र की विशेषताएँ (Characteristic of Good Concept Map)

सम्प्रत्ययों के संज्ञानात्मक मानचित्र मे मुख्यतः तीन विशेषतायें होती हैं ।

(1) उच्चोच्चक्रम संरचना (Hierachical Structure)

(2) वैध योजक एवं योजक शब्द (Valid Links and Linking Words)

(3) दीर्घ अंतर्योजक शब्द (Long Cross–Links Words)

(1) **उच्चोच्चक्रम संरचना** - सम्प्रत्ययों के अच्छे संज्ञानात्मक मानचित्र की एक प्रमुख विशेषता उसमे संप्रतत्यों की उच्चोच्चक्रम मे प्रदर्शित संरचना है । सम्प्रत्यय के अच्छे संज्ञानात्मक मानचित्र मे सर्वाधिक मिश्रित (Most Inclusive) अति साधारण (Most General) उच्च्स्थ सम्प्रत्यय; यथा–जन्तु (Animals) आदि को मानचित्र मे सबसे ऊपर तथा विशिष्ट कम सामान्य सम्प्रत्यय (यथा– कुत्ते) और विशिष्ट उदाहरणों (यथा - अलसेशियन) को श्रृंखला क्रम मे सबसे नीचे व्यवस्थित किया जाना चाहिये। सबसे नीचे विशिष्ट उदाहरण अथवा वस्तुओ का वास्तविक प्रतिबिम्ब प्रस्तुत किया जाना चाहिये जो संप्रतत्य विशेष के अर्थ को स्पष्ट करे।

कुत्ते नहीं है और सभी कुत्ते अलसेशियन नहीं है ।

(2) **वैध योजक एवं योजक शब्द –** सम्प्रत्ययों के संज्ञानात्मक मानचित्र की दूसरी विशेषता यह है कि मानचित्र में सम्प्रत्ययों के मध्य सम्बन्धों को प्रदर्शित करने वाले योजक शब्द अथवा वाक्य खण्ड संक्षिप्त एवं सारगर्भित होते हैं । इससे मानचित्र निर्माण करने वाले की शब्दों की समझ एवं वे कितनी संख्या में अलग–अलग योजकों का सृजन कर सकते हैं, इसका पता चलता है । यह अवश्य ध्यान रखा जाना चाहिए कि योजक जितने प्रभावी होंगे मानचित्र का प्रस्तुतीकरण उतना ही प्रभावी होगा ।

(3) **दीर्घ अन्तर्योजक शब्द** – सम्प्रत्ययों के संज्ञानात्मक मानचित्र की एक अन्य विशेषता मानचित्र में दीर्घ अन्तर्योजकों का समावेश है । योजक रेखाओं के साथ योजक शब्दों के द्वारा मानचित्र के विभिन्न आयामों के सम्प्रत्ययों के मध्य अन्तर्सम्बन्ध स्थापित किये जाने वाले शब्द जिन्हें योजक रेखाओं के साथ प्रयुक्त किया जाता है, दीर्घ अन्तर्योजक शब्द कहलाते हैं । अन्तर्योजक हमारी यह जानने में मदद करते हैं कि मानचित्र पर प्रस्तुत ज्ञान के कुछ आयाम कैसे एक दूसरे से सम्बन्धित हैं । नये ज्ञान का सृजन करने के क्रम में अर्त्योजक सृजनात्मक सम्भावना को बढ़ावा देते हैं । दीर्घ अन्र्योजकों का स्थापन करते समय यह अवश्य ध्यान में रखना चाहिए कि उन्हीं सम्प्रत्ययों को योजित करें जो परस्पर सम्बद्ध होते हों । इस प्रकार सम्प्रत्ययों के संज्ञानात्मक मानचित्र के विषय में सारत: कहा जा सकता है कि –

1. सम्प्रत्यय मानचित्र व्यवस्थित ज्ञान को प्रस्तुत करते हैं । (Organized Knowledge) को प्रस्तुत करते है ।
2. व्यवस्थित ज्ञान सम्प्रत्यय है ।
3. व्यवस्थित ज्ञान संदर्भ के आश्रित (Context Dependent) होता है ।
4. सम्प्रत्यय अनुभूत व्यवस्थाएँ (Perceived Regularities) हैं ।

5. ये अनुभूत व्यवस्थाएँ घटनाओं एवं वस्तुओं ((Events [Happenings] & Objectis[Things]) में होती हैं।
6. सम्प्रत्यय मानचित्र में प्रस्तुत व्यवस्थित ज्ञान में समन्वित अनुभव (Associated Freeling) सम्मिलित रहते हैं ।
7. व्यवस्थित ज्ञान प्रभावी शिक्षण एवं प्रभावी अधिगम के लिए आवश्यक होता है ।
8. सम्प्रत्ययों का विकास लगभग सात वर्ष की आयु वर्ग के बच्चों (Infants) में शुरू होता है ।
9. सम्प्रत्ययों की प्राप्ति (Acquisition) व्यवस्थित ज्ञान के प्रभावी अधिगम (effective learning) से होता है ।
10. संज्ञानात्मक मानचित्र में सम्प्रत्यय को शब्दों या प्रतीकों से नामित या चिन्हित (labeled) किया जाता है ।
11. सम्प्रत्ययों को उच्चोच्चक्रम में व्यवस्थित किया जाता है ।
12. उच्चोच्च क्रम संरचना सृजनात्मकता को आधार प्रदान करती है ।
13. सृजनात्मकता समप्रत्ययों के मध्य निहित सम्बन्धों (Interrelationship) को पहचानने के लिए आवश्यक होती है ।
14. ये अन्तर्सम्बन्ध किसी आयाम/पाठ्यवस्तु में उपस्थित सम्प्रत्ययों के विभिन्न स्तरों के मध्य हो सकते हैं ।
15. प्रस्थापना (Proposition) अर्थात् सकारात्मक या नकारात्मक पूर्ण कथन बनाने वाले के लिए दो सम्प्रत्यय योजक रेखाओं सहित योजक शब्दों (Linking Lines with Linking word)से जुड़ते हैं । दूसरे शब्दों में जब दो सम्प्रत्यय योजक शब्दों के साथ योजक रेखाओं से जुड़ते हैं, तब वे सकारात्मक. अथवा नकारात्मक कथन को पूर्ण बनाते हैं और यह कथन सम्प्रत्यय को व्यक्त करता है ।
16. ये प्रस्थापनाएँ अन्तर्योजक (Cross links) हो सकती हैं जो सम्प्रत्यय मानचित्र के विभिन्न स्तरों के मध्य अंतरसंबंधों को प्रदर्शित करती हैं ।

4.10 महत्व

सम्प्रत्ययों के संज्ञानात्मक चित्रों से विद्यार्थी एवं शिक्षक दोनों लाभान्वित होते हैं । इससे शिक्षण अधिगम प्रक्रिया एवं इस प्रक्रिया के लक्ष्यों की प्राप्ति करने के क्रम में बहुभांति मदद मिलती है ।

1. संज्ञानात्मक मानचित्र में विषय को उसी रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है, जिस रूप में हम ज्ञान को ग्रहण करते है ।
2. संज्ञानात्मक मानचित्र का उपयोग अनुदेशन प्रस्तुति में सम्बन्धों की पद्धति (Pattern) को रेखाचित्र विषयवस्तु के रूप में प्रस्तुत करने के साधन के रूप मे जा सकता है ।
3. शिक्षक शाब्दिक (Verbal) अथवा विषयावस्तु (Text) या समीकरण (Equation Formats) के रूप में प्रस्तुत करने की बजाय सम्बन्धों की सरंचना को मानचित्र के रूप में प्रस्तुत कर सकता है ।

4. प्रदर्शन हेतु निर्मित मानचित्र को शिक्षक द्वारा भागों या पूर्ण रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है ।
5. संज्ञानात्मक मानचित्र विद्यार्थी के लिए ज्ञान प्राप्ति की प्रक्रिया की संरचना प्रस्तुत करने का पथ प्रस्तुत करता है ।
6. यह संरचना दो रूपों में हो सकती है–
   (1) अनुदेशन प्रक्रिया में इसका प्रस्तुतीकरण शिक्षक द्वारा विषय वस्तु के साथ प्रस्तुत किया जा सकता है । यह विश्लेषण के लिए कई स्थानगत (Proposition) सम्बन्धों को प्रस्तुत करता है । इसके पीछे यह अवधारणा होती है कि इससे स्मृति में स्थान सम्बन्धी व्यवसायों को प्रभावित किया जा सकता है ।
   (2) विद्यार्थी अपने द्वारा अध्ययन किये जाने वाले प्रकरण में निहित सम्बन्धों की संरचना का निरीक्षण व उपयोग कर सकते हैं तथा प्रासंगिक सम्प्रत्ययों की सूची में एक–एक प्रासंगिक सम्प्रत्ययों की सूची में एक–एक सम्प्रत्यय का चयनकरते हुए उच्चोच्चक्रम में नामांकित करते हुए मानचित्र प्रस्तुत कर सकते हैं?
   (3) विद्यार्थीयों द्वारा स्थापित योजकों (Links) और इसके लिए बनाये गये लेबिलों (Lable) के सटीक अंकन से उनकी सम्प्रत्ययात्मक समझ (Conceptual Understanding) का मूल्यांकन किया जा सकता है ।
   (4) प्रकरण से सम्बन्धित सूचनाओ की उच्चोच्च कम में पुनःप्राप्ति के समय संज्ञानात्मक मानचित्र घटनाओं को प्रभावित कर सकता है ।
   (5) दृश्यात्मक प्रकृति होने के कारण संज्ञानात्मक मानचित्र स्मृति की खोज को निर्देशित करने के साथ ही साथ ज्ञान पुनर्प्राप्ति (Retrival) के दौरान संज्ञानात्मक गतिविधि की संरचना करने को आधार प्रदान कर सकता है । क्योंकि मानचित्र सम्प्रत्ययों को लेबिल किया जाता है और ये लेबिल सूचना शब्दों (Cues) के रूप में कार्य करते हुए स्मृति की खोज को निर्देशित कर सकते हैं, जिससे ज्ञान की पुनप्राप्ति सम्भव हो जाती है ।
   (6) सम्प्रत्ययों के संगठनात्मक –स्वरूप और पुनर्प्राप्ति की घटनाओं को प्रभावित करने की क्षमता के कारण संज्ञानात्मक मानचित्र संगत (Relevant) ज्ञान को प्राप्त करने में सुधार ला सकता है ।
   (7) भाषायी सम्प्रत्ययों एवं ज्ञान आधारित सम्प्रत्ययों के लिए अलग–अलग संज्ञानात्मक मानचित्र की रचना की जा सकती है जिससे पाठ्यक्रम के उद्देश्यों को पूर्ण रूप से प्राप्त करने में मदद मिलती है।

स्व–परख प्रश्न (Sef–Check Questions)

1. संज्ञानात्मक मानचित्रण की विशेषताएँ बताईये ।
2. संज्ञानात्मक मानचित्रण का महत्व बताईये ।

4.11 पूर्वाकांक्षाएँ (Prerequistites)

1. शिक्षक का संस्कृत भाषा एवं उनकी विषयवस्तु पर पूर्ण स्वामित्व हो ।

2. पाठ्यवस्तु/पाठ्यसामग्री प्रकरण का स्वरूप स्थायी हो ।
3. विद्यार्थी के पूर्व व्यव्हार तथा अन्तिम व्यवहार की भलीभांति जानकारी हो ।
4. सभी सम्भव श्रोतों के उपयोग में लेने का ज्ञान हो ।
5. मानचित्रण का सैद्धान्तिक ज्ञान एवं व्यावहारिक अनुभव हो ।

4.12 पाठ्यक्रम के तत्व (Curricular Elements)

अन्य भाषाओं; यथा–अँग्रेजी, हिन्दी, उर्दू की तरह संस्कृत भी एक भाषा है । इसलिए सभी विषयों की ज्ञान राशि संस्कृत की विषयवस्तु (Content) हो सकती है और यह सभी विषयों के प्रस्तुतीकरण का माध्यम भाषा हो सकती है । साथ ही एक समृद्ध एवं सशक्त भाषा होने के कारण इसमे भाषायी तत्वों का अदभूत विश्लेषण देखने को मिलता है । संस्कृत के पाठ्यक्रम के तत्वों को दो भागों में वर्गीकृत किया जा सकता है ।

1. निरीक्षण सम्बन्धी (Observational)
   (अ) ज्ञान की सरंचना (Structure of Knowledge)
2. गैर निरीक्षण सम्बन्धी (Non - Observational)
   (अ) भाषा की संरचना (Structure of Language)
   (ब) भाषा के रूप (Forms of Language)

1. निरीक्षणसम्बन्धी (ज्ञान की सरंचना)

एक भाषा माध्यम के रूप में विभिन्न विषय क्षेत्रों के निरीक्षण सम्बन्धी अर्थात की संरचना से सम्बन्धित निम्नलिखित तत्व मुख्य रूप से पाठ्यक्रम में सम्मिलित हो सकते हैं–

1. तथ्य (Facts)
2. सम्प्रत्यय (Concepts)
3. उत्कल्प (Consturct)
4. नियम (Laws,Principles)
5. सिद्धान्त (Theory)

पाठ्यक्रम में इनके मात्रात्मक रूप में उपस्थित रहने की सामान्य सम्भावनाओं को अग्रांकित त्रिभुजाकार आकृति में समझा जा सकता है।

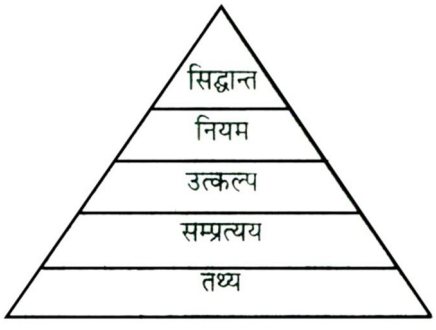

चित्र 4.1 पाठ्यक्रम में निरीक्षण सम्बन्धी तत्व

(i) **तथ्य** – कौनसी, क्या, कब और कहाँ कोई घटना घटित हुई है, इसका निश्चित साक्ष्यों से प्राप्त विवरण तथ्य कहलाता है । सामान्यत : तथ्य दृष्टाओं के बार–बार प्रेक्षण करने से निर्धारित या प्रतिस्थापित होता है ।

(ii) **सम्प्रत्यय** – एक ऐसा शब्द या प्रतीक है जो वस्तुओं, स्थितियों और घटनाओं की भिन्नता के बीच विद्यमान समानताओं को प्रकट करता है ।

(iii) **उत्कल्प** – वे शब्द जिन्हें किसी घटना की व्याख्या करने या उसके आधार पर भविष्यवाणी करने में सहायता के लिए गढ़ते हैं; यथा बुद्धि, उपलब्धि अभिप्रेरणा आदि वैज्ञानिक ज्ञान के तर्क संगत उत्कल्पों की सुगठित व्याख्या माना जा सकता है ।

(iv) **नियम** – किसी व्यवस्था या प्रक्रिया को बनाने या बनाये रखने हेतु मार्गदर्शन तत्वो एवं तत्वों की व्यवस्था को नियम कहा जाता है । नियम सामान्यत: मानवीय अनुभवों का सारभूत कथन हैं ।

(v) **सिद्धान्त** – सिद्धान्त अंतर्संबंधित, उत्कल्पों, सम्प्रत्ययों, परिभाषाओं, स्वयं सिद्ध कथना (Postualtes) और औपचारिक कथनों की एक संगठित व एकीकृत प्रस्तुति है जो किसी वर्ग की घटनाओं को समझने, उसकी व्याख्या करने तथा उसके बारे में भविष्यवाणी करने के लिए प्रस्तुत होता है ।

गैर निरीक्षण सम्बन्धी

(अ) भाषा की संरचना – भाषा की संरचना में मुख्यत: निम्नलिखित तत्व सम्मिलित होते हैं–

(i) **वर्णमाला** (Alphabet and Syllables) – वर्णमाला में वर्ण/अक्षर दो प्रकार के होते हैं (क) स्वर (ख) व्यंजन । वैदिक संस्कृत में कुल वर्ण या ध्वनियों 63 मानी गयी हैं । यदि लृकार को भी प्लुत मान लिया जाए, तब वर्गों को संख्या 64 हो जाती है ।

(ii) **शब्द कोश** (Vocabulary) – शब्दों का संग्रह जिसे वर्णानुक्रम से व्यवस्थित और वर्णित किया जाता है । इसके अन्तर्गत संस्कृत का अथाह शब्द भण्डार आता है ।

(iii) **पद** (Phrases) - इसके अंतरर्गत शब्द समुदाय, वाक्य खण्ड, मुहावरे आदि आते हैं । तात्विक दृष्टि से पद दो प्रकार का होता है । पाणिनी ने ' 'सुप्तिङ्गन्तं पदम्' (अष्टाध्यायी 1.4.1.4) इस सूत्र में पद को सुबन्त (नाम/संज्ञा) और निडन्त (आख्यात/क्रियाएँ) इन दो भागों में वर्गीकृत किया है।निरूक्त 13.9 में : 'नामाख्याते चोपसर्गनिपाताश्चेति वैयाकरणा' पदों में उपसर्ग और निपात (अव्यय) को जोड़ते हुए इन्हें चार प्रकार का बताया है? । मुहावरे एवं वाक्य खण्ड लोक व्यवहार से विकसित हैं अत: सांदर्भिक अर्थ देते हैं ।

(iv) **वाक्य रचनाएँ** (Sentence Structure) – संस्कृत वाक्य में शब्दों का कोई निश्चित क्रम नहीं होता है । तथापि संरचना के आधार पर वाक्यों को कई प्रकार से वर्गीकरण किया जा सकता है ।

(v) वाक्य के आधार पर – सकारात्मक, नकारात्मक, प्रश्नवाचक, आदेशात्मक आदि।

(vi) **शब्द भेद** – शब्दों के मुख्यत: आठ भेद किये जा सकते हैं यथा; (क) नाम/संज्ञा (Noun) (ख) सर्वनाम (Pronoun), (ख) विशेषण (ग) क्रिया धातु(ङ) क्रिया विशेषण (Adverb) (च) सम्बन्ध सूचक अव्यय (Prepositions) ये विभक्तियों में निहित होते हैं । (छ) समुच्च बोध अव्यय (Conjuctions) अर्थात च, आ, वा आदि (ज) विस्मयादि बोधक अव्यय (Interjection)। **अलंकार (**Figures of Speech) – ये दो प्रकार के होते हैं – शब्द अलंकार तथा अर्थ अलंकार

(vii) **छंद** (Metre) – छन्द दो प्रकार के होते हैं – वर्णिक छन्द तथा मात्रिक छन्द ।

(ब) भाषा के रूप – भाषा के मुख्यत: तीन रूप हैं –

(i) **गद्य** (Prose) – अपाद: पद संतानों गद्य (काव्यार्दश 6/23) अर्थात् पद समुदाय में गणमात्र आदि के निपात पाद का न होना गद्य है ।

(ii) **पद्य/काव्य** (Poetry) – रस, अलंकार ध्वनि, गुण, वक्रोक्ति, रमणीयता, सुन्दरशब्दावली, गणमात्र से युक्त पद समुदाय को पद्याकाव्य कहा जाता है ।

(iii) **नाटक/रूपक** (Drama) – सामान्य अर्थ में किसी अवस्था के अनुकरण को नाटक रूपक कहा जाता है ।

4.12 पाठ्यक्रमीय अन्य तत्व (Other Curricular Elements)

1. उद्देश्य एवं लक्ष्य (Goals and Objectives)
2. शिक्षा की प्रकृति प्रणाली एवं छात्र समुदाय (Nature of Education,System and Target Population)
3. विषय वस्तु – विषय सामग्री तथा शिक्षण अधिगम अनुभव (Content–SubjectMatter Teaching Learning Experience)
4. छात्र एवं अधिगम अनुभव (Learner and Learning Experiences)
5. अधिगम एवं शिक्षण प्रविधियाँ (Learning and Teaching Techiniques)
6. अध्यापक–दक्षताएँ, तैयारी एवं सहयोग सामग्री (Teacher–Competencies,Preparation and support
7. मूल्यांकन – विकासात्मक एवं (Evalutation - Formative and Summative) समग्र मूल्यांकन
8. अधिगम एवं शिक्षण सामग्री तथा तकनीक (Learning and Teaching Materials and Technology)
9. संसाधनों का उपयोग (Moblization of Resources Including Resources)
10. विषय वस्तु एवं क्रियान्विति संबंधी व्यूह रचनाएँ (Inputs and Implementative strategies)

4.13 सारांश (Summary)

इस इकाई में आपने सम्प्रत्यों का अर्थ, प्रकार एवं महत्व तथा उनका संज्ञानात्मक मानचित्रण के बारे में अध्ययन किया है । इसी के साथ ही आप ने संज्ञान के अर्थ, संज्ञानात्मक

मानचित्र के अर्थ तथा मानचित्रण की प्रक्रिया के बारे में जानकारी प्राप्त की है । इसके अलावा आपने पाठ्यक्रीय तत्वों के बारे में भी अध्ययन किया है ।

4.14 स्व–परख प्रश्नों के उत्तर (Answers to Self Check Questions)

नोट :– इस हेतु आप तत्संबंधी पाठ्यांश का पुनः अध्ययन करें ।

4.15 मूल्यांकन प्रश्न (Unit End Questions)

1. संज्ञान का अर्थ स्पष्ट करते हुए भाषा एवं संज्ञान के सम्बन्ध की विवेचना कीजिए ।
2. संज्ञानात्मक आयाम से क्या तात्पर्य है? स्पष्ट कीजिए ।
3. सम्प्रत्यय को परिभाषित करते हुए इसकी प्रकृति को स्पष्ट कीजिए ।
4. सम्प्रत्यय एवं इसके स्तरों का वर्गीकरण कीजिए ।
5. सम्प्रत्ययों के अधिगम की आवश्यकता क्यों है? स्पष्ट कीजिए ।
6. पाठ्यसामग्री विश्लेषण से आप क्या समझते हैं? इसके सोपानों की चर्चा कीजिए ।
7. आप पाठ्यसामग्री में से सम्प्रत्ययों की पहचान कैसे करेंगे? स्पष्ट कीजिए ।
8. सम्प्रत्यय योजकों से आप क्या समझते हैं? सम्प्रत्यय योजकों के उपयोग का महत्व बताइये ।
9. सम्प्रत्यय पुंज से आप क्या समझते हैं? सम्प्रत्यय पुंज बनाने की प्रक्रिया को स्पष्ट कीजिए ।
10. सम्प्रत्ययों के संज्ञानात्मक मानचित्र से आप क्या समझते है? स्पष्ट कीजिए ।
11. सम्प्रत्यय के संज्ञानात्मक मानचित्रण की प्रक्रिया समझाइये ।
12. सम्प्रत्यय के संज्ञानात्मक मानचित्र विद्यार्थियों के लिए किस प्रकार उपयोगी है?
13. सम्प्रत्यय के संज्ञानात्मक मानचित्र विद्यार्थियों के लिए किस प्रकार उपयोगी हैं?
14. सम्प्रत्यय के अच्छे संज्ञानात्मक मानचित्र की विशेषताएँ बताइए ।
15. सम्प्रत्ययों के संज्ञानात्मक मानचित्रण की पूर्व आकांक्षाओं को स्पष्ट कीजिये ।
16. पाठ्यक्रम के तत्वों से आप क्या समझते हैं? स्पष्ट कीजिए ।
17. पाठ्यक्रम के तत्वों का वर्गीकरण प्रस्तुत कीजिए ।

4.16 संदर्भ ग्रंथ सूची (References)

1.	Axelrod. R	–	Structure of Decision:The cognitive maps of poltical elites, Princeton University Press.New Jersey,1976.

2.	Novak,J.D.and D.B.Gowin	–	Learning how to lear Cambridge university press,Cambridge,1984
3.	Zodeh,L.A.	–	The concept of linguistic variable and its applications to approximate reasoning I,II,III informations Science 8,9,;199–257,43–80.
4.	Sternberg,R.J. & Befg C.A(Eds)	–	Intellectual Developing,Cambridge University press. 1992
5.	Bjorklund,D.(ed.)	–	children's strategies:contemporarily views of cognitive development, Erlbaum hillsdale, new jersey.
6.	Smith,E.E.Medin,D.L	–	Categories and concepts, Harvard university oressm Cambridge,1981.
7.	Vosniadou S.and Brewer,W.F.–	–	Theories of knowledge restructuring in development,Review of Rurcated and Research 57(I):51–67
8.	Ausubel,D.P.:Educatio nal psychology	–	Cognitive view.holt, Rinehart and winstom, New York,1968.
9.	Kosslyn.S	–	Under standing charts and graph, applied cognitive Psychology,(3):185–255
10	Novak,J:Concept Mapping	–	a useful devise for Science Federation,Journal of Res.scie.teach.27(10)
11	Singh,S.K.	–	Dictionary of educations, commonwealth publishers,New Delhi
12	Akmajim adrina and others	–	An Introduction to Language and communications prentice–hall of Indian pvt.ltd.,New Delhi,1996
13	Hayes, Nicky	–	एफ़oundation of Psychology:an Introductory –Text, Rutledge London,1994.
14	Husen Torsten and	–	The International Encyclopedia of

	Postlethwaite,T.N.,(Ed)		Education,second Edition,Pergamon,Oxford,Vol.I &II.
15	द्विवेदी,कपिलदेव	–	अर्थविज्ञान और व्याकरण दर्शन, विश्वविद्यालय प्रकाशन,वाराणसी ।
16	शर्मा,आर.ए	–	शिक्षण तकनीकी, सूर्या पब्लिकेशन्स, मेरठ, 776
17	पाठक,पी. डी.	–	शिक्षा मनोविज्ञान, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा
18	नौटियाल चक्रधर एव शास्त्री जगदीश लाल	–	वृहद् अनुवाद चन्द्रिका, मोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी, 1990

इकाई - 5) unit -(5

संस्कृत शिक्षण के उपागम एवं विधियाँ – विषय आधारित विधियों के उदाहरण, संस्कृत विषय शिक्षण से सम्बन्धित कौशल

)Approaches and Teaching Methods,Specific Illustrations of Content based Methodology)

इकाई की रूपरेखा

5.0 उद्देश्य एवं लक्ष्य

5.1 संस्कृत शिक्षण के उपागम एवं विधियाँ

(क) प्राचीन विधि

(ख) नवीन विधि

(ग) नवीनतम उपागम (नवाचार)

5.2 विषयवस्तु आधारित विधियों के उदाहरण

5.3 संस्कृत विषय शिक्षण से सम्बन्धित कौशल

5.4 प्रस्तावनात्मक कौशल

5.5 प्रश्नकौशल

5.6 व्याख्यान कौशल

5.7 श्यामपट्ट लेखन कौशल

5.8 प्रदर्शन कौशल

5.9 उदाहरण सहित दृष्टान्त

5.10 पुनर्बलन कौशल

5.11 व्याख्या कौशल

5.12 उद्दीपन परिवर्तन कौशल

5.13 अनुकरणीय शिक्षण कौशल

5.14 कतिपय सुझाव

5.15 सारांश

5.16 स्व–परख प्रश्नों के उत्तर

5.17 मूल्यांकन प्रश्न

5.18 सन्दर्भ ग्रंथ सूची

5.0 इकाई के उद्देश्य (Objectives of the Unit)

(1) इस इकाई की समाप्ति पर आप संस्कृत शिक्षण की विभिन्न विधियों एवं संस्कृत शिक्षण से सम्बन्धित विभिन्न कौशलों की विस्तृत जानकारी प्राप्त कर सकेंगे ।

(2) आप विभिन्न कौशलों से सम्बन्धित पाठ योजना तैयार कर सकेंगे ।

(3) आप संस्कृत शिक्षण की प्राचीन विधियों से परिचित हो सकेंगे।

(4) आप संस्कृत शिक्षण की प्राचीन एवं नीवन विधियों की तुलना कर सकेंगे ।

(5) आप प्राचीन और नवीन विधियों की तुलना करते हुए उनका यथास्थान प्रयोग कर सकेंगे।

(6) आप संस्कृत शिक्षण के उपागमों से परिचित हो सकेंगे ।

(7) आप विभिन्न कौशलों का प्रयोग अपने शिक्षण में सफलतापूर्वक कर सकेंगे ।

5.1 संस्कृत शिक्षण के उपागम एवं विधियाँ (Approaches and Methods of Sanskrit Teaching)

नोट :– संस्कृत शिक्षण के उपागम के लिए देखें इकाई –13 इस इकाई में विधियों एवं कौशलों का विस्तार से वर्णन किया जा रहा है ।

प्राचीन काल में भारत की शिक्षा पद्धति के मूल स्रोत वेद हैं । वेदों के मन्त्र शिक्षा–पद्धति के दो रूप स्पष्ट करते हैं । पहले के द्वारा, वेद–मन्त्रों का सृजन हुआ तथा दूसरे के द्वारा इनका संरक्षण । एक का संबंध अन्तर्मुखी साधनात्मक चिन्तन से है, जिससे नवीन ज्ञान का अन्वेषण एवं निर्धारण हुआ और दूसरे का संबंध विशेषत: स्मरण की बोधात्मक यान्त्रिक रीतियों से है जिससे इसका संरक्षण, संवर्धन तथा प्रसार हुआ । वेद मन्त्र एवं उनका ज्ञान मौखिक परम्परा से ही संरक्षित होते आए हैं, इसलिए इनको श्रुति कहा जाता है । गुरु के द्वारा उचारित मन्त्रों को शिष्य तन्मय होकर एक ही लय में दोहराता रहता था । सतत् अभ्यास से न केवल वह मन्त्रों को कण्ठस्थ कर लेता था अपितु इनके उच्चारण की सही रीतियों को हृदयंगम कर लेता था । इस प्रकार वैदिक शिक्षण पद्धति में ध्वनियों एवं शब्दों के शुद्ध स्वरूप पर अत्यधिक बल दिया जाता था । उस समय इन्द्र, वरुण, अग्नि, उषा, वायु, मेघ आदि की उपासना के लिए वैदिक मन्त्रों की रचना की गई थी और यज्ञ को प्रोत्साहन दिया गया था । तत्कालीन शिक्षा का सम्पूर्ण स्वरूप सामाजिक दृष्टिकोण से तैयार किया गया था और छात्रों को उन्हीं बातों की शिक्षा दी जाती थी जिनका समाज से घनिष्ट सम्बंध होता था ।

उस समय कागज एवं मुद्रण का आविष्कार न होने के कारण कण्ठस्थीकरण पर बल था तथा शिक्षण मौखिक रूप से दिया जाता था । भुर्ज पत्रों एवं ताम्रपत्रों पर ग्रंथ के लेखन के संग्रह के बाद भी मौखिक पद्धति ही प्रचलित रही । वैदिक युग में ब्राहमणसंघों के द्वारा ज्ञानार्जन तथा ज्ञान प्रसार की पद्धति भारतवर्ष में आविष्कृत हुई जो आधुनिक सेमीनार की सभी विशेषताओं से परिपूर्ण थी । बौद्ध शिक्षा पद्धति में व्याख्या एवं तर्क विधि पर बल दिया जाता था । बौद्ध साहित्य में मैत्रेय का "सप्त दश भूमि शास्त्र योगाचार्य" जो कि 400 ई. में लिखा गया था, वाद–विवाद पद्धति सम्बन्धी एक महत्वपूर्ण ग्रंथ है, जिसके 15वें भाग में वाद–विवाद के नियम वर्णित हैं ।

वृहदारण्यक उपनिषद् – में ज्ञानार्जन की श्रवण, मनन तथा निदिध्यासन की व्याख्या मिलती है । श्रवण के द्वारा शिष्य गुरु के वचन को ध्यानपूर्वक सुनता था, मनन के द्वारा उनके वचन का बौद्धिक परिग्रहण करता था तथा निदिध्यासन के द्वारा उसकी साधनात्मक अनुभूति करता था; जैसे–निम्नलिखित श्लोक में वर्णित है – श्रवण तु गुरो : पूर्व मनन तदन्तरम् ।

निदिध्यासनमित्येतत्थूर्ण बोधस्थ कारणम् ।।

प्रश्नोत्तर प्रणाली का वर्णन सर्वप्रथम उपनिषद् साहित्य में मिलता है जिसमें शुद्ध आध्यात्मिक तत्त्वों का स्पष्टीकरण बड़े ही रोचक ढंग से किया गया है । इस प्रणाली में मौखिक शिक्षा के सभी उपादानों; जैसे–दृष्टान्त, कथा, कहानी, जीवनवृत्त आदि का प्रयोग होता था । यूनान के प्रसिद्ध–विद्वान सुकरात की शिक्षण शैली 'भी यही थी ।

स्मृति चन्द्रिका में ज्ञानार्जन के निम्नांकित अंश वर्णित हैं –

शुश्रुषा श्रवण चैव ग्रहण धारण तथा ।

ऊहापोहार्थविज्ञान तत्त्वज्ञान च धीगुणा : ।।

शुश्रुषा, श्रवणम् ग्रहणम् धारणम्, ऊहापोह, अर्थ विज्ञानम् एवं तत्वज्ञानम में सात बिन्दु ज्ञानार्जन के आधार हैं ।

पञ्चतन्त्र तथा हितोपदेश भी कथा–कथन तथा प्रश्नोत्तर शैली के प्रतीक हैं । प्राचीन भारत के विद्यालयों में उपगुरु (मोनीटोरियल) प्रणाली भी प्रचलित थी । इसमें अनुभवी तथा सुयोग्य छात्र शिक्षण कार्य में शिक्षक की सहायता करते थे । तक्षशिला में भी यह पद्धति प्रचलित थी । किसी भी विषय की शिक्षण पद्धति पर भौगोलिक, प्राकृतिक, सामाजिक, वैज्ञानिक एवं मनोवैज्ञानिक परिस्थितियों का प्रभाव पड़ता है ।

संस्कृत शिक्षण में विभिन्न विधाओं का शिक्षण अलग– अलग विधियों एवं प्रविधियों से किया जाता है, जिनका उल्लेख प्रत्येक विधा से सम्बन्धित पाठ में अलग– अलग किया गया है । संस्कृत भाषा का शिक्षण किन–किन विधियों से प्राचीन काल में दिया जाता था? आधुनिक काल में किन विधियों से दिया जा रहा है तथा दिया जाना चाहिए? इन प्रश्नों के समाधान हेतु संस्कृत शिक्षण की विधियों को तीन भागों में बाँटा जा सकता है -

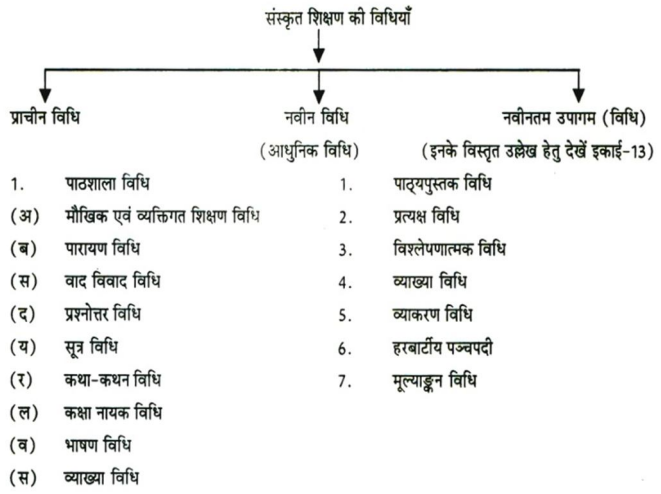

(क) प्राचीन विधि

वैदिक काल में प्रयोग में लाई जाने वाली तथा पाश्चात्य शिक्षा पद्धति के बाद संस्कृत शिक्षण के लिए प्रयुक्त की जाने वाली विधियों को प्राचीन विधि के अन्तर्गत रखा गया है, जो निम्नलिखित हैं–

(1) **पाठशाला विधि** – इसे पण्डित प्रणाली अथवा परम्परागत प्रणाली या विधि के नाम से भी जाना जाता है । सत्रहवीं शताब्दी तक पाठशालाओ, आश्रमों, गुरुकुलों, मठों तथा विद्यापीठों में यह शिक्षा पद्धति नियमित रूप से चलती रही । धीरे – धीरे लॉर्ड मैकाले की शिक्षा पद्धति के जाल के विस्तार से यह उपेक्षित होती चली गई । इस पद्धति से शिक्षारम्भ उपनयन संस्कार के साथ होता था । गुरु छात्र को गायत्री मन्त्र का उपदेश देता था । इस मन्त्र की दीक्षा के बाद से ही शिक्षा आरम्भ हो जाती थी । प्रतिदिन शिष्य नित्य कर्म से निवृत्त हो गुरु के पास आकर गुरु की आज्ञा से वेद पड़ता था । छात्र उत्तर दिशा की ओर मुख कर, आचमन कर, ब्रह्माज्जलि बाँध कर गुरु के समीप विद्या पढ़ता था । अध्ययन के आरम्भ तथा अन्त में वह गुरु को साष्टांग प्रणाम कर दाहिने हाथ से दाँये पैर के अँगूठे को और बाँए हाथ से बाँए पैर के अँगुठे को स्पर्श करता था । पठनारम्भ की इस प्रक्रिया के पश्चात् गुरु उसे 'पढ़ो' यह आदेश देता था । कुश से अपने शरीर का मार्जन करके, तीन बार प्रणायाम के द्वारा स्वयं को शुद्ध करके ओंकार शब्द का उच्चारण करता था । उस समय यह मान्यता प्रचलित थी कि यदि वेदारम्भ व उसके अन्त में ओंकार शब्द का उच्चारण नहीं किया गया तो उसकी विद्या शनै : – शनै : नष्ट हो जाएगी ।

पुरुषार्थ चतुष्टय (धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष) ही शिक्षा के प्रमुख उद्देश्य थे । यह शिक्षण विधि ब्रह्मचर्य पर आधारित थी जो शिक्षण की अपेक्षा व्यक्ति की जीवन शैली को अधिक महत्त्व देती थी । इसमें गुरु और शिष्य के सम्बन्ध पिता पुत्रवत् होते थे । अध्यापक के पास रहने के कारण शिष्य 'अन्तेवासिन्' कहलाते थे । उस समय शिष्य के लिए छात्र शब्द का प्रयोग किया जाता था क्योंकि सदैव अपने आचार्य की सेवा करना तथा छत्र की भाँति उनकी रक्षा करना छात्र का परम कर्तव्य था । गुरु की आज्ञा का पालन करना छात्र का सबसे बड़ा दायित्व था । उन्हें यम–नियम,अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, लोभ मोह–त्याग आदि नियमों का पालन करना अनिवार्य था । योग्यतम आचार्यो को उनके गुणों के आधार पर विविध नाम से पुकारा जाता था; जैसे– श्रोत्रिय शिक्षक उन्हें कहा जाता था जो छन्दों का शुद्ध–शुद्ध पाठ कर सकते थे । पाठशाला विधि में निम्नलिखित शिक्षण विधियों को प्रयुक्त किया जाता था–

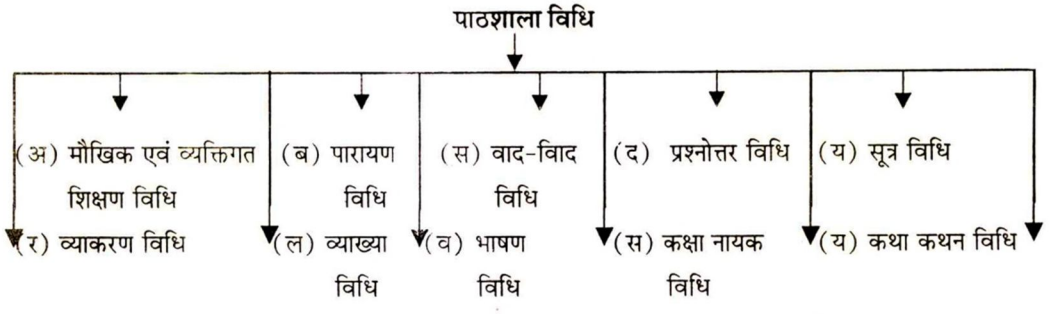

(अ) मौखिक एवं व्यक्तिगत शिक्षण विधि – वैदिक शिक्षा मौखिक होती थी । गुरु स्वयं वेद मन्त्रों का उच्चारण कर छात्रों को अनुकरण करवाते थे । उच्चारण सम्बन्धी प्रत्येक दोष को गुरु व्यक्तिगत रूप से छात्र को बताते थे । प्रतिदिन नवीन पाठ प्रारम्भ करने से पूर्व गत पाठ का मूल्यांकन किया जाता था । कण्ठस्थीकरण पर बल था उनका चिन्तन था।

पुस्तकस्था तु या विद्या पर हस्तगतं धनम् ।
कार्यकाले समुत्पन्ने न सा विद्या न तद्धनम् । ।

<u>लाभ–</u>

1. इससे छात्रों का उच्चारण शद्ध होता था ।
2. विषय पर स्थायी तौर पर अधिकार होता था ।
3. मौखिक अभिव्यक्ति सशक्त होती थी ।

(ब) पारायण विधि – वैदिक मन्त्रों की बार–बार आवृत्ति करके उन्हें कण्ठस्थ करवाया जाता था । इन पर जिनका पूर्ण अधिकार हो जाता था, वे श्रोत्रिय कहलाते थे । बिना अर्थ समझे हुए वैदिक मन्त्रों के सस्वर पाठ को पारायण कहते थे । ऐसा करने वाले को 'पारायणिक' कहा जाता था ।

अच्छी स्मृति वाले छात्र जो बिना प्रयत्न के वैदिक पाठों को कण्ठाग्र कर लेते थे 'अकृच्छ' कहलाते थे । वेद को कण्ठाग्र करने की प्रक्रिया को भी अलग अलग नाम दिए गए हैं; जैसे – पाठ को पाँच बार पढ़ना (पञ्चम अध्यन), शब्दों को पाँच बार कहना (पञ्च बार), पाँच प्रकार से पढ़ना (पञ्च रूप) । इससे अधिक बार पारायण करने की संख्याओं को सप्तक, अष्टक, नवक आदि कहा जाता था । अशुद्धियों की गणना के आधार पर एक अशुद्धि करने वाले छात्र को ऐकान्यिक, दो अशुद्धि करने वाले छात्र को द्वयनयिक, तीन अशुद्धियाँ करने वाले को त्रयनयिक कहा जाता था ।

<u>लाभ –</u> इस विधि में ज्ञान को स्मृति में संचित करने पर बल दिया जाता था ।

(स) वाद–विवाद विधि– तत्स्थलिय भाषण, व्याख्या, सम्यक् अवबोध, ज्ञानप्रदर्शन, विमति अथवा विप्रलाप, विभिन्न मतों की अभिव्यक्ति आदि क्रियाएँ उस समय प्रचलित थीं । ये सभी क्रियाएँ वाद–विवाद की प्रतीक हैं । शास्त्रार्थ एवं संवाद इसी के उदाहरण हैं– जैसे गार्गी द्वारा किए गए प्रश्न ।

लाभ – इससे छात्रों में भाव प्रकाशन की शक्ति बढ़ती थी ।

(द) प्रश्नोत्तर विधि – प्राचीन काल में ओंकार शब्द के उच्चारण के साथ पाठ,प्रारम्भ किया जाता था । सम्पूर्ण व्याख्यान के बीच–बीच में प्रश्न पूछे जाते थे । कभी–कभी कुछ प्रश्नों का विस्तृत उत्तर न देकर गुरु केवल संकेत कर दिया करते थे । छात्र संकेतों के आधार पर सही उत्तर ढूँढने का प्रयत्न करते थे ।

<u>लाभ–</u>

1. छात्र सक्रिय रहते थे ।
2. स्व चिन्तन, तर्क एवं निरीक्षण शक्ति के विकास पर बल दिया जाता था ।

(य) सूत्र विधि – व्याकरण तथा दर्शन के गहन विषय सूत्र विधि से पढ़ाए जाते थे । सूत्रों की व्याख्या के लिए भाष्य विधि तथा टीका विधि का अनुसरण किया जाता था ।

<u>लाभ–</u> जटिल विषयों को समझने एवं याद रखने में सुविधा होती थी ।

(र) व्याकरण विधि – भाषा का प्राण तत्व है 'व्याकरण' । इसलिए किसी भी भाषा को पढ़ाने के लिए उसे व्याकरण का ज्ञान दिया जाना आवश्यक है । संस्कृत पाठशालाओं में इस विधि को अपनाया जाता था । वेदों के अध्ययन के लिए पुराने समय में व्याकरण का विशेष पठन–पाठन होता था । पतञ्जति के महाभाष्य में लिखा है– 'रक्षार्थ वेदानाम्अध्येय व्याकरणम्' अर्थात् वेदों की रक्षा के लिए व्याकरण पढ़ना चाहिए । प्रारम्भ में कौमुदी के सूत्र, अमरकोश के श्लोक, शब्द रूप तथा धातु रूपावली कण्ठस्थ करवाकर उनकी व्याख्या और उपयोग बताया जाता था ।

<u>लाभ</u> -

1. इससे छात्र संस्कृत भाषा की सूक्ष्मताओं को जान पाते हैं ।
2. भाषा का शुद्ध, परिष्कृत एवं परिमाणित ज्ञान हो जाता है ।

(ल) व्याख्या विधि – छात्रों की शंकाओं का समाधान करने के लिए गुरु व्याख्या विधि तथा अर्थवाद का अनुसारण करते थे । व्याख्या करते समय किस शैली को अपनाया जाए यह निम्नलिखित श्लोक में उल्लिखित है–

पदच्छेद : पदार्थोक्तिर्विग्रहों वाक्य योजना ।
आक्षेपोअथ समाधानं व्याख्यानं षडविधं स्मतृम् । ।

अर्थात् पदच्छेद, पदार्थोक्ति, विग्रह, वाक्य योजना, आक्षेप तथा समाधान ये छ: व्याख्या के ढंग थे । भर्तृहरि ने भी कहा है–

संयोग विप्रयोगश्च साहचर्य विरोधिता ।
अर्थ: प्रकरणं लिड्ग शब्दस्यान्यस्य सन्निधि : ।।

अर्थात् किसी शब्द के अर्थ को समझने के लिए संयोग, विप्रयोग (प्रसिद्ध सम्बन्ध विभाग), साहचर्य, वैधर्म्य, अर्थ, प्रकरण, लिड्ग, सन्निधि, सामर्थ्य, औचित्य, देश, काल, व्यक्ति, स्वर आदि बातों की जानकारी की आवश्यकता होती है ।

धीरे– धीरे जटिल पदों का अर्थ स्पष्ट करने के लिए संस्कृत भाषण के साथ–साथ प्राकृत तथा अन्य दैवीय भाषाओं का प्रयोग भी किया जाने लगा था ।

<u>लाभ –</u>

1. विषय की विस्तृत जानकारी होती थी ।
2. शब्दों की संरचना से परिचय होता था ।
3. भाषा पर अधिकार होता था ।

(व) भाषण विधि – विषय को स्पष्ट करने के लिए गुरु उदाहरणों एवं कथाओं आदि का सहारा लेते थे तथा लम्बे–लम्बे व्याख्यान व भाषण देते थे । अष्टाध्यायी में प्रयुक्त भाषण शब्द से भाषण विधि का आभास होता है ।

<u>लाभ</u> - इससे छात्रों को किसी विषय पर विस्तृत जानकारी प्राप्त हो जाती थी ।

(स) कक्षा नायक विधि – प्राचीनकाल में मेधावी छात्र अपने गुरु को अध्यापन कार्य में सहायता देते थे । गुरु के अस्वस्थ होने अथवा बाहर जाने की स्थिति में ऐसे छात्र गुरुकुल के अन्य छात्रों को पढ़ाते थे । गुरु गुरूकुल में रहते हुए भी शिक्षण को सुविधापूर्वक चलाने में ऐसे छात्रों की सहायता लेते थे, किन्तु ये मेधावी छात्र शिष्य के रूप में रहते थे, गुरु के समान इन्हें अन्य छात्रों से सेवासुश्रुषा करवाने का अधिकार नहीं था ।

<u>लाभ</u> -

1. इससे मेधावी छात्रों का ज्ञान परिपुष्ट होता था ।
2. उन्हें शिक्षक प्रशिक्षण भी मिल जाता था ।
3. गुरु का कार्यभार हलका होता था ।
4. मेधावी छात्रों/सहायक अध्यापकों में आत्मविश्वास आता था ।

(ष) कथा कथन विधि – विषय को रुचिकर बनाने के लिए तथा अधिक स्पष्ट करने के लिए उस समय उपनिषदों, हितोपदेश तथा पञ्चतन्त्र की कथाएँ बीच–बीच में सुनाई जाती थी ।

<u>लाभ</u> –अध्ययन को सरस बनाने में सहायक थी ।

पाठशाला विधि के गुण : –

1. यह नैतिक मूल्यों के विकास में सहायक है ।
2. भाषा पर पूर्ण अधिकार प्राप्त करवाने में सहायक है ।
3. छात्रों में इसके द्वारा स्वाध्याय की आदत का विकास होता है ।
4. छात्रों में आध्यात्मिक भावना का विकास होता है ।
5. अनुशासन स्थापित करने में सहायक है ।
6. छात्रों में चिन्तन, तर्क शक्ति, निरीक्षण शक्ति तथा आत्म संयम का विकास होता है।
7. यह विधि भारतीय संस्कृति का सरंक्षण करने में तथा संस्कृत साहित्य केअनुसन्धान के लिए उपयोगी है ।
8. इसमें अभ्यास तथा स्मरण शक्ति का सर्वाधिक उपयोग किया जाता है ।

दोष : –

1. यह विधि छात्रों में रटने की शक्ति पर अधिक बल देती है ।
2. यह विधि सामान्य तथा मन्दबुद्धि छात्रों के लिए उपयोगी नहीं है ।
3. यह विधि नीरस है, क्योंकि इसमें व्याकरण का शुष्क ज्ञान प्राप्त करने के लिएबाध्य किया जाता है ।

(2) **व्याकरण अनुवाद विधि** (**भण्डारकर विधि**) – यह विधि 1835 ई. की लॉर्ड मैकाले की शिक्षा पद्धति के बाद विकसित हुई । इस विधि पर पाश्चात्य शिक्षा पद्धति का प्रभाव भी दिखाई देता है । डॉ. रामकृष्ण गोपाल भण्डारकर द्वारा इस विधि को प्रारम्भ किया गया । इसलिए इसे भण्डारकर विधि भी कहते हैं । भण्डारकर ने इस विधि पर सर्वप्रथम दो पुस्तकें लिखीं । इनमें पाश्चात्य शिक्षण शैली को अपनाकर संस्कृत शिक्षण विधि की कल्पना की गई है । इस विधि में सर्वप्रथम संस्कृत व्याकरण पाठ की उदाहरण सहित व्याख्या की जाती है । तत्पश्चात् उस व्याकरण नियम का पर्याप्त अभ्यास कराया जाता है । अभ्यास के लिए नवीन शब्द बताए जाते

हैं । इसके पश्चात् संस्कृत वाक्यों का संस्कृत में अनुवाद का अभ्यास करवाया जाता है । अनुवादों के अभ्यास हेतु शब्दकोश से नये–नये शब्दों का बोध कराया जाता है ।

व्याकरण – अनुवाद विधि के गुण

1. इस विधि में संस्कृत के नियमों को बोधगम्य बनाया जाता है ।
2. इसमें संस्कृत के नियमों का वर्गीकरण मनोवैज्ञानिक ढंग से करते हुए शिक्षण सूत्रों का अनुसरण किया जाता है ।
3. इसमें छात्रों में स्वाध्याय की आदत के विकास पर बल दिया जाता है ।
4. इसमें प्रत्येक पाठ स्वयमेव एक सम्पूर्ण इकाई है । यहाँ तक कि प्रयोज्य शब्दावली को भी पाठ के अन्त में रखा जाता है । अत: इस विधि पर आधारित पुस्तकें स्वयं पथप्रदर्शक का काम करती हैं ।
5. इस विधि के द्वारा एक साथ बड़े समूह को सरलता से पढ़ाया जा सकता है । अत: इससे समय, शक्ति और धन की बचत होता है ।

दोष -

1. यह विधि नीरस एवं एकांगी है, क्योंकि इसमें केवल व्याकरण एवं अनुवाद पर ही बल दिया जाता है ।
2. इसमें भाषा के विविध पक्ष; जैसे उच्चारणाभ्यास, मौखिक कार्य, पद्यों की रसानुभूति, गद्यों के मुख्य भाव उपेक्षित रह जाते हैं ।
3. यह विधि प्रारम्भिक स्तर की अपेक्षा उच्च स्तर के लिए उपयोगी है ।

स्व–परख प्रश्न (Self - Check Questions)

1. पाठशाला विधि का प्रमुख उद्देश्य क्या है?
2. मौखिक विधि के कोई दो लाभ लिखिए ।
3. भण्डारकर विधि को अन्य किस नाम से जाना जाता है?
4. पारायण विधि से क्या अभिप्राय है?
5. कक्षा नायक विधि का प्रमुख उद्देश्य क्या है ।

(ख) नवीन विधि

लॉर्ड मैकाले की शिक्षा पद्धति के बाद से संस्कृत शिक्षण के लिए आज तक प्रयुक्त की जाने वाली विधियों को इस श्रेणी में रखा गया है । ये विधियाँ निम्नलिखित हैं–

1. **पाठ्यपुस्तक विधि** – भारत में पावयपुस्तक विधि के समर्थक डॉ. वैस्ट थे । इसके अन्तर्गत कक्षा के स्तरानुसार विषयवस्तु को वर्गीकृत किया जाता है । यह वर्गीकरण छात्र के निकटस्थ वातावरण पर आधारित होता है । इसमें क्रमश: वर्णमाला, छोटे शब्दों, वाक्यों और अनुच्छेदों का ज्ञान करवाया जाता है । इस शैली में संस्कृत की पाठ्यपुस्तकें भी तैयार की गई हैं । इन पुस्तकों का मुख्य उद्देश्य यह है, कि इन्हें पढ़कर छात्र अथवा प्रौढ़ सभी शिक्षक की सहायता के बिना स्वतन्त्र रूप से संस्कृत का ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं । इस विधि में पाठ्यपुस्तक के पाठ ही सम्पूर्ण अध्ययन के केन्द्र बिन्दु होते हैं । मातृभाषा के द्वारा नवीन शब्दों का अर्थ बतलाया जाता है ।

गुण -

1. यह एक मनोवैज्ञानिक विधि है ।
2. इससे छात्रों के शब्द भण्डार में वृद्धि होती है ।
3. यह छात्रों में जिज्ञासा उत्पन्न करती है ।
4. यह शुद्धोच्चारण के अभ्यास का अवसर प्रदान करती है ।
5. यह संस्कृत शिक्षण की प्रक्रिया में नियमितता तथा समरूपता लाती है ।
6. संस्कृत विषय के प्रति अनुराग उत्पन्न करने की यह सरलतम विधि है ।

दोष –

1. यह पाठ्य पुस्तक केन्द्रित है । यह संस्कृत साहित्य के व्यापक ज्ञान हेतु छात्रों को प्रेरित नहीं करती ।
2. इसके द्वारा व्याकरण के क्रमबद्ध ज्ञान का अभाव रहता है ।
3. छात्रों में समीक्षात्मक दृष्टिकोण का विकास नहीं हो पाता ।
4. यह एक यान्त्रिक विधि है ।

2. **प्रत्यक्ष विधि** –इस विधि को डायरेक्ट विधि अथवा निर्बाध विधि भी कहते हैं । अँग्रेजी भाषा सिखाने के लिए सर्वप्रथम इसका प्रयोग किया गया । इस विधि में भाषा विशेष को पढ़ाते समय उस ही भाषा को माध्यम रखा जाता है; जैसे– संस्कृत को संस्कृत तथा अँग्रेजी को अंग्रेजी माध्यम में ।

इस विधि से पाठ पढ़ते समय छात्र भाषा का पर्याप्त ज्ञान प्राप्त कर लेते हैं । छात्रों को इस तरह अभ्यास दिया जाता है, कि वे संस्कृत में ही सोचें और तदनुसार अपनें भावों को संस्कृत में ही व्यक्त करें जिससे भविष्य में संस्कृत पर उनका पूर्ण अधिकार हो जाए ।

गुण -

1. यह संस्कृत भाषा सिखाने की सर्वोत्तम विधि है, क्योंकि किसी भी भाषा को उस ही भाषा के माध्यम से सुविधापूर्वक सीखा जा सकता है ।
2. इसके द्वारा –छात्रों को भाषा के चारों कौशलों के विकास का अवसर दिया जाता है ।
3. छात्रों में स्वतन्त्र रूप से संस्कृत में विचार प्रकट करने की योग्यता का विकास होता है।

दोष –

1. इस विधि द्वारा संस्कृत शिक्षण की गति मन्द रहती है; क्योंकि संस्कृत लोक व्यवहार की भाषा नहीं है ।
2. इसके लिए शिक्षकों का स्वयं का ज्ञान परिपक्व होना चाहिए ।
3. संस्कृत की प्रत्येक विधा को इस विधि के माध्यम से रुचिकर नहीं बनाया जा सकता; जैसे पद्य पाठ पढ़ाते समय सौन्दर्यानुभूति तथा सूक्ष्म अर्थ वाली संज्ञाओं को स्पष्ट करने में मातृभाषा अधिक सहायक हो सकती है ।
4. यह सामान्य मन्दबुद्धि छात्रों की अपेक्षा प्रतिभाशाली छात्रों के लिए अधिक उपयोगी है।

5. इस विधि में छात्रों पर व्यक्तिगत ध्यान देना आवश्यक है, जबकि आज एक–एक कक्षा में 40–50 तक छात्रों का होना एक सामान्य बात है । इसलिए प्रत्येक छात्र पर अलग–अलग ध्यान देना असम्भव नहीं तो कठिन अवश्य है ।

3. **विश्लेषणात्मक विधि** – यह विधि 'पूर्ण से अंश की ओर' शिक्षण सूत्र पर आधारित है। इस विधि से शिक्षण करते समय शिक्षक पहले सम्पूर्ण पाठ की वस्तु छात्रों के समक्ष संक्षेप में प्रस्तुत करता है, तत्पश्चात् विभिन्न अंशों का शिक्षण करता है । विशेषत: कथा शिक्षण एवं व्याकरण शिक्षण में इसका प्रयोग अधिक उपयोगी है ।

गुण -

1. छात्र सीखने के लिए अभिप्रेरित होते हैं ।
2. शिक्षण सूत्रों का अनुकरण किया जाता है, अत: मनोवैज्ञानिक है ।
3. शिक्षण रुचिकर होता है ।
4. जटिल विषयों को सुस्पष्ट करने की ओर विशेष ध्यान दिया जाता है ।

दोष –

1. सभी विधाओं का शिक्षण इस विधि से सम्भव नहीं है ।
2. जिस विषयवस्तु का विश्लेषण किया जाता है उसको भलीभांति समझने के लिए संशलिष्ट करना आवश्यक है । इसका अभाव इस विधि में पाया जाता है ।

4. **व्याख्या विधि** – इस विधि का प्रयोग प्राचीन काल में भी होता था तथा वर्तमान में भी इसका प्रचलन है । जटिल अंशो एवं मुख्य भावों को स्पष्ट करने में यह आज भी अत्यन्त उपयोगी है । इसका विस्तृत वर्णन पाठशाला विधि के अन्तर्गत इस ही इकाई में देखें ।

5. **व्याकरण विधि** – पाठशालाविधि में संस्कृत शिक्षण करते समय इसका प्रयोग देखने को मिलता है, किन्तु वर्तमान में भी यह विधि बहुत उपयोगी है, क्योंकि व्याकरण भाषा की आत्मा होती है । षड्वेदाङ्गों में भी व्याकरण को मुख्य माना गया है अर्थात् जिस प्रकार शरीर में मुख का स्थान महत्वपूर्ण है उसी प्रकार वेदाको में व्याकरण का स्थान प्रमुख है । इससे भी व्याकरण का महत्व स्पष्ट होता है । इस विधि का विस्तृत वर्णन पाठशाला विधि के अन्तर्गत इस ही इकाई में देखें ।

6. **हरबार्टीय पञ्चपदी** – प्रसिद्ध शिक्षाशास्त्री एवं मनोवैज्ञानिक हरबार्ट के सिद्धान्तों के आधार पर उसके शिष्यों ने इस पद्धति को प्रस्तुत किया था । अन्य विषयों की भांति संस्कृत शिक्षण करते समय भी इसका उपयोग किया जाने लगा । इसमें पाँच पदों (सोपानों) द्वारा पाठ के शिक्षण का विधान किया गया है । ये पाँच पद हैं–

(1) **प्रस्तावना** – यह छात्रों के पूर्वज्ञान से संबन्धित होती है । इसमें पढ़ाए जाने वले पाठ को सम्बद्ध करने के लिए कुछ सरल प्रश्न पूछे जाते हैं जो परस्पर संबन्धित होते हैं । यदि प्रस्तावना सफल रहती है तब पाठ की सफलता के अवसर भी बढ़ जाते हैं । अत: इसे विवेक से बनाया जाना चाहिए । यह अन्त: कथा, उदाहरण, चित्र एवं प्रश्नों के माध्यम से प्रस्तावना दी जा सकती है ।

(2) **विषयोपस्थापन** – इस सोपान में उद्देश्य कथन के साथ विषय का प्रस्तुतीकरण किया जाता है । प्रत्येक विधा को पढ़ाते समय विषयोपस्थापन अलग– अलग ढंग से किया जाता है; जैसे गद्य पाठ में आदर्श वाचन, अनुकरण वाचन के बाद विविध–विधयों से काठिन्य निवारण, पाठ प्रवर्धन प्रश्नोत्तर माध्यम से सार कथन आदि किया जाता है ।

(3) **तुलना** – जिन–जिन स्थलों पर कठिनाई होती है, उन शब्दों एवं भावों को स्पष्ट करने के लिए विविध दृश्य– श्रव्य सामग्री का प्रयोग किया जाता है तथा तुलना करवाते हुए विषय स्पष्ट किया जाता है ।

(4) **सामान्यीकरण** – इस सोपान में पढ़े गए पाठ के निष्कर्ष पर छात्र पहुँचने का प्रयत्न करते हैं, जैसे व्याकरण शिक्षण में विविध उदाहरणों का अध्ययन करने के बाद तत्संबंधी नियम बताना । गद्य तथा पद्य शिक्षण में पाठ का सार शिक्षक द्वारा बताना तथा छात्रों से प्रश्नों द्वारा मुख्य भाव ज्ञात करना । समान भाव की कविता के आधार पर प्रश्न पूछना आदि ।

(5) **प्रयोग** – पाठ को पढ़ने एवं तुलनात्मक अध्ययन करने के बाद नवर्जित ज्ञान को व्यवहार में लाने की योग्यता छात्रों में उत्पन्न करना आवश्यक है । इस सोपान में संस्कृत भाषा के पाठों में छात्रों से अभ्यास कार्य करवाया जाता है । यह अभ्यास कार्य, कक्षा कार्य तथा गृहकार्य के माध्यम से सम्पन्न होता है । इसका मुख्य उद्देश्य छात्रों के प्राप्त ज्ञान को परिपुष्ट करना है ।

गुण –

1. यह विधि मनोवैज्ञानिक सिद्धान्तों पर आधारित है ।
2. इस विधि द्वारा शिक्षण क्रमबद्ध होता है ।
3. इसमें शिक्षण की बोधगम्यता पर बल दिया जाता है
4. इससे प्राप्त ज्ञान स्थायी होता है ।

दोष –

1. सभी विषयों के शिक्षण में यह उपयोगी नहीं है, जैसे– विज्ञान विषय ।
2. संस्कृत शिक्षण में भी सभी विधाओं के लिए प्रभावशाली नहीं है ।

7. **मूल्यांकन विधि**– यह हरबार्ट पञ्चपदी का विकसित रूप है । इसमें प्रत्येक सोपान से सम्बद्ध उद्देश्य की प्राप्ति हेतु कक्षा में किए जाने वाले कार्यकलापों का संयोजन कर साथ–साथ मूल्यांकन भी किया जाता है । शिक्षण में उद्देश्य एवं व्यवहारगत परिवर्तन का प्रारम्भ सर्वप्रथम ब्लूम ने अपनी पुस्तक 'टेक्सोनोमी ऑफ एज्यूकेशनल ऑब्जेक्टिब्स' में किया । इस विधि में निम्नलिखित सोपानों का अनुसरण किया जाता है–

1. **उद्देश्य** – शिक्षक शिक्षण प्रारम्भ करने से पूर्व सर्वप्रथम पाठ से सम्बन्धित उद्देश्यों का निर्धारण करता है ।
2. **व्यवहार रूप** – निर्धारित उद्देश्यों के आधार पर छात्र के पूर्व ज्ञान में किस सीमा तक परिवर्तन आयेगा? नवीन ज्ञान प्राप्त होगा? इसे अनुमान के आधार पर इस सोपान में लिखा जाता है ।

3. **पाठ्य बिन्दु** – पाठ को किन–किन बिन्दुओ के आधर पर पढ़ाया जाना चाहिए उनका निर्धारण किया जाता है । भाषा के पाठों में वाचन, प्रश्नोत्तर, काठिन्य–निवारण, पुनरावृत्ति आदि सभी इस सोपान में सम्मिलित होते हैं । व्याकरण तथा रचना शिक्षण करते समय विषयवस्तु के बिन्दु भी इसमें सम्मिलित होते हैं ।
4. **शिक्षक का कार्य** – पाठ्यवस्तु को भलीभांति स्पष्ट करने के लिए शिक्षक किन–किन क्रियाओं, विधियों एवं दृश्यश्रव्य सामग्री का उपयोग करेगा, वह सब इस बिन्दु में सम्मिलित होता है ।
5. **छात्र के कार्य** – कक्षा में शिक्षक के साथ छात्रों का सक्रिय होना अत्यन्त आवश्यक है। इसलिए प्रत्येक पाठ के लिए कक्षा–कक्ष में छात्रों को अभिप्रेरित करने व सक्रिय रखने के लिए जो पूर्व चिन्तन एवं तैयारी की जाती है उसे इस बिन्दु के अन्दर रखा जाता है।
6. **मूल्यांकन** – यह उद्देश्यनिष्ठ शिक्षण का एक महत्वपूर्ण सोपान है । इसमें प्रत्येक सोपान की सफलता की जाँच हेतु मूल्यांकन प्रश्न बनाए जाते हैं तथा प्रत्येक पाठ के अन्त में मूल्यांकन प्रश्नों को स्थान दिया जाता है ।

गुण–

1. यह एक मनोवैज्ञानिक विधि है, क्योंकि इसमें मूल्यांकन साथ–साथ चलता है। सही प्रतिक्रियाओं पर छात्र को अभिप्रेरित एवं पुनर्बलित होने का अवसर मिलता है।
2. शिक्षक को अपने शिक्षण में सुधार करने की उचित दिशा का ज्ञान होता है।

दोष –

1. मूल्यांकन केन्द्रित होने के कारण शिक्षण में स्वाभाविकता की कमी आ जाती है।
2. छात्र पर निरन्तर मूल्यांकन का दबाव बना रहता है ।

उपर्युक्त वर्णित समस्त विधियों में से विधियों का समवाय रूप तथा एक पक्षीय रूप कक्षा के स्तर, विधा एवं प्रकरण को देखते हुए किया जाना चाहिए । संस्कृत शिक्षा कें स्तर को उन्नत करने हेतु संस्कृत शिक्षण के नवीनतम उपागमों का प्रयोग में लाना चाहिए ।

स्व–परख प्रश्न (Self - Check Questions)

1. पाठ्यपुस्तक विधि का प्रमुख लाभ क्या है?
2. प्रत्यक्ष विधि का अर्थ लिखिए ।
3. विश्लेषणात्मक विधि किस शिक्षण सूत्र पर आधारित है ।
4. हर बार्टीय पंच पदी के पाँच पद कौन–कौन से हैं ।
5. मूल्यांकन विधि के सोपानों क उल्लेख कीजिए ।

5.2 विषयवस्तु आधारित विधियों के उदाहरण

प्रत्येक विधि का वर्णन करते समय वीषयवस्तु विधि के उदाहरण दिए गए हैं । फिर भी संस्कृत के भाषा कौशलों का विवरण आप इकाई दो को भी पढ़े ।

5.3 संस्कृत विषय शिक्षण से संबन्धित कौशल

प्रभावशाली शिक्षण के लिए यह आवश्यक है, कि उसमें विशिष्ट शिक्षण कौशलों का विकास किया जाए । छात्राध्यापकों में शिक्षण कौशल का विकास करने की सरलतम विधि सूक्ष्म शिक्षण है । सूक्ष्म शिक्षण में सम्पूर्ण शिक्षण प्रक्रिया को अनेक कौशलों में विभक्त किया गया है। शिक्षाशास्त्रियों ने अलग– अलग ढंग से कौशलों का विभाजन किया है । स्थूल रूप से शिक्षण कौशलों का वर्गीकरण निम्नवत् किया जा सकता है–

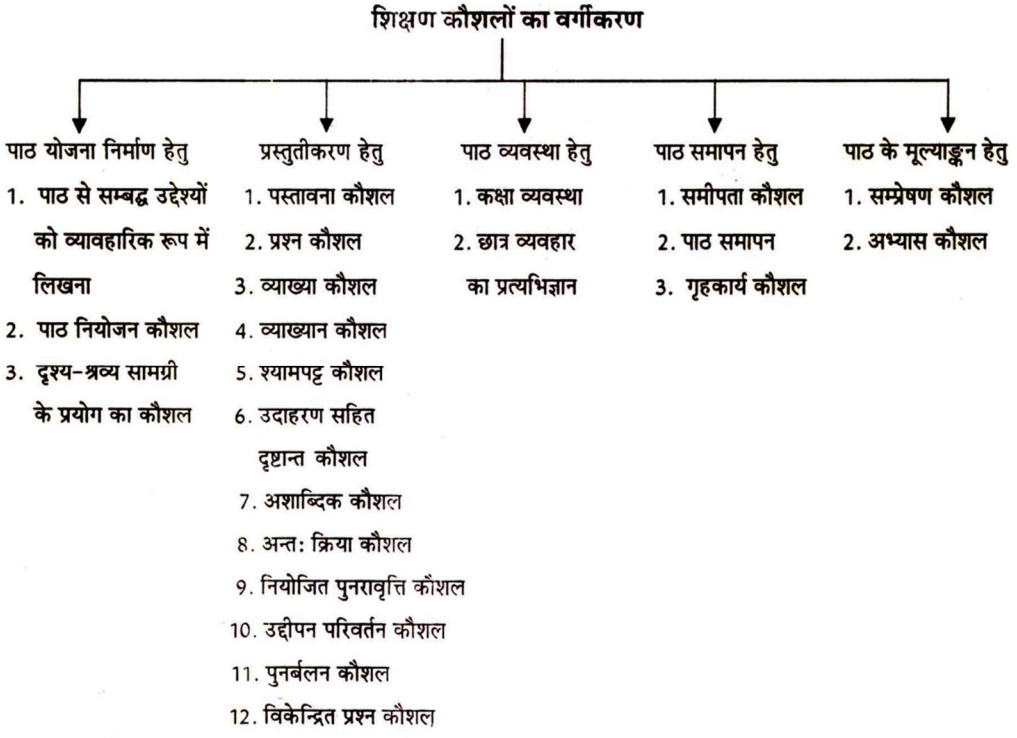

यहाँ संस्कृत विषय का शिक्षण करते समय प्रयुक्त किए जाने वाले कतिपय कौशलों का वर्णन किया जा रहा है–

5.4 प्रस्तावनात्मक कौशल

इस कौशल का प्रयोग शिक्षक द्वारा नवीन पाठ को प्रारम्भ करते समय किया जाता है। छात्रों को मानसिक रूप से नवीन ज्ञान प्राप्त करने के लिए तैयार किया जाता है तथा उनके पूर्वज्ञान पर नवीन ज्ञान पदान करने में सुविधा हो; जैसे– संस्कृत में गद्य पाठ 'प्रत्यक्ष भगवान् सूर्य : ' पढ़ाने हेतु निम्नलिखित प्रस्तावना प्रश्न पूछे जा सकते हैं –

शिक्षक : –कर्णस्य पिता क:?

छात्र: – सूर्य: कर्णस्य पिता ।

शिक्षक: – सूर्य: कस्यां दिशायामू उदेति?

छात्र: – सूर्य: पूर्वस्यां दिशायाम् उदेति ।

शिक्षक: –सूर्ये उदिते सति किं परिवर्तनं भवति?

छात्र : –सूर्ये उदिते सति मधकारो विनष्टो भवति ।

शिक्षक: – ब्रह्मा–विष्णु–महेश–सूर्यादिदेवेषु प्रत्यक्षदेव: क:?

छात्र : – – – – – – ' सूर्य : '

उपर्युक्त प्रस्तावना प्रश्नों के आधार पर अध्यापक उद्देश्य कथन करता हुआ पाठ का शिक्षण प्रारम्भ करता है । प्रस्तावना प्रश्नों, चित्रों, रेखाचित्रों, प्रतिकृतियों, उदाहरणों, श्लोकों, कथाओं आदि के द्वारा दी जा सकती है । शिक्षण अभ्यास में जाने से पूर्व छात्राध्यापकों को बार –बार अभ्यास करने का अवसर दिया जाता है । निरीक्षण विधि एवं मूल्यांकन विधि द्वारा उनमें परिष्कार किया जाता है ।

5.5 प्रश्नकौशल

प्रश्नों के माध्यम से शिक्षक विषयवस्तु को 'स्पष्ट करने का प्रयत्न करता है तथा शिक्षण के बीच में छात्रों की ग्राह्यता तथा अवबोध क्षमता का भी पता लगाता है । शिक्षण की सफलता बहुत कुछ प्रश्नों के पूछने की कुशलता पर निर्भर करती है । प्रश्न अनेक प्रकार के होते हैं; जैसे–

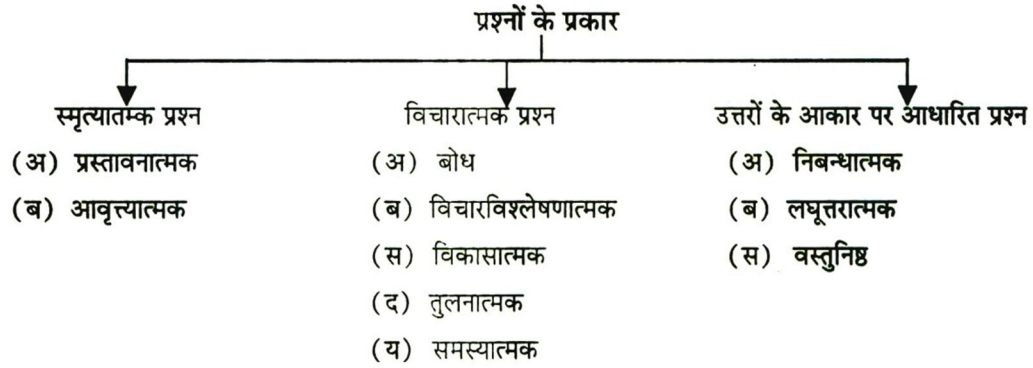

श्री अम्बिकादत्त व्यास द्वारा लिखित 'प्रत्यक्ष भगवान–सूर्य: ' नामक गद्यांश के विचारात्मक प्रश्न उदाहरणार्थ प्रस्तुत हैं । संस्कृत में गद्य शिक्षण करते समय निम्नवत् प्रश्न पूछे जा सकते हैं –

शिक्षक:पूर्वस्यां दिशाया कस्य प्रकाश: अस्ति?

छात्र : पूर्वस्यां दिशाया सूर्यस्य प्रकाश: अस्ति ।

शिक्षक :सूर्यस्य प्रकाश: कीदृश: अस्ति?

छात्र : सूर्यस्य प्रकाश: अरुण: । अस्ति

शिक्षक :आकाशमण्डलस्य मणि: क: विधते?

छात्र : आकाशमण्डलस्य मणि: सूर्य: विधते ।

शिक्षक :दिनकर: कस्य चक्रवर्त्ती अस्ति?

छात्र : दिनकर: खेचरचक्रस्य चक्रवर्त्ती अस्ति ।

शिक्षक : ब्रह्माण्डग्धाण्डस्य दीपकस्य नाम किम्?

छात्र :ब्रह्माण्डभाण्डस्य दीपकस्य नाम सूर्य : ।

शिक्षक :सूर्य: कस्य सूत्रधार: अस्ति?

छात्र : – सूर्य: सर्वव्यवहारस्य सूत्रधार: अस्ति ।

शिक्षक: – वत्सरं द्वादशभागेषु क: विभाजयति?

छात्र : – सूर्य: वत्सरं द्वादशभागेषु विभाजयति ।

शिक्षक : – युगभेदा: केन सम्पादित:?

छात्र : – सूर्येण युगभेदा: सम्पादिता: ।

शिक्षक: – श्री रामचन्द्रस्य कुलमूलं कोअस्ति?

छात्र : – सूर्य: श्री रामचन्द्रस्य कुलमूलमस्ति ।

प्रश्नकौशल की परीक्षा हेतु प्रश्न कौशल के तत्वों के आधार पर 'निरीक्षण सूची' तथा मूल्यांकन सूची में पर्यवेक्षक द्वारा टिप्पणी लिखी जाती है । इस मूल्यांकन के आधार पर छात्राध्यापक प्रश्न कौशल का अभ्यास बार–बार करता है ।

5.6 व्याख्यान कौशल

व्याख्यान शिक्षण की प्राचीनतम विधि है, किन्तु वर्तमान परिप्रेक्ष्य में शिक्षाशास्त्रियों द्वारा इसकी काफी आलोचना की जाती रही है तथापि शिक्षण में इसका प्रयोग प्रमुख रूप से विषयवस्तु की व्याख्या करने, विषय वस्तु को संक्षिप्त में प्रस्तुत करने, विषय वस्तु को स्पष्ट करने, किन्हीं दो विषयों का तुलनात्मक ज्ञान प्रदान करने तथा छात्रों की समस्याओं का समाधान करने के लिए किया जाता है; जैसे 'सर्वं विभाति' नामक पद्यांश को पढ़ाते समय विषय वस्तु स्पष्ट करने के लिए व्याख्यान किया जा सकता है– 'करवलयस्य शोभा मणिना भवति । सभाया: शोभा कवि विभूध्यां सह भवति। निशया शोभा शशिना भवति। शशी निशायां शोभते । जलेन कमलेन च सरोवररय शोभा प्रादुर्भवति ।' पर्यवेक्षक व्याख्यान कौशल के तत्वों से तैयार निरीक्षण सूची तथा मूल्यांकन सूची को भरता है तथा छात्राध्यापक को पर्यवेक्षण के आधार पर परिष्कार की सलाह देता है ।

इस कौशल का प्रयोग माध्यमिक स्तर पर उरधिक उपयुक्त नहीं है । उच्च स्तर पर इसका प्रयोग उपयुक्त है, तथापि अन्य स्तरों के लिए इसका प्रयोग अन्य विधियों के साथ किया जा सकता है ।

5.7 श्यामपट्ट लेखन कौशल

श्यामपट्ट शिक्षण का अभिन्न अंग है तथा शिक्षक का घनिष्ठ मित्र है । यह शिक्षण का सबसे सरल एवं सस्ता दृश्य साधन है । शिक्षक शिक्षण में इसका उपयोग प्रभावशाली ढंग से करे इसके लिए उसमें श्यामपट्ट लेखन कौशल के विकास की आवश्यकता होती है । प्रत्येक विषय को पढ़ाते समय श्यामपट्ट का महत्वपूर्ण स्थान होता है किन्तु भाषा शिक्षण करते समय इसका महत्त्व और बढ़ जाता है क्योंकि भाषा में वर्त्तनी एवं वाक्य संरचना का विशेष महत्व है, शिक्षक अपने शिक्षण में यदि सुव्यवस्थित तथा सुलेख के साथ श्यामपट्ट का उपयोग करता है तो शिक्षण अधिक आकर्षक तथा सुग्राह्य बन जाता है । संस्कृत शिक्षण में श्यामपट्ट कौशल की पाठ योजना हेतु देखें इकाई– 13 में 13.3 सूक्ष्म शिक्षणोपागम ।

5.8 प्रदर्शन कौशल

प्रदर्शन का अर्थ है– 'करके दिखाना' शिक्षक अनेक तथ्यों को पहले स्वयं करके छात्रों को दिखाता है । इससे छात्र किसी कार्य को सही रूप में करने की विधि सीखते हैं; जैसे संस्कृत शिक्षण में व्याकरण पढ़ाते समय इस कौशल का प्रयोग होता है । इसके उदाहरण हेतु इकाई– 13 के हिल्दा तबा महोदय के शिक्षण प्रतिमान पर आधारित पाठ योजना को देखें । इसे आगमन उपागम भी कहते हैं । पर्यवेक्षक निरीक्षण सूची तथा मूल्यांकन सूची के आधार पर अपनी टिप्पणी लिखता है तथा छात्राध्यापक को निर्देशित करता है ।

5.9 उदाहरण सहित दृष्टान्त

किसी भी पाठ में उदाहरण कब तथा कैसे प्रस्तुत किए जाएँ, यह एक विचारणीय बिन्दु है। इन्हें मुख्यत: दो रूपों में प्रस्तुत किया जाता है–

(अ) आगमन विधि – (उदाहरणों से नियम की ओर) – इस विधि में सर्वप्रथम विद्यार्थियों के समक्ष विषय स्पष्ट करने के लिए उदाहरणों को प्रस्तुत किया जाता है तथा विद्यार्थी स्वयं ही नियम को स्पष्ट कर बता देता है । इस प्रकार इस उपागम में मौलिक चिन्तन एवं मनन पर बल दिया जाता है । किसी भी भाषा के व्याकरण शिक्षण हेतु यह उपयोगी है।

(ब) निगमन विधि – (नियम से उदाहरणों की ओर) – इस विधि में सर्वप्रथम नियम विद्यार्थियों को समझा दिए जाते हैं तथा बाद में उस नियम को स्पष्ट करने हेतु उदाहरणों का प्रयोग किया जाता है । भाषा शिक्षण में उपसर्ग पत्यय, सन्धि, समास आदि पढ़ाने के लिए आगमन–निगमन विधि का प्रयोग किया जा सकता है ।

उदाहरण सहित दृष्टान्त कौशल के विभिन्न तत्वों का पर्यवेक्षण पर्यवेक्षक निरीक्षण सूची तथा मूल्यांकन सूची के आधार पर करता है तथा छात्राध्यापक को कौशल के विकास में सहायता प्रदान करता है ।

5.10 पुनर्बलन कौशल

शिक्षक को अपने शिक्षण को प्रभावशाली बनाने, छात्रों में पाठ के प्रति रुचि उत्पन्न करने तथा अधिगम हेतु अभिप्रेरित करने के लिए पुनर्बलन कौशल की आवश्यकता होती है । पुनर्बलन कौशल मुख्यत: दो प्रकार के होते हैं–
सकारात्मक पुनर्बलन एवं नकारात्मक पुनर्बलन ।

किसी भी विषय को पढ़ाते समय पुनर्बलन कौशल का प्रयोग अपेक्षित है, संस्कृत शिक्षण में रचना शिक्षण करते समय विशेषत: जब प्रश्नों के द्वारा निबन्ध रचना करवाई जाए अथवा जिस भी विद्या में प्रश्न पूछे जाएँ वहाँ इसकी आवश्यकता होती है ।

5.11 व्याख्या कौशल

पाठ में आए कठिन भावों, कठिन शब्दों, घटनाओं, क्रियाओं, परिणामों आदि को जिस कौशल से स्पष्ट किया जाता है, उसे व्याख्या कौशल कहते हैं । इससे छात्रों की जिज्ञासाओं का समाधान होता है । संस्कृत शिक्षण में गद्य शिक्षण करते समय काठिन्य निवारण हेतु विशेषत:

इस प्रविधि की आवश्यकता होती है । व्याख्या कौशल में शिक्षक द्वारा अनेक प्रविधियों का प्रयोग किया जाता है । इन्हें प्रमुखत: चार भागों में बाँटा जा सकता है–

1. उद्बोधन 2. प्रवचन 3. स्पष्टीकरण 4. शब्द पहचान

संस्कृत में वसन्तऋतु: नामक पद्य पाठ पढ़ाते समय व्याख्या कौशल के प्रयोग के उदाहरण स्वरूप कुछ शब्द प्रस्तुत किए जा रहे हैं–

	शब्द	अर्थ:	प्रविधि:	प्रयोग
(अ)	आविर्भवति	प्रादुर्भवति	वाक्यप्रयोगेण	बीजात् वृक्ष : आविर्भवति ।
(ब)	सौरभ सुभग:	सुगंधितयुक्त:	वस्तुप्रदर्शनेन	एकं कृत्रिम एकं च प्राकृतिकं पुष्पं प्रदर्श्य । इदं पुष्पं सौरभसुभगं, इदं निर्गन्धम् ।

इस प्रकार पाठ्यांश में उपर्युक्त शब्दों के अतिरिक्त छात्रों को यदि कोई कठिन शब्द या भाव जटिल लगता है तो अध्यापिका प्रश्न व कथन के माध्यम से व्याख्या कर छात्रों की शंकाओं का समाधान करेगी । व्याख्या कौशल के विभिन्न तत्त्वों के आधार पर पर्यवेक्षक द्वारा निरीक्षण एवं मूल्यांकन किया जायेगा तथा छात्राध्यापक में व्याख्या कौशल का विकास किया जायेगा ।

5.12 उद्दीपन परिवर्तन कौशल

शिक्षण की सफलता हेतु शिक्षक कक्षा में छात्रों का ध्यान पाठ्यवस्तु पर केन्द्रित करने के लिए कई प्रकार के उद्दीपन प्रस्तुत करके विद्यार्थियों को अभिप्रेरित करता है । संस्कृत शिक्षण के लिए भी इसका महत्त्व है; यथा–श्यामपट्ट पर लिखना, चित्र बनाना, हाथ अथवा संकेतक से इंगित करना, विभिन्न मुखमुद्राएँ बनाना, छात्रों के समीप जाना, वाणी में उतार–चढ़ाव लाना, नवीन उदाहरण प्रस्तुत करना, छात्रों से प्रश्न पूछना, विराम चिह्नों का प्रयोग करना, दृश्य श्रव्य सामग्री में परिवर्तन करना आदि । उपर्युक्त समस्त बिन्दु शिक्षण में उद्दीपनों का कार्य करते हैं, इन उद्दीपनों को कुशलतापूर्वक समयानुसार परिवर्तित कर प्रयोग करने के कौशल को ही 'उद्दीपन परिवर्तन कौशल' कहते हैं ।

5.13 अनुकरणीय शिक्षण कौशल

अनुकरण द्वारा सीखना प्राणी जगत का स्वभाव है । शिक्षण व्यवसाय में पूर्व अभ्यास अथवा अनुकरणीय शिक्षण का अपना विशिष्ट महत्त्व है । प्राय: शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालयों में छात्राध्यापकों के समक्ष शिक्षण अभ्यास में जाने से पूर्व प्राध्यापक द्वारा पाठ प्रदर्शन किया जाता है । छात्राध्यापक पाठ प्रदर्शन का ही अनुकरण करने का प्रयास करते हैं और अपनी मौलिक क्षमताओं का प्रयोग नहीं कर पाते हैं । उन्हें कक्षा के सामाजिक व्यवहारों का बोध नहीं होता है इसलिए उन्हें कक्षा शिक्षण में अधिक कठिनाइयों होती है और अपेक्षित व्यवहार का विकास नहीं होता । इसलिए यह आवश्यक है कि छात्राध्यापकों को विद्यालयों में जाने से पूर्व अपनी कक्षा में ही पूर्व अभ्यास करवाया जाए । यह प्रक्रिया संस्कृत शिक्षण के सन्दर्भ में भी महत्वपूर्ण है ।

संस्कृत शिक्षक को विभिन्न कौशलों का चयन करके उनका समन्वय करते हुए अपने शिक्षण को रोचक बनाना चाहिए । जंगीरा एवं सिंह (1982) ने कौशल के एकीकरण के विषय में कहा है–

"एकीकरण को एक ऐसी प्रक्रिया के रूप मे पारिभाषित किया जा सकता हे, जिसमें छात्राध्यापक परिस्थितियों के अनुसार विशिष्ट शिक्षण की योग्यता अर्जित करता है तथा शिक्षण कौशल का चयन एवं संगठन वांछित क्रम में इस प्रकार करता है, ताकि विशिष्ट निर्देशित उद्देश्यों की प्राप्ति की जा सके एवं उनका विशेष परिस्थितियों में प्रभावशाली ढंग से प्रवाह के साथ उपयोग किया जा सके ।

5.14 कतिपय सुझाव

(1) आधुनिक हाईटेक युग में संस्कृत शिक्षण करते समय प्राचीन तथा नवीन विधियों का समन्वय किया जाना चाहिए।

(2) नवीनतम उपागमों का प्रयोग करते हुए संस्कृत की विभिन्न विधाओं को आकर्षक बनाना चाहिए ।

(3) छात्राध्यापकों को विभिन्न कौशलों से संबन्धित पाठ योजनाये बनाने का अभ्यास करना चाहिए ।

(4) पाठ योजना के निर्माण के बाद कौशलाधारित शिक्षण करना चाहिए ।

(5) विधा तथा पाठ की प्रकृति के अनुसार कौशल/कौशलों का चयन किया जाना चाहिए ।

5.15 सारांश (Summary)

संस्कृत शिक्षण की विधियों को तीन वर्गों में विभक्त किया जा सकता है : –

1. प्राचीन विधियाँ – पाठशाला विधि–व्यक्तिगत एवं मौखिक शिक्षण विधि, पारायण विधि, वाद–विवाद विधि, प्रश्नोत्तर विधि, सूत्र विधि, कक्षा नायक विधि, भाका विधि, व्याकरण विधि आदि ।
2. नवीन विधियाँ – पाठ्यपुस्तक विधि, विश्लेषण विधि, व्याख्या विधि, व्याकरण विधि, हरबार्ट विधि एवं मूल्यांकन विधि ।
3. नवीनतम विधियाँ – इकई 13 में उल्लिखित विधियाँ ।

5.16 स्व–परख प्रश्नों के उत्तर

नोट :इस हेतु संबंधित विषय सामग्री का अध्ययन कीजिए ।

5.17 मूल्यांकन प्रश्न (Unit End Questions)

(1) प्राचीन काल में संस्कृत की कौन–कौन सी विधियाँ प्रयुक्त की जाती थी? वर्तमान समय में उनकी उपयोगिता सिद्ध कीजिए ।

(2) आधुनिक काल में संस्कृत शिक्षण को प्रभावशाली बनाने के लिए आप किन–किन विधियों का प्रयोग करेंगे?

(3) संस्कृत शिक्षण में नवीनतम उपागम से आप क्या समझते हैं? किसी एक उपागम का उदाहरण सहित वर्णन कीजिए ।

(4) संस्कृत शिक्षण में कौन–कौन से कौशल प्रयोग में लाए जा सकते हैं? एक तालिका बनाइए ।

(5) किन्हीं दो कौशलों पर आधारित पाठ योजनाएँ बनाए ।

(6) उद्दीपन परिवर्तन कौशल किसे कहते हैं?

(7) सूक्ष्म शिक्षण द्वारा उत्पन्न किये जाने वाले विभिन्न कौशलों के विकास हेतु ली जाने वाली सावधानियों का विवेचन कीजिए ।

(8) अनुकरणीय शिक्षण कौशल किसे कहते हैं? शिक्षण में इसफा प्रयोग करते समय क्या–क्या सावधानियाँ रखनी चाहिए?

5.18 सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1. आर. एन. सफाया	– 'संस्कृत शिक्षण' हरियाणा
2. मित्तल सन्तोष	– 'संस्कृत शिक्षण' आर. लाल बुक डिपो, मेरठ
3. मित्तल सन्तोष	– "संस्कृत शिक्षणम्' नव चेतना पब्लिकेशन्स, 7398, मालवीय नगर, जयपुर
4. Apte V.S.	– The student guide to Sanskrit Composition
5. Bokil V.P.& Parasnis N.k.	– A new Approach to Sanskrit
6. Safaya R.N. Shaida, B.D	– Principles & Techniques of Education
7. द्विवेदी कपिल देव	– रचनानुवाद कौमुदी
8. हंस चक्रधर	– अनुवाद चन्द्रिका
9. माथुर, एस.एस.	– शिक्षण कला, शिक्षण तकनीक एवं नवीन पद्धतियाँ
10. मित्तल सन्तोष	– 'शैक्षिक तकनीकी एवं कक्षा कक्ष प्रबन्ध' चतुर्थ संस्करण, राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी जयपुर, 2006
11. कुलश्रेष्ठ एस. पी	– 'शैक्षिक तकनीकी के मूलाधार' विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा 2006 पञ्चम संस्करण

इकाई – 6 (Unit –(6

संचार माध्यमों का संस्कृत शिक्षण में अनुप्रयोग एवं एकीकरण

(Media and Media Integration in Sanskrit Teaching)

इकाई की रूपरेखा

6.0 उद्देश्य एवं लक्ष्य

6.1 संचार माध्यमों का महत्व

6.2 संस्कृत शिक्षण में प्रयोग किए जाने वाले संचार माध्यम

6.3 आकाशवाणी (Radio)

6.4 दूरदर्शन (Television)

6.5 संगणक (Computer)

इलेक्ट्रानिक मेल

i. इण्टरनेट प्रणाली

ii. अर्नेटसेवा

iii. यूसनेट सेवा

iv. वर्ल्ड वाइड वेब

v. दूरस्थ शिक्षण एवं दूरस्थ सम्मेलन

vi. बहुमाध्यम (मल्टी मीडिया) और सी.डी.रोम

vii. कम्प्यूटरीकृत पुस्तकें

6.6 समाचार पत्र (बोलते समाचार पत्रं)

6.7 पत्रिकाएँ

6.8 संचार माध्यमों का एकीकरण

6.9 कतिपय सुझाव

6.10 सारांश

6.11 स्व–परख प्रश्नों के उत्तर

6.12 मूल्यांकन प्रश्न

6.13 सन्दर्भ ग्रंथ सूची

6.0 इकाई के उद्देश्य (Objectives of the Unit)

- इस इकाई की समाप्ति पर आप संचार माध्यमों की विस्तृत जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- आप संस्कृत शिक्षण में संचार माध्यमों के प्रयोग को सीख सकेंगे ।
- आप संचार माध्यमों के उपयोग से संस्कृत पढ़ाने में रुचि उत्पन्न लेंगे ।

– आप संस्कृत शिक्षण में माध्यमों के एकीकरण को सीख सकेंगे ।

6.1 संचार माध्यमों का महत्व (Importance of Media)

प्राचीनकाल में संस्कृत की शिक्षा प्राकृतिक सुरम्य वातावरण में गुरुकुलों एवं आश्रमों में दी जाती थी । गुरु के साथ गुरुकुल अथवा आश्रम में रहकर शिष्य गुरु की –सेवा–सुरुषा करता हुआ नियमित दिनचर्या व्यतीत करता था । छात्रों को उन्हीं बातों की शिक्षा दी जाती थी जिनका समाज से घनिष्ठ सम्बन्ध होता था । शनै : शनै : लॉर्ड मैकाले की शिक्षा पद्धति का प्रभाव शिक्षा जगत में छा गया । इसके साथ ही हमारे देश में ' ज्ञान विस्फोट' के साथ ' जनसंख्या विस्फोट' भी हुआ । इस प्रकार निरन्तर बढ़ती हुई जनसंख्या को एक साथ अधिकाधिक ज्ञान प्रदान करना एक ज्वलन्त समस्या बनती गई । शिक्षाशास्त्रियों को इस समस्या के समाधान का महत्वपूर्ण साधन दिखाई दिया संचार माध्यम ।

आज अधिकाधिक सूचनाएँ किसी भी राष्ट्र के विकास का मेरुदण्ड बन गई हैं । कतिपय उपग्रह अन्य ग्रहों तथा उपग्रहों की भाति केवल आकाश में विचरण करने वाले ही नहीं होते अपितु सूचनाओं के आदान प्रदान करने में भी सहायक होते हैं ।

भारतवर्ष में सर्वप्रथम संचार उपग्रह ' एपल' द्वारा दूरसंचार तथा डाटा संचार के अनेक प्रयोग किए गए । तत्पश्चात् बहूद्देशीय उपग्रह इन्सेट के आहगर पर मौसम की विस्तृत जानकारी सम्बन्धित तथा देशव्यापी दूरदर्शन एवं दूरसंचार के अन्तरिक्ष कार्यक्रम तैयार किए गए, जिससे दूर दराज तक सम्पर्क कर उन्हें विकास की गति में सहभागी बनाया जा सके ।

सन् 1983 इन्सैट 1–बी उपग्रह के सफल प्रक्षेपण के साथ देश में स्थापित भारतीय राष्ट्रीय उपग्रह 'इन्सैट' प्रणालियाँ आज कामयाबियों के उस शिखर को छू रहीं हैं, जिसके लिए किसी भी देश को गर्व हो सकता है । वस्तुत: इन्सैट प्रणालियों के उपग्रहों के कारण ही देश में सही अर्थ में संचार क्रान्ति सम्भव हुई है । सन् 2002 तक इन्सैट 3–ई उपग्रह प्रक्षेपित करने का क्रम जारी रहा । इसके बाद 20 सितम्बर 2004 को शिक्षा के क्षेत्र में अपने पहले उपग्रह 'एज्यूसेट' के प्रक्षेपण के साथ ही भारत ने अन्तरिक्ष तकनीक में एक नया आयाम स्थापित किया। 1950 किलोग्राम का यह उपग्रह सात साल तक सक्रिय रहेगा तथा देशभर के ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्रों के विद्यालय, महाविद्यालय तथा उच्च शिक्षण संस्थानों से जुड़कर उन्हें उपग्रह आधारित एकीकृत शिक्षा प्रदान करेगा ।

इक्कीसवीं सदी में हाइटेक कक्षा–कक्ष, कम्प्यूटरीकृत पुस्तकें, पेपरलैस सोसायटी, कम्प्यूटर फ्लॉपी एवं सी डी. के रूप में डिजीटल पुस्तकालयों की संकल्पना अपना साकार रूप लेती जा रही है । अभी तक हमारी सरकारें और उनके कार्यकारी तन्त्र जिन कार्यो को नहीं कर पाए उसे सूचना प्रौद्योगिकी पूर्ण करने में लगी है । शिक्षण संस्थाऔ में दिन प्रतिदिन बढ़ती हुई विद्यार्थियों की संख्या, उन्हें योग्य बना देने की कोशिश में लगे प्राध्यापक, समाज व राजनीति में सामञ्जस्य बैठाने वाले प्रधानाध्यापक, प्राचार्य व उपकुलपति सभी जिस व्यवस्था से असंतुष्ट हैं उसमें परिवर्तन लाने में भी सहायक हैं– 'संचार माध्यम' ।

6.2 संस्कृत शिक्षण में प्रयोग किए जाने वाले संचार माध्यम (Media to be used in the teaching of Sanskrit)

इक्कीसवीं सदी में प्राय: कक्षा–कक्ष शिक्षण संस्थाओं के परिसर से उठकर प्रत्येक बालक के अपने घर में आ गया है । घर के किसी एक कमरे में एक पर्सनल कम्प्यूटर, एक तेज गति वाला डाटालिक उपकरण और एक ठीक–ठाक सा डिजिटल टेलिविजन बस ये ही वे साधन हैं जो आज बच्चों को न केवल सुशिक्षित बना रहे हैं बल्कि किसी उपयुक्त व्यवसाय अथवा कार्य करने योग्य भी बना रहे हैं ।

आज विद्यार्थी को केवल कुछ बटनों को दबाने व कुछ चाबियाँ घुमाने मात्र से जापान, जर्मनी, इंग्लैण्ड, अमरीका, कनाडा, आस्ट्रेलिया या फिर अपने ही देश के किसी विश्वविद्यालय के नम्बर मिलाकर फोन कर निवेदन करना होता है कि उसे अमुक विषय के अमुक स्तर के पाठ्यक्रम में प्रवेश लेना है । उधर से उसको एक प्रवेश परीक्षा देने का आमन्त्रण मिलता है जिसे उत्तीर्ण कर वह विधिवत् उनका स्वयंपाठी विद्यार्थी बन जाता है । इसके बाद ई मेल से या वीडियो कैसेट के जरिए उसके पास शिक्षण सामग्री पहुँचने लगती है और उसके अध्ययन का परीक्षण प्रारम्भ हो जाता है । पाठ्यक्रम समाप्त होने पर उसे अपने ही कक्षा कक्ष में परीक्षा देनी होती है तथा पास होने पर घर बैठे ही डिग्री भी मिल जाती है । इस तरह की शिक्षण प्रक्रिया का प्रयोग संचार माध्यमों के द्वारा संस्कृत शिक्षण हेतु भी किया जा सकता है, जिससे आधुनिक तकनीकी युग में संस्कृत शिक्षक विषय के ज्ञान के साथ–साथ आधुनिकतम उपकरणों के प्रयोग का ज्ञाता भी बन सके । दूसरे शब्दों में जिसे इक्कसवीं सदी का एक पूर्ण 'संस्कृत शिक्षक' कहा जा सके और संस्कृत शिक्षक भी विज्ञान, गणित आदि विषयों के अध्यापकों की भांति स्वयं को गौरवान्वित अनुभव कर सके । तब ही इस बात की सार्थकता सिद्ध होगी, कि संस्कृत एक वैज्ञानिक भाषा है, जो संगणक के लिए सर्वाधिक उपयुक्त है ।

निम्नलिखित संचार माध्यमों को संस्कृत शिक्षण हेतु प्रयुक्त किया जा सकता है -

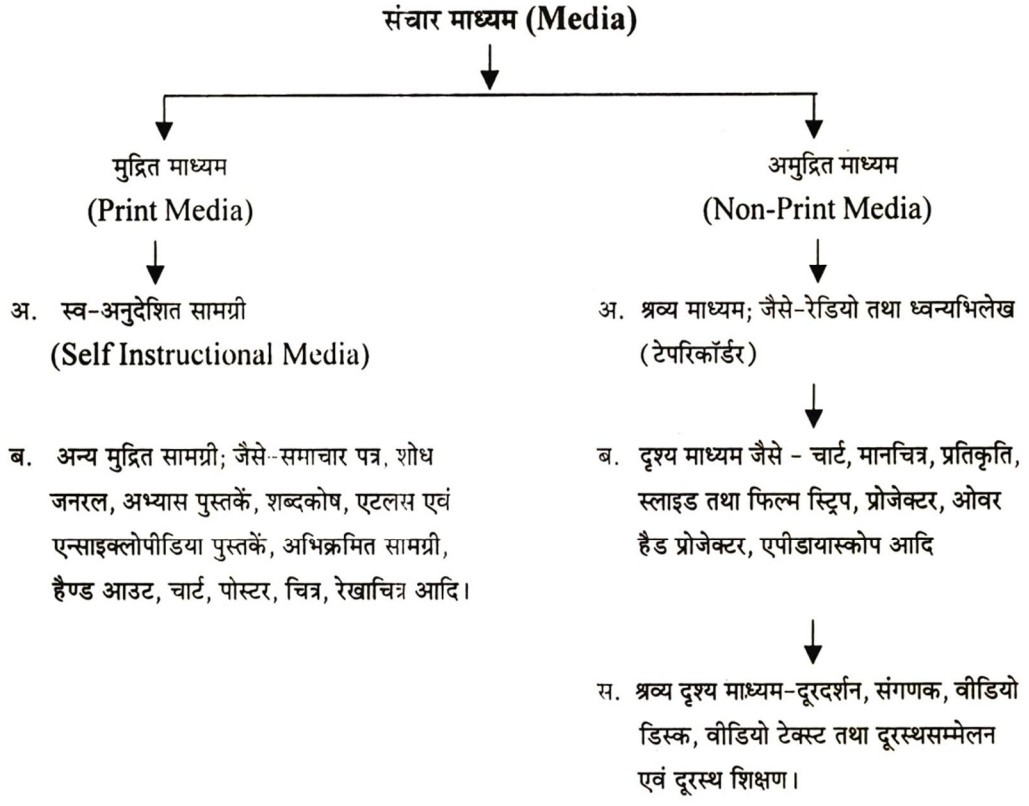

उपर्युक्त वर्गीकरण में दिए गए संचार माध्यमों के कुछ बिन्दुओ का वर्णन यहाँ दिया जा रहा है । अवशिष्ट बिन्दुओं का वर्णन इसी पुस्तिका में इकाई दस में दिया गया है ।

6.3 आकाशवाणी (Radio)

राष्ट्रीय पाठक सर्वेक्षण 2002 के अनुसार सभी संचार माध्यमों में से रेडियो की पहुँच का क्षेत्र सबसे अधिक है । ऑल इण्डिया रेडियो प्रत्येक वर्ष 78 स्टेशनों से 7000 औपचारिक विद्यालयी प्रसारण करता है । आकाशवाणी के माध्यम से शिक्षा का सम्प्रत्यय नया नहीं है । पाश्चात्य देशो की प्राय: सभी शिक्षा – संस्थाओं में शिक्षा के सभी स्तरों पर रेडियो का नियमित रूप से उपयोग किया जाता है, परन्तु भारत में ऐसे विद्यालयों की संख्या बहुत कम है जिनमें रेडियो का उपयोग कक्षाओं की संख्या बहुत कम है जबकि आकाशवाणी के प्राय: सभी केन्द्रों से विद्यालयों के लिए नियमित कार्यक्रम प्रसारित किए जाते हैं ।

तृतीय पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत देश में दृश्य – श्रव्य शिक्षा व विकास की योजनाओं में यह लक्ष्य निर्धारित किया गया था कि देश के सभी उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों तथा इण्टरमीडिएट कॉलेजों में रेडियो सेट लगाए जाएँ । शिक्षा आयोग ने अपनी सिफारिशों में स्पष्ट रूप से लिखा है, कि रेडियो पाठों के उपयोग के लिए शिक्षा विभागों को आकाशवाणी के साथ मिलकर कार्य करना चाहिए । केन्द्रीय शिक्षा मन्त्रलय ने शिक्षा में रेडियो का उपयोग पर एक अध्ययन दल की स्थापना की थी जिसने अपने प्रतिवेदन में लिखा कि शिक्षा के रेडियो प्रसारण के उपयोग के लिए क्षेत्रीय महाविद्यालयों के लिए मार्गदर्शन एन. सी. ई. आर. टी.

तैयार करेगी। रेडियो प्रसारणों के उचित प्रयोग और योजनाओं में राज्य शिक्षा विभागों को सम्मिलित करने के लिए संगठित प्रयास किया जायेंगे ।

शैक्षिक रेडियो कार्यक्रमों को पाँच प्रकार से प्रसारित किया गया : –

1. विद्यालय प्रसारण (School Broadcasts)
2. प्रौढ़ शिक्षा एवं सामुदायिक विकास कार्यक्रम (Adult Educations and Community Development)
3. कृषि एवं घरेलू प्रसारण (Farm and Home Broad Casts)
4. विश्वविद्यालयी प्रसारण (University Broadcasts)
5. भाषा अधिगम की परियोजना (Language Learning Project)

भाषा अधिगम की परियोजना (Language Learning Project)

ऑल इण्डिया रेडिया (1978 – 80) ने भाषा शिक्षण के लिए एक नए प्रकार का प्रयोग प्रारम्भ किया और उसको अपने केन्द्रों पर प्रसारित किया । राजस्थान सरकार के शिक्षा विभाग द्वारा इस प्रकार के प्रयोग को किया गया । इस प्रकार का प्रयोग हिन्दी भाषा के शिक्षण के लिए पहला प्रयोग था जिसके द्वारा विद्यालयी बालकों को' भाषा का शिक्षण दिया गाय । इस ही तरह के प्रयोग संस्कृत भाषा अधिगम हेतु भी किए जा रहे हैं । भाषा विशेषज्ञ प्रत्येक विद्यालय तक पहुँच सकें, यह एक कठिन कार्य है अत: आकाशवाणी पर प्रसारित उनके भाषण, वार्ता, साहित्य चर्चा, नाटक आदि को सुनवाकर शिक्षक छात्रों को लाभान्वित करवा सकते हैं, आकाशवाणी पर प्रात काल संस्कृत में समाचार प्रसारित किए जाते हैं । इसी प्रकार आकाशवाणी के जयपुर–बीकानेर केन्द्र से 'संस्कृत सौरभ' कार्यक्रम भी प्रसारित किया जाता है जिसमें संस्कृत साहित्य से सम्बन्धित विभिन्न वार्ताएँ प्रसारित की जाती हैं । उन्हें सुनने के लिए छात्रों को प्रेरित किया जाए,उसकी चर्चा कक्षा में भी की जाए । जिन कार्यक्रमों का प्रसारण समय विद्यालय समय के मध्य हो उन्हें शिक्षक अपनी उपस्थिति में सुनवाकर उन पर चर्चा करें तब छात्र और अधिक लाभ उठा सकते हैं । इस संदर्भ में राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसन्धान और प्रशिक्षण परिषद एन.सी. ई. आर.टी द्वारा शिक्षकों की निम्नलिखित भूमिका बताई गई है–

1. प्रारम्भिक तैयारी

i. शैक्षिक रेडियो प्रसारण की समय सारिणी के अनुसार विद्यालय की समय सारिणी को व्यवस्थित करना ताकि वांछित कार्यक्रम कक्षा में सुनाए जा सकें ।

ii. कक्षा को ठीक से व्यवस्थित करें, उपकरण को उचित स्थान पर रखें । ताकि कक्षा के सभी छात्र आसानी से कार्यक्रम सुन सकें ।

iii. आर. सी. सी. पी. से श्रव्य कार्यक्रम सुनने की योजना बनाइ जाए तथा कैसेट को पहले जाँच लिया जाए कि वह किस विषय से संबन्धित है तथा ठीक से काम कर रहा है अथवा नहीं ।

2. प्रसारण सुनने अथवा कैसेट बजाने से पूर्व

कार्यक्रम के बारे में बच्चों से साधारण वार्तालाप आरम्भ करना चाहिए । उनके सामने कुछ प्रश्न उठाए जाए ताकि बच्चे मानसिक रूप से कार्यक्रम सुनने के लिए तैयार हो जाएँ और सुनने में रुचि लें ।

3. कार्यक्रम सुनना

i. शिक्षक को कार्यक्रम के समय कक्षा में उपस्थित रहकर बच्चों के साथ सुनना चाहिए ताकि बच्चों में अनुशासन बना रहेगा । वे कार्यक्रम को ठीक प्रकार से सुन सकेंगे ।

ii. शिक्षक को कार्यक्रम के मूल बिन्दुओ और रोचक प्रसंगों को लिखकर लेना चाहिए ताकि कार्यक्रम प्रसारण के बाद कक्षा में भलीभांति चर्चा की जा सके ।

4. प्रसारण अथवा श्रव्य कैसेट सुनने के उपरान्त

i. बच्चों के सम्मुख आरंम्भिक प्रश्न रखें और बातचीत प्रारम्भ कर दें । इससे क्रार्यक्रम की संक्षिप्त आवृत्ति होगी और बच्चा को विषय अच्छी तरह याद हो जाएगा; जैसे – इस कार्यक्रम का शीर्षक क्या था? किसके बारे में था? इसके आरम्भ में क्या हुआ? कार्यक्रम के अन्त में क्या हुआ? कार्यक्रम में आपको सबसे अच्छा क्या लगा? आदि ।

ii. कार्यक्रम को बच्चों ने कितना समझा और इससे क्या सीखा, इसका मूल्यांकन करना चाहिए ।

5. पुनर्निवेशन (Feed Back)

श्रव्य एवं रेडियो कार्यक्रमों के बारे में फीड बैक देना शिक्षक का उत्तरदायित्व है । शिक्षक की निर्बाध और समीक्षा, सुझाव और आलोचना कार्यक्रम बनाने वालों को उनकी त्रुटियों से अवगत कराती है । भविष्य में तैयार होने वाले कार्यक्रमों को सुधारने में सहायता प्रदान कराती है।

आकाशवाणी श्रोताओं को अपनी ओर एकाग्र कर लेती है, उनकी कल्पना शक्ति का विकास करती है । इसके द्वारा नाटक इस प्रकार प्रसारित किये जाते हैं मानो हम उन्हें देख भी रहे हैं । इस प्रकार आकाशवाणी पर प्रसारित नाटक भी बहुत समय तक स्वत: ही स्मरण रहता है । नाटक सुनने से बोलने के ढंग का अभ्यास भी हो जाता है । इससे क्रियात्मक बुद्धि सजग होती है । यह व्यावहारिक भाषा सिखाने में भी सहायक होता है ।

स्व–परख प्रश्न (Self Check Questions)

1. संचार माध्यम का क्या अर्थ है?
2. संचार माध्यम के महत्व के संबंध में दो तर्क दीजिए ।
3. संस्कृत शिक्षण प्रयोग में किये जाने वाले संचार माध्यमों की सूची बनाइए ।
4. मुद्रितमाध्य के अन्तर्गत कौन–कौन से साधन आते हैं ।
5. आकाशवणी की भाषा अधिगम प्रायोजना क्या है?

6.4 दूरदर्शन (Television)

दूरदर्शन आज शिक्षा प्रदान करने का महत्वपूर्ण साधन बन गया है । सर्वप्रथम अमरीका के हार्वर्ड विश्वविद्यालय के हेराल्ड हण्ट नामक व्यक्ति ने इसका प्रयोग शिक्षा प्रदान करने के

लिए किया तथा 1936 में बी. बी. सी. लन्दन ने इसे जनता के लिए उपलब्ध करवाया । फिलिप्स इण्डिया लिमिटेड के रजत जयन्ती समारोह के अवसर पर सन् 1955 में सबसे पहले बन्द परिपथ टेलीविजन का प्रदर्शन कोलकत्ता, मुम्बई, चेन्नई और दिल्ली में किया गया था । नियमित रूप से टेलीविजन का आरम्भ भारत में 15 सितम्बर 1959 से हुआ, जब राष्ट्रपति ने आकाशवाणी द्वारा दिल्ली में स्थापित प्रथम प्रायोगिक टेलीविजन केन्द्र का उद्घाटन किया । भारत में दूरदर्शन के विकास के चरण निम्नलिखित हैं–

प्रथम चरण – भारत में विद्यालयी दूरदर्शन का प्रारम्भ आकाशवाणी ने अक्टूबर सन् 1961 में फोर्ड फाउण्डेशन तथा दिल्ली के शिक्षा निदेशालय के सहयोग से किया । कक्षा की पढ़ाई तथा टेलीविजन पाठों के मध्य उपयुक्त समन्वय स्थापित करने के लिए आकाशवाणी के द्वारा पहले अध्यापकों तथा प्रधानाचार्यो के लिए पाठ्यचर्या की योजना हेतु कार्यशालाओं का आयोजन किया गया ।

द्वितीय चरण – उपग्रह दूरदर्शन का प्रारम्भ सन् 1982 में हुआ । इस व्यवस्था में दूरदर्शन कार्यक्रम के सिग्नलों को भूकेन्द्र से एक संचार उपग्रह (Communications Sattelite) पर ट्रांसमिट या अपलिंक किया जाता है । इन सिग्नलों को 8 – 10 फीट व्यास के विशाल डिश एन्टीना की सहायता से ग्रहण कर लिया जाता है और सैटेलाइट रिसीवर के माध्यम से टी. वी. तक पहुँचा दिया जाता है ।

तृतीय चरण – सन् 1990 में 'केबल ऑपरेटर' नामक वृत्ति के जन्म से तीसरे चरण का प्रारम्भ हुआ । इसमें दूरदर्शन संकेतों को घर में लगे टी वी. सेट तक छत पर लगे एण्टिना के स्थान पर एक केबल (तार) के द्वारा पहुँचाया जाता है । इसमें केबल ऑपरेटर 4 मीटर व्यास का एकडिश एण्टिना किसी छत पर लगाकर उसके माध्यम से कार्यक्रमों को प्रसारित करते हैं ।

चतुर्थ चरण – 'डाइरेक्ट टू होम' (डी. टी. एच.) अर्थात् 'सीधे घर के अन्दर' टी. वी. उत्पादन टी. वी. कार्यक्रम प्रसारण प्रौद्योगिकी के विकास का चौथा चरण है । इनमें 50 से 70 सेंटीमीटर व्यास के डिश एन्टिना को अपने घर के दक्षिण की ओर खिड़की पर फिट करके उपलब्ध चैनलों में से अपने मनपसन्द चैनल का चयन किया जा सकता है । इसमें डिजिटल संकुलन नामक आधुनिक प्रौद्योगिकी का प्रयोग किया गया है । इन्टर ऐक्टिव बनाकर दूरस्थ सम्मेलन (Tele Conferencing) के काम में तथा प्रशिक्षण आदि के कार्य में भी इसका प्रयोग किया जा सकता है ।

भारतवर्ष मे शिक्षा दूरदर्शन की निम्नलिखित प्रायोजनाएँ प्रारम्भ की गई–

1. **माध्यमिक विद्यालय की दूरदर्शन प्रायोजना** (Secondary School Television Project)

24 अक्ट्रबर 1961 को माध्यमिक विध्यालय दूरदर्शन प्रायोजना का श्री गणेश प्रत्येक सप्ताह में तीन पाठ्यक्रमों (भौतिकी, रसायन एवं अँग्रेजी) के हिन्दी एवं अग्रेजी के द्वारा कक्षा ग्यारह के लिए किया गया । ये कार्यक्रम पाठ्यक्रमों पर आधारित थे एवं विद्यालय के समय में विद्यालयी क्रियाओं एवं कार्यक्रमों के रूप में प्रदान किए गए ।

2. **दिल्ली कृषि दूरदर्शन प्रायोजना** (Delhi Agriculture Television Project)

26 जनवरी 1960 को कृषि सूचनाओं के सम्प्रेषण के लिए इसका आरम्भ किया गया।

3. **सेटेलाईट अनुदेशनात्मक दूरदर्शन प्रयोग** (Satellite Instructional Television Experiment(SITE)

इसका आरम्भ 1 अगस्त 1975 को किया गया । इसके द्वारा दो प्रकार के कार्यक्रमों का प्रसारण किया जाता है–

(i) कृषि के विषयों में शिक्षा कार्यक्रमों के द्वारा स्वास्थ्य, परिवार नियोजन और सामाजिक शिक्षा के विकास को समुदाय में प्रेषित करने के लिए तथा

(ii) ग्रामीण प्राथमिक विध्यालय के बच्चों के लिए विद्यालयी पाठ्यक्रमों के द्वारा 22/1 मिनट के समय का प्रत्येक विषय के लिए (हिन्दी, कन्नड़, उड़िया, तेलुगु) प्रसारण प्रत्येक विद्यालय के लिए ।

4. **पोस्ट साइट प्रायोजना** (Post–SITE Project)

मार्च 1977 में जब जयपुर में एक सम्प्रेषण केन्द्र की स्थापना की गई तब से साइट प्रायोजना का आरम्भ हुआ । इस प्रायोजना के द्वारा विकासोन्मुख कार्यक्रमों का प्रसारण हुआ; यथा–

1. नवीन कृषि वैज्ञानिक अनुसन्धान सम्बन्धी
2. राष्ट्रीय एकता एवं अन्तरराष्ट्रीय सदभाव के विकास सम्बन्धी,
3. ग्रामीण बच्चों को शिक्षा की महत्ता एवं स्वास्थ्य पर्यावरण सम्बन्धी ।

5. भारत राष्ट्रीय उपग्रह (इन्सेट)

भारत की राष्ट्रीय संचार उपग्रहों की श्रेणी इन्सेट कहलाती है । इन्सेट की विभिन्न श्रृंखलाओं के उपग्रहों के साथ इन्सेट 3–बी ने भी अन्तरिक्ष में चक्कर काटना प्रारम्भ कर दिया है। जिसका सबसे बड़ा योगदान ' वी सैट ' (वेरी स्मॉल अपर चर टर्मिनल) के माध्यम से दूरसंचार को बढ़ावा देना है ।

आज 'एजुसैट' उपग्रह द्वारा शिक्षा का कार्यक्रम घर–घर तक पहुँचाया जा रहा है । इससे दूरस्थ गाँवों को भी लाभ मिलने लगा है । इसके पहले चरण में कर्नाटक के विश्वेसरैया तकनीकी विश्वविद्यालय, महाराष्ट्र के वाई वी चौहान विश्वविद्यालय और मध्यप्रदेश के राजीव गाँधी विश्वविद्यालय शामिल होंगे ।

दूसरे चरण में दो अन्य राज्यों को भी लाभ मिलेगा । तीसरे चरण में 'एजुसैट' का लाभ पूरे देश को मिलने लगेगा ।

6. **उच्च शिक्षा दूरदर्शन प्रायोजना** (Higher Education Television)

15 अगस्त 1984 को विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा कार्यक्रम के नियोजन एवं क्रियान्वयन का कार्य व इन्सेट द्वारा उसके प्रसारण का कार्य आरम्भ किया गया । इसका मुख्य उद्देश्य उच्च शिक्षा के क्षेत्र में अधिक विकास करना था। इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय द्वारा भी ऐसे कार्यक्रम तैयार किए जाते हैं, जिन्हें बाद में मुद्रित कराने के अतिरिक्त दृश्य– श्रव्य कैसेटों का निर्माण किया जाता है । संस्कृत भाषा शिक्षण में भी दूरदर्शन की महत्वपूर्ण भूमिका है । डी. डी. 1 पर प्रतिदिन प्रात: 6:55 पर संस्कृतवार्ता (News)

प्रसारित की जाती है । इसके प्रतिदिन श्रवण से छात्रों के शब्द भण्डार में वृद्धि होती है । संस्कृत बोलने के लिए छात्र प्रोत्साहित होते हैं । अन्य कार्यक्रमों में संस्कृत नृत्य नाटिकाएँ, एकांकी आदि भी प्रसारित किए जाते हैं जो कि जनसाधारण की संस्कृत के प्रति रुचिवर्धन में सहायक होते हैं । इसी क्रम में संस्कृत भाषा में चलचित्र भी बनाए जाने की आवश्यकता है ।

राजस्थान की राजधानी जयपुर से प्रसारित दूरदर्शन के कार्यक्रमों में संस्कृत में 'अक्षरा' नामक कार्यक्रम प्रसारित किया जाता है, जिसमें संस्कृत भाषा में अन्त्याक्षरी, काव्यपाठ, वाद–विवाद, विद्वानों कें साथ चर्चा–परिचर्चा की जाती है, जिनके द्वारा छात्रों को संस्कृत साहित्य के विषय में सुगमता से ज्ञान प्रदान किया जा सकता है ।

6.5 संगणक (Computer)

संगणक आज हमारी अपरिहार्य आवश्यकता बन गया है । प्रारम्भ में इसका प्रयोग अतिविशिष्ट जटिल रूप होने के कारण केवल विज्ञान के तकनीकी पक्ष तक ही सीमित रहा । लेकिन शीघ्र ही इस बहु–उपयोगी मशीन ने मुद्रण, व्यापार, उद्योग– धन्धे, शिक्षक–प्रशिक्षण, शिक्षा एवं संचार आदि में अपनी जगह बना ली है ।

आज प्राथमिक स्तर से उच्च स्तर तक इसकी शिक्षा प्रदान की जा रही है । संगणक तकनीक ने आज मानव जीवन को चार गुना अधिक पूर्ण बनाकर अपनी सार्थकता सिद्ध कर दी है। इसके माध्यम से कम्प्यूटर एडेड इन्सट्रक्शन (CAI) एवं कम्प्यूटर मैनेज्ड इन्सट्रक्शन(CMI) आदि तरीके काम में लिए जा रहे हैं । सेंटर फॉर एज्यूकेशन टेक्नोलॉजी ने मन्दबुद्धि बच्चों के लिए बहुमाध्यम कम्प्यूटर कार्यक्रम विकसित किया है जिससे कि विशेष आवश्यकताओं वाले बच्चे अपनी सभी इन्द्रियों–दृष्टि, ध्वनि और यहाँ तक कि स्पर्श का प्रयोग पढ़ना सीखने के लिए कर सकें ।

संस्कृत शिक्षक भी अपने शिक्षण को रुचिकर एवं सुग्राहय बनाने के लिए संगणक का प्रयोग कर सकते हैं । वैज्ञानिकों ने भी यह सिद्ध कर दिया है कि संस्कृत भाषा संगणक के लिए सर्वाधिक सफल भाषा है, क्योंकि इसका व्याकरण नियमबद्ध, सूत्रबद्ध तथा क्रमबद्ध है । व्याकरण सीखने के लिए कम्प्यूटर में Helpline डाल सकते हैं । अब इसमें ध्वनि उत्पन्न करने की व्यवस्था है, अत: सगणक से वार्तालाप भी किया जा सकता है । दिल्ली में 'गुरु ' नामक व पूना में 'लीला' नामक पैकेज तैयार किए गए हैं जिन्हें सभी भाषाओं में प्रयुक्त किया जा सकता है । संगणक (क्म्प्यूटर) में जी.आई.एस.आई. कार्ड लगाने पर विषयवस्तु का सभी भाषाओं में रूपान्तर किया जा सकता है । संगणक के 'स्पीच–सिन्थेसाइजर' का लाभ भाषा शिक्षक प्राप्त कर सकते हैं। आज अन्त: क्रिया (Interaction) के कार्यक्रम भी संगणक पर सफलतापूर्वक विद्यमान हैं । इनके द्वारा शिक्षक प्रश्नों के अभ्यास भी करवा सकते हैं । राष्ट्रिय–संस्कृत–संस्थानमू मानित विश्वविद्यालय नई दिल्ली ने दृश्य– श्रव्य माध्यम से संस्कृत भाषा शिक्षण की सान्द्रमुद्रिकाएं (CDs) तैयार करवाई हैं । ये सीडीज् अनौपचारिक रूप से संस्कृत सम्भाषण की दक्षता उत्पन्न करने में सक्षम हैं । इनका उपयोग छात्र स्वयं अध्ययन करने, प्राप्त ज्ञान, का मूल्यांकन करने के लिए भी कर सकते हैं । कम्प्यूटर व्यक्तिगत शिक्षण के लिए तो

लाभदायक है ही, यदि इसे स्क्रीन के साथ जोड़ दिया जाए तो सम्पूर्ण कक्षा के लिए इसका प्रयोग 'सामूहिक शिक्षण' के रूप में भी किया जा सकता है ।

बी.बी.सी ने कम्प्यूटर पर कुछ कार्यक्रम बनाए हैं । कम्प्यूटर पर दो प्रतिमान हैं– 1.छात्रसम्बन्द्ध प्रतिमान 2.शिक्षक सम्बन्द्ध प्रतिमान ।

1. **छात्र सम्बन्ध प्रतिमान** – छात्र सम्बन्द्ध प्रतिमान के द्वारा छात्र स्वयं ही अभ्यास करके विषय को सीख सकता है । इस प्रतिमान में भाषा विशेष के नियम और अभ्यास दिए जाते हैं ।

2. **शिक्षक से सम्बन्द्ध** – प्रतिमान में शिक्षक के लिए निर्देश होते हैं, कि किस बिन्दु एवं शीर्षक को पढ़ाने के लिए कौन–कौन सी विधियाँ शिक्षक प्रयोग में ले सकते हैं जिससे शिक्षण सुग्राह्य बन सके ।

इलेक्ट्रानिक मेल – इस प्रणाली से संसार के लाखों कम्प्यूटर करोड़ों लोगों के विचार व एकत्र की गई सूचनाओं का आदान– प्रदान करते हैं । 1994 में विकसित अपने बहुभाषी शब्द संसाधक वर्ड प्रोसेसर 'लीप' की शानदार सफलता से उत्साहित होकर पुणे स्थित सेंटर फॉर डेवलपमेंट ऑफ एडवांस कम्प्यूटिंग (सी डैक) ने हाल ही में एक नया 'वर्ड प्रोसेसिंग सोफ्टवेयर' 'ई लीप जारी किया है जो 'ई मेल' के जरिए भारतीय भाषाओं में संदेश भेजने में सक्षम है । 'ई लीप' एक ऐसा बहुभाषी सोफ्टवेयर है जिसमें इलेक्ट्रॉनिक संचार के क्षेत्र में भारतीय भाषाओं का इस्तेमाल बढ़ाने में काफी सहायता मिल रही है । इसका लाभ संस्कृत शिक्षक भी उठा सकते है ।

(i) **इण्टरनेट प्रणाली** – 'ए विण्डो टू ग्लोबल इन्टरनेशनल सुपर हाइवे' अर्थात संसार की सूचनाओं का भारी भण्डार। इसके द्वारा संसार के किसी भी क्षेत्र की किसी भी प्रकार की जानकारी कम्प्यूटर का बटन दबाकर मानिटर पर घर बैठे प्राप्त की जा सकती है ।

इस प्रणाली से जुड़े कम्प्युटर, के मध्य तेजगति से आंकड़ो का सम्प्रेषण, इलेक्ट्रानिक अखबार पढ़ना, विश्व के किसी भी व्यक्ति से बात करना, –देश विदेश के पुस्तकालयों से सम्पर्क रखना, पत्र पत्रिकाओं का अध्ययन भी सम्भव है । इस समय इस प्रणाली से लगभग 20,000 पुस्तकालय जुड़े हैं । मूर्धन्य शिक्षक एवं शोध संस्थान भी इसकी सीमा में आ गए हैं। इनका लाभ भी संस्कृत शिक्षक ले सकते हैं ।

(ii) **अर्नेटसेवा** – इसका अर्थ है एज्यूकेशन एण्ड रिसर्च नेटवर्क । भारत सरकार के इलेक्ट्रानिक विभाग ने संयुक्त राष्ट्र विकास की सहायता से इसे तैयार किया है । हमारे यहाँ की लगभग 100 कॉपोरट कम्पनियों तथा 300 से अधिक शैक्षिक संस्थान इसका लाभ प्राप्त कर रहे हैं ।

(iii) **यूसनेट सेवा** – सामूहिक चर्चा के लिए इस समय दुनिया में लगभग 5000 समाचार समूह हैं जो अलग– अलग भाषाओं में विभिन्न विषयों की जानकारी देते हैं । इसके लिए कम्प्यूटर, एक मॉडम व एक टेलीफोन की आवश्यकता होती है ।

(iv) **वर्ल्डवाइड वेब** – इसका अर्थ है शब्दों, चित्रों व आवाज की सहायता से व्यक्ति, संस्था एवं विषय की सूचना देने वाले तथा 'ई' श्रृंखला के सभी कम्प्यूटरों का एक संग्रह । इसका भी इण्टरनेट प्रणाली में विशेष योगदान रहता है ।

संगणक के स्पीच सिन्थेसाइजर का लाभ भी भाषा शिक्षक उठा सकते हैं । आजकल अन्त: क्रिया वाले कार्यक्रम भी संगणक पर सफल हो रहे हैं । इसके द्वारा शिक्षक प्रश्नों का अभ्यास कक्षा में करवा सकते हैं । यह छात्रों को आत्म मूल्यांकन करने व स्वाध्याय करने में सहायक होते हैं । वैसे यह व्यक्तिगत शिक्षण के लिए ही लाभदायक है । यदि इसके साथ स्क्रीन भी लगा दिया जाए तब पूरी कक्षा में इसे प्रयोग में लाया जा सकता है । बी.बी.सी. ने भी संगणक पर कुछ पैकेज तैयार किए है । संगणक में दो प्रकार के मॉडल बनाए गए हैं –

(1) **छात्र से सम्बन्धित मॉडल** – इस मॉडल से छात्र स्वयं अभ्यास कर विषय सीख सकता है – इस मॉडल में भाषा विशेष के नियम व अभ्यास दोनों दिए जाते हैं ।

(2) **शिक्षक से सम्बन्धित मॉडल** – इस मॉडल में शिक्षक को यह निर्देश होते हैं, कि किसी बिन्दु व शीर्षक को सरलतम ढंग से छात्रों को समझने के लिए वह कौन–कौन से तरीके प्रयोग में ला सकता है ।

भारत में इन्टरनेट की दुनिया से सम्पर्क का साधन कम्प्यूटर मॉडल थे, लेकिन अब बाजार में वेबफोन, वेबटीवी और वेबगैम जैसे उपकरण आ रहे हैं जो इस वर्ल्ड वाइड वेब की दुनिया से हमको रूबरू करवाएँगे । इन्हें इन्टरनेट की दूसरी क्रान्ति का जनक माना जा रहा है । भारत में इन्टरनेट प्रयोगकर्त्ताओं की संख्या मार्च 1995 में 0.002 मिलियन, मार्च 1999 में 0.28 मिलियन, मार्च 2002 में 4.5 मिलियन, दिसम्बर 2003 में दस मिलियन पहुँच गई । ये आंकड़े दर्शाते हैं कि भारतवासी भी निरन्तर अपने ज्ञानवर्धन हेतु इन्टरनेट का प्रयोग करके लाभान्वित हो रहे हैं ।

(v) **दूरस्थ शिक्षण एवं दूरस्थ सम्मेलन** (Tele teaching & Tele Conferencing) अप्रैल 1998 में भारतीय प्रौद्योगिक संस्थान और ए.टी.एण्ड टी ने संयुक्त रूप से दूरस्थ अध्ययन परीक्षण के सफलतापूर्वक पूर्ण होने की घोषणा की थी । इन्होने भारत के प्रथम टेली–टीचिंग तथा दूरस्थ शिक्षा अभ्यासक्रम को स्थापित किया तथा नई दिल्ली स्थित भारतीय प्रौद्योगिक संस्थान के केन्द्र ने दूरस्थ अध्ययन की विभिन्न पद्धतियों के प्रभाव का अध्ययन किया । इससे शिक्षण पद्धति में बदलाव आया ।

इस तकनीक का प्रयोग क्षेत्रीय सीमाओ के पार विद्यार्थी शिक्षक तथा शैक्षिक संस्थाओं को आपस में जोड़ने के लिए होता है । दूरस्थ अध्ययन परीक्षण में वीडियो टेलीटीचिंग, वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग, केबल सिम्युलेटेड विडियो कॉन्फ्रेंसिंग तथा दूरस्थ अध्ययन तकनीक के अभ्यास क्रम के लिए इन्टरनेट का उपयोग सम्मिलित है ।

इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, नई दिल्ली द्वारा अपने छात्रों के प्रश्नों एवं शंकाओं के समाधान के लिए नई दिल्ली स्थित मुख्यालय पर अनूठी ' श्रव्य संचार सेवा' शुरू की गई है । इस सेवा के अन्तर्गत छात्र अपने प्रश्न अपनी सुविधानुसार रिकार्ड करवा सकते हैं तथा इनका उत्तर उन्हें 'टेलिकॉन्फ्रेंसिंग' के दौरान प्रदान किया जाता है । संस्कृत शिक्षण के

क्षेत्र में यह कार्य 'राष्ट्रीय–संस्कृत–संस्थानम' जैसे विभिन्न संस्कृत विश्वविद्यालयों द्वारा किया जा सकता है । विभिन्न परिसरों में स्थित विविध शास्त्रों के मूर्धन्य विद्वानों द्वारा दूरस्थ शिक्षण रख दूरस्थ सम्मेलन करवाया जा सकता है ।

(vi) **बहु माध्यम (मल्टी वीडिया) और सी. डी. रोम** – सी डी. रोम से जुड़े कम्प्यूटर शिक्षण व विषय को रोचक तथा सरस बना रहे हैं । इनकी भूमिका गणित और विज्ञान विषयों से लेकर भाषा से सम्बन्धित सभी विषयों में अहम् है । विशेषज्ञों ने माना है कि इन्टरेक्टिव कम्यूनिकेशन सॉफ्टवेयर के कारण वर्तमान शिक्षा पद्धति में एक बहुत बड़ा परिवर्तन होने जा रहा है । मल्टीमीडिया किट में टेक्स्ट, आवाज, डेटा, ग्राफिक्स, एनीमेशन और चल– अचल वीडियो सभी कुछ मिलता है । इसके प्रयोग से छात्र न केवल विषय का ज्ञानार्जन करता है अपितु विषय से सम्बद्ध प्रश्नों के उत्तर भी उसे उसमें प्राप्त होते हैं, साथ ही वह स्वयं भी अपने प्रश्नों के हल खोज सकता है ।

(vii) **कम्प्यूटरीकृत पुस्तकें** – सूचना वैज्ञानिक लेनकास्टन ने 21 वीं सदी में कागज रहित समाज की कल्पना के साथ–साथ पुरानी परम्परागत पुस्तकों के स्थान पर डिजीटल इलेक्ट्रॉनिक पुस्तकालयों की भविष्यवाणी गत कुछ वर्षों में की थी, वह सत्य होती जा रही है । पुस्तकों के पृष्ठ अब कम्प्यूटर की फ्लॉपी एवं सी.डी.डिस्क, माइक्रोफिल्म, माइक्रोफिश, मैगनेटिक टेप आदि में सिमटने लगे हैं एवं पुस्तकालयों में मोटी–मोटी पुस्तकों के स्थान पर छोटी–छोटी डिस्कें रखी जाने लगी हैं ।

स्व–परख प्रश्न (Self Check Questions)

1. शिक्षा दूरदर्शन की कौन–कौन सी प्रत्योजनाएँ हैं?
2. संगणक के कोई दो शैक्षिक उपयोग लिखिए ।
3. संगणक (Computer) में कौन से दो मॉडल बनाये गये हैं?
4. दूरस्थ शिक्षण का क्या अभिप्राय है?

6.6 समाचार पत्र (News Papers)

समाचार पत्र संचार माध्यम का महत्वपूर्ण स्रोत है । यही कारण है कि प्रतिदिन प्रात:काल प्रत्येक व्यक्ति को समाचार पत्र का इन्तजार होता है । यदि समाचार' पत्र में प्रकाशित कुछ महत्वपूर्ण समाचारों को संस्कृत में अनुदित करके विद्यालय के सूचना पट्ट पर लगाया जाए तो सभी छात्र उन्हें पढ़ने के लिए प्रेरित होंगे । साथ ही पन्द्रह दिन में अथवा महीने में एक बार विद्यालय का समाचार बुलेटिन भी –संस्कृत में प्रकाशित करवाया जा सकता है । यह भी छात्रों में संस्कृत के प्रति रुचि उत्पन्न करने में सहायक होगा ।

(i) **बोलते समाचार पत्र** – विश्व के पहले बोलते समाचार पत्र, का प्रदर्शन 18 सितम्बर 1999 को जापान की राजधानी टोक्यो में किया गया । इसमें ' स्कैन टॉक रीडर ' नामक विशेष डिजिटल उपकरण कागज पर छपी काली स्याही के कोड को 'स्केन टॉक सिस्टम' नामक नई प्रणाली से 'ट्रेस ' करने के बाद अपने भीतर लगे स्पीकर की सहायता से बोल उठता है । इस तरह के समाचार पत्र का प्रकाशन भी भारत में विविध भाषाओं में किया जा सकता है ।

(ii) **कैसेट में किताबें** – नेत्रहीन तथा कमजोर दृष्टि वाले लोगों के लिए पुस्तकों को पढ़ना हमेशा एक समस्या रहा है । इस समस्या के निवारणार्थ दिल्ली विश्वविद्यालय के केन्द्रीय सन्दर्भ पुस्तकालय मे ऑ बुक सर्विस प्रारम्भ की गई है । प्रारम्भ में तीन विषयों की पुस्तकों को ऑडियो कैसेट की शक्ल दी गई है, जैसे –राजनीति विज्ञान, हिन्दी तथा संस्कृत । अन्य विषयों पर कैसेट तैयार करने का कार्य चल रहा है । ऑडियो बुक सर्विस के तहत प्रत्येक नेत्रहीन छात्र को एक टेपरिकार्डर तथा तीस कैसेट दिए जाते हैं । स्नातक स्तर से ऊपर की कक्षाओं में अध्ययन करने वाले छात्रों को चालीस कैसेट सौंपे जाते हैं । अध्ययन पूरा होने के बाद उसे यह सामग्री विश्वविद्यालय को लौटानी होती है ।

(iii) **विज्ञापन** – समाचार पत्रों में कुछ विज्ञापनों को चित्र सहित संस्कृत में दिया जा सकता हे । चूंकि विज्ञापन हर अवस्था के मानव के लिए आकर्षण का केन्द्र होते हैं, अत : संस्कृत के प्रति जिज्ञासा एवं रुचि उत्पन्न करने का ये एक सुगम साधन हो सकते हैं ।

6.7 पत्रिकाएँ (Magazines)

डिजिटल प्रिन्टंग प्रौद्योगिकी के द्वारा अब इलेक्ट्रानिक पुस्तकें एवं पत्र–पत्रिकाएँ डिजिटल कम्पाइलर में उपलब्ध होने लगी हैं। इनसे न केवल कागज व स्याही की बचत हो रही है अपितु पर्यावरण संरक्षक पेड़–पौधों की कटाई पर भी नियन्त्रण हो रहा है। हालांकि इण्टरनेट पर उपलब्ध देश–विदेश की पत्र–पत्रिकाएँ एवं पुस्तकों की उपलब्धता विश्व में हलचल मचा चुकी है तथापि इसके लिए कम्प्यूटर की अनिवार्यता पाठ–सामग्री को इधर–उधर ले जाने में प्रारम्भ से ही बाधक रही है । अत: जनसाधारण के लिए तो आज भी मुद्रित पत्रिकाएँ ही सुलभ हैं, क्योंकि आज का छात्र पाठ्यक्रम में निर्धारित पाठ पढ़कर ही सन्तुष्ट नहीं होता उसे विषय से सम्बन्धित अतिरिक्त जानकारी देने हेतु पत्र–पत्रिकाओं का ज्ञान देना भी आवश्यक है । संस्कृत में आजकल कौन–कौन सी पत्रिकाएँ प्रकाशित हो रही हैं? इनके प्रकाशक कौन हैं? कहाँ से उपलब्ध होंगी? इन प्रश्नों के उत्तर भी छात्रों के समक्ष प्रस्तुत कर उन्हें पत्रिकाओं का सदस्य बनाने में भी सहयोग दिया जाना चाहिए । 'सम्भाषण सन्देश:' नामक पत्रिका संस्कृत भारती ' अक्षरम्' गिरिनगरम् बेङ्गलूर– 560085 द्वारा प्रकाशित की जा रही है । यह एक अत्यन्त ज्ञानवर्धक पत्रिका है । इसके अतिरिक्त प्रकाशित सभी संस्कृत पत्रिकाओं को विद्यालय के पुस्तकालय में भी मँगवाने की व्यवस्था की जानी चाहिए ।

(i) **विद्यालय पत्रिका** – छात्रों में सृजनात्मक लेखन की योग्यता का विकास करने हेतु प्रतिवर्ष विद्यालयों में विद्यालय प्रत्रिका का प्रकाशन किया जाता है । यह मुद्रित तथा हस्तलिखित दोनों रूपों में हो सकती है । प्राय: पत्रिका को तीन खण्ड में विभाजित किया जाता है । हिन्दी, अँग्रेजी एवं संस्कृत । संस्कृत खण्ड में छात्रों से लेख, कथा, गीत, प्रहेलिका आदि आमन्त्रित की जाती हैं । इसके लिए सम्पादक मण्डल का गठन किया जाता है, जिसके द्वारा एकत्रित की गई रचनाओं का सम्पादन किया जाता है। इस मण्डल में छात्र प्रतिनिधि भी होते हैं । मुद्रण में अधिक धन खर्च होने के कारण धनाभाव में छात्रों की स्वरचित रचनाओं को दीवारों पर भी लगाया जा सकता है तथा उन्हें उत्साहित करने हेतु प्रशंसा पत्र तथा पुरस्कार भी दिए जा सकते हैं । इससे छात्रों में लेखन कौशल का विकास होता है तथा उनकी प्रतिभा को

विकसित होने का समुचित अवसर मिलता है । आगे जाकर इनमें से कुछ बालक अच्छे साहित्यकार बन सकते हैं ।

मुद्रितपत्रिक्रा – विद्यालय में वर्ष में एक बार प्रकाशित करवाई जाती है तथा इसके मुद्रण हेतु अधिक धन राशि की आवश्यकता होती है जो छात्रों के अभिभावकों तथा विज्ञापनों द्वारा एकत्रित की जाती है । अत: इसकी प्रक्रिया कठिन अवश्य होती है तथापि विद्यालयों द्वारा प्रय : प्रतिवर्ष इसका प्रकाशन करवाया जाता है । यदि मुद्रित पत्रिका प्रकाशित करवाने में विद्यालय को व्यावहारिक कठिनाई आए तब वे 'भित्ति पत्रिका' के लिए छात्रों को प्रोत्साहित कर सकते हैं तथा जिन विद्यालयों में मुद्रित पत्रिका प्रतिवर्ष प्रकाशित होती है वे भी भित्ति पत्रिका अवसरानुसार विद्यालय में प्रदर्शित कर सकते हैं ।

(ii) **भित्ति पत्रिका** – छात्रों की स्वरचित रचनाओं को कक्षा की दीवारों पर तथा कक्षा के बाहर बरामदे अथवा गैलरी में प्रदर्शित किया जाता है तो वह भित्ति पत्रिका कहलाती है ।

इस पत्रिका के निर्माण हेतु सम्पादक मण्डल का गठन भी किया जाता है । इसका संस्करण साप्ताहिक, पाक्षिक, मासिक आदि किसी रूप में भी हो सकता है । दीपावली, होली आदि उत्सवों एवं राष्ट्रीय पर्वों पर इनके विशेषांक भी तैयार किये जा सकते हैं ।

संस्कृत भाषा शिक्षण में संस्कृत से सम्बन्धित लेख, पत्र–पत्रिकाओं की जानकारी एवं सुभाषित वाक्यों के संग्रह आदि का लाभ भित्ति पत्रिका से उठाया जा सकता हैं । विद्यालयों में प्रत्येक कक्षा के बाहर एवं भीतर प्राचार्य कक्ष, अध्यापक कक्ष, पुस्तकालय आदि के अन्दर भी संस्कृत के श्लोकों का लेखन दीवारों पर करवाया जा सकता है, जो कि न केवल संस्कृत शिक्षण हेतु वातावरण निर्माण में सहायक होंगे, अपितु छात्रों में मूल्यों का विकास करने में भी अवश्य सहयोग देंगे ।

(iii) **जनरल या शोध पत्रिकाएँ** – जनरल, विभिन्न संस्थानों द्वारा तथा विभिन्न संगठनों द्वारा प्रकाशित शोध–पत्रिकाएँ होती हैं, जिनमें विषय विशेष पर नवीनतम शैक्षिक पत्र तथा शोध पत्र प्रकाशित किए जाते हैं । इनका अध्ययन करके व्यक्ति अपने विषय में नवीनतम घटनाओ आविष्कारों, सिद्धान्तों, खोजों तथा प्रयोगों के बारे में विस्तृत विवरण प्राप्त करता है, जिससे उसका ज्ञानवर्धन होता है । संस्कृत विश्वविद्यालयों द्वारा संस्कृत में प्रकाशित होने वाली शोध पत्रिकाओं को पढ़ने के लिए भी छात्रों को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए तथा भावी शिक्षको एवं सेवारत शिक्षकों को भी नवीनतम ज्ञान हेतु संस्कृत के विविध पक्षों पर शोध पत्र लिखने के लिए प्रेरित किया जाना चाहिए ।

(iv) **अभ्यास पुस्तकें** (Work Books) – अभ्यास पुस्तकें एक निश्चित उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए तैयार की जाती हैं । अभ्यास पुस्तकों में छात्रों के करने के लिए विभिन्न कार्य दिये गये होते हैं, जिन्हें छात्र करने के पश्चात् उन कार्यो में दक्षता प्राप्त करने का प्रयास करते हैं । ये कार्य विभिन्न विषयों के विभिन्न प्रकरणों से सम्बन्धित होते हैं ।

अभ्यास पुस्तक में विभिन्न प्रकृति तथा कठिनाई के स्तरों के अभ्यास दिये जाते हैं, जिन्हे छात्रों को हल करना पड़ता है । अभ्यास पुस्तक में पहले सरल और फिर कठिन प्रश्न कठिनाई के स्तर के अनुसार दिये जाते हैं । प्रत्येक अभ्यास– पुस्तक के प्रारम्भ में पूर्व ज्ञान के मापन हेतु एक परीक्षण रखा जाता है, जो यह बताता है कि छात्र को उस विषय से

संबन्धित मूल तत्वों का ज्ञान है अथवा नहीं । उसके पश्चात् विषय से संबन्धित विभिन्न इकाइयों या प्रकरणों पर समस्यायें, प्रश्न अभ्यास आदि दिए जाते हैं । प्रत्येक प्रकार के अभ्यास हेतु आवश्यक निर्देश, संकेत तथा उत्तर दिये होते हैं । छात्रों को पहले निर्दिष्ट विषयवस्तु को पढ़ना तथा समझना होता है, तत्पश्चात् अभ्यास–पुस्तक के निर्देश पढ़कर उनके अनुसार अभ्यास कार्य करना होता है । कठिनाई होने पर वे दिए गए संकेतो को समझ कर, उसके अनुसार पुन: अभ्यास करते हैं और समस्या समाधान तक पहुँचने का प्रयास करते हैं । इस प्रकार अभ्यास पुस्तकें छात्रों में आत्मविश्वास, ईमानदारी, परिश्रम, स्वाध्याय के गुण विकसित करती हैं तथा विषय वस्तु को स्पष्ट करने में सहायता करती हैं ।

(v) **शब्द कोष** – शब्दकोष में हजारो लाखों शब्दों के अर्थ दिये गये होते हैं । कुछ शब्दकोषों में शब्दों के अर्थ स्पष्ट करने के लिए चित्रों की भी सहायता ली जाती है । कुछ शब्दकोष किसी विषय विशेष से सम्बन्धित होते हैं; जैसे– मनोविज्ञान शब्दकोष, शिक्षा शब्दकोष, विज्ञान शब्दकोष, संस्कृत हिन्दी कोष, संस्कृत–संस्कृत कोष, अमरकोष आदि । अच्छे शब्दकोषों से पर्यायवाची तथा विलोम शब्दों का भी पता चलता है । शब्दों के संक्षिप्त रूप भी ज्ञात होते हैं । अधिकतर प्रयोग में आने वाले शब्दों के संकेत तथा सूत्र भी दिये जाते हैं । शब्दों को लिखने की शैली तथा उनके उच्चारणों को भी स्पष्ट किया जाता है । शब्दाकोषों में व्याकरण के आधार पर उनके वर्ग; यथा–संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण आदि भी चिन्हित किये जाते हैं । बहुत से शब्द कोषों में शब्दों के अर्थ के साथ– साथ उन शब्दों के उद्भव, विकास तथा उसके इतिहास पर भी प्रकाश डाला गया होता है एवं किस शब्द को कब और कहाँ तथा किस प्रकार से उपयोग करना चाहिए इसकी भी जानकारी दी हुई होती है । शब्दकोष छात्रों एवं शिक्षकों दोनों के ही शब्द भण्डार में वृद्धि करते हैं ।

(vi) **एनसाइक्लोपीडिया** – सामान्य शिक्षा के क्षेत्र में एनसाइक्लोपीडिया एक विशेष सन्दर्भ ग्रंथ है, जिसमें किसी भी बिन्दु, शब्द के विषय में विस्तृत जानकारी प्राप्त होती है । इस प्रकार के सन्दर्भ ग्रंथ सामान्य शिक्षा के साथ–साथ विशिष्ट शिक्षा के क्षेत्रों में भी होते हैं । ये अन्य शब्दकोषो की तुलना में काफी व्यापक होते हैं । शब्दों या वस्तुओं, प्रणाली अथवा सिद्धान्तों आदि के उदभव, विकास तथा संबन्धित शब्दकोष पर ये ग्रंथ पूर्ण ज्ञान प्रदान करने में समर्थ होते हैं ।

(vii) **हैन्ड आउट** – विभिन्न प्रशिक्षण संस्थानों द्वारा शिक्षण, प्रशिक्षण के विभिन्न विषयों, प्रकरणों एवं पक्षों पर हेंडआउट का निर्माण किया जाता है । इनमें संबन्धित प्रकरण या विषय पर विस्तृत विषय सामग्री दी जाती है । हैन्डआउट प्रशिक्षणार्थियों तथा शिक्षकों के लिए एक प्रभावशाली उपकरण है, जिसके माध्यम से वे विषय का अध्ययन उसकी गहराई तक कर सकते हैं।

6.8 संस्कृत शिक्षा में संचार माध्यमों का एकीकरण (Media Integration in Sanskrit Teaching)

मुद्रित और अमुद्रित संचार माध्यमों का एकीकरण करके संस्कृत शिक्षण को रोचक बनाया जा सकता है । विषय वस्तु के सम्प्रेषण की प्रक्रिया हेतु निम्नलिखित मॉडल प्रस्तुत है –

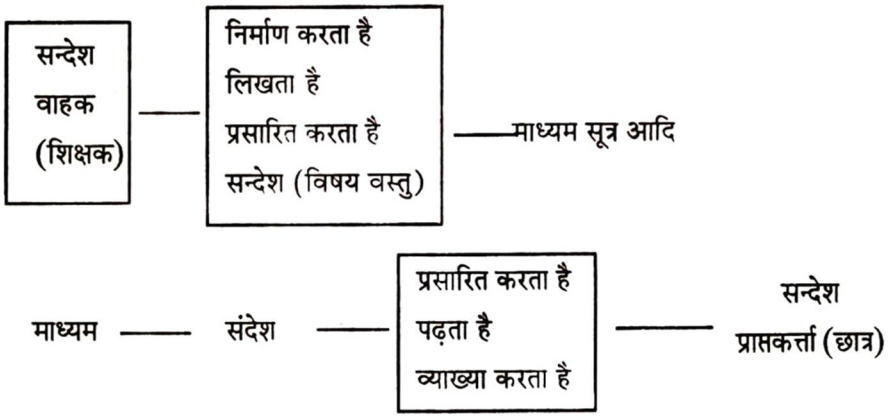

इस प्रक्रिया को निम्नलिखित उदाहरण से समझा जा सकता है; जैसे शिक्षक को कालिदास के विषय में प्रसिद्ध 'उपमा कालिदासस्य ' उक्ति को छात्रों को समझाना है इसके लिए वह विभिन्न ग्रंथो में दिए गए उपमा के उदाहरणों का संकलन करेगा तथा छात्रों को भी कालिदास के विभिन्न ग्रंथो में से उपमा के उदाहरणों को एकत्रित करने के लिए प्रेरित करेगा । तत्पश्चात् विभिन अमुद्रित साधन; जैसे – टेपरिकार्डर, दूरदर्शन, इन्टरनेट आदि के माध्यम से विषय से सम्बन्धित जानकारी रोचक ढंग से छात्रों के समक्ष प्रस्तुत करेगा, उसकी व्याख्या करेगा और छात्र उसे समझने का प्रयास करेंगे ।इस प्रकार इस मॉडल का प्रयोग गद्य, पद्य, कथा, व्याकरण आदि विभिन्न विधाओ को पढ़ाने के लिए किया जा सकता है ।

संचार माध्यमों के एकीकरण हेतु संचार के विविध तत्वो में समन्वय आवश्यक है, ये तत्व हैं–

(i) (**सम्प्रेषक प्रसार कर्त्ता**) – एक अच्छे सम्प्रेषण हेतु संस्कृत शिक्षक के सभी तत्वों की प्रकृति जानना आवश्यक है, जिससे इनकी समुचित व्यवस्था करके अपने उद्देश्यों की पूर्ति कर सके ।

(ii) **सेदेश** (**तकनीकी ज्ञान**) – छात्रों की आवश्यकताओं पर आधारित सामयिक, स्पष्ट, संचार माध्यमों के अनुरूप तथा प्रबन्धक के योग्य हो ।

(iii) **संदेश उपचार** – संदेश इस प्रकार उपचारित हों जिससे प्राप्तकर्त्ता के लिए वास्तविक, विश्वसनीय, उपयुक्त एवं समझने योग्य हो सकें ।

(iv) **संचार माध्यम** – सरल हों कम कीमत पर प्राप्त हों तथा सरलतापूर्वक श्रोताओं तक पहुँच सकें ।

(v) प्राप्तकर्त्ता छात्र सक्रिय, उन्मुख तथा मानसिक रूप से क्रियाशील हों ।

(vi) प्राप्तकर्त्ता पर प्रभाव

(अ) याद रखना – भूलना (ब) सही–गलत

(स) मानसिक कुशलता – भौतिक कुशलता (द) समझदारी – ज्ञान

(य) स्वीकृति – अस्वीकृति

इस प्रकार संचार माध्यम से शिक्षण की प्रक्रिया निम्नलिखित चक्र से समझी जा सकती है–

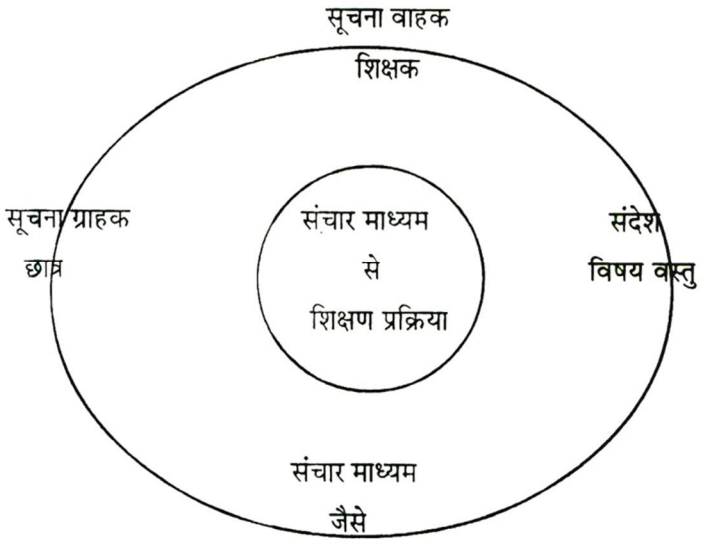

6.9 कतिपय सुझाव –

(i) जिन संचार माध्यमों का प्रयोग पाठ में किया जाना है, उनका उल्लेख पाठ योजना में पहले ही कर देना चाहिए ।

(ii) तत्संबंधी उपकरणों की जाँच पूर्व में कर लेनी चाहिए, ताकि कक्षा में उनका प्रयोग करते समय कोई बाधा उत्पन्न न हो ।

(iii) यदि आकाशवाणी और दूरदर्शन में प्रसारित होने वाला कोई कार्यक्रम कक्षा में दिखाना है तब उसके प्रसारण समय के अनुसार कालांश का समय निर्धारित करना चाहिए ।

(iv) जिन साधनों का प्रयोग शिक्षक द्वारा कक्षा में किया जाना है, उनके बारे में शिक्षक को विस्तृत जानकारी होनी चाहिए ।

(v) उपकरणों को कक्षा में ऐसे स्थान पर रखना चाहिए ताकि सभी छात्र उन्हें भलीभाँति देख सकें ।

(vi) छात्रों के स्तरानुसार ही संचार माध्यम का प्रयोग किया जाए ।

(vii) माध्यम इस तरह के हो जो विषया–सामग्री को रुचिपूर्ण, सरस, सरल एवं सुग्राह्य बनाने में सहायक हों ।

6.11 मूल्यांकन प्रश्न (Unit End Questions)

1. माध्यमिक स्तर पर संस्कृत शिक्षण में संचार माध्यमों का महत्व प्रतिपादित कीजिए ।

2. संस्कृत शिक्षण को प्रभावशाली बनाने के लिए कौन – कौन से संचार माध्यमों का प्रयोग किया जा सकता है?
3. संस्कृत व्याकरण से सम्बन्धित किसी शीर्षक को लेकर संचार प्रक्रिया का एक मॉडल बनाइए ।
4. संचार के प्रमुख तत्व कौन – कौन से हैं?
5. संस्कृत शिक्षण को प्रभावशाली बनाने में संगणक की क्या भूमिका है? स्पष्ट कीजिए ।
6. पत्रिकाएँ संस्कृत शिक्षण में किस प्रकार उपयोगी हैं ।
7. संचार माध्यमों का एकीकरण से आप क्या समझते हैं?

6.12 सन्दर्भ एवं आगे अध्ययन हेतु पुस्तकें (References)

1. मित्तल सन्तोष – 'शेक्षिक तकनीकी एवं कक्षा प्रबन्ध' राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, जयपुर, चतुर्थ संशोधित संस्करण 2006
2. कुलश्रेष्ठ एस.पी. – 'शेक्षिक तकनीकी के मूलाधार' विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा पंचम संस्करण – 2005
3. मित्तल सन्तोष – 'संस्कृत शिक्षणम' नव चेतना पब्लिकेशन 7/398, मालवीय नगर, जयपुर प्रथम संस्करण – 2006
4. DaleEdgar – 'Audio–Visual Method in Teaching,New York Dryden Press (1957)
5. शर्मा आर.ए. – 'शेक्षिक तकनीकी, आर. लाल बुक डिपो, मेरठ
6. Journal of Educational Telivision (3 Years) – Carafax Pub. Co., P.B.25. Abingdon, Oxfordshire 0X–141 RW, U.K.
7. Mass Media 2116 North Charles Street,Baltimore,Maryland 21218,U.S.A.
8. Media Asia – Asian Mass Communications Research(Quarterly) & Information Center,39 Newton
9. 'सान्द्रमुद्रिका:' (CD's) – राष्ट्रिय–संस्कृत–संस्थानम, 56–57, इन्स्टीट्यूशनल एरिया, जनकपुरी, नई दिल्ली
10. Journal of Educational TV And other Media – ETV association,86 Micklegate,York,Yollje,U.K.

इकाई – 7 (Unit–7)

– संस्कृत शिक्षण में नियोजन : वार्षिक, इकाई, दैनिक पाठ– योजना–

(Planning : Annual, Unit, Daily Lesson Planning in Teaching of Sanskrit)

इकाई की रूपरेखा

- इकाई के उद्देश्य
- शिक्षण योजना का अर्थ व परिभाषाएँ
- शिक्षण योजना का महत्व
- संस्कृत शिक्षण योजना का महत्व
- संस्कृत शिक्षण में योजना के आधार
- संस्कृत शिक्षण के लिए योजना के प्रकार
- वार्षिक तथा मासिक योजना
- वार्षिक योजना का महत्व
- इकाई व इकाई योजना का अर्थ व परिभापाएँ
- संस्कृत इकाई योजना
- संस्कृत इकाई योजना का निर्माण
- इकाई योजना का प्रारूप
- इकाई योजना का महत्व
- पाठ योजना का अर्थ व परिभाषाएँ
- दैनिक पाठ योजना की आवश्यकता
- अच्छी पाठ योजना के आवश्यक तत्व
- संस्कृत – शिक्षण पाठ योजना
- व्याकरण शिक्षण i. आवश्यकता व महत्व ii. व्याकरण शिक्षण के सोपान
- संस्कृत अनुवाद शिक्षण i. महत्व ii. शिक्षण के सोपान
- संस्कृत गद्य शिक्षण i. महत्व ii. गद्य–शिक्षण के सोपान
- संस्कृत में काव्य शिक्षण i. महत्व ii. संस्कृत काव्य शिक्षण के सोपान
- संस्कृत रचना शिक्षण i. विभिन्न स्तरों पर रचना कार्य ii. संस्कृत रचना शिक्षण के सोपान
- मूल्यांकन प्रश्न
- संदर्भ ग्रंथ

7.0 इकाई के उद्देश्य (Objectives of Unit)

1. इकाई की समाप्ति पर आप शिक्षण योजनाओं के महत्व को जान सकेंगे ।
2. आप शिक्षण योजनाओ के प्रकारों से अवगत हो सकेंगे ।
3. आप शिक्षण में योजना बनाने के मुख्य आधार जान सकेंगे ।
4. वार्षिक योजना तथा इकाई योजना के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे ।
5. आप प्रारूप के आधार पर वार्षिक योजना तथा इकाई योजना का निर्माण कर सकेंगे ।
6. इकाई योजना की आवश्यकता व महत्व के बारे में आप जानकारी प्राप्त कर सकेंगे ।
7. दैनिक पाठ योजना की 'अवश्यकता को जान सकेंगे तथा उसके महत्व को समझ सकेंगे।
8. पाठ योजना के आवश्यक तत्वों के आधार पर अच्छी पाठ योजना का निर्माण कर सकेंगे।
9. व्याकरण शिक्षण/गद्य शिक्षण पद्य शिक्षण/अनुवाद शिक्षण/रचना शिक्षण आदि विभिन्न विधाओं के शिक्षण हेतु पाठयोजना का निर्माण कर सकेंगे ।
10. योजनानुसार पाठाध्यापन करके अपना शिक्षण प्रभावी बनाने का प्रयास कर सकेंगे ।
11. योजनानुसार शिक्षण सहायक सामग्री का यथा स्थान उपयोग कर सकेंगे ।
12. योजनानुसार निश्चित समयावधि में पाठाध्यापन पूर्ण कर सकेंगे ।

7.1 प्रस्तावना (Introduction)

शिक्षण सोदश्य प्रक्रिया है । इस प्रक्रिया के उद्देश्यों की प्राप्ति तब ही सम्भव होती है, जब कि उनकी प्राप्ति हेतु उचित नियोजन किया जाये । नियोजन 'कई प्रकार का होता है, जैसे – वार्षिक, इकाई एवं दैनिक । इन सब की जानकारी से पूर्व हमें नियोजन का अर्थ समझ लेना चाहिए ।

7.2 शिक्षण योजना का अर्थ व परिभाषाएँ (Meaning and Definations of Teaching Planning)

किसी भी कार्य को सफलतापूर्वक सम्पन्न करने के लिए उसका पूर्व नियोजन आवश्यक है । यदि योजना सुव्यवस्थित, उद्देश्यनिष्ठ तथा संसाधनों को ध्यान में रखकर तैयार की गई है तो उस कार्य की सफलता प्राय: निश्चित ही है । कार्य को सफलता पूर्वक सम्पादित करने से पूर्व बुद्धिमत्ता पूर्वक की गई अग्रिम तैयारी को योजना कहते हैं । अर्थ स्पष्टीकरण के लिए शिक्षाविदों की कुछ परिभाषाएँ अग्रानुसार प्रस्तुत हैं –

'नियोजन के अन्तर्गत वे सभी क्रियाएँ सम्मिलित होती हैं जिन्हें शिक्षक सीखने के उद्देश्य की प्राप्ति के लिए सम्पन्न करता है ।' '

आई.के.डेवीज(I.K.Davies)

"योजना को चिन्तन और अभिवृद्धि समझना चाहिए । अत: शिक्षण में इसका उचित स्थान निर्धारित किया जाना चाहिए ।' '

मरसेल (Mursell)

"शिक्षण योजना एक शिक्षक द्वारा निर्मित योजना है, जिसके द्वारा शिक्षण उद्देश्यों की सफलता पूर्वक प्राप्ति की जा सकती है ।' '

डेवीज (Davies)

"शिक्षण एक उद्देश्य पूर्ण प्रक्रिया है । शिक्षक द्वारा शिक्षण योजना बनाते समय तीन बातों का ध्यान रखा जाना चाहिए : –

1. प्राप्तव्य क्या है?
2. प्राप्तव्य को कैसे प्राप्त किया जा सकता है?
3. प्राप्तव्य को प्राप्त कर लिया गया है या नहीं यह कैसे ज्ञात होगा?

इन तीनों प्रश्नों पर विचार करने पर तीन बिन्दु सामने आते हैं – शिक्षण उद्देश्य, अधिगम व्यवस्था और मूल्यांकन ।

7.3 शिक्षण योजना का महत्व (Importance of Planning)

सुनियोजित कार्य सफलता का आधार है । निश्चित लक्ष्य की प्राप्ति के लिए, कार्य को सुगम, सरल बनाने के लिए उस पर पूर्व चिन्तन करना तथा क्रियान्विति पर विचार करना शिक्षण योजना है । योजनाबद्ध कार्य, क्रमबद्ध होता है । अध्यापक द्वारा सत्र पर्यन्त किये जाने वाले कार्य की योजना बना लेने से सभी कार्य संतुलित रूप से, पूरी तरह से तथा सुगमता से सम्पन्न होते हैं। योजनाबद्ध कार्य करने से कार्य के सभी पक्षों की समान रूप से यथा–समय क्रियान्विति होती है। शिक्षण की योजना ठीक उसी प्रकार महत्वपूर्ण है जैसे किसी मकान को बनाने की योजना या अन्य किसी रचनात्मक कार्य की योजना । बिना योजना के मकान बनाने से श्रम और धन दोनों का अपव्यय होगा । यदि अध्यापक अपने कार्य के बारे में पूर्व चिन्तन कर ले तथा अध्यापन के कार्य को भली प्रकार से सम्पन्न करने की रूपरेखा तैयार कर ले तो उसका अध्यापन न केवल सरल अपितु प्रभावी रूप से सम्पन्न हो सकेगा । शिक्षण योजना बनाना निम्नांकित बिंदुओं की दृष्टि से महत्वपूर्ण है –

1. शिक्षण योजना शिक्षण कार्य को निश्चित दिशा प्रदान करती है ।
2. विषय वस्तु को एक तार्किक क्रम में व्यवस्थित करती है ।
3. अध्यापक विषय–वस्तु से संबधित तथ्यो, पदों, प्रत्ययों, सिद्धान्तों आदि को अपनी स्मृति में सजीव कर उन पर पूर्व चिन्तन कर लेता हैं ।
4. बालक व्यवहार के तीनों पक्ष–ज्ञानात्मक, भावात्मक तथा क्रियात्मक के विकास हेतु संगठित प्रयास निश्चित करता है।
5. आवश्यकतानुसार समय का निर्धारण पहले से ही कर लेने से सभी इकाइयों को उनके महत्व एवं कठिनाई के स्तर के अनुसार समय मिलना संभव हो जाता है।
6. शिक्षणोपयोगी सामग्री का चयन कर उपयोग में लाया जा सकता है ।
7. उपलब्ध समय का सदुपयोग करना संभव हो जाता है ।
8. पूर्व नियोजन से शिक्षक का कार्य सरल तथा शिक्षण प्रभावी होता है, जिससे उसका मनोबल बढ़ता है ।

7.3.1 संस्कृत शिक्षण योजना का महत्व (Importance of Planning in Sanskrit)

बालक के दैनिक जीवन में संस्कृत का प्रयोग नहीं होता है तथा संस्कृत के योग्य अनुभवी प्रशिक्षित तथा साथ ही विषय के प्रति समर्पित व्यक्तित्व वाले अध्यापकों का अभाव है, ऐसी स्थिति में संस्कृत शिक्षण में योजना का विशेष महत्व है।

7.3.2 संस्कृत शिक्षण में योजना के आधार (Bases of Planning in Sanskrit Teaching)

संस्कृत शिक्षण की योजना बनाते समय अध्यापक को निम्न लिखित बातों की जानकारी प्राप्त कर लेनी चाहिए और इनको आधार बना कर योजना का निर्माण करना चाहिए –

1. गतवर्ष की संस्थिति तथा लक्ष्य प्राप्ति में आई कठिनाइयां ।
2. गतवर्ष की अनुभूत कठिनाइयों पर चिन्तन और उनका समाधान ।
3. वर्तमान सत्र में संभावित कठिनाइयाँ व उनके निराकरण के उपाय ।
4. योजना पूर्ति के सहायक साधन व उनकी प्राप्ति के उपाय ।
5. विधालय में उपलब्ध साधन ।
6. संस्कृत शिक्षण के उद्देश्य, पाठ्यक्रम और पाठ्यपुस्तकें ।
7. शिक्षा सत्र का पंचांग, शिक्षण दिवस, प्रति सप्ताह निर्धारित कालांश ।
8. छात्रों का संस्कृत स्तर ।
9. पाठ्यपुस्तक में निर्धारित पाठ, व्याकरण कार्य, रचनाकार्य, लिखित अभ्यास कार्य।
10. छात्र संख्या ।
11. पिछले सत्रों के अनुभव तथा विद्यालय योजना आदि ।

स्व परख प्रश्न (Self Check Questions)

1. शिक्षण योजना की परिभाषा लिखिए ।
2. शिक्षण की योजना बनाते समय किन तीन बातों का ध्यान रखना चाहिए ।
3. शिक्षण योजना की कोई दो आवश्यकताएँ लिखिए ।
4. संस्कृत शिक्षण में योजना का क्या महत्व है?
5. संस्कृत शिक्षण योजना के कोई तीन आधार लिखिए?

7.3.3 संस्कृत शिक्षण के लिए योजनाओं के प्रकार (Types of Planning for Teaching of Sanskrit)

शिक्षण के लिए विषयाध्यापक को मुख्यतः निम्नांकित योजनाएँ बनानी पड़ती हैं – वार्षिक योजना, मासिक योजना, साप्ताहिक योजना, इकाई योजना, पाठयोजना तथा अभ्यास कार्य देने की (गृह कार्य) योजना ।

शिक्षण योजना दो प्रकार की होती है, दीर्घकालिक योजना तथा अल्पकालिक योजना। दीर्घकालिक योजना में वार्षिक तथा मासिक योजना सम्मिलित हैं।

7.3.4 वार्षिक तथा मासिक योजना (Annual and Monthly Planning)

कक्षा के संस्कृत विषयक सम्पूर्ण पाठ्यक्रम को पाठ्यपुस्तक के पाठों का सत्र भर में पढ़ाने का मासिक कार्य विभाजन करना वार्षिक व मासिक योजना कहलाती है । माह में कौन–कौन से पाठ पढ़ाने हैं, व्याकरण व रचना में किस–किस का शिक्षण करवाना है इसका निर्धारण सत्र के प्रारंभ में ही कर लिया जाना चाहिए । अध्यापक को संस्था की ओर से एक दैनन्दिनी दी जाती है । शिक्षण कार्य का विभाजन इसमें अंकित कर लिया जाता है ।

ध्यातव्य बातें (Points to be kept in Mind)

अध्यापक को पाठ्य पुस्तकें, शिक्षाक्रम तथा पंचाग द्वारा सत्र में उपलब्ध कालांशों की संख्या तथा सत्र में उपलब्ध शिक्षण दिवस ज्ञात कर लेने चाईए। पंचाग में प्रति माह कार्य दिवस अंकित होते हैं । कार्य दिवस व शिक्षण–दिवस में अंतर है । सत्र के प्रथम सप्ताह में प्रवेश कार्य होता हे, सत्र में अर्द्धवार्षिक, वार्षिक परीक्षाएँ होती हैं । इन दिनों में वस्तुत: शिक्षण कार्य नहीं होता परन्तु ये कार्य दिवस होते है। शिक्षण दिवस से तात्पर्य है वे कार्य दिवस जिन में वास्तव में शिक्षण कार्य ही होता है । संस्कृत का शिक्षण सप्ताह मे प्राय. तीन दिन होता है । अत: इस विषय के शिक्षण–दिवस और भी कम होंगे । योजना बनाते समय यह भी ध्यान रखना चाहिए कि पाठ्यक्रम निर्धारित शिक्षण दिवसों से कुछ समय पहले अर्थात् वार्षिक परीक्षा से 20 दिन पहले समाप्त हो जाए और पुनरावृत्ति हो सके । पूरे सत्र के उपलब्ध कालांशों में पाठों की संख्या का भाग देकर प्रति पाठ के लिए कालांश संख्या का पता कर लिया जाए ताकि सभी पाठों का निश्चित समय में अध्यापन करवाया जा सके ।

वार्षिक योजना निर्माण करते समय अध्यापक को स्वयं की क्षमता तथा छात्रों के स्तर को भी ध्यान में रखना चाहिए । गत वर्ष की योजना का भी अवलोकन कर लेना चाहिए, साथ ही योजना निर्माण में अपने अनुभवी साथियों से भी विचार विमर्श करना अच्छा रहता है । योजना का स्वरूप लचीला होना चाहिए ताकि आवश्यकतानुसार परिवर्तन भी किया जा सके । प्रत्येक पाठ को उसके काठिन्य स्तर व प्रकृति के अनुसार कालांश दिय जाने चाहिए । अध्यापक को शिक्षण के समय जिस प्रकार की शिक्षण सहायक सामग्री की आवश्यकता हो उसकी एक सूची तैयार कर उनकी विद्यालय में उपलब्धि की जानकारी भी पूर्व में ही कर लेनी चाहिए। इस प्रकार तैयार वार्षिक योजना सत्र भर चलने वाले शिक्षण कार्य के लिए एक दिशा सूचक का कार्य करती है।

7.3.5 वार्षिक योजना का महत्व (Importance of Annual Plan)

वार्षिक योजना बना लेने से सत्र भर अध्यापन में सहायता मिलती है और निर्धारित समय पर कार्य सम्पन्न होता है । इससे इकाई योजना तथा दैनिक पाठ योजना का आधार बनता है। मूल्यांकन की दृष्टि से भी वार्षिक योजना महत्वपूर्ण है । इसमें प्रथम, द्वितीय, तृतीय परख तथा अर्द्धवार्षिक परीक्षा तक करवाये जाने वाले पाठ्यक्रम का उल्लेख होता हैं । वार्षिक योजना में प्रत्येक शिक्षण इकाई के पूर्ण होने पर इकाई–मूल्यांकन तथा सुधारात्मक अध्यापन की भी व्यवस्था होती है । इससे शिक्षण की सफलता का समय–समय पर शिक्षक को आभास होता रहता है तथा विद्यार्थीयों का उपचारात्मक शिक्षण भी हो जाता है।

वार्षिक योजना का प्रारूप (Format of Annual Plan)

क्रं स.	नाम माह	शिक्षण दिवस संख्या	उपलब्ध कलांशों की संख्या	माह मे शिक्षण हेतु पाठो की क्रम संख्या	व्याकरण कार्य प्रस्तावित	रचना कार्य प्रस्तावित	देय लिखित कार्य
1	2	3	4	5	6	7	8
1	अगस्त	20	10	पाठ क्रमांक	लट्,लोट्,व विधि लिङ् लकार का प्रयोग	तीनों लकारो के वाक्यो की रचना	पर्यावरण के प्रति कर्तव्य तथा श्लोको से मिलने वाली शिक्षा

7.3.6 शिक्षण की अल्पकालिक योजना के अन्तर्गत सामान्यत: दो योजनाएँ अर्थात् इकाई योजना तथा पाठ योजना आती है।

(क) इकाई योजना का अर्थ तथा परिभाषाएँ (Meaning and Definations of Unit Plan)

इकाई ज्ञानानुभवो के अनुभवो का एकीकृत रूप है । ऐसे अनुभव जो कि आपस में संबन्धित हों जिन्हें एक साथ पढ़ाया जा सके, शिक्षण इकाई के अन्तर्गत आते हैं । इकाई योजना सम्पूर्ण शिक्षण प्रक्रिया का स्पष्ट चित्र है । इकाई योजना शिक्षण की वह विधि हें जिसके द्वारा विषया वस्तु, शिक्षण विधियों तथा शिक्षण प्रविधियों को इस प्रकार से गठित किया जाता है जिससे शिक्षण प्रभावी हो सके । इस दृष्टि से इकाई योजना को अध्यापक के कार्य करने की रूपरेखा अथवा अध्यापक की व्यूह रचना माना गया है । यह योजना पूर्व चिन्तन पर आधारित है तथा इसकी समाप्ति मूल्यांकन द्वारा होती है । इकाई योजना एक आधार पत्रक है। जिसमे शिक्षण उद्देश्य, विषयवस्तु, अध्ययन–अध्यापन स्थितियाँ, सहायक शिक्षण–सामग्री, नियत कार्य तथा मूल्यांकन आदि की स्पष्ट रूपरेखा होती है ।

परिभाषाएँ –

"ईकाई किसी विषय का बड़ा उपभाग होती है, जिसमें कोई मूलभूत सिद्धान्त होता है । इस सिद्धान्त या प्रकरण के अनुसार ही छात्र–क्रियाओं का इस प्रकार नियोजन किया जाता है कि उन्हें महत्वपूर्ण अनुभव प्राप्त हो सकें ।"

हैरम (Herram)

"इकाई ऐसी विषय वस्तु की रूपरेखा है जो विद्यार्थी की आवश्यकताओं और रुचियों से संबन्धित होने से अपने आप में अलग सी दिखाई देती है ।

समफोर्ड (Samford)

"एक जैसी वस्तुओं का समूह जो कि अधिगमकर्ता द्वारा बोधगम्य हो इकाई कहलाती है।"

प्रेस्टान (Prestone)

"इकाई–योजना अध्यापक द्वारा पूर्व चिन्तन, कि शिक्षण की एक निश्चित अवधि में विद्यार्थी क्या प्राप्त करेंगे तथा कैसे सफलतापूर्वक प्राप्त करेंगे, को प्रदर्शित करती है । "

वाल्टरपियर्स तथा माइकललोर्बर (Walter D. Pierce and Michael Lorber)

(ख) संस्कृत इकाई पाठ योजना (Sanskrit Unit Plan)

संस्कृत की पाठ्यपुस्तक के पाठों की रचना एकाधिक उद्देश्यों को लेकर की जाती है। यदि पाठ बड़ा हो तो उसकी दो, तीन अन्वितियों हो जाती हैं, एक पाठ को भाषा तत्व, रचना तथा शैली की दृष्टि से कई रूपों में पढ़ाया जा सकता है । अध्यापक शिक्षण की पूर्व तैयारी के लिए उस पाठ के सभी उद्देश्यों का आधार लेकर शिक्षण की योजना बनाता है । पाठ्य–पुस्तक मे एक ही उद्देश्य या एक ही विधा के एकाधिक पाठ होते हैं इनकी एक इकाई बनाकर शिक्षण की जो योजना बनाई जाती है वह इकाई पाठ योजना होती है ।

(ग) संस्कृत–इकाई –योजना का निर्माण (Preparation of Sanskrit Unit Plan)

इकाई का निश्चय प्रकरण, प्रसंग या विधा के अनुसार किया जा सकता है । उदाहरणार्थ – पाठ्य पुस्तक में भारत प्रशंसा का गद्य पाठ व कविता पाठ हो तो इन दोनों पाठों का एक ही प्रसंग होने के कारण एक इकाई बन सकती है, कहानी पाठ यदि दो तीन हों तो उनकी एक इकाई बन सकती है, सुभाषितानि, सूक्तियाँ, मधुबिन्दव आदि की एक इकाई हो सकती है । व्याकरण में लकार, उपसर्ग, प्रत्यय, सन्धि के अनुसार अलग – अलग इकाई पाठ बन सकते हैं। रचना पाठों में कहानी लेखन, दृश्य वर्णन जीवनी आदि की एक – एक इकाई बन सकती है। एक इकाई पाठ का गठन इन आधारों पर हो सकता है -

1. एक ही विधा वाले दो तीन पाठों को मिलाकर।
2. एक पाठ के दो–तीन दैनिक पाठ बनाकर।
3. एक ही विषया–वस्तु के दो–तीन पाठों को मिलाकर।

(ग) इकाई योजना का प्रारूप (Format of Unit Plan)

1. कक्षा – विषय – इकाई –
2. इकाई संख्या – (वार्षिक योजनानुसार)
3. इकाई शिक्षण हेतु आवश्यक कलांश –
4. आवृत्ति हेतु आवश्यक कलांश –
5. मूल्यांकन हेतु आवश्यक कालांश –
6. सुधारात्मक अध्यापन हेतु आवश्यक कालांश -

उप इकाई एव प्रकरण	शिक्षण बिन्दु	उदेश्य एव व्यवहारगत परिवर्तन	अध्यानाध्यापन संस्थितया		शिक्षण सहायक सामग्री	मूल्यांकन	
			शिक्षक क्रिया	छात्र क्रिया		पाठान्तर्गत	पाठोपरांत
1	2	3	4	5	6	7 8	

(घ) इकाई पाठ योजना का महत्व

इकाई योजना सम्पूर्ण पाठ्यक्रम और दैंनिक पाठ को जोड़ने वाली अत्यन्त महत्वपूर्ण कड़ी है । इकाई–शिक्षण में सम्पूर्ण से अंश की ओर बढ़ा जाता है जो कि शिक्षण का मूल्यवान सूत्र है । इकाई शिक्षण में विषय वस्तु की दृष्टि से समग्रता होती है, यह अपने आप में एक संपूर्ण अनुभव पर आधारित होती है । इसमें शक्ति व सामर्थ्य का अपव्यय नहीं होता । इस योजना से पाठ के सभी पक्षों का सम्यक रूप से क्रमबद्ध शिक्षण होता है । एक ही विधा या प्रसंग के सभी पाठों का शिक्षण एक साथ होने से शिक्षण में सुगमता आती है व समय की बचत होती है और पाठ्य सामग्री सरल व बोधगम्य हो जाती है ।

स्व परख प्रश्न) Self Check Questions)

1. संस्कृत शिक्षण की योजना के प्रकारों का उल्लेख कीजिए ।
2. इकाई योजना का अर्थ लिखिए ।
3. इकाई योजना का क्या महत्व है?
4. दैनिक पाठ योजना का अर्थ लिखिए ।
5. दैनिक पाठ योजना एवं इकाई पाठ योजना में अन्तर लिखिए ।
6. अच्छी पाठ योजना की तीन विशेषताएँ लिखिए ।
7. संस्कृत शिक्षण में दैनिक पाठ योजना क्यों आवश्यक है ।

7.3.7 पाठ योजना का अर्थ व परिभाषाएँ (Meaning and Definations of Lesson Plan)

पाठ योजना शिक्षण की पूर्व तैयारी है जिसे शिक्षक पूर्व चिन्तन के आधार पर अधिगम एवं शिक्षण–सिद्धान्तों को ध्यान में रखकर अध्यापन हेतु तैयार करता है । पाठयोजना शिक्षक की एक कलांश के शिक्षण की लिखित योजना है जिसमें वह विद्यार्थी को अध्यापन के लिए आवश्यक पूर्व ज्ञान, पाठ के लिए विद्यार्थियों को तत्पर करने का तरीका, शिक्षक–शिक्षार्थी क्रियाओं का क्रम, शिक्षण के प्राप्य उद्देश्य तथा मूल्यांकन इत्यादि के बारे में चिन्तन करता है । पाठ–योजना केवल एक आधार पत्रक नहीं है जिसका उसे अन्धानुकरण करना है, अथवा अक्षरश:

पालन करना है अपितु यह एक पथ–प्रदर्शक है और जिसमें अध्यापक अपने शिक्षण को सफलतापूर्वक सम्पन्न करने के लिए विवेक पूर्ण योजना निर्माण करने अर्थात् परिवर्तन करने के लिए स्वतंत्र है ।

पाठ योजना को शिक्षा शास्त्रियों ने अनेक प्रकार से परिभाषित किया है । कुछ प्रमुख परिभाषाएँ इस प्रकार हैं –

"पाठ योजना उन उपलब्धियों का शीर्षक है जिन्हें शिक्षक कक्षा में प्राप्त करना चाहता है । इसमें वे सब साधन व क्रियाएँ आयेंगी जिनकी सहायता से वे उपलब्धियाँ प्राप्त की जायेंगी।"

बासिंग (Bossing)

"शिक्षण–व्यवस्था के सभी पक्षों के व्यावहारिक रूप का आलेख ही पाठयोजना है ।"

डेवीस (Davies)

"पाठयोजना एक पथ प्रदर्शक, कक्षा–क्रियाओं की क्रमिक निर्देशिका आवश्यक शिक्षण बिन्दुओं की सूचिका, शिक्षक–शिक्षार्थी अन्त :क्रिया की विवरणिका तथा मूल्यांकन द्वारा शिक्षार्थी की प्रगति की सूचक है ।"

पुरोहित, व्यास शर्मा (Purohit, Vyas & Sharma)

"पाठ योजना एक कार्य योजना है । इसमें अध्यापक की शिक्षार्थियों के ज्ञान एवं क्षमताओं की जानकारी, शिक्षण के उद्देश्य से पढ़ाई जाने वाली पाठ्यवस्तु का ज्ञान तथा शिक्षण–विधियों को प्रभावशाली रूप से कक्षा में उपयोग का वर्णन होता है।"

लेस्टर बी. स्टेण्डस (Lester B.Stands)

"दैनिक पाठ योजना के निर्माण में उद्देश्यों को परिभाषित करना, पाठ्यवस्तु का चयन करना, उसे क्रमबद्ध रूप से व्यवस्थित करना और प्रस्तुतीकरण की विधियों तथा प्रक्रियाओं का निर्धारण करना है ।"

बाइनिंग एवं बाइनिंग (Bining & Bining)

"पाठ योजना से पता चलता है कि बालक ने क्या पढ़ा है? आगे किस दिशा में उसका मार्ग दर्शन किया जाए और तत्काल उसे क्या पढ़ाया जाए? "

डा. कमल भाटिया एवं बलदेव भाटिया

तत्वत : पाठ योजना में तीन बातों का समावेश होता है–

1. छात्र का पूर्व ज्ञान क्या है?
2. पाठ का उद्देश्य क्या है?
3. पाठ्यवस्तु की रूपरेखा किस प्रकार बनाई जाए?

पाठ योजना वस्तुत: छात्र तथा अध्यापक की उन समस्त प्रत्यक्ष क्रियाओं और अन्त: क्रियाओं का सम्पूर्ण आलेखात्मक विवरण है जिन्हें वे कक्षा के समय प्रयोग में लाते हैं । साथ ही पाठ–योजना में पाठ का उद्देश्य एवं उद्देश्य को प्राप्त करने के मार्ग तथा उद्देश्य की जाँच से सम्बन्धित सभी पक्षों का उल्लेख होता है ।

(क) दैनिक पाठ–योजना की आवश्यकता (Need of a Good Lesson Plan)

निम्न बिन्दु दृष्टव्य हैं –

1. अध्यापन कार्य की सफलता, पाठ योजना पर आधारित होती है ।
2. पाठ के उद्देश्यों की पूर्ति में पाठ योजना सहायक है ।
3. अध्यापन कार्य की सुव्यवस्था के लिए पाठ योजना आवश्यक है ।
4. क्रमबद्ध शिक्षण तथा छात्रों के उचित मार्ग दर्शन के लिए पाठयोजना की आवश्यकता है ।
5. पाठ योजना छात्रों व अध्यापकों के मूल्यांकन की दृष्टि से तथा रुचिपूर्ण शिक्षण के लिए आवश्यक है ।
6. अध्यापन में रही कमी को दूर करने 'के लिए तथा विभिन्न शिक्षण विधियों के सफल प्रयोग के लिए पाठयोजना सहायक के रूप में काम करती है ।
7. अध्यापक प्रशिक्षण में छात्र अध्यापक की त्रुटि सुधार की दृष्टि से पाठ योजना के निर्माण की अत्यन्त आवश्यकता है ।
8. अध्यापक प्रशिक्षण में विषयगत बारीकियों एवं विशिष्ट विधियों के अभ्यास का आधार पाठ–योजना ही है । अत: इसके निर्माण एवं इसी के अनुसार शिक्षण की अत्यन्त आवश्यकता है ।

(ख) अच्छी पाठ योजना के आवश्यक तत्व (Essential Elements of a Good Lesson Plan)

जो पाठ योजना शिक्षक को अपने उद्देश्यों की प्राप्ति में सफलता प्रदान करे, वही योजना अच्छी होती है । शिक्षक पाठ–योजना बनाते समय अपनी सूझ–बूझ तथा विवेक का सहारा लेते हैं, अत: एक निश्चित नियम इसके निर्माणार्थ प्रस्तुत किया जाना संभव नहीं, तथापि एक अच्छी पाठयोजना के आवश्यक तत्व इस प्रकार हो सकते हैं–

1. पाठ–योजना को लिखित रूप से तैयार करना चाहिए ।
2. पाठ–योजना में शिक्षण बिन्दुओं का स्पष्ट उल्लेख हो ।
3. योजना में पढ़ायी जाने वाली पाठ्यवस्तु छात्रों के पूर्व–ज्ञान पर आधारित हो ।
4. शिक्षण उद्देश्यों को शिक्षण बिन्दुओं पर आधारित कर व्यवहार परिवर्तन के रूप में लिखा जाना चाहिए ।
5. रोचक व प्रेरणादायक शिक्षण विधियों को उपयोग में लाना चाहिए ।
6. छात्र से पूछे जाने वाले प्रश्न तथा उनके संभावित उत्तरों को स्पष्ट भाषा में लिखना चाहिए ।
7. पाठाध्यापन के समय प्रयोज्य शिक्षण सामग्री का स्पष्ट उल्लेख हो ।
8. छात्रों की प्रगति का मूल्यांकन करने वाले प्रश्न शिक्षण–उद्देश्यों को ध्यान में रख कर बनाये जाने चाहिए ।

7.3.8 संस्कृत शिक्षण पाठ योजना (Lesson Plan of Sanskrit Teaching)

पाठ योजना कक्षा–शिक्षण की क्रियाओं का पूर्व–निर्धारण एवं नियोजन है । इसमें विषय–वस्तु को एक निश्चित क्रम में व्यवस्थित करना, शिक्षण विधि का पूर्व निर्णय कर, सहायक सामग्री, दैनिक जीवन से सम्बन्धित उदाहरणों का यथास्थान उल्लेख करना, अनुमानित कठिनाइयों एवं समस्याओं का हल प्रस्तुत करना तथा शिक्षक–शिक्षार्थी क्रियाओं को व्यवस्थित कर लिखना जिसमें कि शिक्षण–उद्देश्य प्राप्त हो सकें, सम्मिलित हैं । संस्कृत शिक्षण में संस्कृत की विभिन्न विधाओं का शिक्षण आता है जिनमें – व्याकरण शिक्षण, गद्य–शिक्षण, पद्य शिक्षण, नाटक शिक्षण, कथा शिक्षण, रचना तथा अनुवाद शिक्षण सम्मिलित हैं । प्रमुख विधाओं की पाठयोजनाओं के प्रारूप दिये जा रहे हैं ।

(क) व्याकरण शिक्षण (Teaching of Grammar–Importance and Need)

किसी भी भाषा को सीखने के लिए उस भाषा की वर्ण रचना और पद रचना का ज्ञान अति आवश्यक है । भाषा की पद रचना के लिए किसी भी वाक्य में कर्ता, क्रिया, कर्म आदि के प्रयोग को जानना भी अनिवार्य हैं । संस्कृत जानने के लिए संस्कृत भाषा की ध्वनि, अर्थ और वाक्य तीनों को ही जानना आवश्यक है । संस्कृत भाषा में सन्धि, समास, लिंग, वचन, कारक, उपसर्ग, विशेषण और काल के आधार पर पद–विन्यास के नियमों को जानकर व्यवहार में लाने के लिए व्याकरण शिक्षण की अति आवश्यकता है । संस्कृत ऐसी भाषा है जिसके व्याकरण को जाने बिना उसे सीखना तो दूर उसका उच्चारण करना भी अत्यन्त कठिन होता है ।

व्याकरण शिक्षण की प्रमुख दो विधियाँ हैं– आगमन तथा निगमन । आगमन विधि में विभिन्न उदाहरणों द्वारा विषय को स्पष्ट किया जाता है और उसका सामान्य नियम निर्धारित किया जाता है । निगमन विधि आगमन विधि के विपरीत है । इसमें पहले नियम बता दिया जाता है फिर उससे संबन्धित उदाहरण दिये जाते हैं ।

(ख) व्याकरण शिक्षण के सोपान (Steps of Teaching ofg Grammer)

व्याकरण शिक्षण संबंधी पाठ योजना तैयार करते समय निम्नलिखित क्रम को ध्यान में अवश्य रखना चाहिए–

1. परिचयात्मक जानकारी
2. उद्देश्य एवं व्यवहारगत परिवर्तन
3. सहायक सामग्री
4. पूर्व ज्ञान
5. प्रस्तावना
6. उद्देश्यकथन/पाठ्याभिसूचन
7. प्रस्तुतीकरण
    - (क) उदाहरण शब्द अथवा वाक्य
    - (ख) विश्लेषणात्मक प्रश्नों के साथ श्यामपट्ट कार्य द्वारा विकास
    - (ग) नियम निर्धारण
    - (घ) प्रयोग एवं अभ्यास कार्य

8. गृहकार्य

7.3.9 संस्कृत अनुवाद शिक्षण (Teaching of Sanskrit Translation)

महत्व – मातृभाषा से संस्कृत अनुवाद की क्रिया के बिना संस्कृत भाषा का ज्ञान नहीं हो सकता । अनुवाद सीखने के बाद ही छात्र अपने लिखित /मौखिक विचारों द्वारा आत्माभिव्यक्ति कर सकते हैं अथवा नहीं । अनुवाद में तीन रूप दिखाई देते हैं– (1) तथ्यानुवाद (2) अक्षरश: अनुवाद (3) छायानुवाद । सभी प्रकार के अनुवादों में भाषा के शब्दों के स्थान पर संस्कृत शब्द, वचन, लिंग, कारक आदि के आधार पर रखे जाते हैं । उन नियमों को जानना अनुवाद शिक्षण का महत्वपूर्ण पक्ष है ।

अनुवाद शिक्षण की प्रमुख तीन विधियाँ प्रचलित हैं–

पुस्तकविधि, दुभाषिया विधि तथा तुलना एवं अनुकरण विधि । शिक्षण की प्रक्रिया में तीनों विधियों का समन्वय करना चाहिए । ध्यातव्य है कि अनुवाद भावानुवाद नहीं है इसे अक्षरश: अनुवाद माना जाना चाहिए ।

अनुवाद शिक्षण के सोपान (Steps of Teaching Traslation)

1. परिचयात्मक जानकारी
2. उद्देश्य एवं व्यवहारगत परिवर्तन
3. सहायक सामग्री
4. पूर्व ज्ञान
5. प्रस्तावना
6. उद्देश्यकथन / पात्याभिसूचन
7. प्रस्तुतीकरण (क) आदर्शवाचन (अनुवाद हेतु कुछ भाषा–पद पढ़े जायेंगे)
   (ख) काठिन्य निवारण (भाषा शब्दों के संस्कृत शब्द बताए जाएंगे)
8. प्रस्तुतीकरण प्रश्न (इन प्रश्नों के माध्यम से कर्ता, क्रिया आदि शब्दों को यथा स्थान निरुपित करके अनुवाद प्रस्तुत किया जाएगा । ऐसे अनेक, एक ही काल के वाक्यों को अनुवाद करवाने का अभ्यास करवाया जाएगा)
9. संशोधन
10. पुनर्भ्यास कार्य
11. गृह कार्य

7.3.10 संस्कृत गद्य–शिक्षण (Teaching of Sanskrit Prose)

महत्व – संस्कृत साहित्य में गद्य का प्रयोग निश्चित नहीं है लेकिन यजुर्वेद में हमें प्रथम बार गद्य के दर्शन होते हैं । तैतरीय संहिता तक हम गद्य का दर्शन कर सकते हैं । उपनिषदों में भी गद्य का भाग पद्य के भाग से अधिक है । इससे विदित होता है कि वैदिक काल में भी गद्य का प्रयोग होता था ।

संस्कृत गद्य की विशेषता है उसकी सामासिकता, उसकी लघुकायता । जो विचार दूसरी भाषा में बहुत बड़े वाक्यों में व्यक्त किये जाते हैं वे संस्कृत गद्य में एक ही पद में अभिव्यक्त किये जा सकते हैं । इस का एक मात्र कारण समास ही हैं । वे ही संस्कृत गद्य के प्राण हैं ।

गद्य को कवियों की कसौटी कहा गया हैं – 'गद्य कवीनां निकष वदन्ति' क्योंकि काव्य में कवि की व्याकरण सम्बन्धी त्रुटियों को अनदेखा कर दिया जाता है किन्तु गद्य शिक्षण के बिना वर्तमान पाठ्यक्रम पढ़ाया ही नहीं जा सकता अत: इसकी शिक्षण योजना का महत्व स्वत: सिद्ध है ।

गद्य–शिक्षण के सोपान (Steps of Sanskrit Teaching)

1. परिचयात्मक जानकारी
2. उद्देश्य एवं व्यवहारगत परिवर्तन
3. सहायक सामग्री
4. पूर्व ज्ञान
5. प्रस्तावना
6. उद्देश्यकथन/पाठ्याभिसूचन
7. प्रस्तुतीकरण (क) आदर्श वाचन
   (ख) अनुकरण वाचन
   (ग) अशुद्धि संशोधन
8. बोध प्रश्न
9. काठिन्य निवारण
10. विचार विश्लेषणात्मक प्रश्न
11. अध्यापककथन /सार कथन
12. मूल्यांकन प्रश्न
13. गृह कार्य

7.3.11 संस्कृत में काव्य शिक्षण (Teachin of Sanskrit Poetry)

महत्व – काव्य द्वारा मानव का भावनात्मक विकास होता है । काव्य हमारी भावनाओं का उत्कर्ष है । साहित्य की विविध विधाओं में काव्य का अपना विशिष्ट महत्व है । विश्व की किसी भी भाषा का आदि साहित्य हमें कविता के रूप में ही मिलता है । मानव हृदय सदा से ही सौन्दर्योन्मुखी रहा है । वस्तुत: कविता जितना अधिक हृदय को स्पर्श करती है उतना साहित्य की अन्य कोई विधा नहीं करती । कविता का जीवन में अत्यधिक महत्व है, अत: कविता का पठन–पाठन दोनों आवश्यक है। कविता को क्यों पढ़ा और पढ़ाया जाए, इसके विषय में संस्कृत के आचार्यो के अनुसार कविता पठन–पाठन से धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की प्राप्ति होती है । कविता से कीर्ति की प्राप्ति होती है । काव्य से यश एवं अर्थ की प्राप्ति होती है, लोकाचार का ज्ञान होता है । अशिव (अमंगल) का निवारण होता है तथा सद्य : परमानन्द की अनुभूति के साथ–साथ कान्तासम्मत उपदेश प्राप्त होता है ।

संस्कृत काव्य शिक्षण के सोपान (Steps of Sanskrit Poetry Teaching)

1. परिचयात्मक जानकारी
2. उद्देश्य एवं व्यवहारगत परिवर्तन
3. सहायक सामग्री

4. पूर्व ज्ञान
5. प्रस्तावना
6. उद्देश्यकथन /पाठ्याभिसूचन
7. प्रस्तुतीकरण (क) आदर्श वाचन
   (ख) अनुवाचन
   (ग) अनुकरण वाचन
   (घ) अशुद्धि संशोधन
   (ङ) बोध प्रश्न
   (च) काठिन्य निवारणा पदच्छेद /शब्दार्थ
   (छ) अध्यापक कथन
   (ज) सौन्दर्यानुभूति प्रश्न
8. पुन: सस्वर वाचन
9. पुनरावृत्ति प्रश्नामूल्यांकन प्रश्न
10. गृह कार्य

सोपान क्रमांक सात द्वारा प्रत्येक श्लोक या पद्यांश को पढ़ा लेने पर सम्पूर्ण पद्य पाठ की पुनरावृत्ति की जाए । प्राथमिक, माध्यमिक तथा उच्च स्तर पर कविता शिक्षण के लिए इन्हीं सोपानों का प्रयोग किया जाना चाहिए । आवश्यकतानुसार तथा विद्यार्थियों के मानसिक स्तरानुसार सोपानों पूर बल को न्यूनाधिक किया जा सकता है ।

7.3.12 संस्कृत रचना शिक्षण (Teaching of Sanskrit Composition)

आवश्यकता व महत्व – रचना का अर्थ निर्माण है । संस्कृत भाषा में अपने भावों और विचारों को अभिव्यक्त करते हुए गद्य, पद्य, निबन्धादि विधाओं की मौलिक रचना करने की क्षमता विकसित करना ही इस शिक्षण का उद्देश्य है । व्यक्ति अपने विचारों की अभिव्यक्ति लिखित और मौखिक दोनों प्रकार से कर सकता है किन्तु चूंकि संस्कृत मातृ– भाषा नहीं है अत : प्राथमिक कक्षा के विद्यार्थियों से मौखिक अभिव्यक्ति की अपेक्षा नहीं की जा सकती । वे केवल लिखित रूप से ही स्व विचाराभिव्यक्ति करने में सक्षम हो सकते हैं । इसी प्रयोजन की सिद्धि के लिए रचना शिक्षण करवाया जाता है ।

सामाजिक जीवन में अच्छे वक्ता व अच्छे लेखक दोनों ही सम्मानित होते हैं, लेकिन वक्ता का सम्मान उसके जीवन काल में ही होता है जबकि लेखक मर कर भी अमर रहता है, सदैव जीवित रहता हुआ लोगों को प्रेरणा प्रदान करता रहता है । आधुनिक शिक्षा प्रणाली में भी लिखित रचना का महत्व कम नहीं है क्योंकि परीक्षा लिखित ही होती है, अंक लेख के आधार पर ही दिये जाते हैं । इस दृष्टि से लिखित रचना वर्तमन शिक्षा का एक विशिष्ट अंग है । भावों की अभिव्यक्ति करना एक कठिन कार्य है और लिखित रचना करना उससे भी कठिन है क्योंकि इसके लिए भाषा पर पूर्ण अधिकार होना चाहिए । व्याकरण/वर्तनी की एक भी त्रुटि अर्थ का अनर्थ कर सकती है । लिखित रचना में विचारों को सुव्यवस्थित तथा शुद्ध रूप में लिखना

आवश्यक है । लेखक में प्रवीणता हेतु अत्यधिक अभ्यास अपेक्षित है । लेखन से 'मानसिक अनुशासन' की वृद्धि होती है ।

विभिन्न स्तरों पर रचना कार्य(Composition Work at Various Stage)

छात्रों के सम्मुख रचना किस तरह का व किस प्रकार रखा जाए यह भी एक विचारणीय प्रश्न है । शिक्षा– शास्त्रियों नें लिखित रचना शिक्षण की अनेक विधियाँ बताई हैं लेकिन सभी स्तरों पर रचना शिक्षण एक ही विधि से नहीं करवाया जा सकता इसलिए विभिन्न स्तरों पर रचना शिक्षण करवाते समय निम्नलिखित बातें ध्यातव्य हैं 1. प्रारम्भिक स्तर पर चित्रों द्वारा, प्रश्नों द्वारा, रिक्त स्थान पूर्ति द्वारा, पयार्य द्वारा, वाक्य प्रयोग द्वारा 2. माध्यमिक स्तर पर प्रश्नोत्तर पद्ध्ति से, शब्द चयन द्वारा, पर्याय द्वारा, शब्द निर्माण द्वारा, निकध लेखन द्वारा तथा संक्षिप्तीकरण द्वारा । 3. उच्च स्तर पर – शब्द निर्माण द्वारा, प्रश्नोत्तर पद्धति, संवाद लेखन से, पत्र–लेखन से, निबन्ध लेखन द्वारा, श्लोक रचना द्वारा ।

इसके अतिरिक्त उच्च स्तर पर अन्य रचना कार्य –

1. स्वयं की मौलिक रचना लिखना ।
2. कतिपय बिंदुओं के आधार पर कहानी रचना ।
3. डायरी लेखन तथा रिपोर्ट लेखन ।
4. संस्कृत समाचारों का अनुलेखन ।
5. सरल एकांकी व नाटक लेखन ।
6. भाषानुवाद (मातृ–भाषा से संस्कृत में) ।
7. भाषणादि का सार तथा महत्वपूर्ण बिन्दुओं का लेखन ।
8. सम्पादन के नाम पत्र–लेखन ।

संस्कृत–रचना शिक्षण के सोपान (Steps of Teaching of Sanskrit Composition)

प्राय: शिक्षक–प्रशिक्षण महाविद्यालयों में सिखाई जाने वाली रचना–शिक्षण योजनाके सोपान अग्रांकित हैं–

1. परिचयात्मक जानकारी
2. उद्देश्य एवं व्यवहारगत परिवर्तन
3. सहायक सामग्री
4. पूर्व ज्ञान
5. प्रस्तावना
6. उद्देश्यकथन/पाठ्याभिसूचन
7. प्रस्तुतीकरण (क) प्रश्नोत्तर /चित्र दिखाकर /संवादसुनाकर/रूपरेखा बताकर
8. संशोधन
9. श्यामपट्ट कार्य (रचना का प्रारूप)
10. गृह कार्य

स्व परख प्रश्न (Self Check Questions)

1. गद्य शिक्षण में बोध प्रश्नों का क्या प्रयोजन है?
2. व्याकरण शिक्षण के प्रमुख चार सोपान लिखिए ।
3. कविता शिक्षण में सौन्दर्यानुभूति प्रश्नों का क्या अर्थ है?
4. संस्कृत शिक्षण में रचना शिक्षण का क्या उद्देश्य है?
5. कविता शिक्षण का प्रमुख उद्देश्य लिखिए ।

7.4 सारांश (Summary)

योजना का अर्थ – कार्य को सफलतापूर्वक सम्पादित करने हेतु की गई पूर्व तैयारी ।

इकाई का अर्थ – एक जैसी वस्तुओं का समूह ।

दैनिक पाठ योजना का अर्थ – शिक्षण व्यवस्था के सभी पक्षों के व्यावहारिक रूप का आलेख ।

योजना के प्रकार – वार्षिक, दैनिक एवं इकाई योजना,

संस्कृत शिक्षण में दैनिक पाठ योजना के प्रकार– गद्य पाठ, कविता पाठ, व्याकरण पाठ, रचना पाठ एवं अनुवाद पाठ योजना ।

7.5 स्व–परख प्रश्नों के उत्तर (Answer to Self Check Question)

नोट:– इस हेतु सम्बन्धित सामग्री खण्ड का अध्ययन करिए ।

7.6 मूल्यांकन प्रश्न (Unit End Question)

1. शिक्षण योजना का अर्थ स्पष्ट करते हुए इसके महत्व पर प्रकाश डालिये ।
2. शिक्षण योजना में वार्षिक योजना का क्या स्थान है? स्पष्ट कीजिए ।
3. संस्कृत वार्षिक योजना बनाते समय किन बातों का ध्यान रखना चाहिए?
4. आठवीं कक्षा की सितम्बर, अक्टूबर माह की वार्षिक योजना तैयार कीजिए ।
5. इकाई योजना का अर्थ स्पष्ट करते हुए इसके महत्व पर प्रकाश डालिये ।
6. दैनिक पाठ योजना क्या है? स्वरूप की विवेचना कीजिए ।
7. दैनिक पाठ योजना की क्या आवश्यकता है? संस्कृत शिक्षण में इसका महत्व स्पष्ट कीजिए?
8. संस्कृत अध्यापन में व्याकरण शिक्षण योजना का महत्व स्पष्ट कीजिए ।
9. संस्कृत शिक्षण में अनुवाद शिक्षण किस प्रकार सहायक है? विवेचना कीजिए ।
10. गद्य शिक्षण की संस्कृत शिक्षण में क्या भूमिका है? स्पष्ट कीजिए ।
11. संस्कृताध्यापन में पद्य–शिक्षण की महत्ता दर्शाते हुए शिक्षा जगत में इसका योगदान बताइये
12. गद्य–शिक्षण तथा पद्य–शिक्षण की अध्यापन विधि में क्या अन्तर है? स्पष्ट कीजिए।
13. विभिन्न स्तरों पर रचना शिक्षण करवाते समय किन बातों का ध्यान रखा जाना चाहिए और क्यों?

7.7 संदर्भ ग्रन्थ (References)

- संस्कृत शिक्षण – डा. शकल पाण्डेय – विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा– 2
- संस्कृत शिक्षण – रघुनाथ सफाया
- संस्कृत शिक्षण – डा. शैलजा गौतम, डा. रजनी गौतम, विनोद पुस्तकर मंदिर, आगरा– 2
- संस्कृत शिक्षण – संतोष मित्तल - आर.लाल बुकडिपो, मेरठ
- संस्कृत व्याकरण – डा. प्रीति प्रभा गोयल, राजस्थानी ग्रंथागार, जोधपुर
- संस्कृत शिक्षण – डा. पुष्पा सोढ़ी, जैन प्रकाशन मंदिर, चौड़ा रास्ता, जयपुर
- संस्कृत शिक्षण – पं. मोती लाल जोशी, डा. मंजु शर्मा, देवनागर प्रकाशन, चौड़ा रास्ता, जयपुर
- भावी शिक्षकों के लिए आधारभूत कार्यक्रम – जे एन पुरोहित, एच. व्यास तथा एम एम. शर्मा, राजस्थान हिन्दी कथ अकादमी, जयपुर
- पाठ योजना निर्देशिका – आशा प्रकाशन गृह, करोल बाग, नई दिल्ली
- राघव पाठ–योजना सीरीज संस्कृत शिक्षण अनुग्रह प्रसाद शर्मा न्त्रिनोद 'पुस्तक मन्दिर, आगरा– 2

नोट – पाठ योजनाएँ (आदर्श) इकाई 13 के बाद दी गई हैं ।

इकाई – 8 (Unit–8)

विशिष्ट उदाहरणों सहित छात्र का संस्कृत में मूल्यांकन,निदानात्मक परीक्षण उपचारात्मक शिक्षण, मल्टीपल प्रश्न–पत्रों का निर्माण। प्रश्न बैंक का विकास, खुली पुस्तक परीक्षा हेतु विषय वस्तु आधारित प्रश्न

(Student Assesment in Sanskrit with specific Illustrations,Diagnostic Testing,Remedical Teaching,Development of Multiple Question Bank,Content Specific Question for Open Book Examination)

इकाई की रूपरेखा

8.0 उद्देश्य

8.1 प्रस्तावना

8.2 मूल्यांकन का अर्थ

8.3 मूल्यांकन का उद्देश्य

8.4 संस्कृत शिक्षण में सतत् मूल्यांकन

8.5 मूल्यांकन की औपचारिक विधि

8.6 भाषा अधिगम संबंधी मूल्यांकन

8.7 मातृभाषा एवं संस्कृत में अधिगम

8.8 भाषा कौशल एवं दक्षताएँ

8.9 विशिष्ट उदाहरण

8.10 निदानात्मक परीक्षण

8.11 उपचारात्मक शिक्षण

8.12 बहु विध प्रश्नों का निर्माण

8.13 प्रश्न बैंक का निर्माण

8.14 सारांश

8.15 स्व –परख प्रश्नों के उत्तर

8.16 मूल्यांकन प्रश्न

8.17 सन्दर्भ ग्रन्थ

8.0 इकाई के उद्देश्य (Objective of Units)

इस इकाई के अध्ययनोपरान्त आप –

- मूल्यांकन का अर्थ समझ सकेंगे ।
- मूल्यांकन के प्रकारों को जान सकेंगे ।
- भाषायी कौशलों एवं दक्षताओं से परिचित हो सकेंगे ।
- संस्कृत शिक्षण सतत मूल्यांकन की प्रक्रिया को जान सकेंगे ।
- संस्कृत में मूल्यांकन संबंधी विभिन्न घटकों से परिचित हो सकेंगे ।
- नीलपत्र निर्माण की प्रक्रिया को समझ सकेंगे ।
- संस्कृत में विभिन्न प्रश्नों की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे ।
- निदानात्मक परीक्षण के अर्थ एवं महत्व को समझ सकेंगे ।
- उपचारात्मक शिक्षण के अर्थ एवं महत्व को समझ सकेंगे ।
- बहुविध प्रश्नों के निर्माण एवं प्रश्न बैंक निर्माण के महत्व से परिचित हो सकेंगे ।

8.1 प्रस्तावना (Introduction)

शिक्षण उद्देश्याधारित क्रिया है । शिक्षण निरधारित उद्देश्यों के अनुरूप किया जाता है । शिक्षक इन उद्देश्यों को प्राप्त करने में कितना सफल रहा है? यह जानने के लिए शिक्षण व अधिगम का मूल्यांकन अधिगम प्रक्रिया का आवश्यक अंग है ।

8.2 मूल्यांकन का अर्थ (Meaning of Evaluation)

प्रत्येक विषय के शिक्षण के कुछ उद्देश्य होते हैं । इन उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए अध्यापक छात्रों के व्यवहार में कुछ परिवर्तन करने का प्रयास करता है । जब उसका प्रयास सफल होता हुआ लगने लगता है तब अध्यापक अपने किए हुए प्रयास का परिणाम जानने के लिए जो जाँच या परीक्षण करता है उसे मूल्यांकन कहा जाता है । मूल्यांकन और परीक्षा में अन्तर होता है । परीक्षा तो केवल पढ़ाए हुए कुछ अंशों या पाठों के आधार पर प्रश्न पूछकर (लिखित या मौखिक रूप में) ली जाती है। परीक्षा में प्रश्नों का पाठ के उद्देश्यों से कोई संबंध हो या न हो इसका ध्यान नहीं रखा जाता परन्तु मूल्यांकन में उद्देश्यों की प्राप्ति की जाँच की जाती है । यदि उद्देश्यों की प्राप्ति पूर्णरूप से न हो तो मूल्यांकन के आधार पर फिर शिक्षण किया जाता है । जब तक छात्रों में यथोचित परिवर्तन नहीं हो जाता तब तक शिक्षण और मूल्यांकन चलता रहता है । इस तरह मूल्यांकन एक सतत् प्रक्रिया है ।

8.3 मूल्यांकन का उद्देश्य (Objective of Evaluation)

संस्कृत शिक्षण के उद्देश्य पाठ्यक्रम में निर्धारित किये हुए होते हैं । इन निर्धारित उद्देश्यों के अनुरूप ही पाठ्य सामग्री का चयन और संकलन पाठ्यपुस्तकों में किया जाता है । पाठ्यपुस्तक में निर्धारित और संग्रहीत अंशों के माध्यम से छात्रों द्वारा किसी निश्चित सीमा तक भाषिक योग्यताओं की प्राप्ति और वैचारिक समझ का विकास मूल्यांकन का विषय होता है । भाषिक योग्यताओं के सन्दर्भ में छात्रों द्वारा पूर्व में विवेचित चार भाषायी कौशलों– (1) सुनना, (2) बोलना, (3) पढ़ना और (4) लिखना में अपेक्षित स्तर की दक्षता प्राप्त करना प्रधान उद्देश्य है । इन्हीं चार कौशलों में छात्रों की सम्प्राप्ति का विविध मूल्यांकन तकनीकों और

मनोवैज्ञानिक प्रक्रियों को अपनाते हुए मूल्यांकन किया जाना चाहिए । मूल्यांकन के सामान्यत : दो प्रकार होते हैं ,– (1) औपचारिक मूल्यांकन और (2) अनौपचारिक मूल्यांकन । ये दोनों मौखिक और लिखित रूप में किये जाने चाहिए । इन दोनों प्रकार के मूल्यांकनों के लिए सत्र पद्धति (Terminal) एवं सतत् पद्धति (Continuous) अपनाई जानी चाहिए । शिक्षा शास्त्री ऐसा मानते है कि सतत् मूल्यांकन पद्धति (Continuous Assesment) सम्प्राप्ति की दृष्टि से अधिक लाभदायक होती है, क्योंकि यह एक प्रकार से अनौपचारिक होती है और इसे अपनाने से छात्रों पर किसी प्रकार का मनोवैज्ञानिक दबाव नहीं पड़ता है । दोनों ही पद्धतियों के अपने–अपने फायदे हैं । गुण–दोष विवेचना के आधार पर किसी एक पद्धति को प्राथमिकता या वरीयता देना शिक्षण के आदर्श सिद्धान्तों के प्रतिकूल है ।

8.4 संस्कृत शिक्षण में सतत् मूल्यांकन (Contonuous Evaluation in Sanskrit Teaching)

सतत् मूल्यांकन शिक्षण की अभिन्न सहगामी क्रिया है । इसे प्रतिदिन के कक्षा शिक्षण में अपना कर छात्रों की सक्रिय सहभागिता सुनिश्चित की जा सकती है । शिक्षण के साथ–साथ सतत् मूल्यांकन हेतु निम्नानुसार प्रक्रिया अपनाई जानी अपेक्षित है ।

1. प्रतिदिन कक्षा में पढ़ाये जाने वाले पाठ्य पुस्तक के अंश का अध्यापक स्वयं आदर्श वाचन प्रस्तुत करें ।
2. आदर्श वाचन के पश्चात् छात्रों से अनुवाचन करवाया जाय ।
3. छात्रों द्वारा किये जाने वाले अनुवाचन में इस बात का ध्यान रहे कि सप्ताह में प्रत्येक छात्र को कम से कम एक–दो बार अनुवाचन का अवसर अवश्य मिले ।
4. प्रारम्भ के कुछ दिनों में इस प्रक्रिया पर नियमित बल दिया जाय । संभव है कि शिक्षण कार्य की प्रगति में इस प्रक्रिया से कुछ शिथिलता आ जाये, पर इससे छात्रों में संस्कृत भाषा सुनने और बोलने के कौशलों का विकास त्वरित गति से हो सकेगा, जिससे दूरगामी सुपरिणाम होंगे ।
5. जिन शब्दों के वाचन में छात्रों को कठिनाई महसूस हो, या जिनका उच्चारण अस्पष्ट हो, उन शब्दों को श्यामपट्ट पर लिख कर क्रम से पृथक्–पृथक् छात्रों द्वारा उच्चारण करवाया जाय ।
6. इन्हीं शब्दों को 4–6 बार गृहकार्य के रूप में छात्रों से लिखने को कहा जाय ।
7. पाठ्य पुस्तक में आये हुए पद्यांशों का शिक्षक द्वारा सस्वर वाचन किया जाय, और छात्रों से एकल तथा समवेत स्वरों से अनुवाचन करवाया जाय ।
8. नाटक के अंशों में प्रयुक्त संवादों को छात्रों से बोलने को कहा जाय ।
9. पढ़ाये गये अंश से संबन्धित प्रश्न पूछकर छात्रों की समझ और भावाभिव्यक्ति का मूल्यांकन किया जाय ।
10. पढ़ाये गये अंश से संबन्धित विचारों को समझने के संबंध में प्रश्न मौखिक पूछकर तथा गृहकार्य हेतु लिखने को कहा जाय ।

11. विशेष उत्सवों, अवसरों पर विद्यालय में आयोजित होने या समारोहों में संस्कृत के पद्यों के छात्रों द्वारा पढ़ने के कार्यक्रम रखे जाएँ ।
12. संस्कृत में वार्तालाप, संवाद और नाट्य प्रयोग के लिए छात्रों को प्रोत्साहित किया जाय।

उपर्युक्त प्रक्रियाएँ अपनाने पर छात्रों की सम्प्राप्ति का मूल्यांकन सहज हो जाता है । शिक्षकों को छात्रों की व्यक्तिगत सम्प्राप्ति का भी बोध हो जाता है । यह ध्यान रहे कि मूल्यांकन हेतु ऊपर बताई गई विधियों अनौपचारिक हैं, और इन्हें प्रतिदिन के शिक्षण कार्य का अभिन्न अंग बनाया जाना अपेक्षित है ।

8.5 मूल्यांकन की औपचारिक विधि

यह विधि निश्चित अन्तराल (3 माह,6 माह,सत्रान्त) पर अपनाई जाती है । इसमें औपचारिक प्रश्न पूछे जाते हैं । यह लिखित व मौखिक दोनों रूपों में प्रचलित है । प्रत्येक प्रश्न के लिए अंक निर्धारित होते हैं, और छात्रों के उत्तर की समीक्षा के आधार पर मूल्यांकन का आकलन करके अंक दिये जाते हैं । इस विधि द्वारा प्रमुख रूप से छात्रों की भाषायी कौशलों की सम्प्राप्ति, उनके द्वारा अर्जित ज्ञान, अर्थग्रहण में उनकी योग्यता, भावों और विचारों की समझ तथा उनके द्वारा भावाभिव्यक्ति में गुणवता के स्तर का मूल्यांकन प्रमुख उद्देश्य होता है । संक्षेप में कहें तो भाषा का लक्ष्य ही है– अर्थ, विचार और भावों को समझना और उन्हें अभिव्यक्ति करना । यह कार्य क्रमश: सुनकर और पढ़कर, तथा बोलकर, और लिखकर किया जाता है । ये ही भाषा के चार कौशल हैं और मूल्यांकन का उद्देश्य इन्हीं चार कौशलों के माध्यम से छात्रों में समझने और अभिव्यक्ति की दक्षता का आकलन करना है । औपचारिक मूल्यांकन के लिए भी प्रश्नों की पद्धति वही है जो अनौपचारिक या सतत मूल्यांकन के लिए बताई गई है । केवल दो बातें विशेष ध्यान देने की हैं कि – प्रथम तो प्रश्नों के चयन हेतु 3 माह, 6 माह, या पूरे सत्र पर्यन्त पढ़ाये गये अंशों का व्यापक क्षेत्र होता हे, और द्वितीय– औपचारिक मूल्यांकन के लिए $1^{1/2}$ या 3 घण्टे की निश्चित समय सीमा होती है । अत औपचारिक या सत्र मूल्यांकन में प्रश्नों के चयन में इस प्रकार की सावधानी अपेक्षित है, जिससे पाठ्यपुस्तक में निर्धारित सभी भाषायी या विचार परक पक्षों का सन्तुलन समावेश हो सके और जिनका उत्तर औसत छात्र द्वारा निर्धारित समयावधि में दिया जा सके । यह अध्यापक बन्धुओं की योग्यता, दक्षता, अनुभव और कल्पनाशीलता पर बहुत अधिक निर्भर करता है, तथापि मार्गदर्शन हेतु मूल्यांकन प्रश्नों के निर्धारण में निम्नानुसार सावधानी अपनाई जा सकती है–

1. प्रश्नों का चयन और निर्धारण पाठ्यक्रम में निर्धारित उद्देश्यों और पाठ्यपुस्तक में संकलित अंशों पर आधारित होना नितान्त आवश्यक है ।
2. छात्रों की ज्ञान, अर्थग्रहण और अभिव्यक्ति में सम्प्राप्ति के आकलन की दृष्टि से एतदनुरूप पृथक्–पृथक् प्रश्न होने चाहिए ।
3. प्रश्नों का स्तर सरल, सामान्य और कठिन के अनुपात में होना आवश्यक है ।
4. प्रश्नों का स्वरूप अधिकतम पाठ्यसामग्री के मूल्यांकन में सहायक आधार वाला होना चाहिए ।

5. प्रश्न वस्तुनिष्ठ, लघूत्तर वाले, अतिलघूत्तर वाले व निबन्धात्मक (एक, दो या अधिक अवतरण वाले) अर्थात् एक– दो शब्दों, एक–दो वाक्यों या 2–3 अवतरणों में उत्तर की अपेक्षा वाले होने चाहिए । इनमें भी विषय वस्तु, निर्धारित समयावधि व छात्रों की अपेक्षित औसत योग्यता की दृष्टि से तर्क–संगत अनुपात और संतुलन का ध्यान रखना आवश्यक है ।
6. प्रश्न ऐसे होने चाहिए जिससे पाठ्यक्रम में निर्धारित अंशों का प्रतिनिधि रूप में समग्र मूल्यांकन हेतु समावेश संभव हो सके ।

स्व–परख प्रश्न

1. मूल्यांकन का क्या अर्थ है?
2. मूल्यांकन एवं परीक्षा में क्या अन्तर है?
3. मूल्यांकन का क्या उद्देश्य है?
4. मूल्यांकन की औपचारिक विधि क्या है?
5. प्रश्नों के प्रकार लिखिए ।

8.6 संस्कृत में मूल्यांकन हेतु विषय वस्तु

8.6.1 पाठ्यपुस्तक

औपचारिक मूल्यांकन हेतु प्रश्न सर्वथा पाठ्यपुस्तक आधारित ही होने चाहिए । मूल्यांकन हेतु कुछ प्रश्न अपठित अंश के आधार पर भी दिये जाते हैं, पर अपठित अंश आधारित प्रश्न बनाते समय भी इस बात का विशेष ध्यान रखा जाना चाहिए कि सन्दर्भान्तर्गत अपठित अंश निर्धारित पाठ्यक्रम के स्तरानुरूप ही हो ।

पाठ्यपुस्तकों में विभिन्न राज्यों के शिक्षा मण्डलों द्वारा कक्षा 6–8 एवं 9–10 में "सरल से कठिन" की ओर शिक्षासूत्र के अनुसार निम्नांकित संस्कृत कथों से संकलित अंश पाये जाते हैं । प्राथमिक व उच्च प्राथमिक स्तर पर कहीं–कहीं स्वतंत्र रूप से लिखी गई पुस्तकें भी प्रचलन में हैं, उनमें विशेष बल भाषायी तत्वों (व्याकरण शिक्षण) पर मिलता है । सच तो यह है कि निर्धारित पाठ्यपुस्तक का स्वरूप कैसा भी हो, उनमें सन्निहित भाषायी तत्वों की तो एक रूपता रहती ही है । यहाँ दी गई ग्रन्थों की सूची केवल संकेत के लिए है । शिक्षकगण कृपया अपने क्षेत्र या विद्यालय हेतु निर्धारित पाठ्यपुस्तक को ही अपने संस्कृत शिक्षण और छात्र मूल्यांकन का आधार मानें ।

कक्षा 9–10 की निर्धारित पाठ्यपुस्तकों में प्राय: इन ग्रंथो से संकलित अंश निर्धारित होते रहे हैं–

पद्य

(1) वेद–उपनिषद्

(2) रामायण – महाभारत – श्रीमद् भगवदगीता,

(3) शुक्रनीति–चाणक्यनीति – नीति शतक– मनुस्मृति

(4) रघुवंश – कुमार संभव – किरातार्जुनीय

(5) स्तोत्र, प्रहेलिका, प्रकीर्णपद्य, सूक्तियाँ

(6) आधुनिक कवियों की रचनाएँ

गद्य

(1) पंचतन्त्र – हितोपदेश, जातकमाला, वेताल पञ्च, विंशतिका, दशकुमार चरित, शिवराज विजय, कादम्बरी,सिंहासन द्वात्रिभंसिका

(2) स्वप्नवासवदत्तम्, अभिज्ञान शाकुन्तलम्, दूतवाक्यम्, कर्णभारम्, मृच्छकटिक,

(3) आधुनिक लेखकों की रचनाएँ

8.6.2 व्याकरण

व्याकरण के अन्तर्गत (भाषायी तत्व) कक्षा 6–8 एवं 9–10 में उत्तरोतर स्तरानुरूप निम्नानुसार भाषायी तत्वों का समावेश पाया जाता है ।

1. वर्ण परिचय, उच्चारण स्थान
2. सन्धि (स्वर–व्यंजन, विसर्ग के कुछ भेद)
3. शब्दरूप (स्वरान्त, व्यञ्जनान्त, सर्वनाम के कुछ शब्द, विशेषण शब्द)
4. धातुरूप (भवादि, तुदादि, चुरादिगणो की कुछ धातुएँ, एवं अन्य गणों की दो–तीन, दो–तीन धातुएँ। लट्,लङ्,लोट्, विधीलिङ् मे)
5. अव्यय, उपसर्ग, क्रिया विशेषण,
6. प्रत्यय (कृदन्त, तद्धित, स्त्री, कुछ चुनेहुए भेद)
7. कारक–समास (सामान्य परिचय)

8.6.3 रचना

1. हिन्दी से संस्कृत तथा संस्कृत से हिन्दी में अनुवाद
2. संस्कृत में पत्र–लेखन व निबन्ध लेखन (संक्षिप्त)

जैसा कि पहले कहा जा चुका है, संस्कृत का भाषायी वातावरण छात्रों को नहीं मिलता है । उन्हें व्याकरण की सहायता से ही संस्कृत सीखने की ओर प्रवृत्त होना पड़ता है, अत: व्याकरण संस्कृत भाषा का अति महत्वपूर्ण भाषायी तत्त्व है । व्याकरण के अंन्तर्गत संभावित भाषायी तत्वों के मूल्यांकन का विवेचन इस आलेख में सबसे पहले किया जा चुका है ।

8.6.4 अंकभार

संस्कृत में मूल्यांकन हेतु प्रश्नों का विवेचन कर लेने के पश्चात् मूल्यांकन बिन्दुओं के आकलन हेतु अंकों का आवंटन आवश्यक प्रतीत होता है । एक आदर्श एवं समग्र मूल्यांकन के लिए 100 पूर्णांक निर्धारित मान कर उनके मूल्यांकन बिन्दुओं को निम्नानुसार अंकों का आवंटन (विभाजन) किया जा सकता है । यह अंकभार केवल समग्र एवं औपचारिक मूल्यांकन के सन्दर्भ में ही अधिक प्रासंगिक है। कक्षा में किये जाने वाले सतत् मूल्यांकन हेतु शिक्षक स्वयं प्रभावी पद्धति अपना सकते हैं।

मूल्यांकन (अंकभार विभाजन)

समय–$2^{1/2}$ घण्टे पूर्णांक– 100

1. पाठ्यपुस्तक आधारित 45 अंक

(1) संस्कृत प्रश्नों के संस्कृत में लघु उत्तर – 8 अंक

(2) सन्दर्भ के साथ स्पष्टीकरण (व्याख्या) हिन्दी में – 7 अंक

(3) हिन्दी में पूछे गये प्रश्नों के उत्तर, हिन्दी में – 10 अंक

(4) पाठ्यांश का हिन्दी में अनुवाद – 15 अंक
(गद्यांश 10 अंक, पद्यांश 5 अंक)

(5) संस्कृत प्रश्नों का संस्कृत में उत्तर – 5 अंक.
(एक या दो प्रश्नों के 8 –10 वाक्यों में उत्तर)

2. व्याकरण सम्बन्धी प्रश्न (पाठ्यक्रम आधारित) 30 अंक

(1) शब्दरूप – (दिये गये (संस्कृत पदों) शब्दों के विभक्ति–वचन की पहचान, दिये गये शब्दों के विभक्ति वचन में रूप लिखना, इसमें संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण शब्दों का समावेश किया जाय) 6 अंक

(2) धातुरूप – (दिये गये क्रिया पदों की पुरूष, वचन, लकार की पहचान, दिये गये धातुओं पुरूष, वचन लकार में रूप लिखना)6 अंक

(3) सन्धि – (विच्छेद 3 अंक, जोड़ना 2 अंक) 5 अंक

(4) प्रत्यय – (शब्दों में प्रत्यय की पहचान, प्रातिपदित और धातुओं में निर्दिष्ट प्रत्यय जोड़ना)5 अंक

(5) उपसर्ग, अव्यय– (पहचान, वाक्य प्रयोग)4 अंक

(6) समास – (विग्रह और पहचान करना)2 अंक

(7) कारक – (पहचान करना) 2 अंक

3. रचना 25 अंक

(1) हिन्दी वाक्यों, अवतरणों का संस्कृत में अनुवाद 15 अंक

(2) संस्कृत में पत्र/प्रार्थना पत्रा आवेदन पत्र लिखना – 5 अंक

(3) अपठित अवतरण, पद्यांश पर आधारित सारलेखन, प्रश्नों के उत्तर या स्पष्टीकरण (हिन्दी में) 5 अंक

छात्र मूल्यांकन के लिए इस निर्धारित अंकभार में परिस्थिति और पाठ्यक्रम की अपेक्षानुसार लचीलापन भी अपनाया जा सकता है । उपर निर्धारित मूल्यांकन रूप रेखा के सफल क्रियान्वयन हेतु निम्नानुसार सावधानियाँ एवं विवेकशीलता अपेक्षित है :

1. पाठ्य पुस्तक से सम्बन्धित प्रश्नों के यथोचित विकल्प दिये जाएँ ।
2. पूरे प्रश्न पत्र में प्रश्नों की पुनरावृति न हो ।
3. प्रश्न पूछने के पीछे भावना यह रहे कि छात्रों में अर्थग्रहण और अभिव्यक्ति की क्षमता कितनी विकसित हुई है ।
4. प्रश्नों में पाठ्य पुस्तक का समग्र प्रतिबिम्ब हो ।
5. प्रश्नों की भाष सरल–स्पष्ट हो ।
6. प्रश्नों का स्वरूप निर्धारित समय सीमा के अनुरूप हो ।

7. प्रश्नों का सरल, सामान्य–कठिन रूप में समन्वित सन्तुलन हो ।
8. व्याकरण सम्बन्धी तत्वों (सन्धि, समास, शब्दरूप, क्रिया रूप, प्रत्यय, अव्यय, उपसर्ग आदि) के मूल्यांकन हेतु प्रश्नों में उदार विविधता हो; यथा–
   (1) रिक्त स्थानों की पूर्ति हेतु वाक्य
   (2) दिये गये शब्दों से वाक्य–निर्माण
   (3) कई विकल्पों में से उचित शब्द का चयन
   (4) अशुद्ध वाक्यों को शुद्ध करना
   (5) निर्देशानुसार शब्द रूप, क्रिया रूप लिखना
   (6) धातु में प्रत्यय जोड़ना, उपसर्ग लगाना
   (7) वाक्यों में निर्देशानुसार प्रयोग, एवं इसी तरह के कई प्रश्न बनाकर व्याकरण सम्बन्धी सम्प्राप्ति का मूल्यांकन किया जा सकता है ।
9. अपरिचित या अपठित अंश से संबन्धित प्रश्नों के अतिरिक्त शेष सभी प्रश्न निश्चित रूप से, निर्धारित पाठ्यक्रम और पाठ्यपुस्तक पर ही आधारित हों ।'

8.6.5 संस्कृत शिक्षण में जांच पत्र निर्माण हेतु नीलपत्र बनाना

उपर्युक्त विवेचन के बाद यह जानना भी आवश्यक है कि उपर्युक्त जांच पत्र बनाने के लिए नीलपत्र का निर्माण कैसे किया जाता है । आगे नीलपत्र का एक नमूना दिया जा रहा है ।

8.6.6 नील पत्र का निर्माण

(1) **उद्देश्यों का मान**

क्र.सं	उद्देश्य	अंक	प्रतिशत
1.	ज्ञान (भाषातत्व, वि. व,)	34	68%
2.	अर्थग्रहण	08	16%
3.	अभिव्यक्ति	08	16%
	योग	50	100

(2) **पाठ्यवस्तु / सामग्री का मान**

क्र.सं	पाठ्यक्रम	अंक	प्रतिशत
1.	गद्य (क) अनुवाद (ख) वि.व के प्रश्न	68	72%
	व्याकरण(क) सन्धि (ख) समास (ग) शब्दरूप (घ) धातुरूप (च) प्रकृति प्रत्यय	14	28%
	योग	50	100

(3) **उद्देश्य एवं पाठ्य सामग्री**

क्र.सं.	उद्देश्य एवं पाठ्य सामग्री	ज्ञान	अर्थग्रहण	अभिव्यक्ति	योग
1.	गद्य (क) अनुवाद	10	-	-	12
	(ख) वि.व. प्रश्न	8	8	8	14
2.	व्याकरण (क) सन्धि	2	-	-	2
	(ख) समास	2	-	-	2
	(ग) शब्दरूप	2	-	-	2
	(घ) धातुरूप	2	-	-	2
	(च) प्रकृति	2	-	-	2
	योग	34	8	8	50

(4) **प्रश्नों का स्वरूप मान**

क्र. सं.	उद्देश्य	प्रश्न संख्या	निर्धारित अंक	प्रतिशत
1.	निबन्धात्मक प्रश्न	2	10	20%
2.	लघूत्तर प्रश्न	10	20	40%
3.	व. नि. प्रश्न	20	20	40%
	योग	32	50	100

रूपरेखा

उद्देश्य	ज्ञान			अर्थ ग्रहण			अभिव्यक्ति			योग
प्रश्न	नि.	ल.	व.	नि.	ल.	व.	नि.	ल.	व.	योग
पाठ्यवस्तु										
1. गद्य										
(अ) अनुवाद (भाषा)	10(2)	-	2(2)	-	-	-	-	-	-	12(4)
(ब) वि.व. प्रश्न	-	4(2)	4(4)	-	4(-2)	4(4)	-	8(4)	-	24(16)
2. व्याकरण										
(क) सन्धि	-	-	2(2)	-	-	-	-	-	-	2(2)
(ख) समास	-	-	2(2)	-	-	-	-	-	-	2(2)
(ग) शब्दरूप	-	4(2)	2(2)	-	-	-	-	-	-	6(4)

(घ) धातुरूप	-	-	2(2)	-	-	-	-	-	-	2(2)
(च) प्रकृति प्रत्यय	-	-	2(2)	-	-	-	-	-	-	2(2)
योग	10(2)	8(4)	16(16)	-	4(-2)	4(4)	-	8(4)	-	50(32)

नोट : 1 कोष्ठक के बाहर की संख्या अंको तथा भीतर की संख्या प्रश्न सूचक है ।

2 नि – निबन्धात्मक, ल. – लघूत्तर, व., – वस्तुनिष्ठ

8.7 भाषा अधिगम संबंधी मूल्यांकन

छात्र मूल्यांकन शिक्षण व्यवस्था का अभिन्न अंग है । शिक्षण कितना प्रभावी हुआ है इसका मापदण्ड छात्र– मूल्यांकन से ही निर्धारित किया जा सकता है । छात्र मूल्यांकन की अनेक विधियाँ प्रचलित हैं । भाषा–शिक्षण (संस्कृत शिक्षण) के संदर्भ में छात्र मूल्यांकन की संभावनाओं और सीमाओं का ज्ञान शिक्षक के लिए छात्र–मूल्यांकन प्रक्रिया को सरल बना सकता है ।

सर्व प्रथम यह समझ लेना आवश्यक है कि पाठ्य पुस्तक के माध्यम से छात्र को क्या पढ़ाया जा रहा है? पाठ की विषय वस्तु क्या है? पढ़ाया गया अंश 'भाषा' (संस्कृत) से सम्बन्धित है, या साहित्य से? किस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए छात्रों को पढ़ाया गया है? छात्रों को क्या पढ़ाया गया है? छात्रों ने क्या सीखा है? छात्रों से क्या अपेक्षाएँ हैं? आदि ।

इन प्रश्नों की अवधारणाओं और इनकी व्याप्ति का ज्ञान होने पर छात्र मूल्यांकन प्रभावी और प्रामाणिक भी होगा । इस संदर्भ में एक–दो बातों को जान लेना आवश्यक है ।

- भाषा शिक्षण की एक निश्चित प्रक्रिया होती है । उस प्रक्रिया का अनुसारण करते हुए ही भाषा में अधिगम होता है ।
- यह स्मरणीय है कि भाषा का अधिगम अभिव्यक्ति द्वारा सहज और अनौपचारिक रूप से होता है।

8.8 मातृभाषा एवं संस्कृत में अधिगम

पूर्वोक्त बिन्दु मातृभाषा के अधिगम में अधिक प्रांसगिक है, जहाँ बालक परिवार, परिवेश, वातावरण में अभिव्यक्ति के आश्रय से भाषा सहज ही सीख लेता है, परन्तु संस्कृत शिक्षण अधिगम में स्थिति सर्वथा भिन्न है । संस्कृत आम बोलचाल की भाषा नहीं है । विद्यालयों में संस्कृत शिक्षण का माध्यम भी मातृभाषा या संस्कृत से इतर भाषा होती है । इस कारण छात्र का संस्कृत भाषा में अभिव्यक्ति का अवसर नगण्य ही होता है । वास्तविकता तो यह है कि छात्र को संस्कृत सुनने और बोलने के अवसर मिलते ही नहीं हैं । अत : संस्कृत शिक्षण करना और छात्र को संस्कृत अधिगम के अवसर उपलब्ध करवाना शिक्षक के लिए सदैव एक चुनौतीपूर्ण कार्य है । छात्र जो कुछ भी अधिगम करता है वह अध्यापक द्वारा कक्षा में शिक्षण प्रक्रिया में अपनाई गई स्थितियों पर ही पूर्णत: निर्भर करता है ।

संस्कृत के संदर्भ में दूसरी स्मरणीय बात यह है कि छात्र जब माध्यामिक या उच्च माध्यमिक स्तर पर संस्कृत अध्ययन के लिए आता है तो संस्कृत में उसका ज्ञान अत्यल्प ही होता है । कहीं–कहीं प्राथमिक या उच्च प्राथमिक शिक्षा स्तर पर तृतीय भाषा के रूप में संस्कृत

अध्ययन के विधिवत् अध्ययन में यह अधिक सहायक या प्रासंगिक नहीं होता । एक सुखद पहलू यह अवश्य है कि हिन्दी एवम् अन्य कई भारतीय भाषाओं की तत्सम शब्दावली अवश्य सहायक होती है, क्योंकि कुछ अपवादों को छोड़कर संस्कृत ही समस्त भारतीय भाषाओं के उद्गम या स्रोत है, और इस कारण इन भाषा– भाषी छात्रों को संस्कृत शब्दावली का किंचित ज्ञान तो होता ही है । अपने शिक्षण में इस तथ्य को उजागर करके और हिन्दी भाषा की तत्सम शब्दावली का संस्कृत शब्दों से तादात्मय स्पष्ट करके शिक्षक अधिगम प्रक्रिया को सरल बना सकते है ।

छात्र मूल्यांकन प्रक्रिया अपनाने से पूर्व शिक्षक शिक्षण के निर्धारित स्तर पर संस्कृत पाठ्यक्रम को बिन्दुवार हृदयंगम कर ले तो आसानी रहेगी क्योंकि अधिकांश संस्कृत पाठ्यवस्तु व्याकरण केन्द्रित होने के कारण पाठ्यक्रम भी व्याकरण की विषय वस्तु के आधार पर ही निर्धारित पाया जाता है ।

8.9 भाषा कौशल एवं दक्षताएँ

सर्व प्रथम संस्कृत के भाषायी कौशलों और दक्षताओं का विवेचन युक्ति संगत होगा। अन्य भाषाओं की तरह ही संस्कृत में भी छात्रों से चारों भाषायी कौशलों के अधिगम में दक्ष होना अपेक्षित है । ये कौशल हैं– 1. सुनना, 2 बोलना, 3 लिखना, 4. पढ़ना। शुद्ध बोलना, लिखना और पढ़ना संस्कृत में अधिगम के लिए अति महन्वपूर्ण हैं । शुद्ध बोलना तब ही संभव है जब छात्र ने शुद्ध और स्पष्ट श्रवण किया हो । इसके लिए संस्कृत वर्णों के शुद्ध उच्चारण का ज्ञान और अभ्यास करवाने के लिए उन्हें प्रत्येक वर्ण के उच्चारण स्थान (कण्ठ, तालू मूर्धा, दन्त, ओष्ठ, नासिका) और वर्गों (क–वर्ग, च–वर्ग, ट–वर्ग, त–वर्ग, प–वर्ग, अन्तःस्थ, ऊष्म वर्णों, स्वर–व्यञ्जन सहित) उच्चारण भेद का धैर्यपूर्वक सही ज्ञान करवाया जाय । यद्यपि यह कार्य उस समय ही किया जाना अपेक्षित है, जब छात्र संस्कृत अध्ययन (तृतीय भाषा के रूप में) पहली बार प्रांरभ करता है; पर जानकार शिक्षक मानते हैं कि ऐसा प्राय: होता नहीं है, और यदि होता भी हो तो उस अवस्था में छात्र इसका अधिगम नहीं कर पाते हैं । माध्यमिक या उच्चमाध्यमिक स्तर पर इसका पुन: अभ्यास अवश्य ही लाभदायक हो सकता है ।

8.10 विशिष्ट उदाहरण

शिक्षक के क्रिया कलाप – (वर्ण विचार)

शिक्षक बोलकर तथा लिखकर सभी वर्णो के उदाहरण दे–

यथा – क, च, ट, त, प, ग, न, श, क्ष, त्र, ह आदि

मूल्यांकन – छात्रों से इन वर्णो के बोलने, पढ़ने और लिखने का अनुसरण करवायें । जहाँ उच्चारण में अशुद्धता, अस्पष्टता व लेखन में त्रुटियाँ हों, उस और छात्रों का ध्यान आकृष्ट करें, और मूल्यांकन की दृष्टि से जब तक उच्चारण और लेखन में स्पष्टता और शुद्धता नहीं आये, यह अभ्यास करवाते रहें । स्वर–व्यञ्जन का भेद बतावें । हलन्त (क्) की अवधारणा स्पष्ट करें ।

शब्द विचार –

शिक्षक द्वारा यही प्रक्रिया शब्दों के सन्दर्भ में भी अपनाई जाये; यथा –

(1) नर–नारी, सीता–सती, पर्वत–प्रभात, कृष्ण–कृपा, क्रिया–प्रक्रिया, स्तुति–निन्दा आदि ।

(2) इन शब्दों में आयी ह्रीस्व–दीर्घ मात्राओं का अन्तर स्पष्ट करें, र (रेफ्) के प्रयोगों को स्पष्ट करें, उच्चारण और लेखन का छात्रों द्वारा अभ्यास करवाएँ ।

मूल्यांकन प्रश्न

1. 'कण्ठ' से कौन–कौन से वर्ण उच्चारित होते हैं?
2. 'तालव्य' वर्ण कौन–कौन से हैं?
3. 'ट' का उच्चारण किस स्थान से होता है?
4. श, ष, स के उच्चारण स्थान कौन–कौन से हैं?
5. भानु, दधि, लदी, सीता, मुनि शब्दों में ह्रस्व और दीर्घ मात्रा वाले शब्दों के समूह बनाओ।
6. कृष्ण और क्रिया शब्द किन स्वरों की मात्राएँ हैं?
7. 'ऋ' स्वर की मात्रा वाले शब्दों को चिह्नित करो : प्रकर्ष, तृष्णा, प्रिय, अमृत, तर्क, कृपा, कृषि।
8. आ, ई, उ की मात्रा वाले 2 –2 शब्द लिखो ।
9. निम्नलिखित शब्दों के वर्णों को पृथक् करो (उदाहरण–प्रतीक्षा–प् र् अ त् ई क् ष् आ) वर्षा, ज्ञान, क्षत्रिय, पाठशाला, विवेक, प्रथा ।
10. निम्नलिखित वर्णों को जोड़कर पूरे शब्द बनाओ (उदाहरण – व् इ ज् ञ् आ, न् अ = (विज्ञान) श् इ क् ष् अ क् ; द् इ न् अ, त् ऋ ण अ।

वाक्य विचार

वर्णों और शब्दों का विन्यास समझ लेने पर छात्रों को वाक्य निर्माण की प्रक्रिया समझावें और वाक्य निर्माण के कौशल का मूल्यांकन करें ।

शिक्षक के क्रिया कलाप–

(1) एक वचन, द्विवचन, बहु वचन का ज्ञान करावें; यथा –नदी, बालकौ, छात्रा: वहति, पठतः, लिखन्ति, आदि।

(2) कर्ता और क्रिया की अन्विति का ज्ञान करायें, एक वचन कर्त्ता के साथ एक वचन क्रिया की अन्विति यथा– छात्र. पठति बालकी पठत., मृगा: धावन्ति, आदि ।

(3) प्रथम पुरूष, मध्यम पुरूष, उत्तम पुरूष का ज्ञान करायें–स: त्वम् अहम् सा, त्वम् अहम् ।

(4) तीनों लिंगों का बोध करायें 1 पुल्लिंग, 2 स्त्रीलिंग 3 नपुंसक लिंग ।

(5) यथाशक्य पाठ्यपुस्तक से उदाहरण लें ।

वाक्य निर्माण कौशल के मूल्यांकन से पूर्व उपर्युक्त 5 निर्देशों के अनुरूप अभ्यास, पुन: अभ्यास करवा लेने से मूल्यांकन का परिणाम प्रभावी और प्रमाणिक बन सकेगा । वाक्य निर्माण कौशल के मूल्यांकन हेतु प्रश्न :–

मूल्यांकन प्रश्न

कर्त्ता–क्रिया पद की अन्विति के बोध का मूल्यांकन – (अन्विति बोध के मूल्यांकन से पूर्व छात्रों को निम्नांकित तथ्यों की जानकारी अपेक्षित है)

1. हिन्दी भाषा की तरह संस्कृत में क्रिया पद का कोई लिंग नहीं होता है–

   हिन्दी में – बालक पढ़ता है, बालिका पढ़ती है,

   संस्कृत में – बालक : पठति, बालिका पठति ।

प्रश्न- उचित क्रिया पदों में वाक्य पूरे करो–

(1) छात्रा.....। (चलन्ति, लिखती)

(2) वयम्.. .... । (क्रीड़ति, लिखसि, खादामः)

(3) बालिकाः .... । (पठति, पश्यन्ति, धावामः)

(4) यूयम्.. ..... । (धावथः, धावथ,धावामः)

(5) अहम्. ... . । (चलति, चलसि, चालामि)

(6) ते .... । (गच्छथ, गच्छामः, गच्छन्ति)

(7) ताः .... । (वदायः, वदन्ति, वदथ)

(8) सः. .... । (पृच्छति, पृच्छासि, पृच्छमि)

(9) .....हसाम : । (यूयम्, ते, वयम्)

(10) .....पश्यसि । (अहम्, त्वम्, सा)

- इसी प्रकार पाठ्यक्रम में निर्धारित क्रियाओं के कालों (लट्–वर्तमान काल, लृट्, भविष्यकाल, लङ् भूतकाल आदि) के उदाहरण वाले वाक्य बनाकर छात्रों के धातुरूपों (क्रियापदों) के बोध का मूल्यांकन किया जा सकता है ।
- अन्विति बोध के मूल्यांकन हेतु अनुवाद पद्धति भी अपनाई जा सकती है, अर्थात् हिन्दी वाक्यों का संस्कृत में अनुवाद करने के प्रश्नों द्वारा ।
- एक विधि 'अशुद्ध वाक्यों को शुद्ध–करने' की भी मूल्यांकन हेतु अपनाई जा सकती है, परन्तु कई शिक्षा शास्त्री इस विचार के हैं कि अशुद्ध शब्दों के प्रयोग और व्यवहार से यथा–शक्य बचना चाहिए ।

यह अनुभव किया गया है कि संस्कृत के छात्र प्राय कर्ता –क्रिया (वचन, पुरुष के सन्दर्भ में), तथा विशेषण विशेष्य (विभक्ति, वचन और लिंग के सन्दर्भ में) की अन्विति की अशुद्धियाँ करते हैं । अतः मूल्यांकन में इस पक्ष पर विशेष बल दिया जाना अपेक्षित है । यदि शिक्षण कार्य करते समय ही इस ओर ध्यान दे दिया जाय तो मूल्यांकन अपेक्षित परिणामदायक हो सकता है ।

मूल्यांकन हेतु वैकल्पिक क्रियाकलाप

1. पाठ्यपुस्तक में प्रयुक्त क्रियापदों को छाँट कर उन्हें श्यामपट्ट पर लिखें और छात्रों से उन क्रिया शब्दों में प्रयुक्त धातु, काल, वचन और पुरुष की जानकारी सम्बन्धी मौखिक प्रश्न पूछें _ या उन शब्दों को छात्रों द्वारा अपनी अभ्यास पुस्तिका में लिखने को कहें और उत्तर भी अभ्यास पुस्तिका में लिखने को कहें ।

उदाहरण –

क्रियापद –	धातु	– वचन	–पुरुष –	लकार (काल)
(1) धावन्ति –	धाव्	–.एकवचन	–प्रथम पुरुष–	लट् (वर्तमान)
(2) अचलाम –	चल्	– बहुवचन	–उत्तमपुरुष –	लङ् (भूतकाल)
(3) पठिष्यथ:–	पठ्	– द्विवचन	–मध्यपुरुष –	लृट (भविष्य)

मूल्यांकन प्रश्न –

(1) निम्नलिखित क्रिया पदों के वचन बताओ– अपठन्, हसत : , खादसि, लिखन्ति, वदसि।

(2) निम्नलिखित क्रियापदों की धातु बताओ– गच्छति, धावन्ति, लिखसि, पठाम: ।

(3) इन क्रियापदों के लकार (काल) बताओ– भविष्यति, अचल :, धावन्ति, लिखन्तु, हसेत्।

(4) निम्नांकित में से किन्हीं 5 शब्दों (क्रिया पदों) के पुरुष बताओ– पठत:, खादामि, वदथ, चलन्ति, पश्यसि, लिखाव :

अव्यय मूल्यांकन

संस्कृत वाक्य रचना और वार्तालाप में अव्यय बहुत सहायक होते हैं । संस्कृत शिक्षण में सुबन्त–तिङन्त पदों के सन्दर्भ में विभक्ति, वचन पुरुष, काल आदि की विवेचना इतनी अधिक होती है कि यदि शिक्षण कार्य युक्तियुक्त क्रम और प्रक्रिया के अनुरूप नहीं हो तो छात्र प्राय: भ्रान्त हो जाते हैं। यह खेदजनक है कि संस्कृत में निर्धारित पाठ्यक्रम का समावेश करने वाली (पाठ्यक्रमनिष्ठ) पाठ्यपुस्तकों (पाठ्यवस्तु) का प्राय: अभाव ही है। जो कुछ प्रयास हुए भी हैं, उनमें यह प्रतीत होता है कि प्राय: अँग्रेजी और कहीं–कहीं हिन्दी पुस्तकों के पाठ्यक्रम संयोजन का क्रम लेखकों ने संस्कृत की पाठ्यपुस्तकों के निर्माण में भी अपना लिया है। परिणामस्वरूप संस्कृत शिक्षण और छात्र अधिगम दुरूह, अस्पष्ट और भ्रान्तिकारक हो गया है। अत: मूल्यांकन की विधि भी प्रभावित हुई हैं । संस्कृत शिक्षण में निर्धारित पाठ्यक्रम के तत्वों का परम्परागत पद्धति में थोड़ा–बहुत परिवर्तन करके पाठ्यविषय (पाठ्यक्रम के तत्व) और मूल्यांकन में तर्क–संगत क्रम अपनाने से इस बाधा से कुछ मुक्त हुआ जा सकता है । कहीं–कहीं परम्परा से प्राप्त पूर्व रचित ग्रन्थों के अंशों को ही पाठ्य पुस्तकों में समायोजित कर लिया गया है जिससे कि पाठ्यक्रम के निर्धारित पक्ष निष्प्रभावी हो गये हैं । अन्यत्र कहीं–कहीं पाठ्यक्रम आधारित नया लेखन हुआ भी है, तो इन् पाठ्य पुस्तकों में पाठ्यक्रम के बिन्दुओं पर ही अधिक बल होने के कारण पाठ्यपुस्तकें बोझिल और नीरस हो गई हैं । परिणामत: प्राथमिक–माध्यमिक–उच्चमाध्यमिक स्तर पर 5–7 वर्ष तक विद्यालयों में संस्कृत का अध्ययन कर लेने पर भी छात्रों का अधिगम अपेक्षाकृत असंतोषजनक ही रहता है । अत: सरल से कठिन की ओर प्रगति के सिद्धान्त के अनुरूप ही पाठ्यक्रम के निर्धारित बिन्दुओं पर आधारित मूल्यांकन विधि अपेक्षित परिणाम दे सकती है। कर्त्ता–क्रिया की अन्विति परक मूल्यांकन के बाद अव्ययों के प्रयोग सम्बन्धी मूल्यांकन छात्रों के अधिगम को मापने का द्वितीय सोपान हो सकता है ।

संस्कृत में ' अव्यय' वे शब्द हैं जिनमें लिंग, वचन, विभक्ति सम्बन्धी कोई परिवर्तन नहीं होता है।

मूल्यांकन हेतु पाठ्यपुस्तक में आये हुए 'अव्यय' शब्दों का चयन कर लेना चाहिए ।

प्रातः, सायम्, दिवा, नक्तम, अद्य, श्वः, कुत्र, अत्र, सर्वत्र, अधुना, ह्यः, अन्यत्र, यदा, तदा, सर्वदा, कुत ।

- अव्ययों की पहचान सम्बन्धी प्रश्न –

  (1) निम्नांकित में से अव्ययों का चयन करो–

  ग्रामात्, अन्यत्र, विद्यालये, तदा, कुतः, छात्र, सायम्, नदीषु, मम, सर्वत्र, दिवा, पशवः, अधुना, मुनिना।

- अव्यय शब्दों से वाक्यपूर्ति करो–

  (1) त्वं विद्यालय ..... गच्छसि?

  (2) अहं..... क्रीड़ास्थले क्रीड़ामि ।

  (3) पै..... आगमिष्यन्ति ।

- धातुओं में कत्वा, तुमुन्, ल्यप् प्रत्यय लगाकर बनने वाले शब्द भी अव्यय होते हैं ।

  पठित्वा, विहस्य, गन्तुम्, दृष्टवा, पातुम्, विलिख्य ।

- इन अव्ययों का भी उपर्युक्त प्रश्नों की तरह वाक्यों में प्रयोग करवाया जा सकता है ।

'कारक' अधिगम सम्बन्धी मूल्यांकन

छात्रों का संस्कृत भाषा में अधिगम कितना हुआ है– इसका मूल्यांकन करने के लिए निम्नानुसार मूल्यांकन प्रश्न दिये जाएँ ।'

- रेखांकित शब्दों में औवेभक्ति और वचन बताइये ।

  (1) **<u>पशवः</u>** **<u>वनेषु</u>** चरन्ति ।

  (2) **<u>वयम्</u>** **<u>पुस्तकानि</u>** पठामः ।

  (3) **<u>शिक्षिका</u>** **<u>अस्मात्</u>** पाठयन्ति ।

- निम्नांकित शब्दों के विभक्ति–वचन बताओ – कूपे, लतासु, त्वाया, तस्मै, कलमेन, पुस्तकात् अस्य,

- निर्देशानुसार शब्दों के विभक्ति–वचनों के रूपों से वाक्य पूर्ति कीजिए ।

  (1) इदं..... पुस्तकम् अस्ति । (राम शब्द, षष्ठी एकवचन)

  (2) सः मम..... पठति । (विद्यालय – सप्तमी एकवचन)

  (3) ..... वृक्षाः सन्ति । (वन–सप्तमी बहुवचन)

  (4) वयम्..... आगच्छामः । (ग्राम – पंचमी एकवचन)

- निर्देशानुसार शब्दों के विभक्ति रूप लिखो–

  (1) 'लता' तृतीय विभक्ति में ।

  (2) 'अस्मद्' चतुर्थी विभक्ति में ।

  (3) 'कवि' द्वितीया विभक्ति में ।

(4) छात्र' षष्ठी विभक्ति में ।

शिक्षकों के लिए विशेष अनुरोध – (निर्देश)

(1) उपर्युक्त उदाहरण मूल्यांकन पद्धति के लिए संकेत मात्र हैं ।

(2) अपने मूल्यांकन प्रश्नों के लिए उदाहरण एवं शब्दों का चयन निर्धारित पाठ्यपुस्तक में दिये गये शब्दों से ही करें ।

(3) सभी प्रकार के मूल्यांकन प्रश्न निर्धारित पाठ्यपुस्तक या निर्धारित पाठ्यक्रम आधारित ही होने चाहिए ।

(4) मूल्यांकन में ' सरल से कठिन की ओर' पद्धति का अनुसरण करें ।

क्रिया–पदों से सम्बन्धित मूल्यांकन प्रश्न

- निम्नांकित धातुओं के निर्देशानुसार रूप लिखी ।
  (1) 'हस्' लट– लकार (वर्तमान) में
  (2) 'लिख्' लङ् लकार (भूतकाल) में
  (3) 'पद' लृट्– लकार (भविष्यकाल) में
  (4) 'खाद्' ?ऐ लोट्लकार (आज्ञार्थक) में
  (5) 'वद' विधिलिङ् (विध्यर्थक–चाहिए अर्थ) में,
- निम्नांकित क्रियापदों के लकार (काल), पुरुष, वचन बताइये – अहसन् र लिखामः, धाविष्यसि, वदन्तु, चलेत्
- निर्देशानुसार उचित धातुरूपों से वाक्यग्रिर्त करो–
  (1) वयम् श्वः विद्यालय न..... । ('गम्' लृट् लकार में),
  (2) बालकाः विद्यालये..... । ('पठ्' लट्लकार में),
  (3) किम् त्वम् इदं पुस्तकम्..... । ('पठ्' लङ्लकार में)
  (4) यूयम् सायम्..... । ('क्रीड्' लृट्लकार में)
  (5) सर्वे छात्राः अधुना..... । ('लिख्' लोट्लकार में)
  (6) सदा सत्यं..... । (वद् विधिलिङ् में)

विशेष ध्यान देने योग्य

संस्कृत की कुछ धातुओं के क्रियारूपों में मूलधातु के स्थान पर कुछ अलग रूप (आदेश आगम) हो जाते हैं । इनके लृट्लकार में मूलधातु के रूप ही रहते हैं, यथा – गम् (गच्छ्–), दृश (पश्य), पा (विब्), नी (नय्) । मूल्यांकन हेतु पाठ्यपुस्तकानुसार ऐसी धातुओं को भी मूल्यांकन प्रश्नों में स्थान देना चाहिए ।

विशेषण–विशेष्य सम्बन्धी मूल्यांकन

यह अनुभव किया गया है कि छात्र विशेषण–विशेष्य की अन्विति के प्रयोग के सम्बन्ध में प्राय : भ्रान्त रहते हैं । संस्कृत अध्ययन प्रारंभ करने से पूर्व छात्रों को हिन्दी, मातृभाषा या अँग्रेजी के भाषा व्यवहार की कुछ जानकारी होती है । संस्कृत में भी वे प्राय उसी पद्धति का अनुसरण करते प्रतीत होते हैं । अँग्रेजी में विशेष्य (संज्ञा–सर्वनाम) के लिंग, वचन, विभक्ति के अनुसार विशेषण में कोई परिवर्तन नहीं होता है; यथा–

One Boy,One Girl,One Book

&

A good boy ,Agood girl,A Good Book

हिन्दी में कई अपवाद होते हैं । कई विशेषणों में लिंग आदि में परिवर्तन होता है, कई में नहीं; यथा –

एक लड़का, एक लड़की, एक पुस्तक, (कोई परिवर्तन नहीं) ।

अच्छा लड़का, अच्छी लड़की, अच्छी पुस्तक (परिवर्तन) ।

संस्कृत के सन्दर्भ में यह विशेष रूप से स्मरणीय है कि यहाँ विशेषण का लिंग, वचन, विभक्ति विशेष्य के लिंग वचन, विभक्ति के अनुसार परिवर्तित होते हैं;

यथा – एक: बालक:, एका बालिका, एकम् पुस्तकम्, या उत्तम: बालक:, उत्तमा बालिका, उत्तमम् पुस्तकम् ।

विशेषण–विशेष्य की अन्विति की पालना के लिए संस्कृत में निर्देश भी हैं –

यल्लिंगं यद्ववचनं या च विभक्तिर्विशेषस्य ।

तल्लिंग तद्वचनं सा च विभक्तिर्विशेषणस्यापि । ।

छात्र मूल्यांकन के सन्दर्भ में छात्रों की विशेषण–विशेष्य सम्बन्धी अवधारणाओं की समझ पर विशेष ध्यान देना आवश्यक है । इसके लिए कतिपय मूल्यांकन प्रश्न इस प्रकार हो सकते हैं –

विशेषण – विशेष्य में लिंग की अन्विति

(विशेष स्मरणीय – सर्वनाम यदि विशेष्य (संज्ञा) के साथ आता है तो वह विशेषण होता है।); उदाहरण –

- बालक : गच्छति, स: बालक: गच्छति ।
- बालिका पठति, सा बालिका पठति ।
- पत्रम् पतति, तत् पतति ।

विशेषण – विशेष्य (लिंगान्विति)

उदाहरण – एक: बालक: । एका बालिका । एकम् पुस्तकम् ।

प्रश्न (छात्रमूल्यांकन के लिए)

कोष्ठक में दिये गये उचित शब्द से रिक्त स्थान भरो –

(1) उद्यानम्..... अस्ति । (रमणीय:, रमणीया, रमणीयम्)

(2) ..... छात्रा: क्रीड़न्ति । (त्रय:, तिस्त्र, त्रीणि)

(3) ..... मम पुस्तकम् । (इदम्, इदम्, अदम्)

(4) विद्यालये..... छात्रा: पठन्ति । (अनेके, अनेका:, अनेकानि)

(5) ..... शबद:, ...वाणी,. ..... वचनम् । (मधुरा, मधुरम्, मधुर:)

- वर्ग 'अ' और 'ब' में दिये गये शब्दों से उपयुक्त जोड़े (शब्द युग्म) बनाओ –

'अ' 'ब

देश:	कपिला,
शुक:	पीतम्
धेनु:,	विशाल:,
वस्त्रम्	स्वस्थ:
पुरुष:,	हरित

विशेषण–विशेष्य में 'वचन' की अन्विति

– कोष्ठक में दिये गये शब्दों में से उचित शब्द चुनकर रिक्त स्थान की पूर्ति करो–

(1) ..... अध्यापक: अस्मात् पाठयति । (त्रय:, एक:, द्वौ)

(2) .....:..... छात्र, अत्र क्रीड़त: । (द्वे, एका, चत्स्त्र:)

(3) वृक्षात्. ..... फलानि पतन्ति । (एकम्, बहू नि, द्वे)

(4) .. .. मम पुस्तकानि (इदम् इमे, इमानि)

(5) दुग्धम् ..... भवति । (मधुराणि, मधुरम्, मधुरे)

विशेषण–विशेष्य विभक्ति की अन्विति

– कोष्ठक में दिये गये उपयुक्त शब्दों से रिक्त स्थान भरो ।

(1) त्वम् ..... विद्यालये पठसि? (कस्य, कस्मिन्)

(2) अहम् ....पाठ्म पठामि । (प्रथम:, प्रथममू)

(3) ..... बालकस्य नाम किम्? (तस्य, तम्)

(4) ..... वनेषु सिंहा: वसन्ति । (एषु, अस्मिन्)

(5) सः ..... कलमेन लिखित । (केन, कै:)

सन्धि अधिगम का मूल्यांकन

संस्कृत में सन्धि शब्दों का प्रचुरता से प्रयोग होता है । सन्धि प्रक्रिया की सही जानकारी से संस्कृत में अधिगम सरलता से हो सकता है । पाठ्य पुस्तक में आये हुए सन्धि शब्दों का चयन और वर्गीकरण (स्वरसन्धि–व्यञ्जन सन्धि– विसर्ग सन्धि आदि) करके मूल्यांकन हेतु प्रश्न दिये जा सकते हैं ।

– निम्नलिखित शब्दों में सन्धि करो–

(1) देव + आलय:	देव +अरि:,	कुल +आचार्य:
चिकित्सा + आलय:,	कवि + इन्द्र:,	कुल + अधिपति:,
कपि + ईश्वर:,	गुरु + उपदेश:,	अद्य + अपि
मुनि+ इन्द्र,	रवि + इन्द्र	
(2) देव + इन्द्र:,	रमा + ईश:	
भुवन+ ईश्वरी	पर + उपकार:	
चन्द्र + उदय:,	भाग्य + उदय	
ब्रहम + ऋषि:,	महा + ऋषि	
(3) एक + एक:,	सदा + एव	

महा + ऐश्वर्यम् तदा + एव

(4) इति + आदि, प्रति + एकम्, इति + उवाच,

साधु + इदम् मधु + अरि:, किन्तु + इदानीम्

(5) नौ + इक: नै+ अक:, ने + अनम् पो +अन:

(6) दिक् + अम्बर:, तत् + इदानीम् गत्+ नाथ,

सत् + चित् तस्मिन् + इति, जगत् + जननी,

(7) साधु : + इति, एक: + अपी, स: + एव,

निम्नांकित शब्दों में सन्धि–विच्छेद करो–

(1) अद्यावकाश:, नदीश:, नटेश:, नोक्तम्,

(2) प्रत्युपकार:, ऋषिरपि. ध्वन्यालोक:, सत्यपि, उज्जवल:, नीरोग:, तल्लीन:, मात्रादेश:,

समास

निर्धारित पाठ्यक्रमानुसार पाठ्यपुस्तकों में आये हुए समास युक्त (समस्तपदों) शब्दों को चुनकर उनके समास– विग्रह के प्रश्न भी पूछे जा सकते हैं ।

छात्र मूल्यांकन के सम्बन्ध में अब तक छात्रों के भाषा सम्बन्धी अधिगम के मूल्यांकन को आधार मानकर विवेचन किया गया है । यह संभव है कि निर्धारित पाठ्यक्रम के विभिन्न बिन्दुओं का इसमें पूरी तरह समावेश नहीं हो पाया हो, तथापि, इस विवेचन में भाषा सम्बन्धी तत्वों के मूल्यांकन में उन पक्षों से सम्बन्धित मूल्यांकन प्रश्नों का समावेश कर लिया गया है जो उच्चप्राथमिक–माध्यमिक स्तर पर संस्कृत शिक्षण में प्राय: निर्धारित किये जाते हैं और जो संस्कृत भाषा विषयवस्तु की दृष्टि से आवश्यक और अपरिहार्य है । पाठ्यपुस्तक के सन्दर्भानुरूप प्रश्नों में परिवर्तन मूल्यांकन की यहाँ बताई गई पद्धति के अनुसार किया जा सकता है । भाषा कौशलों और दक्षताओं के अधिगम से संबन्धित मूल्यांकन पद्धति पुर्वानुसार अपनाई जा सकती है।

8.11 निदानात्मक परीक्षण

यह ऐसा परीक्षण है जो छात्रों द्वारा सम्प्राप्ति में अनुभव की जा रही कठिनाइयों, विषय की दुरूहता, शिक्षण विधि की प्रभावशीलता के सही निदान में सहायक होता है । निदानात्मक परीक्षण छात्रों में अधिगम की प्रगति और विकास को समझने में शिक्षक की सहायता करता हैं । मुख्यत: यह परीक्षण सतत मूल्यांकन विधि का ही एक रूप है ।

निदानात्मक परीक्षण एकल या समवेत रूपों में किया जा सकता है । किसी विशेष पाठ्य बिन्दु की समाप्ति पर शिक्षक निदानात्मक परीक्षण कर सकते हैं । मूल्यांकन की तुलना में निदानात्मक परीक्षण का क्षेत्र सीमित और वस्तुनिष्ठ होता है । जिन छात्रों की अधिगम में गति शिथिल या धीमी होती है, उन छात्रों की पहचान में, तथा उनकी कठिनाइयों की पहचान में निदानात्मक परीक्षण को कोई विकल्प नहीं । 'निदान' का अर्थ ही होता है, सही पहचान, सही आकलन, सही कारण की खोज । अत : निदानात्मक परीक्षण से छात्रों द्वारा 'अनुभव की जा रही कठिनाइयों का सही कारण जाना जा सकता है; यथा–

(1) कोई छात्र वर्तनी की अशुद्धियाँ करता है तो, इसका कारण है छात्र को वर्णों का और वर्णों के उच्चारण का समुचित अधिगम नहीं है ।

(2) कक्षा में प्रश्न पूछने पर कोई छात्र समुचित प्रतिक्रिया नहीं करता है– तो इसका कारण हो सकता है कि छात्र की श्रवण शक्ति शिथिल है, या कि छात्र मानसिक रूप से उद्विग्न है, या कि शिक्षण कार्य में रोचकता का अभाव है ।

(3) कोई छात्र कुशाग्र बुद्धि और अध्ययनशील है; फिर भी उसकी सम्प्राप्ति सन्तोषप्रद नहीं है, तो इसका कारण यह हो सकता है कि पूर्व में छात्र को अपेक्षित स्तर का अधिगम नहीं हुआ है, या कि किसी कारण से उसके अध्ययन में कोई रुकावट है ।

अत: जिस पक्ष या जिस बिन्दुको लेकर शिक्षक सन्तुष्ट नहीं हों, तब उन्हें उस असन्तुष्टि के कारण की खोज करने हेतु परीक्षण उपाय करने चाहिए । यही निटानात्मक परीक्षण है । यह अवश्य है कि निदान करने से पहले समस्या या अवरोध का ज्ञान होना अपेक्षित है, क्योंकि यदि कोई रोग या पीड़ा है ही नहीं, या कि हमें उसका अहसास है ही नहीं, तो फिर निदान किस बात का किया जाए? अत: शिक्षक छात्रों की समस्याओं, उनकी कठिनाईयों के प्रति पूरी तरह आश्वस्त होकर तब निदान हेतु परीक्षण करे और सही कारणों कों जानकर उनका आकलन करे । निदात्मक परीक्षण के परिणामों से ही उपचारात्मक शिक्षण की आवश्यकता निर्धारित की जा सकती है ।

8.12 उपचारात्मक शिक्षण

जिस तरह रोग के कारणों की पहचान पर ही चिकित्सक सही और प्रभावी उपचार कर सकते हैं, ठीक उसी तरह शिक्षण अधिगम और छात्र–सम्प्राप्ति में अवरोध तत्वों का निदान (कारणों की खोज) करने के पश्चात् ही शिक्षक उनके निराकरण हेतु उपचारात्मक शिक्षण की प्रक्रिया अपना सकते हैं । उपचारात्मक शिक्षण वस्तुनिष्ठ भी हो सकता है और छात्रनिष्ठ भी । यदि कोई पाठ्य बिन्दु अधिकांश छात्रों की समझ में नहीं आया है तो उस पाठ्यबिंदु को अपनी शिक्षण विधि में आवश्यक बदलाव करके पुन: पढ़ाया जाए । यदि कोई छात्र विशेष ही अधिगम में शिथिल पाया जाता है, तो उस छात्र के लिए अलग से उपचारात्मक शिक्षण करवाना आवश्यक हो जाता है । कक्षा में किये जाने वाले सतत मूल्यांकन का विवरण सुरक्षित रखने पर उपचारात्मक शिक्षण में सहायता मिल सकती है । उपचारात्मक शिक्षण की प्रभावशीलता शिक्षक के शिक्षण कौशल और कल्पनशीलता पर अधिक निर्भर करती है । जो शिक्षक शिक्षण कार्य को गरिमापूर्ण चुनौती के रूप में स्वीकार कर लेते हैं, वे निरन्तर अभिनव प्रयोगों का आश्रय लेकर अपनी सूझ–बूझ से उपचारात्मक शिक्षण को बहुआयामी विधि से रोचक और सफल बना सकते हैं ।

8.13 बहुविध प्रश्नों का निर्माण

निदानात्मक परीक्षण, सतत मूल्यांकन एवम् समग्र मूल्यांकन हेतु बहुविध प्रश्न पत्रों के निर्माण को एक सतत् प्रक्रिया के रूप में अपनाया जाना चाहिए । प्रत्येक पाठ की विषय वस्तु और व्याकरण तथा रचना सम्बन्धी पक्षों से सम्बन्धित बहुविध और बहुआयामी प्रश्न पत्र बनाकर उनका संग्रह करते रहना चाहिये । मौखिक और लिखित प्रश्नों में एक ही पक्ष के

मूल्यांकन हेतु विविध तरीकों से उत्तर प्राप्त करने पर बल दिया जाना चाहिए । इससे प्रश्न पत्रों की एकरूपता और उबाऊपन दूर होगा, तथा छात्रों की कल्पनाशीलता बढ़ाने में सहायता मिलेगी ।

8.14 प्रश्न बैंक का निर्माण

शिक्षण को प्रभावी बनाने तथा मूल्यांकन को प्रामाणिक बनाने की दृष्टि से प्रश्न बैंक के विकास की अवधारणा एक अभिनव विचार है । प्रश्न बैंक का उपयोग जहाँ एक ओर शिक्षकों के प्रश्न पत्र बनाने में लगने वाले समय और श्रम को कम करता है, वहीं छात्रों को भी इससे मूल्यांकन हेतु स्वयं को तैयार करने में सहायता मिलती है । मूल्यांकन के बिन्दुओं का वर्गवार निर्धारण करके जब–जब भी परीक्षण और मूल्यांकन हेतु प्रश्न पत्र बनाये जाएँ, उन प्रश्नों का विषयानुसार बिन्दुओं में संग्रह करते रहना चाहिए । एक पृथक् रजिस्टर में उनके पहचान क्रम अंकित करते रहना चाहिए । इस तरह कुछ ही समय में अनेक प्रश्नों का संग्रह संभव हो सकेगा । इस सम्बन्ध में संस्कृत शिक्षण करने वाले साथी शिक्षकों और अन्य विद्यालयों के शिक्षकों का भी सहयोग व परामर्श लिया जा सकता है । जिस शिक्षक या विद्यालय के पास जितना समृद्ध प्रश्न बैंक होगा, उसकी पाठ्य–क्रिया और मूल्यांकन क्रिया उतनी अधिक प्रभावी होगी । प्रश्न बैंक से प्रश्नों का व्यापक आदान प्रदान और उन पर शैक्षिक चर्चा भी स्वस्थ शैक्षिक वातावरण के निर्माण में सहायक हो सकेगी ।

छात्र मूल्यांकन सम्ब–धी उपर्युक्त विवेचन आदर्श अवधारणाओं पर आश्रित है । निश्चित पाठ्यक्रम और निर्धारित पाठ्यपुस्तक के अभाव में निश्चित उदाहरण दे पाना संभव नहीं है । अत: उपर्युक्त विवेचना में दिये गये सुझावों के अनुरूप अपनी निर्धारित पाठ्य पुस्तक से निश्चित वस्तु चुन कर अध्यापकबंधु स्व –विवक से मूल्यांकन प्रक्रिया अपना सकेंगे,ऐसा विश्वास है ।

स्व–परख प्रश्न (Self Check Question)

1. भाषा कौशल कौन–कौन से हैं ।
2. संस्कृत भाषायी दक्षताएँ कोन सी है?
3. निदानात्मक परीक्षण का क्या उद्देश्य है?
4. उपचारात्मक शिक्षण का क्या अर्थ है ।
5. सतत् मूल्यांकन से क्या अभिप्राय है?

8.15 सारांश (Summary)

मूल्यांकन का अर्थ: –

उद्देश्यों की प्राप्ति की जाँच करना ।

मूल्यांकन का उद्देश्य: –

भाषायी कौशलों की प्राप्ति एवं वैचारिक समझ की जाँच करना ।

संस्कृत शिक्षण में सतत् मूल्यांकन:–

संस्कृत शिक्षण के साथ–साथ चलने वाली जाँच प्रक्रिया ।

मूल्यांकन की औपचारिक विधि:–

मौखिक एवं लिखित दो प्रकार की है ।

संस्कृत मूल्यांकन हेतु विषय वस्तु संस्कृत शिक्षण में मूल्यांकन हेतु पाठ्यपुस्तक, रचना, व्याकरण आदि विषय वस्तु का निर्माण करते हैं ।

भाषा कौशल एवं दक्षताएँ –

कौशल – बोलना, सुनना, पढ़ना एवं लिखना

दक्षताएँ – उच्चारण, शब्दावली पर स्वामित्व, वाक्य रचना पर स्वामित्व, व्याकरण पर स्वामित्व आदि ।

निदानात्मक परीक्षण –

छात्रों की कठिनाईयों कमजोरियों की जाँच हेतु परीक्षण ।

उपचारात्मक शिक्षण –

कमजोरियों एवं कठिनाईयों को दूर करने हेतु शिक्षण।

8.16 स्व–परख प्रश्नों के उत्तर

नोट – इन प्रश्नों के उत्तर हेतु संबंधित अध्ययन बिन्दुओं का पुन: अध्ययन करें ।

8.17 मूल्यांकन प्रश्न (Unit End Question)

1. **वस्तुनिष्ठ प्रश्न**

   उचित शब्द चुनकर रिक्त स्थान की पूर्ति कीजिए

   (अ) पढ़ाने के उद्देश्य की प्राप्ति की जाँच के लिए..... एक सशक्त उपाय है । (परीक्षण, प्रश्न, मूल्यांकन)

   (ब) भाषा शिक्षण का अन्तिम उद्देश्य..... का विकास है । (ज्ञान, भाषा कौशलों)

   (स) निदानात्मक परीक्षण का उद्देश्य है..... । (कमजोरी का निदान करना, उद्देश्यों की प्राप्ति का मूल्यांकन करना)

2. **लघूत्तरात्मक प्रश्न**

   (क) मूल्यांकन के प्रकार लिखिए ।

   (ख) भाषा के दो लक्ष्य कौन–कौन से हैं ।

   (ग) व्याकरण में क्या–क्या सम्मिलित हैं ।

   (घ) नीलपत्र का क्या अर्थ है?

3. **निबंधात्मक प्रश्न**

   (क) संस्कृत शिक्षण में आप सतत् मूल्यांकन के लिए क्या– क्या कार्य करेंगे?

   (ख) भाषा शिक्षण में आप भाषा की दृष्टि से किन–किन चीजों का मूल्यांकन करेंगे?

   (ग) निदानात्मक परीक्षण पर टिप्पणी लिखिए ।

   (घ) प्रश्नों के प्रकार लिखकर एक–एक उदाहरण दीजिए ।

8.18 सन्दर्भ ग्रंथ

1. पाण्डे,रामशक्ल – संस्कृत शिक्षण
2. द्विवेदी वाचस्पति – संस्कृत शिक्षण विधि
3. चतुर्वेदी, सीताराम – संस्कृत शिक्षण
4. सफाया, रघुनाथ – संस्कृत शिक्षण

इकाई – 9 Unit(–9)

"पाठ्य पुस्तक के निर्माण एवं मूल्यांकन के सन्दर्भ में संस्कृत की अनुदेशात्मक सामग्री का विकास"

(Development of Instructional Materials in Sanskrit Teaching–Text Books,Its Preparation and Evaluation)

इकाई की रूपरेखा

9.0 उद्देश्य
9.1 प्रस्तावना
9.2 अनुदेशात्मक तकनीक
9.3 अनुदेशात्मक तकनीक की मान्यताएँ
9.4 अनुदेशात्मक तकनीक की विशेषताएँ
9.5 अनुदेशन एवं संस्कृत शिक्षण
9.6 पाठ्य पुस्तक
9.7 पाठ्य–पुस्तक के प्रकार
9.8 पाठ्य पुस्तक निर्माण के सिद्धान्त
9.9 विषय वस्तु चयन में सावधानियाँ
9.10 प्राथमिक उ. प्रा. स्तर हेतु पाठ्य पुस्तकों का निर्माण
9.11 माध्यमिक उच्च माध्यमिक स्तर हेतु पाठत्य पुस्तकों का निर्माण
9.12 संस्कृत की पाठ्य पुस्तक की विशेषताएँ
9.13 संस्कृत की पाठ्य पुस्तक का मुल्यांकन
9.14 स्व परख प्रश्नों के उत्तर
9.15 सारांश
9.16 मूल्यांकन प्रश्न
9.17 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

9.0 उद्देश्य एवं लक्ष्य (objectives of Unit)

- इकाई की समाप्ति पर आप अनुदेशात्मक तकनीक का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे ।
- आप अनुदेशात्मक तकनीक से संस्कृत शिक्षण की पाठय पुस्तक के निर्माण का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे ।
- आप पाठ्य पुस्तक के निर्माण में प्रयुक्त तत्वों की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे ।
- आप पाठ्य पुस्तकों के निर्माण के सिद्धान्तों के विषय में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे ।

- आप पाठ्य पुस्तकों की विषय वस्तु, भाषाशैली, सम्पादन, मुद्रण, प्रकाशन, साजसज्जा एवं मूल्य निर्धारण विषयक तथ्यों की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे ।
- आप पूर्व प्राथमिक से उच्चतर कभाओं तक पाठय पुस्तक की विषय वस्तु के निर्माण का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे ।

9.1 प्रस्तावना (Introduction)

पाठ्य पुस्तक सर्वाधिक उपयुक्त एवं उपयोगी सहायक सामग्री है । भाषा शिक्षा में इसका महत्व और अधिक हो जाता है । पाठ्यपुस्तक भाषा शिक्षण के लिए सामग्री सुलभ कराती है । अत : अनुदेशन सामग्री के रूप में इसका निर्माण ध्यानपूर्वक करना बहुत जरूरी हो जाता है । आगे के अनुच्छेदों में पाठ्य पुस्तक निर्माण की प्रक्रिया, सिद्धान्त एवं विशेषताओं की जानकारी देने का प्रयास किया जायेगा ।

9.2 अनुदेशात्मक तकनीक

मानव अधिगम में अनुदेशन का महत्वपूर्ण स्थान है, क्योंकि अधिकांश मानव का अधिगम अनुदेशन द्वारा ही होता है । शिक्षण में अनुदेशन निहित होता है, अनुदेशन से तात्पर्य उन क्रियाओं से होता है, जो अधिगम में सुविधा प्रदान करती हैं; परन्तु छात्र तथा शिक्षक के मध्य अन्त: क्रिया आवश्यक नहीं होती है ।

अनुदेशात्मक तकनीकि से तात्पर्य उन विधियों तथा प्रविधियों की व्यवस्था से होता है जिनकी सहायता से सुनिश्चित अधिगम उद्देश्यों की प्राप्ति की जा सके, मनोवैज्ञानिक, सामाजिक तथा वैज्ञानिक सिद्धान्तों तथा अधिनियमों को अनुदेशन में प्रयोग करके विशिष्ट उद्देश्यों को प्राप्त करने को अनुदेशात्मक तकनीकी कहते हैं । स्किनंर, रॉबर्ट ग्लेसर, क्राउडर, गिलबर्ट आदि का अनुदेशात्मक तकनीकी में महत्वपूर्ण योगदान रहा है । अनुदेशात्मक तकनीकी का मूल स्रोत मनोविज्ञान है, इसका प्रमुख उदाहरण अभिक्रमित अनुदेशन है ।

9.3 अनुदेशन तकनीक की विशेषताएँ

अनुदेशनात्मक तकनीकी का प्रत्यय अधोलिखित अवधारणाओं पर आधारित है –

1. पाठ्य पुस्तक को छोटे–छोटे तत्वों में विभाजित किया जा सकता है, तथा प्रत्येक का प्रस्तुतीकरण स्वतन्त्र रूप में किया जा सकता है ।
2. पाठ्य वस्तु के तत्वों की सहायता से समुचित अधिगम परिस्थितियाँ उत्पन्न की जा सकती हैं । अधिगम के विशिष्ट स्वरूप को भी उत्पन्न किया जा सकता है ।
3. अनुदेशन की सहायता से छात्रों को अधिगम के लिए समुचित पुनर्बलन प्रदान किया जा सकता है।
4. अनुदेशन के द्वारा छात्रों को अपनी व्यक्तिगत भिन्नताओं के अनुसार सीखने का अवसर दिया जा सकता है ।
5. अनुदेशात्मक तकनीकी की विधियों तथा प्रविधियों की सहायता से उद्देश्यों की प्राप्ति की जा सकती है ।
6. शिक्षक की अनुपस्थिति में भी छात्र स्वयं अध्यापन से भी सीख सकते हैं ।

9.4 अनुदेशात्मक तकनीक की विशेषताएँ

अनुदेशात्मक तकनीकी की अग्रलिखित विशेषताएँ हैं : –

1. इस तकनीकी में छात्रों को उनकी व्यक्तिगत भिन्नताओं के अनुसार सीखने का अवसर दिया जाता है ।
2. इस तकनीकी द्वारा ज्ञानात्मक उद्देश्यों की प्राप्ति की जाती है ।
3. छात्रों को सही अनुक्रियाओं की पुष्टि द्वारा निरन्तर पुनर्बलन दिया जाता है ।
4. यह तकनीक योग्य शिक्षकों के अभाव की पूर्ति कर सकती है ।
5. अनुदेशात्मक तकनीकी के क्षेत्र में प्रयोगों तथा शोध कार्यों की सहायता से अनुदेशात्मक सिद्धान्तों का विकास किया जाता है ।
6. अनुदेशात्मक शिक्षण तकनीकी मनोवैज्ञानिक तथा अधिगम के सिद्धान्तों पर आधारित है।
7. अनुदेशात्मक तकनीकी में पाठ्य वस्तु के स्वरूप का विश्लेषण गहनता से किया जाता है, इससे छात्राध्यापकों तथा शिक्षकों में पाठ्य वस्तु के प्रति बूझ का विकास होता है । शिक्षण का प्रस्तुतीकरण भी प्रभावशाली हो जाता है ।

स्व–परख प्रश्न (Self Check Question)

अब तक आपने क्या समझा, इसका मूल्यांकन कीजिये–

1. शिक्षा तकनीकी का ज्ञान शिक्षक के लिए उपयोगी होता है । (हाँ/नहीं)
2. अनुदेशन तकनीक से छात्रों की व्यक्तिगत भिन्नता के अनुसार सीखने का अवसर मिलता है । (हाँ/नहीं)
3. अनुदेशन तकनीक से शिक्षक की अनुपस्थिति में भी छात्र स्वयं सीख सकते है । (हाँ/नहीं)
4. अनुदेशन तकनीक छात्रों को पुनर्बलन हेतु प्रभावी नहीं है । (हाँ/नहीं)
5. अनुदेशन तकनीक से ज्ञानात्मक उद्देलगें की प्राप्ति की जा सकती है । (हाँ/नहीं)

9.5 अनुदेशन एवं संस्कृत शिक्षण

देववाणी संस्कृत अनादिकाल से सभ्यता का स्रोत रही है । समय–समय पर इनके अनेक रूप धारण किये । यही वह भाषा है जिसने मनुष्य को सम्पूर्णता प्रदान की है । इसे हमारी संस्कृति का भण्डार होने का गौरव प्राप्त है । अपने चरित्र से इसने सम्पूर्ण सृष्टि को शिक्षा दी है ।

एतद्देशस्य प्रसुतस्य सकाशादग्रजन्मन: ।
रच स्वं चरितशिक्षरेन पृथिव्या: सर्वमानव: ।।

परन्तु वर्ममान मे सभ्यता का पाश्चात्यीकरण होने के कारण हम संस्कृत और संस्कृति दोनों से ही विमुख होते जा रहे हैं । विदेशी भाषा के प्रभाव मैं आकर इसका प्रकाश धूमिल होता जा रहा है। यह चिन्ता का विषय है ।

फिर भी यह गौरव की बात है कि विश्व की सभी भाषाओं की जननी के रूप में संस्कृत भाषा को स्वीकार किया गया है ।

अंगीकृता कोटिमिताश्च भाषा नाग्नीकृता देवगिरा च येन ।
न शोभते तस मुखारविन्दे सिन्दुर बिन्दु विधिवा ललारे ।।

अर्थात् जिसने करोड़ो भाषाओं का ज्ञान प्राप्त कर लिया है मगर उसे संस्कृत भाषा का ज्ञान नहीं है तो उसका मुखारबिन्द उसी प्रकार सुशोभित नहीं होता जिस प्रकार विधवा के ललाट पर सिन्दूर शोभायमान नही होता ।

वैदिक काल से लेकर आधुनिक काल तक संस्कृत भाषा में अथाह साहित्य रचना हुई है । जिन दिनों लिखने के साधन विकसित नहीं थे उन दिनों में भी इस भाषा की रचनाएँ मौखिक परम्परा से चल रही थी । प्राचीनकाल की रचनाएं आज भी शुद्ध उच्चारण विधि सहित ज्यों की त्यों विद्यमान है । (उनकी) मौलिकता में कोई परिवर्तन नहीं हुआ है ।

इस प्रकार सिद्ध होता है कि इस भाषा के साहित्य की धारा कभी नहीं सूखी । यह सदा पुष्पित व पल्लवित होती ही गई ।

आधुनिक भारत गे ही नहीं वरन विश्वभर में संस्कृत भाषा का महत्व निर्विवाद रूप से स्वीकार किया गया है । आज हमारा देश विदेशी शासकों के चंगुल से मुक्त हो गया है । विदेशी शासकों ने हमारी परम्पराओं, हमारे उच्च आदर्शों और हमारे इतिहास तक को छिन्न–भिन्न कर दिया था किन्तु संरकुत भाषा में निबद्ध भारत की संस्कृति का सूर्य पराधीनता के गहन अन्धकार को चीरकर पुन: प्रकाशित हो गया ।

9.6 पाठ्य पुस्तक

संस्कृत शिक्षण में पाठ्य पुस्तकों का स्थान अन्य विषयों की अपेक्षा अधिक महत्वपूर्ण है । वह छात्रों के लिए गुरु का काम करती है। गुरु की अनुपस्थिति में वही मार्गदर्शन भी करती है। गृहकार्य करने में पाठ्य पुस्तक छात्रों के लिए बहुत उपयोगी होती है । पाठ्य पुस्तक प्राय: पाठ्यक्रम के अनुसार निर्मित की जाती हैं । अत: अध्यापक के लिए भी पथ प्रदर्शक होती है । इससे अध्यापकों को यह पता चलता है कि पूरे सत्र में उन्हें पढ़ना है और किस क्रम से पढ़ना है। विशेषत: नवीन तथा अनुभवहीन अध्यापकों के लिए पावयपुस्तक बहुत आवश्यक होती है । पाठयपुस्तकों से विभिन्न कक्षाओं का स्तर जाना जाता है । पाठ्य पुस्तकें शिक्षाधिकारियों के लिए उपयोगी होती हैं ।

पाठ्यपुस्तकें समाज की आवश्यकता की पूर्ति करती हें । उनमें समाज के लिए आवश्यक ज्ञान के साथ–साथ उनकी सांस्कृतिक एवं चारित्रिक आवश्यकताओं के लिएए भी सामग्री रहती है । समाज की इच्छाओं, आकांक्षाओं, प्रेरणाओं आदि का समावेश होता है । अत: पाठयपुस्तकों से विभिन्न उद्देश्यों की पूर्ति होती है ।

9.7 पाठ्य–पुस्तक के प्रकार

प्राय: पाठ्य पुस्तकें दो उद्देश्यों की पूर्ति के लिए पाठ्यक्रम में निर्धारित की जाती हैं ।

1. गंभीर अध्ययन के लिए पाठ्य पुस्तकें
2. सामान्य पठन के लिए सहायक पुस्तकें

गम्भीर अध्ययन के लिए जो पुस्तकें निर्धारित की जाती हैं उनके शब्द भण्डार, सूक्तियाँ, मुहावरे आदि के साथ साथ भाषा के सभी अंगों का अध्ययन करना अभिप्रेत होता है । भावों की दृष्टि से उनमें व्यक्त विचारों को ग्रहण करना और उनके अनुरूप अपने व्यवहार में परिवर्तन करना भी पाठ्य पुस्तक के अध्ययन का उद्देश्य होता है । अत : अध्यापकों के लिए यह आवश्यक होता है कि पाठ्य पुस्तक की सामग्री को छात्रों को हदयंगम कराने के साथ–साथ जीवन में उनका उपयोग भी बताया जाये ।

सामान्य पठन के लिए सहायक पुस्तकों में व्यक्त जानकारी, घटनाएँ, कथाएँ आदि पढ़कर छात्रों के सामान्य ज्ञान की अभिवृद्धि होती है जिसमें अध्यापक की सहायता के बिना भी छात्र इसे पढ़कर समझ सकते हैं ।

9.8 पाठ्य पुस्तक निर्माण के सिद्धान्त

पाठ्य पुस्तकों के निर्माण से पहले पाठ्यक्रम का निर्धारण करना अति आवश्यक होता है । जिन उद्देश्यों की पूर्ति के लिए पाठ्यक्रम निर्माण किया जाता है उनकी पूर्ति पाठ्य पुस्तकों से होनी चाहिए । इसके लिए पाठ्यपुस्तक के निम्नलिखित अंगो पर विचार करना 'आवश्यक है

1. विषय वस्तु
2. भाषा शैली
3. सम्पादन
4. मुद्रण प्रकाशन
5. साज्यसज्जा एवं मूल्य निर्धाता

विषय वस्तु

विषय वस्तु का चुनाव करत समय मात्रात्मक एवं गुणात्मक दोनों दृष्टियों से विचार करना आवश्यक होता है अर्थात जिस कक्षा के लिए पाठ्य पुस्तक निर्मित की जाने वाली है उसके छात्रों की औसत आयु क्या है? और वे एक सत्र में कितनी सामग्री का अध्ययन कर सकते हैं । सत्र में आने वाली छुट्टियों को निकाल देने के पश्चात जो कार्य दिवस बच जाते हैं उतने समय में पाठ्य पुस्तक के कितने पृष्ठ पढ़ाये जा सकते हैं इसका निर्णय करके ही पाठ्य पुस्तक की सामग्री की मात्रा निर्धारित की जाती है ।

गुणात्मक दृष्टि से छात्रों की ग्रहण शक्ति को देखत हुए, उनकी रुचियों का आकलन करके, समाज की परम्पराओं, आवश्यकताओं आदि के अनुरूप विषय वस्तु का चयन किया जाना चाहिए । इनमें ऐसे पाठों का समावेश होना चाहिए जिनके द्वारा छात्रों के सम्मुख उच्च आदर्शों को प्रस्तुत किया जा सके एवं जिनका अनुकरण करके वे अपना चरित्र उज्जल बना सकें ।

पाठ्य पुस्तक में ऐसी सामग्री का संकलन होना चाहिए जो किशोर अवस्था के विद्यार्थियों के लिए सहज और स्वाभाविक हो । इसमें कौशलपूर्ण जीवनी, यात्रा , कथा–वार्ताएँ, धर्म आदि को स्थान दिया जा सकता है । इस प्रकार विविध विषयों से संबन्धित सामग्री का उचित चयन पाठ्य पुस्तक को प्रभावी बनाता है ।.

संस्कृत साहित्य में छोटी–छोटी कथाएँ प्रचलित हैं ।"सरित सागर" "बेतालं पंचविंशति", "भोजन प्रबंध" आदि में वर्णित छोटी–छोटी कहानियाँ विषय वस्तु में सम्मिलित करने से पाठ्य पुस्तक छात्रों के लिए रुचिकर हो सकती है ।

पाठयपुस्तक में दी गई सामग्री छात्रों के वातावरण से समवेत होनी चाहिए । "उद्यान वर्णनम्" "वाटिकावर्णनम्", "मम मित्रम्","अस्माकम नगर", "शरीरांग नामानि", "रेलयानम्" तथा "प्रकृति चित्रणम" आदि को पाठ्य पुस्तकों में सम्मिलित करना समीचीन है ।

धीरे– धीरे विषय वस्तु का क्षेत्र व्यापक होना चाहिये। फिर ऐसे पाठों को लेना चाहिए जिनका सम्बन्ध छात्रों के साथ अप्रत्यक्ष रूप से हो । वातावरण, पर्यावरण देश की भौगोलिक, सांस्कृतिक और सामाजिक परिस्थितियाँ छात्रों के साथ अप्रत्यक्ष रूप से सम्बन्द्ध होती है । इन विषयों को पाठ्य पुस्तक में रोचक और सरल रूप में सम्मिलित करने से यह छात्रों के लिए अधिक उपयोगी बन सकता है ।

9.9 विषय वस्तु चयन में सावधानियाँ

पाठ्य पुस्तक में पाठकों की रुचि और आयु का ध्यान रखते हुए पाठ्य विषय, सरल, सुगम और सुबोध होना चाहिए अर्थात 'सरल से कठिन की ओर' सिद्धान्त को ध्यान में रखना चाहिए । आरम्भ में छात्रों को कठिन सूत्र न बताकर उन्हें ऐसे सरल नियम द्वारा प्रकट करना चाहिए कि छात्र उस विषय में रुचि ले सकें और आसानी से उसे समझ सकें । लम्बी, सामासिक, शब्दावलियों, अत्यन्त क्लिष्ट शब्दों को पहले से ही पाठ में सम्मिलित नहीं करना चाहिए जिससे कि छात्रों की उनमें रुचि जाग्रत हो तथा वे स्वयं ही उन अध्ययन के प्रति जिज्ञासु ही और स्वत: ही आगे की ओर अग्रसर हों ।

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर यह कहा जा सकता है कि संस्कृत शिक्षण के अन्तर्गत पाठ्यपुस्तक निर्माण के लिए (1) प्राथमिक (2) उच्च प्राथमिक (3) माध्यमिक (4) स्नातक एवं (5) अधिस्नातक स्तर पर छात्रों की आयु एवं रुचियों का विशेष रूप से ध्यान रखना चाहिए।

9.10 प्राथमिक, उ.प्रा. स्तर हेतु पाठ्य पुस्तकों का निर्माण

कक्षा 1 से 5 तक के विद्यार्थियों के लिए संस्कृत शिक्षण की पाठ्यपुस्तक तैयार करते समय यह ध्यान रखना चाहिए कि इस स्तर पर बालकों को बाल गीतों, कवितायें, कहानियों आदि की अधिक चाह होती है । कक्षा 1 से 3 के छात्र नाद सोन्दर्य एवं अभिनय में रुचि लेते है अत: उनके लिए ऐसे बालगीतों का संकलन करना चाहिए जो नाद सोन्दर्यात्मक एवं अभिनयात्मक हों । प्रयाण गीतों की लय और ताल भी उन्हें आकर्षक लगती है । अत: उन्हें भी संकलन में सम्मिलित करना चाहिए । प्रार्थना के गीत या अन्य पद्य जो बोझिल हों उगैर यदि उनमें योग्यता का अभाव हो तो उन्हें सम्मिलित नहीं करना चाहिए क्योंकि प्राय: उनमें बच्चे रुचि नहीं लेते ।

प्राथमिक स्तर पर पाठ्य पुस्तक का आकार–प्रकार आकर्षक होना चाहिए । पाठ बहुत लम्बे न हों और उनमें क्लिष्ट शब्दों की संख्या आवश्यकता से अधिक न हो । दो अनुच्छेदों

(एक दिन के पाठ के बराबर स्थल) में छः सात से अधिक व्याख्या योग्य शब्द नहीं होने चाहिए, अन्यथा बालक उन्हें याद नहीं रख सकेगें । प्रारम्भिक कक्षाओं में शरीर के विभिन्न अंगो, बर्तनों, मुख्य फलों, सब्जियों एवं जीवनोपयोगी आवश्यक वस्तुओं के नामों का व्यावहारिक ज्ञान कराने वाले पाठों को पाठ्य पुस्तक में सम्मिलित करना चाहिए ।.

गद्य या पद्य के पाठ नीरस न हों । पद्य अनुप्रास आदि अलंकारों से युक्त हो । सरल छंदों से युक्त हों । श्रुति मधुर तथा सरस हों जिसमें बालकों की रुचि काव्य की ओर बनी रहे तथा वे निर्विध इन्हें कंठस्थ भी कर सकें ।

कतिपय पाठ ऐसे भी हों जिनमें व्याकरण के साधारण नियमों को रोचकता से समझाया गया हो इसके लिए उदाहरण भी सरल चुने गये हों ।

पाठों के अन्त में व्याकरण एवं अनुवाद के नियम तथा शब्दों के प्रयोग निर्दिष्ट हों । जैसा कि पूर्व में बताया गया है कि पुस्तक में विषय वस्तु को बालक की आयु व रुचि ध्यान में रखकर सम्मिलित करना चाहिए । इसी क्रम में उच्च प्राथमिक स्तर पर विद्यार्थियों के शारीरिक, मानसिक एवं बौद्धिक विकास के अनुरूप पाठों को पाठ्य पुस्तक में सम्मिलित किया जाना चाहिए । आयु बढ़ने के साथ साथ उनके विषयों में भी परिवर्तन अपेक्षित है जो उनकें सर्वांगीण विकास हेतु आवश्यक भी है ।

इस स्तर पर छोटी–छोटी कल्पनाशील कहानियाँ रखी जानी चाहिए । अत्यन्त सरल और रोचक ढंग से महापुरुषों की जीवनियाँ और राष्ट्र भक्तों के जीवन चरित्रों को इसमें रखा जाना चाहिए ।

रामायण, महाभारत, विभिन्न पुराणों, पंचतन्त्र, हित, बेतालपच्चविंशतिकी, आदि के रोचक प्रसंग सरल भाषा में निबद्ध कर इसमें रखे जाने चाहिए ।

नैतिक और सदाचार की शिक्षा युक्त लेख रखे जाने से विद्यार्थियों के चरित्र निर्माण हेतु वे लाभदायक सिद्ध होते हैं । वैज्ञानिक अविष्कारों, प्रसिद्ध वैज्ञानिकों, आधुनिक यंत्रों आदि का ज्ञान भी सरल शब्दों में इस स्तर पर पाठ्य पुस्तक के अन्तर्गत दिया जा सकता है।

इसमें प्रयुक्त भाषा जटिल सीमा, समास युक्त नहीं होनी चाहिए जो विषय को दुरुह बना दे । वरन् ऐसे शब्दों का प्रयोग होना चाहिए जिनमें अधिकांश तत्सम और तद्भव हों ।

इस स्तर पर ऐसी पाठ्य सामग्री तैयार की जानी चाहिए जिससे छात्र स्वतः ही उच्च अध्ययन के प्रति जागरूक हो सकें ।

9.11 माध्यमिक उच्च माध्यमिक स्तर हेतु पाठ्य पुस्तकों का निर्माण

माध्यमिक स्तर पर छात्रों को संस्कृत भाषा सम्बंधी प्रारम्भिक ज्ञान प्राप्त हो चुका होता है । अतः इस स्तर पर गद्य व पद्य के पाठ का अनुपात निर्धारण कर लेना चाहिए । पाठ्य पुस्तक में प्रत्येक दो गद्य पाठों के उपरान्त एक पद्य पाठ रखा जाना उपयुक्त होता है । इस स्तर के विद्यार्थी गम्भीर विषयों के प्रति भी जिज्ञासु होते हैं । उनकी भाषा सम्बन्धी रुचि भी परिष्कृत और परिमार्जित हो चुकी होती है । अतः गद्य और पद्य पाठों में लेख, निबन्ध, सुभाषित, सूक्तियाँ, लघु नाटक, एकाकी आदि रखे जा सकते हैं जिसमें जीवन सन्देश भी निहित हो तथा संस्कृत विषय के प्रति रुचि और सम्मान भी बढ़ सके । पाठ्य पुस्तक में व्याकरण सम्बन्धी नियम, उदाहरणों सहित रखे जाने चाहिए । सन्धि, समास, उपसर्ग, प्रत्यय,

तत्सम, तदभव, छन्द, अलंकार आदि की जानकारी उदाहरणों सहित उपयोगी होती है । कालिदास भारवी, माघ आदि सुप्रसिद्ध कवियों की सुप्रसिद्ध रचनायें को स्तरानुकूल चयन करके सम्मिलित करना चाहिए । पाठों के अन्त में अनुवाद के नियम निर्दिष्ट होने चाहिए ।

इस प्रकार ज्यों–ज्यों छात्र उन कक्षाओं की ओर अग्रसर होगा उसे संस्कृत शिक्षण के गहन और सूक्ष्म विषय का ज्ञान प्रदान किया जा सकेगा ।

संस्कृत शिक्षण की पुस्तिका को निर्माण करते समय जिन तथ्यों पर ध्यान रखा जाना अपेक्षित है अर्थात् जो आवश्यक बिन्दु हैं उन्हें, निम्नांकित तालिका द्वारा समझा जा सकता हैं–

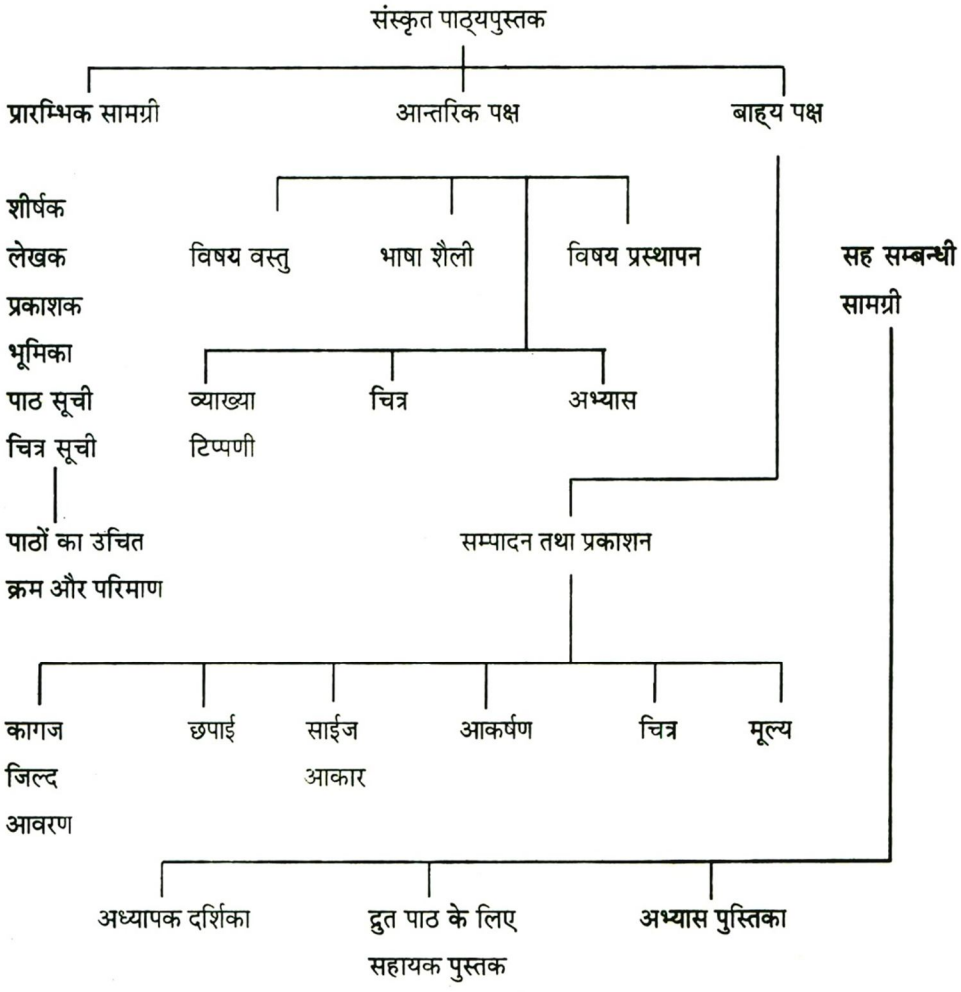

स्व–परख प्रश्न (Self Check Question)

अब तक आपने क्या समझा इसका स्वमूल्यांकन कीजिये –

1. पाठ्य पुस्तक की विषय वस्तु सभी स्तरों पर समान होना चाहिए। (हाँ/नहीं)
2. पाठ्य पुस्तक की भाषा छात्रों की आयु एवं बौद्विक स्तर के अनुकूल होनी चाहिए । (हाँ/नहीं)

3. पाठ्य पुस्तक की समाग्री "कठिन से सरल" सिद्धान्त के आधार पर निर्धारित होनीं चाहिए। (हाँ/नहीं)
4. प्राथमिक व उच्च प्राथमिक स्तर पर पाठ्य पुस्तक में चिंत्रों एवं साज सज्जा का अत्यधिक महत्व है । (हाँ/नहीं)
5. पाठ्य पुस्तक अध्यापकों के लिए भी पथप्रदर्शक का कार्य करती है । (हाँ/नहीं)

9.12 संस्कृत की पाठ्य पुस्तक की विशेषताएँ

उपर्युक्त अनुच्छेदों में संस्कृत भाषा की पाठ्यपुस्तक के निर्माण की प्रक्रिया एवं उसका निर्माण करते समय द्यातव्य बिन्दुओं की चर्चा की गई है । अब हम एक अच्छी संस्कृत पाठ्यपुस्तक की विशेषताओं पर प्रकाश डालेगे । एक अच्छी पाठ्य पुस्तक में निम्नांकित विशेषताएँ होनी चाहिए –

1. पाठ्य पुस्तक में प्रयुक्त शब्दावली का चयन स्तरानुकूल होना चाहिए ।
2. संस्कृत भाषा क्योंकि बच्चों की भाषा नहीं होती अत: एक साथ कई नये शब्दों एवं कठिन शब्दों का उपयोग नहीं होना चाहिए ।
3. एक बार प्रयुक्त शब्दों की आगे के पाठों में पुनरावृत्ति होनी चाहिए ताकि विद्यार्थी उनका दोहरान कर सकें ।
4. पाठ्य पुस्तक में सामग्री में नवीनता एवं विविधता होनी चाहिए ।
5. पाठ्य पुस्तक में प्रयुक्त विषय वस्तु मनोरंजक होनी चाहिए ।
6. पाठ्यपुस्तक की विषय सामग्री छात्रों को नवीन जानकारी देने वाली होनी चाहिए ।
7. भाषा तत्वों का प्रयोग स्वाभाविक संदर्भ में होना चाहिए ।
8. प्रत्येक पाठ के अन्त में जाँच एवं अभ्यास हेतु प्रर्याप्त प्रश्न होने चाहिए ।
9. अभ्यासमाला हेतु पर्याप्त निर्देश दिये हुए होने चाहिए ।
10. यथास्थान चित्र, रेखाचित्र, उदाहरण आदि दिये जाने चाहिए जो आकर्षक एवं सार्थक होने चाहिए ।
11. पाठ्यपुस्तक मुद्रण एवं प्रयुक्त कागज अच्छा होना चाहिए ।
12. पुस्तक की साज–सजा अच्छी होनी चाहिए ।
13. पुस्तक की कीमत अधिक नहीं होनी चाहिए ।
14. पाठ्य–पुस्तक का आकार ऐसा होना चाहिए कि छात्र को उसके उपयोग में किसी प्रकार की कठिनाई अनुभूत न हो ।
15. प्रत्येक पाठ में प्रस्तावना एवं निष्कर्ष का समावेश होना चाहिए ।
16. पाठों के अन्त में संदर्भ सामग्री की सूची दी हुई होनी चाहिए ।
17. संस्कृत भाषा की पाठ्यपुस्तक में गद्य, पद्य एवं कहानियों, संवादों आदि का समावेश होना चाहिए ।
18. संस्कृत पाठ्य पुस्तक में ऐसे पाठ होने चाहिए जो छात्रों में नैतिक गुणों, मूल्यों राष्ट्रीय एकता, प्रेम, भक्ति जगा सके ।

9.13 संस्कृत की पाठ्य पुस्तक का मूल्यांकन

संस्कृत पाठ्य पुस्तक के मूल्यांकन हेतु निम्नांकित कसौटी का उपयोग किया जा सकता है

1. प्रारम्भिक सामग्री -

इसके अन्तर्गत अग्रांकित बिन्दुओं को सम्मिलित किया जाना चाहिए

(1) पुस्तक का शीर्षक

(2) पुस्तक के लेखक का नाम

(3) प्रकाशक का नाम

(4) पाठ–सूची

(5) चित्र सूची

(6) पाठों का उचित क्रम और परिणाम – इस बिन्दु के अन्तर्गत यह देखना चाहिए कि पाठों का क्या क्रम यह क्रम सरल से कठिन की ओर का है या इसके विपरित? इसी के साथ यह भी विवेचित किया जाना चाहिए पाठों को जिस किसी क्रम में रखा जाय उसका क्या परिणाम या प्रभाव हो सकता है ।

2. आन्तरिक पक्ष –

इस बिन्दु के अन्तर्गत निम्नांकित बातों का समावेश किया जाना चाहिए –

(1) विषय वस्तु :– इसमें पाठ्यवस्तु में सम्मिलित की गई विषय वस्तु की मात्रा, उपयुक्तता, विविधता, मनोरंजकता, प्रकार (विधाएँ), पाठों का कम आदि बातों पर विचार किया जा सकता है।

(2) भाषा शैली – पाठों में प्रयुक्त शब्दावली, वाक्य रचना, शैली की उपयुक्तता पर विचार किया जाना चाहिए ।

(3) व्याख्या व टिप्पणी

(4) चित्र

(5) अभ्यास माला

(6) विषय प्रस्थापन

3. **बाह्य पक्ष** : इसके अन्तर्गत निम्नांकित बातें आती हैं–

(1) सम्पादन तथा प्रकाशन

(2) पुस्तक के लिए प्रयुक्त कागज

(3) पुस्तक साज–सजा, जिल्द एवं आवरण

(4) मुद्रण

(5) आकार (साइज)

(6) आकर्षण (पुस्तका का स्वरूप)

(7) पुस्तक का मूल्य

(8) आवरण पर चित्र

पाठ्य पुस्तक के मूल्यांकन हेतु उपर्युक्त बिन्दु अन्तिम नहीं है । इनमें वृद्धि या कमी भी की जा सकती है ।

पाठ्य पुस्तक के साथ सह संबंधी सामग्री भी उपयुक्त रहती है जिसमें, अध्यापक संदर्शिका, द्रुतपाठ हेतु साहयक पुस्तक एवं अभ्यास पुस्तिका सम्मिलित होती हैं ।

9.14 स्व परख प्रश्नों के उत्तर (Answer to Self Check Question)

अ		ब	
1.	हाँ	1.	नहीं
2.	हाँ	2.	हाँ
3.	हाँ	3.	नहीं
4.	नहीं	4.	हाँ
5	हाँ	5.	हाँ

9.15 सारांश (Summary)

अनुदेशन का अर्थ : शिक्षक द्वारा पाठ्यक्रम के सम्प्रेषण हेतु कक्षा–कक्ष में जाने वाली कियाएँ।

पाठ्यपुस्तक का अर्थ: वह पुस्तक जिसमें चयनित एवं व्यवस्थित जानकारी संग्रहित होती है ।

पाठ्यपुस्तक की विशेषताएँ: स्तरानुकूल, उपयुक्त शब्दावली, आकर्षक मुद्रण, चित्र, साज–सजा अच्छी, मूख्य अभ्यास प्रश्न आदि

9.16 मूल्यांकन प्रश्न (Unit End Questions)

1. अनुदेशन का उद्देश्य क्या है?
2. अनुदेशन तकनीक की क्या प्रमुख विशेषताएँ हैं?
3. अनुदेशन तकनीक का संस्कृत शिक्षण में क्या महत्व है?
4. व. संस्कृत शिक्षण में पाठ्य पुस्तक का क्या स्थान है?
5. पाठ्य पुस्तक निर्माण के प्रमुख सिद्धान्त बताइये ।
6. पाठ्य पुस्तक निर्माण में विष्य वस्तु चयन करते समय क्या सावधानियाँ रखनी चाहिए?

9.17 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची (Reference)

1. मिश्रा, डा. आरएम – शिक्षण तकनीकी, आलोक प्रकाशन, लखनऊ
2. सिंह, डा. मयाशंकर – शैक्षिक तकनीकी एवं आधुनिक प्रवृत्तियाँ, कैलाश प्रकाशन, इलाहाबाद
3. उपाध्याय, प्रो. राजेश्वर एवं पाण्डेय डा. (श्रीमती) सरला – शैक्षिक तकनीकी, विश्व विद्यालय प्रकाशन चौक, वाराणसी
4. मित्तल, डा. श्रीमती संतोष – संस्कृत शिक्षण, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर

5. सफाया, डा. रघुनाथ – संस्कृत शिक्षण, हरियाणा साहित्य अकादमी, चण्डीगढ़
6. पाण्डेय, प्रो. रामशकल – संस्कृत शिक्षण, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा
7. द्विवेदी प्रो. वाचस्वति – संस्कृत शिक्षण विधि, सुशील प्रकाशन चौक, पटना
8. शुक्ल, श्री रमापति – हिन्दी शिक्षण प्रविधि, दोआब प्रकाशन, –दिल्ली

इकाई – 10 (Unit – 10)

संस्कृत–पाठ्यवस्तु से सन्दर्भित शिक्षण सहायक सामग्री निर्माण एवं मूल्यांकन

(Content Specific Teaching Aids–Preparationand Evaluation)

इकाई की रूपरेखा

- उद्देश्य
  - (अ) संस्कृत– पाठ्यवस्तु से सन्दर्भित शिक्षण सहायक सामग्री का अर्थ
  - (ब) विविध विधाओं हेतु शिक्षण सहायक सामग्री का निर्माण
- चित्र
- रेखाचित्र
- मानचित्र
- समभाव पद्य
  - (अ) अंतःकथा
  - (ब) प्रसंग द्वारा
- समभाव कथा
- चार्ट एवं प्रतिकीर्ति
- प्रत्यक्ष वस्तु प्रदर्शन
- संस्कृत प्रश्नोत्तरी
- समस्या पूर्ति
- शब्द खेल
- नाट्याभिनय
- संदर्भित शिक्षण सहायक सामग्री का मूल्यांकन
- कतिपय सुझाव
- सारांश
- स्व–परख प्रश्नो के उत्तर
- मूल्यांकन प्रश्न
- संदर्भ ग्रंथ सूची

10.0 इकाई के उद्देश्य(Objectives of the Unit)

1. इस इकाई की समाप्ति पर आप संस्कृत–पाठ्यवस्तु से सन्दर्भित शिक्षण सहायक सामग्री की विस्तृत जानकारी प्राप्त कर सकेंगे ।
2. आप विभिन्न विधाओं के अनुसार सहायक सामग्री का वर्गीकरण कर सकेंगे ।
3. आप विभिन्न विधाओं के अनुसार सहायक सामग्री का निर्माण कर सकेंगे ।

4. आप पाठ विशेष को रुचिकर बनाने हेतु कक्षा के स्तरानुसार सामग्री तैयार कर सकेंगे ।
5. आप तैयार की गयी शिक्षण सामग्री का प्रयोग करके उसकी गुणवत्ता का प्रयोग कर सकेंगे ।
6. आप शिक्षण सामग्री का मूल्यांकन कर उसमें आवश्यकतानुसार परिष्कार कर सकेंगे ।

10.1 (अ) संस्कृत– पाठ्यवस्तु से सन्दर्भित शिक्षण सहायक सामग्री का अर्थ (Meaning of Teaching Aids)

विषय को रोचक एवं सुग्राह्य बनाने के लिए यह आवश्यक है कि छात्रों की शिक्षा का सम्बन्ध उनकी अधिकाधिक ज्ञानेन्द्रियों के साथ हो । इसी उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए आजकल शिक्षण में सहायक सामग्री का प्रयोग प्रचुर मात्रा में किया जा रहा है । इससे सैद्धान्तिक, मौखिक एवं नीरस पाठों को सहायक उपकरणों के प्रयोग से अधिक स्वाभाविक, मनोरंजक तथा उपयोगी बनाया जा सकता है । अनेक शोध अध्ययनों से यह सिद्ध हो चुका है, कि किसी भी कार्य को सीखने में व्यक्ति की जितनी अधिक ज्ञानेन्द्रियाँ सक्रिय होती हैं, उतना ही अधिगम अधिक स्थायी होता है ।

यूनिसेफ के एक अध्ययन के अधार पर

हम कैसे सीखते हैं?	हम कैसे याद करते हैं?
चखकर - 1%	पढ़कर - 1%
छूकर –2%	सुनकर - 2%
सूँघकर - 3%	देखकर - 3%
सुनकर - 11%	देखकर - 30%
देखकर - 83%	कहकर –30%
	कहकर और सुनकर - 90%

उपर्युक्त सारिणी से स्पष्ट है कि अधिगम प्रक्रिया में दृश्यश्रव्योपकरण की विशेष भूमिका है ।

थॉमस एम रिस्क ने कहा– "त्रानेन्द्रिय अनुभव द्वारा ही किसी भी वस्तु या क्रिया का मानसिक चित्र बनता है । इस मानसिक चित्र के आधार पर ही तत्सम्बन्धी प्रत्यय बनते हैं, अत : शिक्षण द्वारा ज्ञान के प्रत्यक्षीकरण एवं उसे मूर्त्तता प्रदान करने के लिए ऐसे शैक्षणिक उपकरणों की आवश्यकता एवं महत्ता स्वयं सिद्ध है जिनके माध्यम से वस्तु, क्रिया, भाव एवं विचार का बिम्बग्रहण सम्भव हो सके ।"

दृश्य– श्रव्य साधन शिक्षण की एक ऐसी सहायक सामग्री हें जिसके प्रयोग से स्थूलता से सूक्ष्मता की ओर बढ़ते हुए छात्रों के ज्ञान को पुष्ट करने में बल मिलता है । किसी भी भाषा के शुद्ध, परिष्कृत तथा परिमार्जित ज्ञान हेतु अभ्यास करना अत्यन्त आवश्यक है. लेकिन संस्कृत भाषा क्योंकिं व्यावहारिक भाषा नहीं है, अत: लोग प्राय: इसे शुष्क तथा नीरस विशेषणों से सम्बोधित करते हैं, किन्तु इन विशेषणों का प्रयोग करने वाले संस्कृत भाषा की महत्ता तथा सरलता से अपरिचित हैं । श्लोकों का जो माधुर्य संस्कृत भाषा में विद्यमान है वह किसी भी

उग्न्य भाषा में नहीं है । माध्यमिक स्तर तक छात्र को तीन भाषाओं के साथ अन्य विषयों को पढ़ने का भी बोझ वहन करना पड़ता है, अत: आवश्यकता इस बात की है, कि संस्कृत शिक्षण को अधिकाधिक रोचक बनाया जाए ।

दृश्य साधनों का प्रयोग शिक्षण को रोचक बनाने हेतु प्राचीनकाल से ही होता रहा है । छात्रों को बेदियों के निर्माण करने के नियम सिखाने के लिए ताड़ पत्रों पर खींचे गए रेखाचित्रों का प्रयोग वैदिक शिक्षा पद्धति में भी किया जाता था । स्वतन्त्रतोपरान्त दृश्य– श्रव्य उपकरणों का प्रयोग शिक्षा के क्षेत्र में पर्याप्त मात्रा में किया जाए इस दृष्टि से केन्द्रीय तथा राज्य सरकारों ने महत्वपूर्ण कदम उठाए । 1952 में दृश्य– श्रव्य शिक्षा की राष्ट्रीय परिषद् की स्थापना की गई । इस परिषद की सिफारिशों में इस बात पर बल दिया गया कि विद्यालयों में अधिकाधिक दृश्य– श्रव्य साधनों का प्रयोग किया जाए । 1959 से 1963 तक दृश्य– श्रव्य शिक्षा की राष्ट्रीय परिषद् की चार बैठक हुईं । इन बैठकों में भी विशेषत: इस बात पर बल दिया गया कि विद्यालयों में इन उपकरणों को उपलब्ध करवाया जाए । विश्वविद्यालयों में दृश्य– श्रव्य विभाग स्थापित किए जाएँ । क्षेत्रीय शिक्षा महाविद्यालयों में दृश्य– श्रव्य साधनों का पर्याप्त भण्डार हो तथा प्रशिक्षणार्थी को प्रशिक्षण काल में इन उपकरणों के प्रयोग का समुचित प्रशिक्षण दिया जाए ताकि वे शिक्षक बनने के बाद इन उपकरणो का प्रयोग कर अपने शिक्षण को रोचक बना सकें ।

मेरिया माण्टेसरी ने 'करके सीखने' को प्रधानता दी है जिससे इन उपकरणों की महत्ता सिद्ध होती है । उनके अनुसार–

If I hear	I forget
If I see	I remember
If I do	I Understand and Learn

यद्यपि शिक्षक स्वयं भी एक श्रेष्ठ दृश्य सामग्री है क्योंकि वह विषय को सरल बनाता है, भली–भाँति समझाने का प्रयत्न करता है, फिर भी वह स्वयं में पूर्ण नहीं है, अत: सहायक सामग्री का प्रयोग उसके लिए वांछनीय ही नहीं अपितु अनिवार्य भी है । ' श्रव्य –दृश्य सामग्री, वे साधन हैं, जिन्हें हम आँखों से देख सकते हैं, कानों से उनसे संबन्धित ध्वनि सुन सकते हैं । वे प्रक्रियाएँ जिनमें दृश्य तथा श्रव्य इन्द्रियाँ सक्रिय होकर भाग लेती हैं, श्रव्य – दृश्य साधन कहलाती हैं । '

10.1 (ब) विविध विधाओं हेतु शिक्षण सहायक सामग्री का निर्माण (Preparation of Various Teachinbg Aids)

चूँकि प्रत्येक विधा की पाठयोजना में भिन्न–भिन्न सोपानों का अनुसरण किया जाता है अत : अलग तरह की शिक्षण सहायक सामग्री का' प्रयोग किया जाता है ।

एक अच्छी शिक्षण सहायक सामग्री की गुणवत्ता बनाए रखने के लिए आवश्यक है–

1. **परिशुद्धता** - संबन्धित विषयवस्तु को स्पष्ट करने के लिए सही सहायक सामग्री का चयन किया जाना चाहिए । जैसे संस्कृत में सन्धि पढ़ाते समय संस्कृत के शब्दों के उदाहरण ही स्वीकार किए जाने चाहिए हिन्दी भाषा के नहीं ।

2. **सम्बद्धता** – सहायक सामग्री पाठ से सम्बद्ध होनी चाहिए । यदि ' वर्षा ऋतु' का पाठ है तब उसके लिए बनाया गया चित्र अथवा प्रतिकृति भी वर्षा–ऋतु को ही दर्शाने वाले होने चाहिए ।
3. **अथार्थता** – दृश्य– श्रव्य सामग्री जिस प्रक्रिया, विषय वस्तु अथवा प्रत्यय को स्पष्ट करने के लिए प्रयोग की जा रही है वह उसे प्रक्रिया विषयवस्तु या प्रत्यय का 100 प्रतिशत प्रतिनिधित्व यथार्थ रूप से करना चाहिए । यदि यह यथार्थता नहीं है तो यह सामग्री उपयुक्त नहीं है ।
4. **रोचकता** – एक उत्तम श्रव्य–दृश्य सामग्री में छात्रों की रुचि जाग्रत करने की क्षमता होनी चाहिए। यदि यह शिक्षण में रोचकता नहीं ला पाती तो शिक्षण सामग्री की उपयुक्तता संदिग्ध हो जाती है।
5. **अनुकूलता** – एक अच्छी श्रव्य–दृश्य सामग्री में अनुकूलता का गुण होना चाहिए । यदि सामग्री विषय तथा प्रकरण के अनुकूल नहीं है और न ही अनुकूल बनाई जा सकती है तो ऐसी सामग्री का प्रयोग नहीं किया जाना चाहिए ।
6. **कम से कम समय लेने वाली** – एक अच्छी शिक्षण सहायक सामग्री कक्षा शिक्षण प्रक्रिया में कम समय लेने वाली होनी चाहिए ।
7. **सामग्री बहुमूल्य न हो** – यथासम्भव जिस श्रव्य–दृश्य–सामग्री का प्रयोग किया जाए उसकी कीमत अधिक नहीं होनी चाहिए । यदि इसकी कीमत ज्यादा है तथा विद्यालय अथवा शिक्षक इसे खरीद नहीं सकता तो यह व्यर्थ है ।
8. **सामग्री की उपलब्धता** – एक अच्छी शिक्षण सामग्री शिक्षक के लिए उपलब्ध होनी चाहिए । यदि सामग्री में सभी अच्छे गुण हैं परन्तु वह अनुपलब्ध है तो वह शिक्षक के लिए व्यर्थ है ।

स्व–परख प्रश्न (Self Check Question)

1. सहायक सामग्री का क्या अर्थ हैं?
2. सहायक सामग्री के कोई दो उपयोग लिखिए ।
3. सहायक सामग्री की विशेषताओं की सूची बनाइए ।
4. निम्नलिखित कथनों के सामने सत्य या असत्य लिखिए

(क) सहायक सामग्री बहुमूल्य होनी चाहिए । ( )

(ख) सहायक सामग्री साधन है न कि साध्य । ( )

(ग) सहायक सामग्री विषयानुकूल होना जरूरी नहीं है । ( )

(घ) सहायक सामग्री रोचक होनी चाहिए । ( )

(ङ) अच्छे शिक्षण के लिए स सा. जरुरी नहीं है । ( )

10.2 चित्र

चित्र के माध्यम से अमूर्त्त वस्तु तथा उसकी संकल्पना मूर्तिमान हो उठती है । अक्षर ज्ञान के लिए चित्र प्राथमिक स्तर से ही बहुत महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं । छात्रों के

शब्दभण्डार में वृद्धि करना व कठिन शब्दों के अर्थ को स्पष्ट करने में भी चित्र सहायक होते हैं – यथा – स्पष्टीकरण प्रविधि

(अ) कठिन शब्दों के अर्थ

शबद : – अर्थ

1. खेचर चक्रस्य = नक्षत्रमण्डलम्

2. पुण्डरीकम् = श्वेतकमलम्

(ब) शैक्षिक चित्र केवल मनोरंजन, कौतूहल, आनन्द अथवा सौन्दर्य प्रदान करने के लिए ही नहीं होते अपितु वे भावों तथ्यों व मुख्य विषय को स्पष्ट करने में भी सहायक होते हैं । गद्य तथा पद्य शिक्षण करते समय कक्षा में उपयुक्त वातावरण बनाने में प्राकृतिक दृश्यों के चित्र, महापुरुषों के चित्र, ऐतिहासिक इमारतों के चित्रों का प्रयोग किया जा सकता है;

(स) संस्कृत माध्यम से पढ़ाई जा रही कथा में चित्रों का प्रयोग अत्यन्त लाभदायक होता है । इससे कथा सरलता से छात्रों को समझ में आ जाती है तथा संस्कृत साहित्य के प्रति छात्रों की रुचि भी बढ़ती है; यथा–चतुर: काक: कथा के लिए निम्नांकित चित्रों का प्रयोग किया जा सकता है

1. प्यासा कौआ जंगल में भटकते हुए का चित्र ।
2. दूर एक घड़े का चित्र जिसमें बहुत थोड़ा पानी है ।
3. कंकणों का ढेर देख घड़े में कंकण डालते हुए कौए का चित्र ।
4. पानी ऊपर आ जाता है तथा प्यासा कौए का पानी पीते हुए का चित्र ।

(द) रचना शिक्षण करते समय चित्रों पर प्रश्न करते हुए रचना कार्य करवाया जा सकता है; जेसे – ताजमहल का चित्र प्रस्तुत कर उसकी भौगोलिक स्थिति, उसके निर्माण के उद्देश्य, उसकी सरंचना, उसकी विशेषताओं पर प्रश्न करते हुए निबन्ध–लेखन करवाना ।

यदि शिक्षक स्वयं चित्र बनाने में सक्षम :है तो कुछ चित्रों को श्यामपट्ट पर कक्षा में बना सकता है अन्यथा चार्ट पत्र पर पहले से बनाकर ला सकता है । दूसरी प्रक्रिया से कक्षा में समय व्यर्थ नहीं जाता ।

10.3 रेखाचित्र

रेखाओं द्वारा आकृति प्रदान करके भी विषय वस्तु को स्पष्ट किया जा सकता है । चित्र, प्रतिकृति आदि के अभाव में अध्यापक इनका प्रयोग भाषा शिक्षण के लिए भी कर सकता है । किसी बिन्दु का वर्गीकरण दर्शाने के लिए भी रेखाचित्र सहायक होते हैं; जैसे व्याकरण शिक्षण करते समय– प्रत्ययों का रेखाचित्र बनाकर प्रत्ययों का वर्गीकरण समझाया जा सकता है–

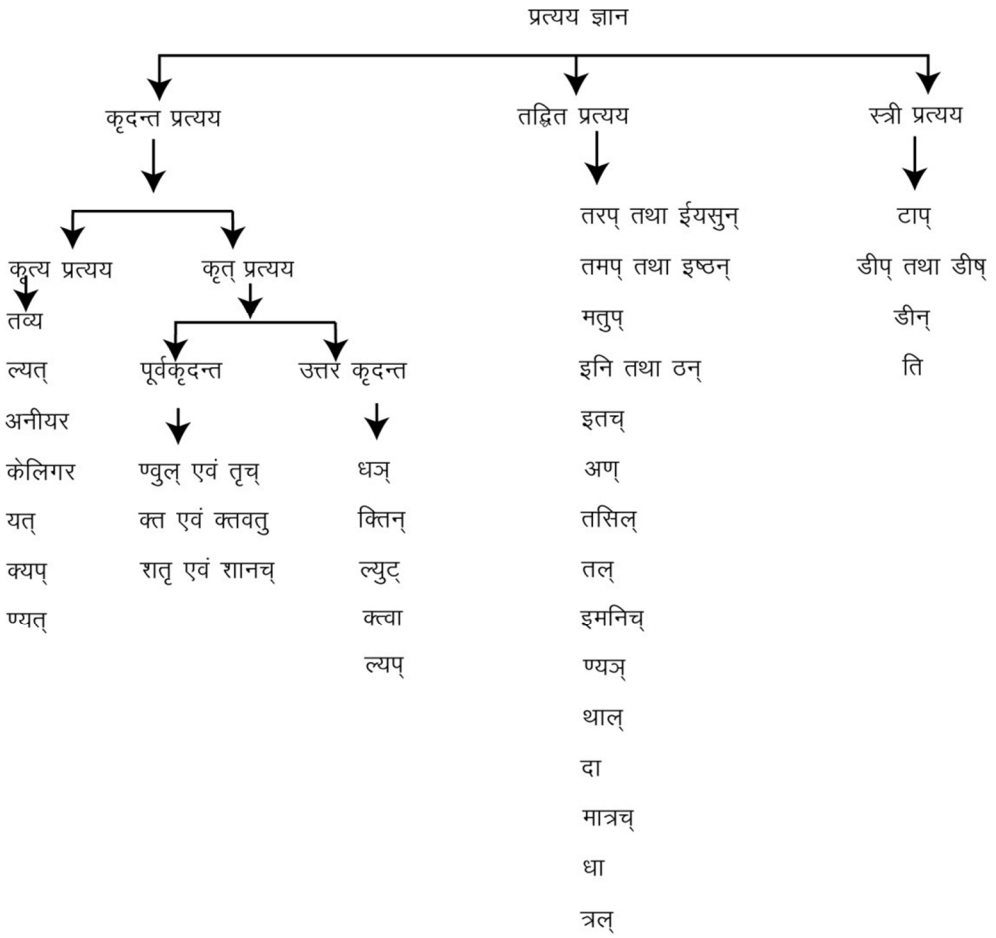

पाठ में आए ऐसे शब्द जो आकृतियों से सम्बन्धित हैं; जैसे– आयताकार, वृत्ताकार, त्रिभुज आदि को स्पष्ट करने हेतु भी रेखाचित्र बनाए जा सकते हैं ।

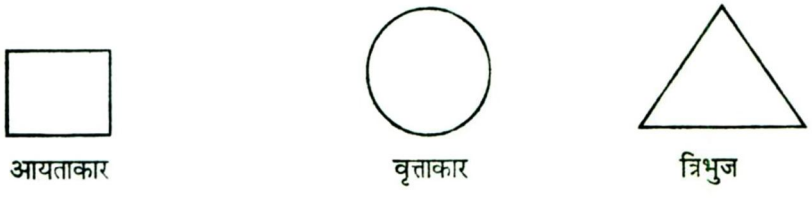

10.4 मानचित्र

संस्कृत भाषा शिक्षण करते समय छात्रों को किसी नगर की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि तथा भौगोलिक स्थिति समझाने के लिए मानचित्रों का प्रयोग किया जा सकता है; जैसे – नालन्दा, तक्षशिला, विक्रमशिला आदि की स्थिति दर्शाने हेतु । प्राचीन काल में दूसरे नाम से प्रसिद्ध नगरों का वर्तमान नाम एवं स्थिति स्पष्ट करने हेतु । नदियाँ एवं पर्वतों की स्थिति बताने हेतु ।

मानचित्र का प्रयोग करते समय यह आवश्यक है कि शिक्षक स्वयं बिल्कुल स्पष्ट हो ताकि मानचित्र के अभाव में भी वह विषय छात्रों को समझा सके ।

10.5 समभाव पद्य

समभाव पद्य का प्रयोग प्रभावशाली होता है । काव्य शिक्षण का मुख्य उद्देश्य सौन्दर्यानुभूति करवाना होता है, अत: काव्यशिक्षण को रुचिपूर्ण बनाने के लिए पढ़ाए जा रहे काव्यांश के भावों के समान पद्य का चयन किया जाता है तथा समान भाव के पद्य से पढाए जा रहे पद्य की तुलना करवाई जाती है । उदाहरणार्थ निम्नलिखित श्लोक प्रस्तुत है–

पढ़ाया जा रहा पद्य

न चौरहार्यं न च राज हार्यं
न भ्रातृ भाज्य न च भारकारि।
व्यय कृते वर्धते एवं नित्यं।
विद्याधनं सर्वधनं प्रधानम्।।

उपर्युक्त श्लोक की सौन्दर्यानुभूति करवाने के लिए निम्नलिखित श्लोक प्रस्तुत किया जा सकता है–

समभाव पद्य – अपूर्व: कोऽपि कोशोऽयं विद्यते तव भारती ।
व्ययतो वृद्धिमायाति क्षयमायाति संचयात् ।।

दोनों ही श्लोक विद्या के महत्व से सम्बन्धित हैं तथा विद्या रूपी धन के खर्च करने से उसका वर्धन होता है, इस बात की पुष्टि करते हैं ।

समान भाव के पद्य द्वारा छात्रों को पढ़ाए गए श्लोक का कितना अर्थ समझ में आया इसका मूल्यांकन भी किया जाता है । शिक्षक का कर्त्तव्य है, कि वह कक्षा में जाने से पूर्व समान भाव के श्लोकों का संग्रह भी करे तथा उन्हें कण्ठस्थ भी कर ले । समान भाव के पद्य को कक्षा में सुनाकर प्रस्तुत किया जा सकता है, किन्तु सुनकर प्रत्येक छात्र उसे समझ सके यह कठिन है, अत: समभाव पद्य को चार्ट पर लिखकर प्रस्तुत किया जाए । उसके अर्थ को और सुगम बनाने के लिए पद्य के भाव से सम्बन्धित चित्र भी चार्ट पर बनाया जा सकता है ।

10.6 (अ) अन्त: कथा

गद्य तथा पद्य शिक्षण करते समय पाठ्यांश में आने वाले शब्दों में यदि कहीं कोई कथा अन्तर्निहित है तो उस कथा को सुनाकर शब्द विशेष का अर्थ भलीभाँति स्पष्ट किया जा सकता है तथा छात्रों के ज्ञान में वृद्धि की जा सकती है । कभी कभी किन्हीं भाववाचक संज्ञाओं को समझाने के लिए तथा किसी विशेषण के प्रयोग को स्पष्ट करने के लिए अन्त: कथाओं का प्रयोग किया जा सकता है; जैसे–

पितृभक्त	–	श्रवण कुमार की कथा सुनाकर
सत्यवादी	–	हरिशचन्द्र, युधिष्ठर आदि की कथा सुनाकर
दानवीर	–	कर्ण, राजा शिवि की कथा सुनाकर
शहीद	–	भगतसिंह, चन्द्रशेखर आदि की कथा सुनाकर
ध्रुवभक्ति	–	बालक ध्रुव की अटल भक्ति की कथा सुनाकर

10.4 (ब) प्रसंग द्वारा

गद्य तथा पद्य शिक्षण करते समय ससन्दर्भ–व्याख्या हेतु प्रसंग भी छात्रों को स्पष्ट करना अपेक्षित होता है; जैसे–

ऐतिहासिक प्रसंग – कुन्ती यादव नरेश शूरसेन की कन्य पृथा, जिसका पालन पोषण शूरसेन के फुफेरे भाई कुंतिभोज के यहाँ हुआ । कुंतीभोज के यहाँ आने पर पृथा का नाम कुन्ती पड़ गया । यह पाण्डु की पत्नी तथा युधिष्ठिर, भीम तथा अर्जुन की माता थीं ।

भौगोलिक प्रसंग – तक्षशिला विश्वविद्यालय – तक्षशिला आधुनिक नगर रावलपिंडी (पाकिस्तान) से करीब 30 किलोमीटर उत्तर पश्चिम में स्थित है । यह एक ऐसा स्थान है, जहाँ व्यापार मार्ग मिलते थे–एक पश्चिम एशिया से, दूसरा उत्तरी भारत से उगैर तीसरा काश्मीर एवं मध्य ऐशिया से ।

साहित्यिक प्रसंग

त्रिवेणी – गंगा, यमुना, सरस्वती

षड् वेदाङ्ग – शिक्षा, कल्प, निरुक्त, छन्द, व्याकरण एवं ज्योतिष

शक्तित्रयन् – ज्ञान शक्ति, इच्छाशक्ति, क्रियाशक्ति ।

नादयशास्त्रीय प्रसंग –

चार महानायक – धीरोदात्त, धीरोद्धत, धीरललित, धीरप्रशान्त

विदूषक – संस्कृत नाटकों में विदूषक एक परम्परागत पात्र है जिसका प्रयोग दर्शकों को आनन्दित करने के लिए होता है । इसकी भूमिका में हास्य रस प्रधान होता है ।

अन्त:कथा और प्रसंग ऐसी शिक्षण सहायक सामग्री है जिन्हें शिक्षक हावभाव सहित कक्षा में मौखिक रूप से सुना सकता है । इनसे सम्बन्धित चित्र भी कक्षा में प्रस्तुत कर सकता है ।

10.7 समभाव कथा

कथा शिक्षण को रुचिकर बनाने हेतु प्रस्तावना प्रश्नों के लिए समानभाव की कथा प्रस्तुत की जा सकती है, इसी प्रकार अभ्यास प्रश्नों में कतिपय शब्द कक्षा में प्रस्तुत करके समान भाव की कथा रचना छात्रों से करवाई जा सकती है । उपर्युक्त प्रक्रियाओं में कथा अधारित चित्रों का प्रयोग भी कथा के अर्थ को सरलता से समझने में योगदान दे सकता है । उदाहरण के लिए कक्षा सात में 'मूर्ख: सिंह:' कथा पढ़ाने हेतु 'चतुर: शशक:' नामक कथा पर प्रश्न करके उद्देश्य कथन किया जा सकता है ।

10.8 चार्ट एवं प्रतिकृति (मॉडल)

एडगर डेल ने अपनी पुस्तक 'ऑडिया विजुअल मैथड्स इन टीचिंग' में चार्ट की परिभाषा देते हुए बताया है कि 'चार्ट एक ऐसा दृश्य प्रतीक हैं जिसमें किसी विषयवस्तु को समझाने के लिए उसका संक्षेप प्रस्तुत किया गया हो, उसकी तुलना की गई हो, असमानता या विकल्प प्रस्तुत किया गया हो अथवा अन्य कोई गौण सहायता की गई हो । '

चार्टों के विविध प्रकार –

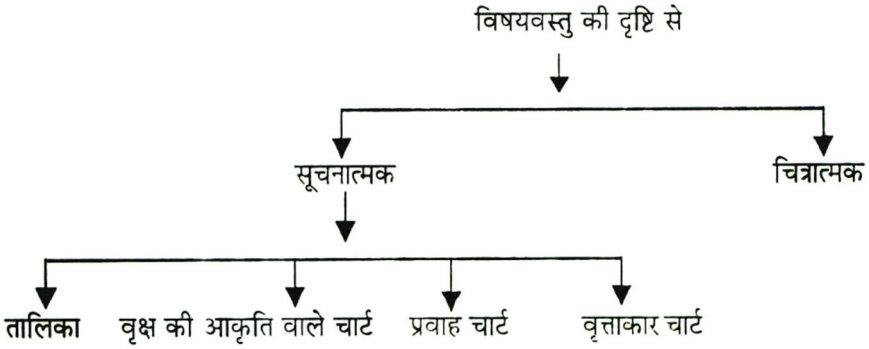

उपर्युक्त चार्टों का प्रयोग संस्कृत शिक्षण करते समय अलग– अलग विधा तथा शीर्षक के अनुसार किया जा सकता है; जैसे–

तालिका

1. कवियों व उनकी कृतियों से सम्बन्धित ।
2. कवियों तथा उनके जन्मस्थान, जन्मतिथि से सम्बन्धित ।
3. अकारान्त पुंल्लिङ्ग : शब्द रूपों से सम्बन्धित ।
4. गणानुसार धातुओं का वर्णन करने हेतु ।

वृक्ष की आकृति वाले चार्ट – सन्धि, समास, प्रत्यय, उपसर्ग, कारक, लिङ्ग आदि के भेद प्रदर्शित करने हेतु ।

प्रवाह चार्ट – किसी भी सम्प्रत्यय के विभिन्न अंगों, उपाङ्गों को दर्शाने हेतु ।

वृत्ताकार चार्ट – ऋतु चक्र, साप्ताहिक चक्र,आदि समझाने हेतु ।

प्रतिकृति (मॉडल) – किसी भी पदार्थ कीया प्रतिकृति उसकी एक अभिज्ञेय त्रिविमितीय अनुकृति होती है । यह सम्बन्धित पदार्थ के समान आकार का अथवा छोटा या बड़ा हो सकता है । जिस प्रकार शैक्षिक भ्रमण के द्वारा छात्रों को किसी पर्वतीय स्थल, ऐतिहासिक स्थल, कल कारखानों तथा शैष्टितक संस्थाओं आदि का साक्षात् दर्शन कर ज्ञान प्राप्त होता है, उसी प्रकार पाठ में आए कुछ अंशों व ऐतिहासिक स्मारकों आदि की प्रतिकृति प्रस्तुत कर छात्रों को वास्तविक ज्ञान दिया जा सकता है । इसके लिए अध्यापक गत्ता, लोहा, टीन, लकड़ी, घासफूस , पत्तियाँ, सुतली, कुट्टी–मिट्टी, कागज की लुगदी (पेपरमेशी), कार्डबोर्ड, प्लास्टिक, रूई, सरकण्डा, खड़िया आदि का प्रयोग कर सकता है, क्योंकि प्रत्येक स्थान एवं वस्तु को जीवन्त दिखाना असम्भव नहीं तो खर्चीला अवश्य है ।

प्रतिकृतियों के प्रकार – सामान्यत : प्रतिकृतियों को निम्नलिखित रूप में वर्गीकृत किया जा सकता है–

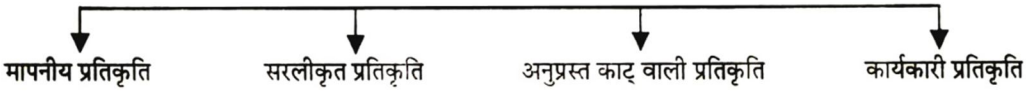

1. **मापनीय प्रतिकृति** – जब विषयवस्तु के स्पष्टीकरण हेतु प्रयुक्त किए जाने वाले मॉडल में माप का ध्यान रखा जाना आवश्यक होता है, तब वास्तविक वस्तु को दृष्टिगत करते हुए मॉडल का निर्माण करने के लिए पैमाना मानकर उसी अनुपात में उसका

निर्माण किया जाता है; जैसे ऐतिहासिक इमारतों को प्रदर्शित करने, उनकी वास्तुकला तथा स्थापत्य कला को प्रदर्शित करने के लिए इस प्रकार की प्रतिकृति बनाई जाती है ।

2. **सरलीकृत प्रतिकृति** – शिक्षण की ऐसी विषयवस्तु जिसके लिए ठीक पैमाना मानकर प्रतिकृति नहीं बनाई जाती अर्थात् किसी वस्तु के बाह्य आकार .को सरलीकृत करके दिखाए जाने वाली प्रतिकृति सरलीकृत कहलाती है; यथा– आदर्श ग्रामः, विद्यालयः, प्राकृतिक सुषमा आदि ।
3. **अनुप्रस्थ काट वाली प्रतिकृति** – ऐसी विषयवस्तु जिरग्के स्पष्टीकरण के लिए उसकी मूर्त वस्तु के भीतरी भाग को देखना आवश्यक हो, उसके लिए इस प्रकार की प्रतिकृति बनाई जाती है । यह विज्ञान विषयों के लिए आवश्यकत होती है ।
4. **कार्यकारी प्रतिकृति (Working Model)** – ऐसी विषयवस्तु जिसके शिक्षण के लिए उसकी मूर्त्त अवस्था की क्रियाविधि को स्पष्ट करना हो, उसके लिए कार्यकारी प्रतिकृति उपयोगी होती है, उदाहरण के लिए ए. टी. एम. मशीन, वोटिंग मशीन । संस्कृत में वायुप्रदूषण मे संबन्धित पाठ के लिए फैक्टरी की प्रतिकृति बनाकर उसमें चिमनी से धुँआ निकलता हुआ दिखाया जा सकता हैं ।

10.9 प्रत्यक्ष वस्तु प्रदर्शन

बालक किसी शब्द का अर्थ प्रत्यक्ष वस्तु देखकर सरलता से समझ लेता है । नेत्रम्, हसाम्, नासिका आदि शब्दों का अर्थ स्पष्ट करने के लिए अध्यापक अपनी ओर संकेत करता हुआ समझा सकता है– इदं नेत्रम्, इदं हस्तम्, इयं नासिका ।

सब्जी, फल आदि की संस्कृत बताने के लिए इन्हें प्रत्यक्ष रूप से दिखाया जा सकता है।

कुछ क्रिया पदों का अर्थ स्पष्ट करने के लिए क्रियाएँ करके दिखाई जा सकती हैं; जैसे – चलति, हसति, धावति, वदति आदि । अध्यापक प्रश्न पूछ सकता है, कि ' अहं कि करोमि?' उत्तर होगा अहं चलामि । तब सः के साथ 'चल् धातु का कौनसा रूप आयेगा । यह स्पष्ट किया जा सकता है, सः चलति ।

10.10 संस्कृत प्रश्नोत्तरी

पढ़ाए गए पाठ के ज्ञान को पुष्ट करने के लिए तथा उसका मूल्यांकन करने के लिए प्रश्नोत्तरी का कार्यक्रम कक्षा में रखा जा सकता है । इसमें पाठ से सम्बद्ध प्रश्न ही पूछे जाते हैं।

संस्कृत साहित्य सम्बन्धी क्रीड़ा के रूप में प्रश्नोत्तरी में संस्कृत साहित्य के किसी एक पक्ष को लेकर अध्यापक छात्रों के समक्ष प्रश्न रखेगा । इसे रुचिकर बनाने के लिए कक्षा को दो समूहों में बाँट दिया जायेगा ताकि प्रत्येक दल में अपने दल को जिताने की भावना का विकास हो तथा वे पूछे गए प्रश्नों का उत्तर उत्साह से दें । इसका आयोजन महीने या पन्द्रह दिन में एक बार किया जा सकता है । छात्रों को विषय पूर्व में ही बता दिया जाए ताकि वे उस विषय की पूर्ण तैयारी कर सकें । उदाहरण के लिए यहाँ कुछ प्रश्न प्रस्तुत हैं–

प्रश्न 1. कालिदासेन कति नाटकानि रचितानि?

(अ) पञ्च (ब) चत्वारि (स) द्वे (द) त्रीणि

उत्तरम्– (द)त्रीणि

प्रश्न 2 अभिज्ञाशाकुन्तले कति पात्राणि सन्ति?

(अ) द्वादश (ब) अष्ठौ (स) षट् (द) पञ्च

उत्तरम् (अ) द्वादश

प्रश्न 3. दीपशिखा पदेन सह क: कवि: प्रसिद्ध:?

(अ) माघ: (ब) कालिदास: (स) दण्डी: (द) भवभूति:

उत्तरम् (ब) कालिदास:

प्रश्न 4. कालिदास विरचितेप्यिदम् एकम्

(अ) मालतीमाधवम् (ब) विक्रमोर्वाशियम

(स) महावीरचरितम् (द) उत्तररामचरितम् ।

उत्तरम् (व) विक्रमोर्वशीयम्

संस्कृत शिक्षक प्रश्नोत्तरी का प्रयोग शिक्षण सहायक सामगी के रूप में कर सकता है । इसके लिए उसे पाठ से सम्बन्धित अतिरिक्त प्रश्न पाठयोजना में ही बनाने होंगे जिन्हें अभ्यास–कार्य अथवा पुनरावृत्ति प्रश्नों के सोपान में स्थान दिया जायेगा ।

10.11 समस्या पूर्ति

प्राचीन काल में शास्त्रार्थ, तर्क–वितर्क के साथ–साथ कवियों की प्रतिभा की कसौटी का एक माध्यम समस्या पूर्ति भी था । इसमें कवि को किसी समस्या को देकर सुन्दर से सुन्दर श्लोक बनाने की प्रेरणा दी जाती थी अथवा श्लोक के दो चरण देकर आगे के दो चरण पूरे करने के लिए कहा जाता था;

जैसे – **प्रदत्ता समस्या** – मनोरथे में रथि एष राजते

1 यथा हि पङ्केऽपि विभाति पङ्कजम्,
यथा च शुक्तावपि भाति मौक्तिकम् ।
तथा हि दृष्टे कलिकल्मगाज्चिते
मनोरथे में रथि एष राजत । ।

इस तरह की प्रतियोगिता छात्रों में काव्य सृजन की प्रेरणा प्रदान करने का एक साधन हो सकती है तथा खेल खेल में छात्र समस्या पूर्ति करता हुआ आगे एक श्रेष्ठ कवि भी बन सकता हें । इससे छात्र का ध्यान छन्द, लय आदि की ओर तो जाता ही है संस्कृत काव्य के प्रति अनुराग भी पैदा होता है । समस्या पूर्ति का प्रयोग भी अध्यापक शिक्षण सहायक सामग्री के रुप में पुनरावृत्ति प्रश्नों में कर सकता है अथवा पद्य शिक्षण में सौन्दर्यानुभूति करवाते समय भी इसका प्रयोग किया जा सकता है । इस प्रयोजन के लिए शिक्षक में स्वयं में भी काव्यसृजन की क्षमता होना आवश्यक है ।

10.12 शब्द खेल

संस्कृत शिक्षण करते समय शब्द खेलों का प्रयोग भी शिक्षण सहायक सामग्री के रूप में किया जा सकता है; जैसे–

1. छात्रों के समक्ष एक चित्र तथा उसके साथ कोई एक वर्ण स्मृत करके उस वर्ण से प्रारम्भ होने वाली वस्तुओं के नाम चित्र में से देखकर लिखने को कहा जाए । इसका प्रयोग रचना शिक्षण करते समय किया जा सकता है ।
2. 'पत्ते दिखाना' नामक खेत्न में कक्षा को दो भोगों में बाँट दिया जाता है । पत्ते पर शब्द या वाक्य लिखा जा सकता है । विरोधी दल वाले छात्र को दो सैकिंड के अन्दर–अन्दर उसे पढ़कर शुद्धोच्चारण तथा शुद्ध उत्तर देने पर विरोधी दल के छात्रों के साथ सम्मिलित होना पड़ता है । खेल की समाप्ति पर जिस ओर अधिक सदस्य रह जाएँगे वही विजयी दल घोषित होगा । इसका प्रयोग उच्चारण शिक्षण करते समय किया जा सकता है ।
3. लूडो एवं साँप सीढ़ी के खेल की भाँति सस्कृत मैं विलोम शब्दों का खेल छात्रों के समक्ष रखा जा सकता है । छात्र को पासा चलने के बाद जो अंक मिलता है उतने, खाने गिनकर उस खाने में जो शब्द लिखा है उसका विलोम शब्द ढूंढना होता है और वहाँ वह अपनी गोटी रखता है, जो जितनी जल्दी व सही उत्तर देता हुआ आगे बढ़ता है वही विजयी होता है । ऐसे खेल पर्याय शब्दों के लिए भी तैयार किए जा सकते हैं । संस्कृत शिक्षक इसका प्रयोग विलोम शब्दों, पर्याय शब्दों, लिए ज्ञान, कारक ज्ञान आदि के लिए कर सकता है ।
4. शब्दों से सम्बन्धित बहुविकल्पात्मक प्रश्न छात्रों के समस्त प्रस्तुत किए जाएँ और उनमें से सही उत्तर छाँटने को कहा जाए : जैसे–

(1) तारा (स्त्री.)

(अ) नटी (ब) नक्षत्रम् (स) तन्त्री (द) सन्देश :

उत्तरम् (ब) नक्षत्रम्

(2) दलम् (नपुं)

(अ) पणम् (ब) पुषाग्म् (स) कण्ठ: (द) अधोभाग :

उत्तरम् – (ब) पर्णम्

इस प्रकार संस्कृत शिक्षण, सहायक सामग्री के रूप में भाषायी चक्र सन्धि, समास, प्रत्यय, उपसर्ग आदि के लिए तैयार किए जा सकते हैं ।

10.13 नाट्याभिनय

नाटक शिक्षण करते समय नाट्याभिनय शिक्षण के लिए विशिष्ट सहायक सामग्री हो सकता है । अभिनय चार प्रकार के होते हैं– कायिक, वाचिक अहार्य एवं सात्विक अभिनय । शिक्षक कक्षा में नाटक शिक्षण करते हुए सुविधा से करता है किन्तु सबसे प्रभावशाली अभिनय. अहार्य, कक्षा में सम्भव नहीं होता है । संस्कृत साहित्य के नाटकों की अपनी विशेषताएँ हैं । इन नाटकों के शिक्षण को रोचक बनाने के लिए इनका मंचन कम आवश्यक है । विद्यालय के वार्षिकोत्सव में संस्कृत का एक नाटक मंचित करवाया जा सकता है । इसमें छात्र नाटक में आए हुए विभिन्न पात्रों की वेशभूषा में यथासम्भव उन्हीं की वाणी में उनके कार्यो का वास्तविक अभिनय करते हैं ।

अभिनय द्वारा छात्रों में संवाद की योग्यता उत्पन्न होती है । अभिनय में एक से अधिक इन्द्रियों को अपनी भूमिका निभानी पड़ती है । इस दृष्टि से अभिनय द्वारा छात्र विषय को आसानी से ग्रहण कर लेते हैं ।

छोटे नाटक एक अंक में समाप्त हो जाते हैं अत: इनका मंचन सरल होता है । किन्तु कई अंकों में विभक्त नाटक का मंचन करवाने में समय, शक्ति तथा धन तीनों की अधिक मात्रा में आवश्यकता होती है, अत: बड़े नाटक के किसी एक महत्वपूर्ण अंक का मंचन करवाया जा सकता हे । उदाहरण के लिए 'महाकवि कालिदास के' 'अभिज्ञान शाकुन्तलम्' नाटक का चतुर्थ अङ्क । इससे संस्कृत शिक्षक शिक्षण को रोचक बना सकता है तथा संस्कृत के प्रति छात्रों का सकारात्मक दृष्टि उत्पन्न कर सकता है । महीने में एक बार पाठ्यसहगामी क्रियाओं में इसका आयोजन किया जा सकता है । इससे छात्रों में अभिव्यक्ति कौशल का विकास भी होता है ।

स्व–परख प्रश्न (Self Check Questions)

1. चित्र के सहायक सामग्री के रूप में दो उपयोग लिखिए ।
2. प्रतिकृत्तियों के प्रकारों का नामोल्लेख कीजिए ।
3. संस्कृत शिक्षण में उपयोगी शब्द खेलों के नाम लिखिए ।
4. प्रसंग कितने प्रकार के हैं?
5. संस्कृत शिक्षण में मानचित्र का क्या उपयोग है ?

10.14 सन्दर्भित शिक्षण सहायक सामगी का मुल्याङ्कन

श्यामपट्ट – शिक्षण में सहायक सामग्री विषय को सुगम बनाने के लिए अपनी अहं भूमिका निभाती है । श्यामपट्ट पर जो कुछ लिखा जाए वह वर्त्तनी की दृष्टि से शुद्ध होना चाहिए । जो बिन्दु जितनी देर के लिए आवश्यक हैं उन्हें उतनी ही देर लिखा रहने देना चाहिए ।

चित्र -

चित्र

1. विषयवस्तु से सम्बद्ध हों ।
2. चित्रों का आकार कक्षोचित हो ।
3. इनके कक्षा में टाँगने की समुचित व्यवस्था हो, ताकि सभी छात्र आसानी से देख सकें।
4. चित्र स्पष्ट एवं आकर्षक होने चाहिए ।
5. जिस समय जिस चित्र विशेष की उगवश्यकता है, उसी समय उसे कक्षा में सबके समक्ष प्रस्तुत किया जाए । कभी–कभी अत्यन्त उपयोगी तथा कक्षा में उचित वातावरण बनाए रखने में सहायक चित्र को सम्पूर्ण कालांश में भी कक्षा में टाँगे रखा जा सकता है ।
6. चित्रों में –सुस्पष्टता, कलात्मकता, प्रभावकता एवं शुद्धता होनी चाहिए ।

रेखाचित्र– 1 रेखाचित्र पैमाने के अनुसार बनाए जाएँ ।

2. ये स्पष्ट होने चाहिए । उन्हें आकर्षक बनाने के लिए अलग– अलग बिन्दु के लिए अलग– अलग रंग का प्रयोग किया जाए।

मानचित्र–

1. मानचित्र स्पष्ट होना चाहिए ।
2. पहाड़, नदी, पठार, शहर, राजधानी, प्रान्त, ऐतिहासिक स्थल, कवियों की जन्मस्थली आदि जो भी बिन्दु दर्शाना है वह मानचित्र में सही स्थान पर दिखाया जाए ।

प्रतिकृति–

1. प्रतिकृति का निर्माण करते समय उसकी स्पष्टता एवं आकर्षण को बनाए रखने का ध्यान अवश्य रखना चाहिए ।
2. यह बहुत मँहगी भी न हो ।
3. छात्रों को स्वयं इनका निर्माण करने हेतु प्रेरित करना चाहिए ताकि उनमें सृजनात्मक शक्ति का विकास हो सके

–समभाव पद्य, अन्त:कथा, प्रसंग समभाव कथा

शिक्षण सहायक सामग्री के रूप में प्रयुक्त किए जाने वाला समभाव पद्य पढ़ाए गए पाठ की तुलना में सरल होना चाहिए तथा पढ़ाए गए पद्य को समझने में सहायक होना चाहिए तब ही पद्य शिक्षण के मुख्य उद्देश्य सौन्दर्यानुभूति की प्राप्ति सम्भव है ।

अन्त:कथा तथा प्रसंग जिस सन्दर्भ में तथा जिस शब्द को स्पष्ट करने के लिए प्रयोग में लायी जाए वह वास्तव में विषय को स्पष्ट करने में सहायक. होनी चाहिए इसलिए यह आवश्यक है कि वह पढ़ाई गई विषय वस्तु से सरल हो ।

इसी प्रकार समानभाव की कथा भी शब्दों की दृष्टि से सुगम, सुग्राह्य होनी चाहिए । यदि छात्राध्यापक यह अनुभव करता है, कि सहायक–सामग्री शिष्टरण में सहायक होने के स्थान पर बाधक हो रही है, ऐसी परिस्थिति में उसे सामग्री परिवर्तित कर देनी चाहिए । यही मूल्यांकन की प्रक्रिया है ।

10.15 कतिपय सुझाव

1. पाठ्यवस्तु से सम्बंधित शिक्षण–सहायक सामग्री ही कक्षा में प्रदर्शित की जानी चाहिए ।
2. जिस सण्दर्भित शिक्षण सहायक सामगी का पाठ के शिक्षण में प्रयोग किया जाना है उसे पहले से ही तैयार कर लेना चाहिए तथा पाठयोजना में लिख देना चाहिए ।
3. सहायक सामग्री का अनावश्यक प्रयोग नहीं करना चाहिए ।
4. सहायक सामग्री को कक्षा में ऐसे स्थान से प्रदर्शित करना चाहिए जिसमें सब ही छात्र उसे आसानी से देख सकें ।
5. शिक्षण सहायक सामग्री से सम्बन्धित प्रश्न पूछ कर छात्रों की निरीक्षण शक्ति का विकास करना।
6. सामग्री में विविधता तथा आकर्षण होना चाहिए जिससे छात्रों की पाठ में रुचि बनी रहे।

7. वस्तु के स्थान पर प्रतीक का प्रयोग केवल तब ही किया जाना चाहिए जब वस्तु को दिखाना असम्भव हो, क्योंकि प्रतीक बालक के ध्यान को केन्द्रित कर लेता है और उस वस्तु को भुला देता है जिसका वह प्रतीक होता है ।
8. प्रतिकृति बहुत मँहगी नहीं होनी चाहिए ।
9. किसी जीवित पशु पक्षी को भी कक्षा में प्रदर्शित नहीं करना चाहिए । उनके व्यवहार को शिक्षक नियन्त्रित नहीं कर सकता फलत: शिक्षक के शिक्षण में ये सहायक होने के स्थान पर बाधक हो सकते हैं ।

10.16 सारांश (Summary)

अर्थ – शिक्षण को रोचक एवं सुगम बनाने वाले साधन या उपकरण ।

प्रकार – दृश्य–चित्र, चार्ट, मानचित्र, प्रतिरूप, वस्तु चित्रविस्तारक एवं चित्र प्रदर्शक ।

श्रव्य – रेडियो, ग्रामोफोन, टेप, ग्रामोफोन आदि

श्रव्य–दृश्य– नाटक, टी वी. चल चित्र । अन्य, समभावी कविता, समस्या पूर्ति, अन्त:कथा, शब्द खेल, प्रसंग, प्रश्नोतरी, आदि ।

महत्व एवं उपयोग – शिक्षण को रोचक, विविधतापूर्ण, सुबोध, स्थायी बनाने में सहायक, छात्रों को प्रेरणा देने, सक्रिय बनाने आदि में सहायक।

धातव्य बातें – स्तर, प्रकरण, स्थिति के अनुरूप । प्रदर्शन ठीक घटना प्रधान चित्रों का चुनाव, व्यय साध्य न हों, आवश्यकता होने पर ही प्रयोग ।

10.17 स्व–परख प्रश्नों के उत्तर (Self Check Questions)

नोट : – संबंधितत खण्डों का पुन: अध्ययन करें ।

10.18 मूल्यांकन प्रश्न (Unit End Questions)

1. संस्कृत शिक्षण में सन्दर्भित सहायक सामग्री की उपयोगिता एवं महत्त्व बताइए ।
2. सन्दर्भित सहायक सामग्री का अ थ सग्ष्ट्र करते हुए पुनके प्रकारों की विवेचना कीजिए ।
3. सन्दर्भित सहायक सामग्री का उपयोग करते समय कौन –कौन सी बातें ध्यान में रखनी चाहिए?
4. विविध विधाओं हेतु शिक्षण सहायक सामग्री का निर्माण करते समय उसकी गुणवत्ता को किस प्रकार बनाए रखेंगे?
5. संस्कृत पाठ्यवस्तु से सन्दर्भित किन्हीं तीन शिक्षण सहायक सामग्री का वर्णन उदाहरण सहित कीजिए ।
6. शिक्षण के उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए सन्दर्भित शिक्षण सहायक सामग्री का मूल्यांकन आवश्यक है । इस कथन को स्पष्ट किजिए।

10.19 सन्दर्भ ग्रंथ सूची (References)

1. पाल, हंसराज (2000) उच्च शिक्षा में अध्ययन एवं प्रशिक्षण की प्रविधियाँ, दिल्ली विश्वविधालय

2. शर्मा, एस डी. (2000) शिक्षा के आयाम, प्रभात प्रकाशन, दिल्ली
3. भारती, जयप्रकाश (2000) कम्प्यूटर क्रान्ति एवं बालक, भावना प्रकाशन, दिल्ली
4. मित्तल सन्तोष (2000) संस्कृत शिक्षण, आर. लाल बुक डिपो, मेरठ
5. मित्तल सन्तोष (2006) 'संस्कृतशिक्षणम्' नव चेतना पब्लिकेशन्स 7398 मालवीय नगर, जयपुर
6. एडगर डेल (1987) हरियाणा साहित्य अकादमी, चण्डीगढ़, पृ. 143 से 421
7. V.P.Bokil & N.K.Parasnis A new approach to Sanskrit

इकाई – 11 (Unit–11)

– संस्कृत अध्यापक के गुण, संस्कृत शिक्षण में आने वाली बाधाएँ एवं उनका निराकरण

(Qualities of a Good Sanskrit Teacher, Problems, Soloution)

इकाई की रूपरेखा

- इकाई के उद्देश्य?
- अध्यापक के सामान्य' गुण
- संस्कृत अध्यापक के विशिष्ट गुण
- संस्कृत शिक्षण में आने वाली बाधाएँ
- बाधाओं के निराकरण के उपाय
- संस्कृत शिक्षण को रोचक बनाने के उपाय
- संस्कृत अध्यापक का स्वभाव
- पाठ्य सहगामी गतिविधियाँ
- मूल्यांकन प्रश्न
- संदर्भ ग्रंथ सूची

11.0 इकाई के उद्देश्य (Objectives of Units)

इकाई की समाप्ति पर आप

1. शिक्षा जगत में अध्यापक की महत्वपूर्ण भूमिका तथा उसके गुणों से परिचित हों सकेंगे।
2. संस्कृत अध्यापक के विशिष्ट गुणों के बारे में जान सकेंगे ।
3. संस्कृत शिक्षण में आने वाली बाधाओं के प्रति सजग हो सकेंगे ।
4. बाधाओं के निराकरण के उपायों से अवगत होकर अपने अध्यापन व्यवहार में प्रयुक्त कर सकेंगे ।
5. संस्कृत अध्यापक के स्वाभाविक गुणों से परिचित होकर उन गुणों को अपने व्यवहार में अपना सकेंगे ।
6. संस्कृत के प्रति रुझान उत्पन्न करने के लिए पाठ्य सहगामी गतिविधियों का आयोजन कर सकेंगे ।
7. संस्कृत भाषा के प्रचार–प्रसार में अपना यथाशक्ति योगदान दे सकेंगे ।

11.1 प्रस्तावना (Introduction)

शिक्षक शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया का नियामक होना है । संस्कृत भाषा का शिक्षक भी इस दृष्टि से महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करता है । इस भूमिका का समुचित रूप में निर्वाह

करने के लिए संस्कृत शिक्षक में कई गुण होने चाहिए । आगे इन्हीं गुणों पर प्रकाश डाला गया है ।

11.2 अध्यापक (Teacher)

शिक्षा जीवन का एक महत्वपूर्ण अंग है और शिक्षण शिक्षा की एक महत्वपूर्ण प्रक्रिया । इस रंग बिरंगी दुनियाँ में फूल भी हैं और कांटे भी : अवसाद भी है और हंसी के साथ रुदन भी । इन विषम परिस्थितियों में बालक समायोजित होकर अधिक से अधिक सुखपूर्वक रह सके, इसके लिए हमें शिक्षा की आवश्यकता पड़ती हैं । शिक्षा के तीन अंग हैं– शिक्षक शिक्षार्थी और पाठ्यक्रम । शिक्षा देने का महत्वपूर्ण कार्य शिक्षक अर्थात् अध्यापक करता है । शिक्षार्थी और पाठ्यक्रम को जोड़ने वाली कड़ी अध्यापक है । इसके बिना सम्पूर्ण शिक्षण प्रक्रिया अवरुद्ध एवं निष्क्रिय होती है । अध्यापक ही बालकों के व्यक्तित्व विकास और उनके भविष्य निर्माण मे सहायक होता है । महत्व की दृष्टि से अध्यापक को निपुण, कुशल तथा ज्ञान– सम्पन्न होना चाहिए जिससे छात्रों पर अच्छा प्रभाव पड़े । इस प्रकार अध्यापक को महत्वपूर्ण होने के साथ ही उत्तर दायित्व पूर्ण भी होना आवश्यक है :

11.2.1 संस्कृत अध्यापक के सामान्य गुण (General Qualities of Sanskrit Teacher)

वर्तमान प्रतिस्पर्धात्मक वैज्ञानिक युग में सर्वत्र भ्रष्टाचार व स्वार्थपरता का साम्राज्य चारों और फैला हुआ है, ऐसी परिस्थिति में शिक्षकों का उत्तरदायित्व इस दृष्टि से और भी तड़ गया है कि वे देश के भावी नागरिकों में नैतिक मूल्यों का विकास करें तथा देश –प्रेम बंधुत्व की भावना को उत्पन्न करें । संस्कृत अध्यापक में निम्नलिखित सामान्य गुण अपेक्षित हैं :

1. उच्च चरित्र एवं, दृढ़संकल्प
2. उत्तम स्वास्थ्य,
3. नेतृत्व की क्षमता,
4. हँसमुख व्यक्तित्व
5. मित्रता एवं सहानुभूति पूर्ण व्यवहार
6. आकर्षक व्यक्तित्व
7. शिक्षकोचित वेशभूषा
8. मधुरवाणी
9. संवेगात्मक सन्तुलन
10. कर्तव्यनिष्ठा
11. सामाजिक एवं व्यावहारिक कुशलता ।

11.2.2 संस्कृत अध्यापक के विशिष्ट गुण (Special Qualities of Sanskrit Teacher)

संस्कृत अध्यापक को आज भी अपनी वैदिक कालीन परम्परागत प्रतिष्ठा को बनाये रखना है । उसे भारतीय संस्कृति की रक्षा करने में तथा शाश्वत मूल्यों का विकास करने में अपना योगदान देना चाहिए । इसके लिए संस्कृत शिक्षक से विशेष अपेक्षाएँ हैं । संस्कृत अध्यापक में अध्यापक के सामान्य गुण तो होने ही चाहिए साथ ही संस्कृत अध्यापक चूंकि एक

आदर्श अध्यापक समझा जाता है, अत: उसमें कुछ विशिष्ट गुण भी होने चाहिए तभी वह आदर्श संस्कृत अध्यापक बन सकेगा ।

1. विद्वता –

संस्कृत अध्यापक को संस्कृत का पूर्ण ज्ञान होना नाहिए । पूर्ण ज्ञान का अर्थ है कि उसे संस्कृत शब्दावली, शब्दों की व्यूत्पत्ति, मूल शब्द, उपसर्ग, प्रत्यय अर्थात् उसे पर्याप्त व्याकरण रचना का ज्ञान होना चाहिए । उसकी मौखिक और लिखित अभिव्यक्ति निर्दोष हो । संस्कृत साहित्य की विविधता युक्त ज्ञान हेतु उसका अध्ययन गहन हो ।

2. स्वाध्यायशीलता –

शिक्षक को आजीवन विद्यार्थी बना रहना पड़ता है । किसी भी ज्ञान में पारंगत होने के लिए साधना करनी पड़ती है और संस्कृत अध्यापक के लिए, इसकी नितान्त आवश्यकता है । कुछ लोगों द्वारा संस्कृत को पुरानी भाषा या मृत भाषा कहकर उसके अध्यापकों के ज्ञान को पुराना या रूढ़िवादी बता दिया जाता है किन्तु यह धारणा उचित नहीं है । संस्कृत अध्यापक को चाहिए कि वह अपने ज्ञान को समय की गति के साथ परिवर्तित भी करे जो कि उसमें स्वध्यायशीलता होने से ही संभव हो सकेगा ।

3. साहित्यिक एवं शैक्षणिक क्रियाओं में विशिष्ट अभिरुचि –

केवल पाठ्यक्रम् में प्रयुक्त पुस्तकीय ज्ञान से ही एक, कुशल शिक्षक का कार्य पूरा नही होता । बा लकों को मौखिक अभिव्यक्ति में कुशल बनाे के लिए संवाद, वाद–विवाद, भाषण, अन्त्याक्षरी इत्यादि का अभ्यास करवाना होगा । संस्कृत प्रतियोगिताओं के आयोजन एवं उसमें सहभागीता लेने हेतु भी छात्रों को अभिप्रेरित करना होगा किन्तु यह सब तभी संभव होगा जब अध्यापक में इन सबमें विशेष रुचि हो ।

4. शुद्धोचारण –

भाषा अध्यापक का सर्व श्रेष्ठ गुण उसका शुद्धोचारण है । यदि उसका उच्चारण शुद्ध होगा तो उसके संपर्क में आने वाले छात्र का उच्चारण स्वत: ही शुद्ध होगा । संस्कृत एक संश्लिष्ट भाषा है । इसमें शब्दों के अशुद्ध उच्चारण से अर्थ का अनर्थ हो जाता है । मन्त्रों के अशुद्धोच्चारण से देवता रुष्ट हो जाते हैं । सकल (सम्पूर्ण) का शकल (टुकड़ा) और स्वजन (आत्मीय) का श्वजन (कुत्ता) बज जाता है ।

5. शुद्ध व सुन्दर लेख

संस्कृत शिक्षक का लेख सुन्दर, स्पष्ट, सुडौल व आकर्षक होने के साथ–साथ शुद्ध भी होना चाहिए । शिक्षक द्वारा की गई विसर्ग, अनुस्वार, हलन्त तथा विभक्ति के प्रयोग सम्बन्धी उरशुद्धियों से छात्रों का त्रुटिपूर्ण अभ्यास धीरे– धीरे सुदृढ़ हो जाता है । बाद में इसे दूर करना एक जटिल समस्या बन जाता है । अत: शिक्षक को इस ओर सचेत रहना चाहिए ।

6. संस्कृत भाषा में रुचि

संस्कृत शिक्षक की संस्कृत भाषा के साहित्य को पढ़ने तथा पढाने की रुचि होनी चाहिए ताकि वह संस्कृत शब्दावली, शब्द के निर्माण की विधियाँ, भाषा में अशुद्ध लेखन और उच्चारण के कारणों को समझ सके तथा उन्हें दूर करने के उपाय आदि में रुचि ले सके ।

7. वैज्ञानिक दृष्टिकोण –

संस्कृत शिक्षक का चिन्तन वैज्ञानिक होना चाहिए । संस्कृत भाषा का व्याकरण क्रमबद्ध और सूत्रबद्ध होने के कारण यह भाषा संगणक (काम्यूटर) पर सर्वाधिक सफल भाषा सिद्र हुई है । संस्कृत शिक्षक कुछ नवचिन्तन कर संस्कृत भाषा में सोफ्टवेयर (मृदु उपागम) तैयार कर सकते हैं । नवीन शोधकार्य से संस्कृत के स्तर को उन्नत किया जा सकता है ।

8. कुशल मौखिक अभिव्यक्ति –

संस्कृत शिक्षक को संस्कृत भाषा में भाषण देने में निपुण होना चाहिए । स्वयं प्रभावशाली वक्ता होने पर संस्कृत शिक्षक अपने छात्रों को भी इस कला में निपुण बना सकता हैं ।

9. नीरक्षीर विवेकी

संस्कृत शिक्षक को नुल्यांकन की नवीन विधियों से परिचित होना चाहिए जिससे वह अपने शिक्षण का तथा छात्रों की उपलब्धियों का मूल्यांकन सही व निष्पक्ष रूप से करके उसमें अपेक्षित सुधार कर सकें ।

10. प्रशिक्षण प्राप्त तथा अनुभवी –

विधिवत् प्रशिक्षण प्राप्त करके संस्कुत अध्यापक को अपने नित नवीन अनुभवों के आधार पर छात्रों को संस्कृत व्याकरण, अनुवाद एवं रचना कार्य का अभ्यास करवाना चाहिए। ये कार्य एक प्रशिक्षित अनुभवी अध्यापक ही कुशलतापूर्वक करवा सकता है । छात्रों को केवल पाठों का अनुवाद करवा देना ही संस्कृत का वास्तविक शिक्षण नहीं है ।

11. अन्य विषयों का ज्ञाता

संस्कृत शिक्षक को संस्कृत के अतिरिक्त हिंन्दी ,अँग्रेजी, अन्य भारतीय भाषाएँ, अन्य विषय; यथा – सामाजिक अध्ययन, सामान्य विज्ञान जाटि का भी पर्याप्त ज्ञान होना चाहिए, जिससे वह अन्य विषयों से तुलना करते हुए छात्रों के संस्कृत भाषा का ज्ञान प्रदान कर उनके ज्ञान में वृद्धि कर सके ।

12. सृजनात्मकता

संस्कृत शिक्षक में संस्कृत भाषा में साहित्य सृजन की क्षमता भी हानी चाहिए । इससे साहित्य के संवर्धन में योगदान देने के साथ ही छात्रों में भी सृजनात्मक प्रवृत्ति का विकास किया जा सकता है ।

13. कुशल अभिनेता

संस्कृत शिक्षक को सुन्दर वाणी में लय, यति, गति, आरोह, अवरोह सहित श्लोकों का पाठ करना चाहिए । साथ ही उसमें अभिनय कला भी होनी चाहिए ताकि उसकी मुखमुद्रा व हावभाव से छात्रों को विषय समझने में सुविधा हो सके तथा संस्कृत के प्रति रुचि उत्पन्न हो सके।

14. बदलते परिवेश से रगमंजस्य हेतु उदारवादी दृष्टिकोण –

आज का संस्कृत अध्यापक केवल पुराने ज्ञान से ही संतुष्ट नहीं होता, उसे बदलते परिवेश से सामंजस्य स्थापित करते हुए भी चलना होता है, अत: नवीन शैक्षिक तकनीकों एवं सहायक सामग्री का प्रयोग कर पाठों को और अधिक रोचक ढंग से पढ़ाया जा सके । आज की

भौतिकवादी उपलब्धियों और कमियों को दिखाते हुए उसे प्राचीन संस्कृति की महत्ता पुन: स्थापित करने का प्रयास करना चाहिए, जिससे छात्रों में उग्पना प्राचीन भाषा एवं संस्कृति के प्रति सम्मान उत्पन्न हो सके ।

आज के संस्कृत अध्यापक का दायित्व बढ़ गया है क्योंकि उसे प्राचीन उदात्त भारतीय संस्कृति से भी जुड़े रहना है और वर्तमान भौतिकवादी संस्कृति से जूझते हुए मानव की रक्षा भी करनी है, साथ ही उसकी उपलब्धियों का लाभ भी उठाना है । प्राचीन व आधुनिक संस्कृति में सामंजस्य भी करना है ।

स्व परख प्रश्न (Self Check Questions)

1. छात्र के विकास हेतु अध्यापक की कोई दो भूमिकाएँ लिखिए ।
2. संस्कृत अध्यापक के सामान्य गुण कौन –कौन से हैं?
3. संस्कृत अध्यापक की वेशभूषा कैसी होनी चग़ज़ाए?
4. संस्कृत अध्यापक का दृष्टिकोण कैसा होना चार्तिए?
5. संस्कृत अध्यापक के कोई तीन विशिष्ट गुण लिखिए ?

11.3 संस्कृत शिक्षण में आने वाली बाधाएँ (Difficulties Faced by Sanskrit Teacher)

1. विद्यालयों में दृश्य – श्रव्य उपकरणों का अभाव है ।
2. ग्रामीण अंचलों में स्थित विद्यालयों में पुस्तकालयों का अभाव है । अत: शिक्षकों व छात्रों को संस्कृत की पत्र –पत्रिकाओं को पढ़ने का अवसर नहीं मिल पाता ।
3. प्रशिक्षण महाविद्यालयों में आधुनिकतम उपकरणों का अभाव है ।
4. संस्कृत शिक्षको के लिए परिचर्चा, कार्यशाला पुनश्चर्या –कार्यक्रम, सेवाकालीन प्रशिक्षण आदि का प्राय: अभाव है ।
5. संस्कृत के पाठ्यक्रम में वैज्ञानिकता की दृष्टि से सुधार अपेक्षित है ।
6. संस्कृत शिक्षण हेतु उपयुक्त वातावरण का अभाव है । अभिभावक तथा छात्र वर्ग दोनों ही संस्कृत विषय के प्रति उदासीन प्रवृत्ति रखते हैं ।
7. समय सारणी में संस्कृत कालांश प्राय: अन्त में रखा जाता है, जो संस्कृत अधिगम के लिए उपयुक्त नहीं है ।

11.4 संस्कृत शिक्षण में आने वाली बाधाओं के निराकरण के उपाय (Measure to remove difficulties)

संस्कृत की आज की स्थिति और संस्कृत शिक्षण में आने वाली बाधाओं व कठिनाइयों को देखते हुए उनका निराकरण करना आवश्यक है । साथ ही संस्कृत शिक्षण को नीरस विषय से सरस व मनपसंद विषय बनाने के लिए कुछ बातें विशेष रूप से ध्यातव्य हैं; यथा –.विषय शिक्षण को रुचिकर बनाने के उपाय, संस्कृत अध्यापक में विशिष्ट गुणों के साथ–साथ स्वभाव

में अपेक्षित गुण, तथा संस्कृत शिक्षण में पाठ्यसहगामी क्रियाएँ यादि । संस्कृत शिक्षण को रोचक बनाने के उपाय निम्नलिखित हैं–

1. दृश्य– श्रव्य सामग्री का प्रयोग छात्रों की रुचि को ध्यान में रखकर किया जाए ।
2. संस्कृत विषय का कालांश प्रतिदिन व उचित समय पर हो ।
3. गीता आदि के प्रेरक श्लोकों का सामूहिक वाचन हो ।
4. छोटे–छोटे संवाद संस्कृत में कण्ठस्थ करने के दिये जाएँ ।
5. परीक्षा कीं मणी मं संस्कृत के प्राप्तांकों को जोड़ा जाए ।
6. प्रारंभिक स्तर पर अति सरल तथा मातृभाषा से साम्य रखने वाले अनुच्छेदों तथा श्लोकों का अध्ययन करवाया जाए ताकि बालकों को संस्कृत कठिन न लगे ।
7. संस्कृत साहित्यकारों से संबन्धित उत्सव मनाए जाएँ, उनमें बच्चों को वैसी ही वेशभूषा और वैसा ही आचरण करने को कहा जाए ।
8. कक्षानुसार सरल से कठिन की ओर सूत्र को ध्यान में रखते हुए सुभाषित व लोकोक्तियों को कण्ठस्थ करवाया जाए ताकि बालक समझ सकें कि संस्कृत भाषा के प्रयोग से हमारी मातृभाषा भी आधक समृद्ध बनती है ।
9. प्रारंभिक कक्षाओं में अलग–अलग वचनों, लकारों का ज्ञान करवा कर फिर कक्षा नौ में सब एक साथ पढ़ाये जाएँ वयोंकि तीनों वचनों व मुख्य लकारों को एक साथ पढ़ाने से बालक के मन में इसका भय बैठ जाता है ।
10. संस्कृत कक्ष का स्वरूप ऐसा होना चाहिए जिसमें प्रवेश करते ही संस्कृत के प्रति आकर्षण व अनुराग उत्पन्न हो । उसमें कुछ उत्तम ग्रंथ हों, दीवारों में सूक्तियाँ लिखी हों, हिमालय, गंगा, हिन्द महासागर, प्रमुख नदियाँ इत्यादि का भारत के मानचित्र में रेखांकन हो, टेपरिकार्डर, लिंग्वाफोन आदि शुद्धोच्चारण के लिए सहायक हैं । इन सब से विषय के प्रति रुचि जाग्रत होगी और उसे समझने में आसानी होगी ।

स्व परख प्रश्न(Self Check Questions)

हाँ या ना में उत्तर दीजिए

1. विद्यालय में श्रव्य–दृश्य उपकरणों का अभाव होता है । ( )
2. संस्कृत के प्रति छात्रों का स्वाभाविक रुझान होता है । ( )
3. श्लोको का सामूहिक वाचन छात्रों में संस्कृत के प्रति अभिरुचि जागृत करता है ।( )
4. समय विभाग चक्र में संस्कृत का कालांश आखिर में होता है । ( )

11.5 संस्कृत अध्यापक का स्वभाव एवं अन्य गुण (Nature of Sanskrit Teacher)

संस्कृत शिक्षक का स्वभाव बालकों में संस्कृत विषय के प्रति अरुचि को दूर करने में बहुत सहायक हो सकता है । इसके लिए उसके स्वाभाव में निम्नलिखित गुण होने आवश्यक हैं–

1. संस्कृत अध्यापक को सौम्य व हँसमुख होना चाहिए ।

2. उसे क्रोध नहीं करना चाहिए । छात्रों से प्रेम और सहानुभूति पूर्वक व्यवहार करना चाहिए ।
3. शुद्ध उच्चारण के साथ ही स्वर में माधुर्य होना चाहिए । मधुर स्वर से गढ़ा हुआ काव्य आकर्षक होता है और छात्रों में काव्य के प्रति प्रेम उत्पन्न होता है ।
4. अभिनय कला में निपुण अध्यापक संवाद तथा नाटक को पढ़कर ही उनके भाव स्पष्ट करता है ।
5. दृष्टान्त के लिए उसके पास अनेक कथाओं का भण्डार होना चाहिए प्रसंगानुसार उनका प्रयोग करने से पाठ रोचक हो जाता है, और व्याख्या करने की आवश्यकता नहीं पड़ेगी।
6. प्रत्युत्पन्नमतित्व अध्यापक का विशेष गुण के रूप में होना आवश्यक है । इससे छात्र शीघ्र प्रभावित होते हैं ।
7. अध्यापक मानसिक रूप से संतुलित होना चाहिए ।
8. उसके अध्यापन में किसी प्रकार का टेक (तकिया–कलाम) नहीं होना चाहिए ।
9. श्यामपट्ट की सहायता से पाठ को समझाने व रोचक बनाने में सहायता मिलती हैं । अध्यापक का श्यामपट्ट लेख सुन्दर व स्पष्ट होना चाहिए । उसे चित्रांकन का अभ्यास भी होना चाहिए ।
10. संस्कृत अध्यापक को यह दृढ़ विश्वास होना चाहिए कि संस्कृत कोई कठिन भाषा नहीं हैं, उसका हमारी मातृभाषा से घनिष्ठ संबन्ध है ।
11. छात्रों के मन से यह भ्रम दूर कर देना चाहिए कि संस्कृत कठिन भाषा है । इसका छात्रों पर मनोवैज्ञानिक प्रभाव पड़ेगा ।

11.6 पाठ्य सहगामी गतिविधियाँ (Cocurricular Activities)

संस्कृत शिक्षण को रोचक बनाने हेतु तथा संस्कृत साहित्य के प्रति रुचि उत्पन्न करने हेतु दो गतिविधियों को प्रयोग किया जा सकता है – :

संस्कृत शिक्षण से संबन्धित पाठ्य-सहगामी क्रियाएँ

साहित्यिक गतिविधियाँ	सांस्कृतिक गतिविधियाँ
1. श्लोक पाठ	1. संस्कृत गीत
2. कथा कथन व कथा लेखन	2. नाट्य अभिनय
3. निबन्ध लेखन	3. संस्कृत के दुर्लभ ग्रन्थों व पाण्डुलिपियों की प्रदर्शनी
4. विद्यालय पत्रिका	4. एकांकी अभिनय
5. वाद-विवाद	5. संस्कृत दिवस का आयोजन
6. भाषण	6. कवियों की जयन्तियों का आयोजन
(क) विद्वानों द्वारा	
(ख) छात्रों द्वारा	
i पूर्व निर्धारित	
ii आशु भाषण	
7. कवि सम्मेलन	
8. विचार गोष्ठी	
9. संस्कृत साहित्य सम्बन्धित खेल	
i अन्त्याक्षरी	
ii शब्द खेल	
iii संस्कृत प्रश्नोत्तरी	
iv प्रहेलिका	
v विनोद कणिका	
vi सुभाषित प्रतियोगिता	
vii समस्या पूर्ति	

11.7 सारांश (Summary)

इस इकाई में संस्कृत अध्यापक के महत्व, उसके सामान्य एवं विशिष्ट गुणों पर प्रकाश डाला गया है तथा संस्कृत शिक्षक के स्वभाव, उसके सामने आने वाली कठिनाईयों एवं निराकरण के उपायों पर प्रकाश डाला गया है । संस्कृत के प्रति छात्रों में रुचि जागत करने के लिए पाठ्य सहगामी क्रियाओं का भी इस इकाई में उल्लेख किया गया है ।

11.8 स्व परख प्रश्नों के उत्तर (Answer to Self Check Questions)

नोट : – इन प्रश्नों के उत्तर हेतु सम्बन्धित खण्ड में दी गई सामग्री का अध्ययन करें.!

11.9 मूल्यांकन प्रश्न (Unit End Questions)

1. शिक्षण प्रक्रिया में अध्यापक का क्या स्थान है?
2. संस्कृत अध्यापक के गुणों का स्पष्टीकरण कीजिए ।
3. संस्कृत शिक्षक की वर्तमान स्थिति तथा उसके समक्ष उपस्थित कठिनाइयों पर दृष्टिपात कीजिए।
4. संस्कृत विषय के प्रति अरुचि को दूर करने में संस्कृत शिक्षक के स्वभाव की क्या भूमिका है?
5. संस्कृत शिक्षण में आने वाली बाधाओं के निराकरण के क्या उपाय हैं?
6. संस्कृत शिक्षण को रोचक बनाने में पाठ्य सहगामी क्रियाएँ किस प्रकार सहायक हैं? स्पष्ट कीजिए ।

11.10 संदर्भ ग्रंथ सूची (References)

1. संस्कृत शिक्षण	– डा. शैलजा गौतम, डा. रजनी गौतम – विनोद पुस्तक मन्दिर आगरा– 2
2. संस्कृत शिक्षण	– सन्तोष मित्तल – आर. लाल बुक डिपो – मेरठ
3. संस्कृत शिक्षण	– डा. प्रभा गुप्ता – साहित्य प्रकाशन, आगरा
4. राघव पाठ योजना सीरीज	– अनुग्रह प्रसाद शर्मा, विनोद पुस्त मंदिर, आगरा– 2
5. संस्कृत शिक्षण	– कोटा खुला विश्व विद्यालय, कोटा (राजस्थान)

इकाई – 12 (Unit–12)

संस्कृत शिक्षण में कक्षा–कक्ष, प्रयोगशाला, संग्रहालय, सामुदायिक वातावरण, पुस्तकालय एवं अन्य संसाधन

(Resources Used in Teaching of Sanskrit - Class room, Museum, Community Enviroment, Library and other Resources in Teaching of Sanskrit)

इकाई की रूपरेखा

- उद्देश्य एवं लक्ष्य
- संस्कृत शिक्षण के संसाधन
- संस्कृत शिक्षण के संसाधन
- कक्षा–कक्ष
- भाषा प्रयोगशाला
- संग्रहालय
- समुदाय
- पुस्तकालय
- वातावरण
- श्रव्यदृश्य संवाहक साधन
- टेपरिकार्डर
- रेडियो
- चलचित्र
- चलचित्र
- कम्प्यूटर
- लिंग्वाफोन
- सारांश
- स्व–परख प्रश्नों के उत्तर
- मूल्यांकन प्रश्न
- संदर्भ ग्रन्थ सूची

12.0 इकाई के उद्देश्य (Objectives of the Unit)

इस इकाई के अध्ययनोपरान्त आप – :

- संस्कृत–शिक्षण के महत्व से अवलगत होंगे ।
- संस्कृत–कक्ष के स्वरूप से परिचित होंगे ।
- 'भाषा –प्रयोगशाला की कार्यविधि तथा उपयोग जान सकेंगे ।

- आप संस्कृत– अध्ययन हेतु संग्रहालय का महत्व जान सकेंगे ।
- संस्कृत–शिक्षण में समुदाय तथा वातावरण के योगदान से परिचित होंगे ।
- आपको पुस्तकालय के लाभो की जानकारी होगी ।
- आप संस्कृत–शिक्षण में श्रव्य–दृश्य सहायक साधनों की उपयोगित समझ सकेंगे ।

12.0 प्रस्तावना (Introduction)

संस्कृत भाषा विश्व की प्राचीनतम भाषा है । इसी के अपर नाम देवभाषा, देववाणी, गीर्वाणी आदि हैं । भारत वर्ष का समस्त प्राचीन ज्ञान– भण्डार; यथा–वेद, उपनिषद् दर्शन, पुराण, रामायण, महाभारत, भगवद् गीता आदि ग्रन्थ इसी भाषा में हैं । कतिपय विद्धानों को यह भ्रम है कि संस्कृत भाषा केवल ग्रन्धों की ही भाषा थी और इसका केवल पठन–पाठन में ही उपयोग होता है, जिस प्रकार आजकल खड़ी बोली नामक साहित्यिक हिन्दी शिष्ट–समाज के व्यवहार और उपयोग की भाषा है, उसी प्रकार प्राचीन समय में संस्कृत– भाषा शिष्ट–वर्ग के दैनिक व्यवहार की भाषा थी।

यास्क रचित निरुक्त, पाणिनि रचित अष्टाध्यायी और पतञ्जलि रचित महाभाष्य के अध्ययन से यह पूर्णतया स्पष्ट होता है कि उनके समय में संस्कृत दैनिक व्यवहार की भाषा थी । जिस प्रकार वर्तमान में जनसाधारण में प्रचलित भाषा साहित्यक हिन्दी से भन्न है, उसी प्रकार प्राचीन समय में जनसाधारण में व्यवहृत ..प्राकृत भाषा, संस्कृत भाषा का अपभ्रंश थी । उपयोगिता की दृष्टि से संस्कृत भाषा अन्य सभी भाषाओं से श्रेष्ठ है । संस्कृत भाषा–शिक्षण की उपयोगिता निम्न प्रकार
है–

12.1 संस्कृत शिक्षण का महत्व

12.1.1 सांस्कृतिक महत्व
12.1.2 चारित्रिक महत्व
12.1.3 साहित्यिक महत्व
12.1.4 कलात्मक महत्व
12.1.5 दार्शनिक महत्व
12.1.6 बौद्विक महत्व
12.1.7 व्यावसायिक महत्व
12.1.8 भावात्मक महत्व

प्रत्येक राष्ट्र की अपनी सभ्यता व संस्कृति होती है तथा संस्कृति की सुरक्षा करना उस राष्ट्र के नागरिकों का ही कर्तव्य है । हमारे भारतवर्ष के ऋषिजनों ने निरन्तर श्रवण परम्परा एवं ग्रन्थ रचनाओं द्वारा भारतीय संस्कृति को अद्यतन बनाए रखा है । उन्होंने सतत भाषा में जीवनोपयोगी प्रत्येक क्षेत्र में ग्रन्थ रचनाएँ की हैं अत: इस ज्ञान विज्ञान से परिचित कराने के लिए संस्कृत–शिक्षण का अत्यन्त ही महत्व है जिससे कि हम विद्यार्थियों में भारतीय संस्कृत के प्रति अपनेपन की भावना का विकास कर सकें । संस्कृत भाषा संस्कारित करने वाली भाषा है

। इस भाषा के शिक्षण के माध्यम से ही देश के भावी नागरिकों के व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास हो सकता है जो कि शिक्षा का महत्वपूर्ण उद्देश्य है । अत: संस्कृत शिक्षण विद्यार्थियों के लिए अनिवार्य है ।

12.1.1 सांस्कृतिक महत्व

प्रत्येक राष्ट्र की अपनी सभ्यता व संस्कृति होती है तथा संस्कृति की सुरक्षा करना उस राष्ट्र के नागरिकों का ही कर्तव्य है । हमारे भारतवर्ष के ऋषिजनों ने निरन्तर श्रवण परम्परा एवं ग्रन्थ रचनाओं द्वारा भारतीय संस्कृति को अद्यतन बनाए रखा है । उन्होंने संस्कृत भाषा में जीवनोपयोगी प्रत्येक क्षेत्र में ग्रन्थ रचनाएँ की हैं अत: इस ज्ञान–विज्ञान से परिचित कराने के लिए संस्कृत–शिक्षण का अत्यन्त ही महत्व है जिससे कि हम विद्यार्थियों में भारतीय संस्कृत के प्रति अपनेपन की भावना का विकास कर सकें । संस्कृत भाषा संस्कारित करने वाली भाषा है । इस भाषा के शिक्षण के माध्यम से ही देश के भावी नागरिकों के व्यक्तित्व का सर्वागीण विकास हो सकता है जो कि शिक्षा का महत्वपूर्ण उद्देश्य है । अत: संस्कृत शिक्षण विद्यार्थियों के लिए अनिवार्य है ।

12.1.2 चारित्रिक महत्व

विद्यार्थियों के चरित्र का निर्माण करना शिक्षा के मूलभूत उद्देश्यों में से एक है । जैसा कि कहा गया है कि "शील सर्वस्व भूषणम्" । चरित्र, व्यक्ति का सबसे महत्वपूर्ण आभूषण है । केवल सदाचार के होने से ही व्यक्ति सब कुछ प्राप्त कर लेता है । विद्यार्थियों के चरित्र निर्माण की दृष्टि से संस्कृत–शिक्षण अत्यन्त उपयोगी है । बालकों को प्राथमिक स्तर से ही संस्कृत भाषा की सूक्तियों महत्वपूर्ण उपदेशों, श्लोकों से परिचित कराना संस्कृत शिक्षकों का दायित्व है । बालकों को नित्य प्रति दो सुक्ति रत्न अवश्य स्मरण करना चाहिए; यथा–

'विद्या ददाति विनयमू, श्रद्धावान्लभते ज्ञानम्' ।

"आलस्यैव मनुष्याणां शरीरस्थो महारिपु"

इस प्रकार प्राथमिक स्तर से लेकर उच्च स्तर तक विद्यार्थियों को संस्कृत के महत्वपूर्ण चरित्र निर्माणोपयोगी ग्रन्थों का अध्ययन कराने पर उनका चरित्रिक विकास हो सकता है तथा उनमें संयम, सहिष्णुता, सहयोग, प्रेम, कर्तव्य पालन, त्याग, श्रद्धा, सम्मान इत्यादि गुण संस्कृत–शिक्षण के माध्यम से स्वत: ही आ सकते हैं । अत: बालकों के चरित्रिक विकास के लिए संस्कृत–शिक्षण अत्यावश्यक है।

12.1.3 साहित्यिक महत्व

संस्कृत वाड्मय अनन्त ज्ञान का भण्डार है । मनुष्य के कल्पना जगत के अन्तर्गत आने वाले का लौकिक, पारलौकित, दृश्य– अदृश्य अर्थात् धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष, सम्ब–धी सभी अगणित विषयों के ज्ञान की राशि संस्कृत वाड्मय में निहित है । विद्यार्थियों में साहित्यिक परिपक्वता के विकास की दृष्टि से संस्कृत शिक्षण अत्यन्त उपयोगी सिद्ध हो सका है । छात्रों में सहित्यिक विधाओं का विकास करने के लिए उन्हें संस्कृत शिक्षण की बहुत आवश्यकता है । संस्कृत–शिक्षण वाड्मय ही ऐसा स्रोत हें जिसमें जीवनोपयोगी तथा जीवनेतर मोक्ष इत्यादि साधनों का ज्ञान प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है । रामायण, महाभारत आदि महाकाव्यों से लेकर

भरत मुनि का नाट्क शास्त्र, पतंजली का योगदर्शन, पाणिनीकृत अष्टाध्यायी, भामह, दण्डी आदि महाकवियों द्वारा रचित एम्बो के ज्ञान हेतु संस्कृत–शिक्षण एक आवश्यक साधन है । इसके द्वारा ही छात्रों में समस्त साहित्यिक योग्यताओं का प्रादुर्भाव सम्भव है ।

12.1.4 कलात्मक महत्व

भारतीय संस्कृति की कलात्मकता को जानने हेतु संस्कृत–शिक्षण बहुत आवश्यक है । संस्कृत भाषा में लिखित प्राचीन गन्थों में मूर्तिकला, संगीतकला, नृत्यकला आदि का ज्ञान प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है । भरत मुनि का नाट्य शास्त्र अभिनय, नृत्य, संगीत व शिल्प आदि का विवेचन करने वाला सबसे प्राचीन व विकसित ग्रन्थ है । इसी प्रकार विभिन्न काव्य तत्वों, रस, रीति, छन्द, शब्द शक्ति, वक्रोक्ति आदि का विवेचन करने वाले सैकड़ो गन्धों का ज्ञान संस्कृत शिक्षण के माध्यम से दिया जा सकता है । अत: विद्यार्थियों को कला प्रेमी व कलाओं का सम्मान करने योग्य बनाने हेतु संस्कृत–शिक्षण सर्वश्रेष्ठ उपाय है ।

12.1.5 दार्शनिक महत्व

भारतीय दर्शन भारत देश की अर्जित परम्परागत व अमूल्य निधि है । आधुनिक मनोविज्ञान जो कि शिक्षा के क्षेत्र में अत्यन्त उपयोगी सिद्ध हुआ है, भारतीय दर्शन की ही देन है । मनोविज्ञान का आधार भारतीय अध्यात्म विज्ञान ही है । भारतीय दर्शन के महत्वपूर्ण ग्रन्थ संस्कृत– भाषा में ही लिखित हैं, जिनमें मनुष्य जन्म के मूल उद्देश्य मोक्ष प्राप्ति (दु:खों से मुक्ति) के विभिन्न सिद्धान्तों का वर्णन है । भारतीय दर्शन के योग, न्याय, सांख्य, वैशेषिक व वेदान्तादि दर्शनों में मन, बुद्धि, इन्द्रियाँ, शरीर, प्रकृति व प्रकृतेतर तत्वों की व्याख्या प्रमाण व युक्तिपूर्ण विधियों से की गयी है । भारतीय संस्कृति की अमूल्य धरोहर भारतीय दर्शन शास्त्र का ज्ञान संस्कृत शिक्षण के माध्यम से ही सम्भव है जिससे कि छात्रों की मानसिक शक्तियों का समुचित व सन्तुलित विकास हो सकेगा । अत: संस्कृत शिक्षण अनिवार्य आवश्यकता है ।

12.1.6 बौद्विक महत्व

संस्कृत–शिक्षण के अध्ययन से छात्रों में बुद्धिगत समस्त तत्वों; यथा–तर्क वितर्क, संश्लेषण, विश्लेषण, प्रयोग, कल्पना आदि बौद्धिक शक्तियों का विकास होने से उनमें वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास होता है तथा वे सृजनात्मक–चिन्तन शक्ति से युक्त हो जाते हैं । इसी प्रकार भारतीय परिवार, आर्य भाषाओं और आर्येतर, द्रविड़ भाषाओं के ज्ञान से छात्रों की मौखिक लेखन, वाचन आदि योग्यताऐं विकसित होती हैं । अत: संस्कृत शिक्षण द्वारा विद्यार्थियों की बुद्धिगत कुशलताएँ विकसित की जा सकती हैं ।

12.1.7 व्यावसायिक महत्व

विद्यार्थियों मे व्यावसायिक दक्षता उत्पन्न करना शिक्षा का महत्वपूर्ण उद्देश्य है । वर्तमान मे संस्कृत विषय की महत्ता की ओर शिक्षाधिकारियों ने पर्याप्त ध्यान देना प्रारम्भ किया है । संस्कृत शिक्षण को व्यावसायिक दृष्टि से समृद्ध बनाने हेतु संस्कृत भाषा में प्राप्त शास्त्रों; यथा–आयुर्वेद, संगीत, मूर्तिकला, ज्योतिष, गणित, भवन निर्माण, वास्तु शास्त्र, धार्मिक कर्मकाण्डों, वैदिक गणित आदि का छात्रों को प्रशिक्षण दिया जा रहा है । वैदिक ज्ञान को जन सीमान्य तक पहुँचाने के लिए राज्य में वैदिक विद्यालयों की स्थापना की गई है । संस्कृत

भाषा को वेद वाणी तक ही सीमित न रख कर जनवाणी बनाने हेतु अनेक संस्कृत संस्थानों ने संस्कृत–संभाषण शिविर आयोजित कराना अब युद्ध स्तर पर प्रारम्भ किया है । अमेरिका, ब्रिटेन, इंग्लैण्ड आदि देशों में भी संस्कृत भाषा की महता बढ़ी हें । राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान नवदेवली, राजस्थान संस्कृत अकादमी जयपुर आदि विभिन्न संस्थाएँ संस्कृत के विपुल प्रचार–प्रसार में संलग्र है । इससे विद्यार्थियों को संस्कृत भाषा के क्षेत्र में रोजगार के अवसर बहुलता से उपलब्ध हो रहे हैं । इससे स्वाभाविक ही उनमें संस्कृत के प्रति रुचि व आदर बढ़ने की सम्भावना जगी है । इस प्रकार संस्कृत शिक्षण का व्यावसायिक महत्व भी कम नहीं आका जा सकता । अत : संस्कृत–शिक्षण आवश्यक है ।

12.1.8 भावात्मक महत्व

छात्रों में श्रद्धा, आदर, विनय, त्याग, कतज्ञता आदि सूक्ष्म भावों के विकास हेतु संस्कृत–शिक्षण से बढ़कर अन्य कोई साधन नहीं है ।. संस्कृत' शब्द का अर्थ ही 'शुद्ध होना' है । मनुष्य को पशु तुल्य आचरण से मुक्त कर मानवीय भावनाओं से युक्त करने हेतु संस्कृत–शिक्षण की महती आवश्यकता है । मानव के जीवन की पूर्णता तब ही है जबकि वह ईश्वर प्रदत्त जीवन का सुदपयोग कर ईश्वर के प्रति कृतज्ञता के भावों से भावित हो सके । अत: संस्कृत भाषा से बढ़कर अन्य किसी भी भाषा में पुर्व कृत अशुभ संस्कारों के परिमार्जन की विधि नहीं है । रामायण, महाभारत, श्रीमदभागवत महापुराण, श्रीमदभगवदगीता आदि अनेक ऐसे क्या हैं जिनके निरन्तर अनुशीलन से दुर्जन व्यक्ति भी सदाचारी होकर कृतकृत्य हो सकता है । अत: संस्कृत शिक्षण के माध्यम से छात्रों में स्वयं का, परिवार का, समाज का तत: राष्ट्र का अन्तत: समस्त विश्व का कल्याण सम्भव है । संस्कृत भाषा का ज्ञान प्राप्त करके व उसके बताए मार्ग व उपदेशों को धारण करके विद्यार्थी स्वयं का ही नहीं अनेकों का कल्याण करने में समभ्व हो सकते हैं । इस प्रकार छात्रों में मानवीय भावनाओं के विकास की दृष्टि से संस्कृत–शिक्षण अनिवार्य है।

स्व–परख प्रश्न (Self Check Question)

अब तक आपने क्या समझा इसका मूल्यांकन कीजिए ।

1. संस्कृत–शिक्षण के माध्यम से विद्यार्थियों में भारतीय संस्कृति व सभ्यता के प्रति आदर भावना उत्पन्न की जा सकती है । (हाँ/नहीं)
2. संस्कृत–शिक्षण द्वारा विद्यार्थियों मे चरित्र निर्माणोपयोगी गुणों का स्वाभाविक विकास किया जा सकता है । (हाँ/नहीं)
3. विद्यार्थियों को भारतीय कलाओं का सम्मान तथा उन्हें कला प्रेमी बनाने हेतु संस्कृत–शिक्षण अत्यन्त उपयोगी है । (हाँ/नहीं)
4. विद्यार्थियों में बौद्धिक, भावनात्मक, दार्शनिक, व्यावसायिक दक्षता उत्पन्न करने हेतु संस्कृत–शिक्षण सर्वश्रेष्ठ साधन है । (हाँ/नहीं)

12.2 संस्कृत शिक्षण में प्रयुक्त संसाधन

12.2.1 कक्षा–कक्ष

12.2.2 भाषा प्रयोगशाला

12.2.3 संग्रहालय

12.2.4 समुदाय

12.2.5 पुस्तकालय

12.2.6 वातावरण

12.2.1 कक्षा–कक्ष

विद्यार्थियों में संस्कृत भाषा के प्रति अनुराग उत्पन्न करने के लिए संस्कृत कक्षा कक्ष का वातावरण संस्कृतमय बनाना चाहिए । कक्ष की दीवारों पर जीवनोपयोगी सूक्तियों व श्लोक लिखे हुए होने चाहिए; यथा

"शरीरमाद्यं धर्म खलु साधनम्" ।

"कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन" ।

"सत्सङ्गति : कथय किं न करोति पुंसाम्" ।

"उद्यमेन हि सिध्यन्ति कार्याणि न मनोरथै" ।

इसी प्रकार संस्कृत संभाषण से संबन्धित कथन भी लिखे जाने चाहिए; यथा–

"विश्वभाषा हि संस्कृतम"

"अहं संस्कृतेन संभाषण करोमि"

"संस्कृताय स्वाहा, संस्कृताय इदं न ममे"

इत्यादि को मोटे–मोटे अक्षरों में लिखकर स्थान–स्थान पर टाँग देना चाहिए ।

संस्कृत–कक्ष में श्यामपट्ट पर विषय, प्रकरण, दिनांक, कक्षा आदि औपचारिक बिन्दु संस्कृत में ही लिखे होने चाहिए । श्यामपट्ट पर प्रतिदिन एक नीति सम्बन्धी उपदेश संस्कृत में विद्यार्थियों से लिखवाना चाहिए । कक्षा के प्रत्येक छात्र को बारी–बारी से ऐसा करना चाहिए ।

संस्कृत कक्षा में कुछ उत्तम ग्रन्थ जैसे संस्कृत शब्द कोश, अष्टाध्यायी, संस्कृत संभाषण की पुस्तकें, वाल्मीकि रामायण, श्रीमदभगवद गीता, नीतिशतकम, शिशुपालवधम, रघुवंशम, उत्तररामचरितम आदि रखे जाने चाहिए ।

इसी प्रकार छात्रों को ऐतिहासिक ज्ञान देने हेतु भी संस्कृत ही एतिहासिक कृतियाँ; जैसे हर्षचरितम् मुद्राराक्षसम, मृच्छकाटिकम, राजतरंगिनी, पृथ्वीराज, विक्रमाङ्कदेवचरितम, अभिलेख माला आदि ग्रन्थ रखे जाने चाहिए ताकि प्रसंगानुकूल छात्रों की जिज्ञासा शान्त की जा सके ।

संस्कृत के कक्षा–कक्ष में भारत का मानचित्र लगा होना चाहिए जिसमें संस्कृत शिक्षा के प्रसिद्ध केन्द्र दिखाये गये हों; जैसे काशी, वाराणासी, मुम्बई, कलकत्ता, हरिद्वार, अयोध्या, तिरूपति आदि तथा संस्कृत शिक्षा के प्राचीन प्रसिद्ध महाविद्यालयों व विश्वविद्यालयों का भी उल्लेख उस मानचित्र में होना चाहिए; जैसे रमावैकुण्ठनाथ महाविद्यालय, तक्षशिला, नालन्दा, कश्मीर आदि ।

बालकों मे संस्कृत–संभाषण में रुचि उत्पन्न करने हेतु संस्कृत की प्रहेलिकाएँ, वर्णमाला (चित्र सहित) बाल कविताएँ आदि भी चार्ट में बनाकर टाँगी जा सकती हैं । संस्कृत के महाकाव्यों में हिमालय पर्वत, अरावली, हिन्द महासागर आदि का वर्णन बहुतायत प्राप्त होता है।

अत: उनके चित्र भी संस्कृत कक्ष में होने चाहिए । संस्कृत के प्रसिद्ध कवियों के कुछ चित्र चाहे वे काल्पनिक ही क्यों न हों, अवश्य ही कक्ष में टाँगे जाने चाहिए ।

इसी प्रकार 'भारत के मानचित्र में सिन्धु, ब्रह्मपुत्र, नर्मदा, कावेरी, गंगा, यमुना, सरयू इत्यादि नदियों का रेखांकन होना चाहिए ।

संस्कृत कक्षा–कक्ष में रखे जाने वाले श्रव्य–दृश्य साधन

संस्कृत कक्षा कक्ष में कुछ श्रव्य एवं दृश्य साधनों की भी आवश्यकता पड़ती है । संस्कृत कक्ष के दृश्य साधनों में; जैसे कवियों व उनके आश्रयदाताओं के चित्र, पर्वतों, नदियों के चित्र, कुछ प्रतिकृति या मॉडल; जैसे मेघदूत महाकाव्य में यक्ष द्वारा प्रेषित मेघ की अल्कापुरी यात्रा के बीच–बीच में स्थान जिन्हें मेघ रूपी दूत देखता हुआ गया अर्थात मेघ को दर्शाता हुआ मॉडल, इसी प्रकार शिशुपाल का वध करते हुए सुदर्शनधारी श्री कृष्ण, कुछ मुर्तियाँ, अलभ्य वस्तुएँ आदि । पारम्परिक चित्रों में–विद्याध्ययन करते हुए बलराम व कृष्ण, गुरु संदीपनी के सान्निध्य में, युद्धारम्भ से पूर्व कुलदेवता सूर्य भगवान की आराधना पूजन करते हुए श्रीराम तथा बालकृष्ण, सरस्वती, गणेश, लक्ष्मी, पार्वती आदि की मूर्तियाँ भी संस्कृत–कक्ष की शोभा में वृद्धि करते हैं ।

छात्रों की व्याकरण–शिक्षण देने के लिए सन्धि, प्रत्यय, उपसर्ग आदि का भेद दर्शाने के लिए ऐसे शब्द जो आकृतियों से संबन्धित हों; जैसे– आयताकार, वृत्ताकार आदि शब्द चित्रों से विद्यार्थी संस्कृत शब्दावली से शीघ्र परिचित हो जाता है । कतिपय तालिका लेख भी संस्कृत वाक्य शिक्षण के लिए उपयोगी होते हैं जो कि संस्कृत–कक्ष में अवश्य टाँके जाने चाहिए; जैसे–

राम:		गृहं		गच्छति
स:	+	भोजन	+	करोति
वय:	+	पुस्तक	+	पठामि
अहं:	+	चलचित्र	+	पश्यामि

इसके अतिरिक्त बालकों में संस्कृत के प्रति रुचि व प्रेम उत्पन्न करने हेतु संस्कृत की प्रार्थनाओं को चार्ट में आलेखित कर बालकों से नित्य उनका अभ्यास कराना चाहिए; यथा–

1. "सुरस सुबोधा विश्व मनोज्ञा
   ललिता हद्या रमणीया
   अमृतवाणी संस्कृतभाषा
   नैव क्लिष्टा न च कठिना
   नैव क्लिष्टा....."

इसी प्रकार –

2. मृदपि च चन्दनमस्मिन देशे ग्रामोग्राम: सिद्धवनम् ।
   यत्र च बाला: देवी स्वरूपा बाला: सर्वे श्री रामा: ।।"

दृश्य साधनों के अतिरिक्त कुछ श्रव्य–दृश्य साधन भी उपयोगी होते हैं; जैसे टेपरिकार्डर, रेडियो, ग्रामोफोन, दूरदर्शन आदि साधनों द्वारा शुद्ध उच्चारण सिखाने में विशेष सहायता मिलती है । अत: इन्हें भी संस्कृत–कक्ष में उचित स्थान देना चाहिए ।

इस प्रकार संस्कृत कक्षा कक्ष की साज–सज्जा ऐसी होनी चाहिए जिसमें विद्यार्थियों को संस्कृतमय वातावरण प्राप्त हो व उनमें संस्कृत विषय के प्रति रुचि व अनुराग बढ़े ।

12.2.2 भाषा प्रयोगशाला

वर्तमान युग में जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में विज्ञान और तकनीकी का प्रयोग किया जा रहा है । विज्ञान और तकनीकी का प्रयोग किसी भी राष्ट्र एवं सम्पूर्ण विश्व के लिए प्रगति का सूचक है । शिक्षा का क्षेत्र भी विज्ञान और तकनीकी के प्रभाव से अछूता नहीं रहा है । आज जनसंचार के साधनों को शिक्षा क्षेत्र में बड़ी सार्थकता, सशक्तता और प्रभावपूर्ण ढंग से अपनाया जा रहा है । वर्तमान में विद्यालयों में बालक कक्षा के साथ–साथ कार्यशालाओं और प्रयोगशालाओं में स्वयं कार्य करके सीखने का प्रयास करते हैं । अभी तक तो विद्यालयों में छात्र–छात्राएँ विज्ञान की शिक्षा ही प्रयोगशाला में सीखते थे लेकिन आज की परिस्थितियों में छात्र– छात्राएँ भाषा की शिक्षा भी प्रयोगशाला में सीखने लगे हैं । गत वर्षो में मनोवैज्ञानिक सिद्धान्तों के आधार पर मशीनें बनायी गयी हैं जिनका प्रयोग विकसित व विकासशील देशों में किया जा रहा है ।

व्यक्ति–शिक्षण और समूह शिक्षण में भाषा प्रयोगशाला समन्वय करने का सर्वोत्तम साधन है । इसके द्वारा विद्यार्थियों को भाषा–शिक्षण के लिए सक्रिय रूप से भाग लेने के लिए प्रेरित किया जा सकता है । 1966 में अमेरिकी विश्वविद्यालयों ने शैक्षिक तकनीकी की राष्ट्रीय परिषद् की स्थापना की । इस परिषद् ने शिक्षा के क्षेत्र में वैज्ञानिक उपकरणों के प्रयोग की उपयोगिता पर बल दिया । इसमें भाषा–शिक्षण के लिए भाषा–प्रयोगशाला की व्यवस्था की जा रही है । भारत में भी मुख्य शिक्षण केन्द्रों पर भाषा प्रयोगशाला की व्यवस्था की गयी है ।

भाषा प्रयोगशाला की कार्य विधि – भाषा प्रयोगशाला में विद्यार्थियों के बैठने के लिए अलग से मेज–कुर्सी होती हैं जिसके दोनों ओर लकड़ी का पार्टीशन होता है । इससे वे अपने स्थान पर बैठने के बाद अपने ईधर–उधर छात्रों को नहीं देख पाते । प्रत्येक मेज पर एक माईक्रोफोन फिट होता है और साथ–साय एक टेपरिकार्डर और कुछ कैसेट्स होती हैं । ऊपर एक ध्वनि यंत्र होता है ।

शिक्षक का मेज–कुर्सी ऐसे स्थान पर होती हैं जहाँ से वह प्रयोगशाला में भाषा सीखने वाले सभी छात्रों को देख सकता है । उसकी मेज पर पूरी प्रयोगशाला में फिट माइक्रोफोनों का 'कीबोर्ड' होता है । टेप रिकार्डर एवं आवश्यक कैसेट्स होते हैं और एक हेड फोन होता है । इनकी सहायता से वह प्रयोगशाला के किसी, कुछ अथवा सभी छात्रों से एक साथ सम्पर्क स्थापित कर सकता है । वह किसी भी छात्र की ध्वनि को सुन सकता है, उसे निर्देश दे सकता है ।

शिक्षण प्रक्रिया – भाषा प्रयोगशाला में भाषा–शिक्षण की प्रक्रिया कई तरह से आगे बढ़ती है । शिक्षक कभी अपनी टेबल के माईक्रोफोन की सहायता से सभी विद्यार्थियों के सामने आदर्श–वाचन करता है, कभी उनको कहानी सुनाता है और कभी टेपरिकार्डर के माध्यम से भाषा–शिक्षण सामग्री को प्रस्तुत करता है । वह कभी छात्रों को मौखिक–पठन के लिए कहता है, वे अपने पठन को टेप करते हैं और स्वयं सुनकर उसमें सुधार करते हैं । सभी छात्र अपनी टेबल

पर रखे हुए कैसेट्स सुनते हैं । इस प्रकार इनकी सहायता से वे मौखिक–पठन करना सीखते हैं और लिखित रचना करना भी सीखते हैं ।

इस प्रकार भाषा प्रयोगशाला की निम्न विशेषताएँ हैं–

1. इसके माध्यम से छात्र व्यक्तिगत रूप में भी सीख सकते हैं और सामूहिक रूप से भी सीख सकते हैं । अत: इस तरह व्यक्तिगत व सामूहिक शिक्षण का समन्वय संभव हो जाता है ।
2. इसमें प्रत्येक सीट के आस– आस पार्टीशन लगा होने से छात्र एक दूसरे को देख 'नहीं पाते और उनका ध्यान अपने कार्य पर केन्द्रित होता है ।
3. प्रत्येक छात्र अपने टेप की और शिक्षक की या शिक्षक के टेप की आवाज सुनता है इसलिए शोर से होने वाले नुकसान सें बचा जा सकता है ।
4. सभी विद्यार्थियों को अपनी रुचि, योग्यता व गति के अनुसार सीखने का अवसर मिलता है ।
5. यह प्रयोगशाला मौखिक भाषा एवं मौखिक पठन की शिक्षा की दृष्टि से बहुत लाभप्रद सिद्ध हुई है। इसके माध्यम से बालकों को शुद्ध उच्चारण सिखाया जा सकता है ।
6. इसमें सर्वश्रेष्ठ बात यह है कि छात्र अपने पठन को (वाचन) टेप कर सकते हैं, उसे फिर सुन सकते हैं और अपनी कमियों में सुधार कर सकते हैं ।
7. शिक्षक अपनी सीट पर बैठकर ही किसी भी छात्र के मौखिक पठन को सुन सकता है और उनकी व्यक्तिगत रूप से सहायता कर सकता है ।
8. लिखित भाषा प्रशिक्षण के लिए भी भाषा प्रयोगशाला का अत्यन्त महत्व है, छात्र कहानी सुनते हैं, फिर उसे अपने शब्दों में लिखते हैं । इस प्रकार सही ढंग से वाक्य रचना, कहानी रचना आदि सीख जाते हैं ।

इस प्रकार भाषा–प्रयोगशाला से संस्कृत–शिक्षण के तत्वों के ज्ञान, उच्चारण और वाचन की दुष्टि से तो बहुत उपयोगी सिद्ध हुई है ।

12.2.3 संग्रहालय

विद्यार्थियों के लिए संग्रहालय एक महान शैक्षिक साधन है । यह मनोरंजन का केन्द्र भी है । इसमें गैर–अध्ययन सामग्री सम्मिलित होती है जो भूतपुर्व अवधियों, घटनाओं, व्यक्तियों से सम्बन्धित मूल्यवान ज्ञान को वास्तविक उद्देश्यों, चित्रों आदि के रूप में प्रस्तुत करता है । संग्रहालय विद्यार्थियों की शिक्षा में एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते है । एक संग्रहालय की यात्रा का संस्कृत–शिक्षण में निम्नलिखित लाभ है–

1. संग्रहालय द्वारा एतिहासिक, भौगोलिक, वैज्ञानिक तथा सांस्कृतिक महत्व के वास्तविक उद्देश्यों की प्राप्ति होती है ।
2. ये विभिन्न देशों में विभिन्न अवधियों के राजनैतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक और कलात्मक विकास पर प्रकाश डालते हैं ।

3. जब विद्यार्थियों को एक विशेष पाठ के अध्यापन से पहले और बाद में अध्यापक के द्वारा संग्रहालय देखने के लिए ले जाया जाता है तो वे उससे संबन्धित सामग्री वहाँ देख सकते हैं ।
4. यह संस्कृत –शिक्षण के अध्यापन को वास्तविक बनाता है और छात्रों को प्रत्यक्ष अनुभव प्रदान करता है ।
5. संग्रहालय द्वारा विद्यार्थियों में राष्ट्रीय एकता और अन्तरराष्ट्रीय सूझबूझ की भावना का विकास होता है ।
6. यह छात्रो में सक्रियता, आत्म–अध्ययन और उत्सुकता को प्रोत्साहित करता है ।
7. संग्रहालय विद्यार्थियों को विद्यालय–संग्रहालय के लिए वस्तुएँ तैयार करने के लिए उत्पेरित करता है और उनकी सृजनात्मकता, कल्पनात्मक शक्ति को रचना करने हेतु प्रेरित करता है । '

संग्रहालय के प्रकार

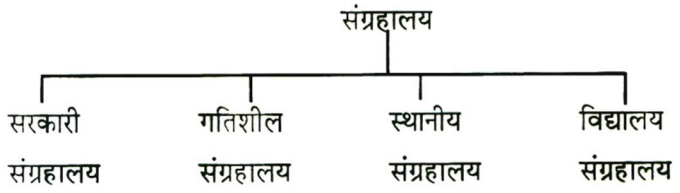

1. **सरकारी संग्रहालय** – इसमें विभिन्न समाज तथा सभ्यताओं के विकास चरण या प्रतिरक्षा सामग्री सम्मिलित की जाती है ।
2. **गतिशील संग्रहालय**– इसे एक बड़े ट्रक या वैन के द्वारा विभिन्न स्थानों पर ले जाया जाता है।
3. **स्थानीय संग्रहालय** – राज्य या तहसील मुख्यालय द्वारा अधिकृत स्थानीय संग्रहालय में उस स्थान विशेष से सम्बन्धित समस्त वस्तुएँ व जानकारी रखी जाती हैं ।
4. **विद्यालय संग्रहालय** – विद्यालय संग्रहालय में विद्यार्थियों द्वारा तैयार की गयी वस्तुएँ रखी जाती हैं ।

प्रत्येक विद्यालय में एक संस्कृत–शिक्षा संग्रहालय होना चाहिए । यह वास्तविकता के साथ विद्यालय के पाठयक्रम के क्षेत्र में प्रवेश करता है ।

एक संग्रहालय को तीन खण्डों में बाँटा जा सकता है ।

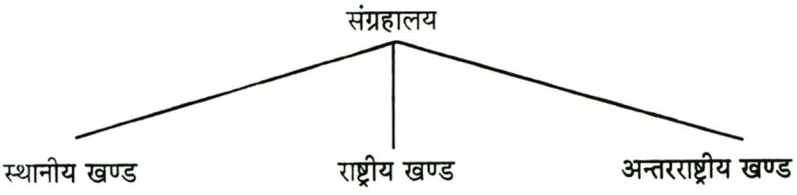

स्थानीय खण्ड– रथानीय वर्ग में स्थानीय स्मृति चिन्ह, स्थानीय नमूनों के मॉडल, चार्ट आदि की सहायता से तैयार किया जा सकता है । स्थानीय संस्कृति तथा स्थानीय साहित्यकारों की रचनाओं तथा घटनाओं को इस वर्ग में रखा जा सकता है ।

राष्ट्रीय खण्ड– राष्ट्रीय वर्ग में राष्ट्र से सम्बन्धित घटनाओं को सम्मिलित किया जा सकता है। राष्ट्रीय स्तर के स्मृति चिह्नों को वास्तविक रूप में प्रास करना सम्भव नहीं होने से मॉडल आदि के द्वारा उनका दिग्दर्शन कराया जा सकता है । ये मॉडल प्राचीन वैदिक सभ्यता, संस्कृति तथा महत्वपूर्ण ऐतिहासिक घटनाओं पर बनाये जा सकते हैं।

अन्तरराष्ट्रीय खण्ड इसके अन्तर्गत विभिन्न देशों की कलाकृतियों, वहाँ की मुख्य घटनाएँ, संस्कृति आदि को सम्मिलित किया जा सकता है।

विद्यार्थियों को संस्कृत–शिक्षण को प्रभावी बनाने हेतु निम्नलिखित वस्तुओं को संग्रहालय के माध्यम से दर्शाया जा सकता है । छात्रों को संग्रहालय के माध्यम से इन वस्तुओं का सृजन करने को भी प्रेरित किया जा सकता है ।

1. संस्कृत या पत्रिकाएँ तथा स्वरमंगला आदि ।
2. महान कवियों का जीवन चरित्र तथा संस्कृत साहित्य में उनका योगदान, धार्मिक व्यक्ति व सामाजिक सुधारों से जुड़ी हुई पठन सामग्री तथा उनके चित्र ।
3. वैदिक, उत्तर वैदिक, बौद्ध तथा मोर्यकाल के इतिहास की सामग्री जो संस्कृत से सम्बन्ध रखती है।
4. मोर्य, शुंग कुषाण तथा गुप्तकाल के संस्कृत में रचित मथ; जैसे–हर्षरचरितम, मुद्राराक्षसम, मृच्छकटिकम् विक्रमांकदेवचरितम्, पृथ्वीराजविजयम् आदि महाकाव्य ।
5. इनके समय लिखे गये संस्कृत के शिलालेख, ताम्र तथा ताल पत्र, मुद्राएँ, मन्दिरों, मठों तथा गुहालेखों का विद्यार्थियों को दिग्दर्शन बहुत उपयोगी रहता है ।
6. संस्कृत–शिक्षण से सम्बन्धित महत्वपूर्ण छायाचित्रों, फिल्म पट्टियों और फिल्मों का प्रदर्शित करने हेतु प्रयोजनात्मक उपकरण जैसे–टेपरिकार्डर, टेलीविजन आदि के प्रयोग द्वारा भी विधार्थी संग्रहालय से बहुत ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं तथा रययं भी सृजनात्मक कौशल अर्जित कर सकते हैं ।

इस प्रकार संग्रहालय संस्कृत शिक्षण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं ।

12.2.4 समुदायिक वातावरण

समुदाय बालक की शिक्षा का एक महत्वपूर्ण, सक्रिय तथा अनौपचारिक साधन है । समुदाय व्यक्तियों का ऐसा समूह है जो एकता अथवा सामुदायिक भावना के जागृत हो जाने से किसी निश्चित सामान्य जीवन को सामान्य नियमों द्वारा व्यतीत करने के लिए स्वत: ही विकसित हो जाता है । इस समुदाय का क्षेत्र उसके सदस्यों की आर्थिक, सांस्कृतिक तथा राजनैतिक समानताओं पर निर्भर करता है ।

संक्षेप में एक गाँव, नगर अथवा राष्ट्र एवं विश्व के जितने भी व्यक्ति एकता के सूत्र के समूह में बंधकर सामान्य उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए सामान्य जीवन व्यतीत करते हो सभी मिलकर एक समुदाय का निर्माण करते हैं ।

मेकाइवर ने समुदाय की परिभाषा देते हुए लिखा है "जब कभी एक छोटे या बड़े समूह के सदस्य इस प्रकार रहते हैं कि वे इस अथवा – न उद्देश्यों में भाग नहीं लेते हैं, वरन् जीवन की समस्त भौतिक दशाओं में भाग लेते हैं, तब हम ऐसे समूह को समुदाय कहते हैं ।"

बालक पर समुदाय के शैक्षिक प्रभाव

1. **मानसिक विकास पर प्रभाव** – समुदाय के द्वारा स्थान–स्थान पर पुस्तकालय की व्यवस्था की जाती है यही नहीं वह समय–समय पर वाद–विवाद प्रतियोगिताओं व मुशायरों, कवि सम्मेलनों तथा नाना प्रकार की गोष्ठियों का भी आयोजन करता है । इन सबसे बालक का मनोरंजन भी होता है और ये ही गतिविधियाँ बालकों के मानसिक विकास को संभव बनाती हैं ।

2. **सामाजिक विकास का प्रभाव** – समुदाय में समय–समय पर सामाजिक सम्मेलन, मेले तथा उत्सव एवं धार्मिक कार्य होते रहते हैं । बालक इन सबमें प्रसन्नतापूर्वक भाग लते हुए समुदाय के विभिन्न व्यक्तियों से सम्पर्क स्थापित करता है । इन सब लोगों के साथ मिलजुल कर रहने से तथा कार्य करने से बालक में सामाजिकता की भावना विकसित हो जाती है । इस सामाजिकता के विकसित होने से उसे सामाजिक रीतिरिवाजों परम्पराओं, मान्यताओं, विश्वासों एवं आदर्शो का ज्ञान प्राप्त होता है ।

3. **राजनैतिक विचारों का प्रभाव** राजनेताओं के भाषण, राजनैतिक सभाओं एवं सम्मेलनों का आयोजन एक शिक्षित समुदाय द्वारा समय समय पर किया जाता है । इस प्रकार की गतिविधियों के व्यवस्थित आयोजन से बालकों में राजनीतिक विचारधाराओं की स्थितियों का स्तर न केवल ऊँचा उठता है बल्कि उनमें राजनीतिक विचारधाराओं का ज्ञान भी बढ़ता है ।

4. **सांस्कृतिक विकास पर प्रभाव** – समुदाय द्वारा अपनी संस्कृति के विकास के प्रयोजन से विशिष्ट अवसरों पर; जैसे त्यौहार, राष्ट्रीय दिवस, धार्मिक समारोह, सम्मेलनों का आयोजन किया जाता है । इससे संस्कृति एवं सभ्यता के मूलभूत मूल्यों एवं विशेषताओं के प्रति बालकों में सम्मान की भावना उत्पन्न होती है ।

5. **व्यावसायिक एवं औद्योगिक शिक्षा की व्यवस्था** – समुदाय का प्रभाव बालक के व्यावसायिक विकास पर भी पड़ता है । बालक यह देखता रहता है कि समुदाय के लोग किन कार्यों में लगे हुए हैं । इससे बालकों में व्यवसाय के प्रति रुचि बढ़ती है । इसी कारण व समुदाय में रहते हुए रुचिकर व्यवसाय की समस्याओं एवं तकनीक को सीखने का प्रयास करता है।

6. **अन्य साधनों द्वारा प्रभाव** – समुदाय द्वारा समय–समय पर अनौपचारिक साधनों द्वारा; जैसे रेडिया, सिनेमा, पत्र– पत्रिकाओं एवं वाचनालय, अभिनय केन्द्रों, चित्रलेखों, नाटकशालाओ द्वारा बालक पर ऐसा प्रभाव डालने का प्रयास किया जाता है जिससे कि बालक का सर्वांगीण विकास हो सके ।

समुदाय के शैक्षिक कार्य

समुदाय निम्नलिखित क्षेत्रों से सम्बन्धित शिक्षा सम्बन्धी कार्य करता है ।

1. **विद्यालयों की स्थापना** – समुदाय द्वारा विभिन्न प्रकार के विद्यालयों का निर्माण किया जाता है। इसके पीछे समुदाय का उद्देश्य अपनी संस्कृति को सुरक्षित रखना, विकसित करना तथा उसे आने वाली पीढ़ियों के लिए हस्तान्तरित किया जाना प्रमुख है । इसके साथ–साथ समुदाय का प्रमुख कार्य बच्चों को समुदाय, राज्य एवं राष्ट्र के लिए प्रशिक्षित करना है।

2. **शिक्षा के उद्देश्य का निर्माण तथा शिखा पर नियंत्रण** – समुदाय ही शिक्षा के उद्देश्यों का निर्माण करता है जो कि बालकों के व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास करके राष्ट्र को अच्छे

नागरिक उपलब्ध कराता है– । अत: इन पवित्र उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए यह आवश्यक है कि समुदाय स्वयं द्वारा स्थापित स्कूलों एवं उनमें प्रदान की जाने वाली शिक्षा पर नियंत्रण भी रखे ।

3. **सार्वभौमिक शिक्षा की व्यवस्था** – समुदाय शिक्षा के विभिन्न स्तरों को निश्चित करता है । चूंकि सार्वभौमिक शिक्षा का सम्बन्ध किसी एक विशेष जाति या वर्ग से नहीं बल्कि समस्त देशवासियों से है यह जीवन के प्रत्येक बिन्दु को स्पर्श करती है और राष्ट्रीय आदर्श तथा चरित्र निर्माण में अन्य सभी प्रक्रियाओं से अधिक महत्वपूर्ण है । अत: समुदाय द्वारा सार्वभौमिक शिक्षा का व्यवस्था एक प्रमुख कार्य है ।

4. **पाठ्यक्रम निर्माण** – समुदाय का एक प्रमुख कार्य यह भी है कि वह आधारभूत, सुनियोजित, जनसामयिक पाठ्यक्रम तथा शिक्षा व्यवस्था व संगठन की रूपरेखा भी तैयार करे ।

5. **विद्यालयों के लिए धन की व्यवस्था** – समुदाय द्वारा शैक्षिक संस्थाओं एवं आयोजनों के लिए अनुदान एवं वित्तीय सहायता उपलब्ध करायी जाती है । शैक्षिक संस्थानों के भवन निर्माण फर्नीचर, शिक्षकों के वेतन आदि विभिन्न बातों के लिए अधिक से अधिक वितीय सहायता समुदाय द्वारा उपलब्ध करायी जाती है ।

6. **नागरिकों तथा विद्यालय नेताओं में सहयोग** – विद्यालयों की प्रगति के लिए तथा शिक्षा के विकास की दृष्टि से नागरिकों तथा विद्यालय के नेताओं में आपसी सहयोग सम्बन्ध होना चाहिए। दोनों के सन्तुलित व्यवहार से ही विद्यालय का विकास हो सकता है । इस प्रकार विद्यालय तथा समुदाय दोनों ही परस्पर पूरक हैं ।

इस प्रकार समुदाय तथा विद्यालय का आपस में घनिष्ठ सम्बन्ध है । समुदाय द्वारा संस्कृत शिक्षा को प्रोत्साहन देने हेतु भी अनेक संस्कृत सम्मेलन, संस्कृत गोष्ठियों का आयोजन, संस्कृत संभाषण शिविरों का आयोजन तथा कई संस्कृत संस्थाओं की भी स्थापना की गई है । राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान नई दिल्ली द्वारा संस्कृत संभाषण शिविर चलाये जा रहे हैं जिससे संस्कृत संभाषण को जन सामान्य के लिए सुगम बनाया जा सकता है । राजस्थान संस्कृत अकादमी, जयपुर तथा अनेक प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान केन्द्र एवं वेद विद्यालय भी संस्कृत शिक्षा के प्रचार व प्रसार में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं ।

12.2.5 पुस्तकालय

शिक्षा और पुस्तकालय में गहन सम्बन्ध है । पुस्तकालय एक ऐसा स्थान है जो विद्यार्थियों को प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से पढ़ने में सहयोग करता है । इसलिए यह कहना उचित होगा कि एक पुस्तकालय अध्ययन की एक प्रक्रिया है जो विद्यार्थियों को सहा तरीके से शिक्षित करने में सहायक सिद्ध होता है । इसलिए आजकल पुस्तकालय बौद्धिक प्रयोगशाला के रूप में दिखाई दे रहे हैं । एक पुस्तकालय सहायक क्रियाओं को प्रोत्साहित करता है तथा आत्म–अध्ययन का अच्छा साधन है ।

विद्यार्थियों के अनुभव सीमित होते हैं । बालक स्वभाव से जिज्ञासु होते हैं और अपनी उत्सुकता को शांत करने के लिए वे दूसरों के अनुभव जानना चाहते हैं । अत: उनके लिए पुस्तकालय से पुस्तकों का अध्ययन आवश्यक बन जाता है ।

संस्कृत शिक्षण के लिए पुस्तकालय की महत्ता

विद्यार्थियों के लिए विभिन्न विचारों को प्रस्तुत करने के लिए, लोगों की सूझबूझ के लिए, सही पृष्ठभूमि प्रदान करने के लिए, प्रक्रियाओं तथा स्थानों को समझने के लिए पुस्तकें बहुत आवश्यक हैं ।

1. **पुस्तकालय में बालकों के लिए प्रेरणात्मक और रहस्यात्मक साहित्य**, साहसिक कार्यों की कहानियाँ, सरल जीवन चरित्र ऐतिहासिक कथाएँ, पशुओं से सम्बन्धित कथाएँ बालकों को बहुत आनन्दित करती हैं । इससे बालकों की संस्कृत विषय के प्रति रुचि बढ़ती है । पंचतंत्र, हितोपदेश आदि की नीति सम्बन्धी कथाओं से बालकों को नैतिक शिक्षा प्राप्त होती है ।

2. **इकाई पुस्तिकाएँ** – कई प्रकार के विषय पर आधारित पुस्तकें जिनमें पारिवारिक जीवन और पड़ौस से लेकर, दूसरे स्थानों और देशों के लोगों के विषय में जानकारी हो, ऐसी पुस्तकें भी छात्रों के अध्ययन के लिए उपयोगी होती है ।

3. **संस्कृत वाड्मय से सम्बन्धित सभी ग्रथ** – जैसे संस्कृत शब्द कोश, व्याकरण शिक्षण के ग्रंथ, काव्यशास्त्र, वैदिक साहित्य, भारतीय दर्शन, महाकाव्य, नाटक, आधुनिक संस्कृत साहित्यकारों की रचनाएँ तथा नीवन प्रकाशित व अप्रकाशित पुस्तकों की सूची भी पुस्तकालय में प्राप्त कर विद्यार्थी सन्तुष्ट होते हैं ।

4. **सन्दर्भ सामग्री** – पुस्तकालय में छात्र सन्दर्भ सामग्री भी प्राप्त कर सकते हैं । सन्दर्भ सामग्रियों में औपचारिक तथा अनौपचारिक सन्दर्भ पुस्तकें आती हैं । औपचारिक सन्दर्भ पुस्तकों में शब्दकोष, विश्वकोष, वार्षिक किताबें, मानचित्र, चार्ट, पुस्तिकाएँ, विभिन्न कक्षाओं का पाठ्यक्रम तथा कुछ चित्रों का संग्रह; जैसे कि पशु, फूल, ऋतुएँ, महान पुरुष तथा घटनाओं के स्थान सम्मिलित होते हैं ।

अनौपचारिक सन्दर्भ सामग्री में अन्य विषयों की पुस्तकें; जैसे इतिहास, अर्थशास्त्र, भूगोल, हिन्दी आदि की पुस्तकें आती हैं ।

5. **कुछ अन्य पुस्तक साधन** – जैसे कुछ अच्छी आवधिक और पत्रिकाएँ, सम–सामयिक घटनाक्रम, सरकारी एजेन्सियों द्वारा प्रकाशित पत्रिकाएँ जो सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक जीवन की सूचनाओं का अच्छा साधन हैं । विद्यार्थियों को राष्ट्रीय व अन्तरराष्ट्रीय घटनाक्रम का ज्ञान भी संस्कृत पत्र–पत्रिकाओं में उपलब्ध हो जाता है ।

इस प्रकार पुस्तकालय में विद्यार्थियों कों अपनी रुचि व योग्यता के अनुकूल समस्त अध्ययन–सामग्री प्राप्त हो जाती है । इससे उनके चिन्तन में मौलिकाता का समावेश होता है तथा वे स्वयं भी अनुसंधान के लिए प्रेरित होते हैं ।

12.2.6 वातावरण

शिक्षण के साधन के रूप में वातावरण की भी महत्वपूर्ण भूमिका है । छात्रों के व्यक्तित्व के सर्वांगीण विकास को प्रभावित करने वाले कारक ही संयुक्त रूप से वातावरण का निर्माण करते हैं, अर्थात् बालक को प्राप्त जन्मजात स्वभाव, परिवार, विद्यालय तथा समाज आदि ही बालक के लिए वातावरण का निर्माण करते हैं, अत: विद्यार्थियों में संस्कृत के प्रति रुचि व अनुराग उत्पन्न करने हेतु उन्हें संस्कृतमय वातावरण प्रदान करना अत्यन्त आवश्यक है।

इसके लिए विद्यालय में छात्रों को संस्कृत विषय के सैद्धान्तिक ज्ञान के अतिरिक्त संस्कृत से सम्बन्धित पाठ्य–सहगामी गतिविधियों में भाग लेने हेतु प्रेरित करना चाहिए ।

निम्न गतिविधियों द्वारा छात्रों को संस्कृत विषय के प्रति उत्साही व आत्मविश्वास युक्त बनाया जा सकता है–

1. कक्षा में संस्कृतमय वातावरण बनाये रखने के लिए अध्यापक व छात्रों को संस्कृत में नित्य वार्तालाप करना चाहिए । इसके लिए दैनिक जीवन में प्रयुक्त सामान्य वार्तालाप करना उपयुक्त है।
2. विद्यार्थियों को प्रतिदिन 2 या 3 नीति सम्बन्धी श्लोक, सूक्तियाँ लय, गतिपूर्वक कण्ठस्थ कराया जाना चाहिए । तथा उनके अवसरानुकूल प्रयोग हेतु प्रेरित करना चाहिए।
3. कक्षा में, विद्यालय परिसर में संस्कृत श्लोकों, सूक्तियों को स्थान–स्थान पर बड़े अक्षरों में लिखवा देना चाहिए ।
4. अध्यापक को प्रतिदिन कक्षा में सरल संस्कृत में छोटी–छोटी कहानियाँ, प्रहेलिकाएँ सुनानी चाहिए तथा फिर उन्हें छात्रों से सुननी चाहिए ।
5. अध्यापक को छात्रों से अपने घर मे भी दैनिक जीवनोंपयोगी वस्तुओं तथा घर के सदस्यों से व्यावहारिक नित्य वार्तालाप संस्कृत में ही करने का कहना चाहिए ।
6. संस्कृत शिक्षण को प्रभावी बनाने हेतु प्रार्थना सभा, बाल सभा, विशेष जयन्तियाँ, उत्सव, राष्ट्रीय पर्वो, सांस्कृतिक प्रतियोगिताओं के समय वाद–विवाद, भाषण, काव्य पाठ, वाचन का आयोजन कराना चाहिए जिससे विद्यार्थियों में संस्कृत विषय के प्रति आत्मविश्वास उत्पन्न हो ।
7. संस्कृत प्रतियोगिताओं में सभी छात्रों को उपस्थित रहने का निर्देश दिया जाना चाहिए ।
8. प्रार्थना–सभा में प्रतिदिन 2 या 3 श्लोक प्रतिदिन नित्य प्रति एक छात्र से उच्चारण करवाया जाना चाहिए ।
9. वार्षिक उत्सव, महापुरुषों व संस्कृत साहित्यकारों की जयन्तियाँ, राष्ट्रीय दिवसों आदि पर संस्कृत कार्यक्रम अवश्यक रखे जाने चाहिए ।
10. संस्कृत के लघु एकांकी, नाटकों का अभिनय, वार्तालाप कार्यक्रम रखे जाने चाहिए।

इसी प्रकार संस्कृत के प्रति जन समुदाय को प्रभावित करने हेतु संस्कृत सम्भाषण शिविरों का आयोजन रखा जाना चाहिए । ये शिविर दस दिवसीय, मासिक, त्रैमासिक योजनानुसार रखे जाने चाहिए ।

धार्मिक उत्सवों पर विद्यार्थियों द्वारा संस्कृत के धार्मिक नाटकों का अभिनय आदि किया जाना चाहिए । इससे जन समुदाय को देव वाणी के प्रति श्रद्धा उत्पन्न होती है तथा वे संस्कृत सीखने को प्रेरित होते हैं

संस्कृत सम्मेलनों में संस्कृत के विद्वानों को आमंत्रित कर उनके द्वारा दिये गए सम्भाषण से भी विद्यार्थियों व जन समुदाय को बहुत प्रेरणा दी जा सकती है ।

इस प्रकार उपर्युक्त क्रियाकलापों के आयोजन द्वारा विद्यालय में व समाज में छात्रों को संस्कृतमय वातावरण दिया जा सकता है ।

संस्कृत शिक्षण में श्रव्य–दृश्य साधन

श्रव्य–दृश्य सहायक साधनों के प्रयोग से ज्ञानेन्द्रियों को आकर्षित करने में सहायता मिलती है । ये विद्यार्थियों में ज्ञान को स्थायी करने में महत्यपूर्ण भूमिका निभाते हैं । कुछ श्रव्य–दृश्य सहायक साधनों का संस्कृत–शिक्षण में महत्व इस प्रकार है–

12.3 श्रव्य–दृश्य संवाहक साधन

12.3.1 टेपरिकार्डर

1. अधिकतर छात्र अपने शाब्दिक उच्चारण की शुद्धता का ज्ञान नहीं रखते । इस उपकरण की सहायता से जब विद्यार्थी अपने शब्दोच्चारण को सुनते हैं, तो उसकी अशुद्धता को समझकर उसमें सुधार लाने का प्रयास करते हैं ।
2. इसकी सहायता से छात्रों में भाषण देने की कला का विकास करना आसान होता है ।
3. विद्यार्थी टेपरिकार्डर को एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जा सकते हैं और अपने अवकाश के क्षणो मे इस का सदुपयोग कर सकते हैं ।
4. छात्र टेपरिकार्डर के माध्यम से संस्कृत भाषा का शुद्धोचारण कर सकते हैं । संस्कृत में सम्बन्धित रोचक कथाओं का ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं । अध्यापक की अनुपस्थिति में संस्कृत से सम्बन्धित गढ़ ज्ञान को कैसेट में रिकार्ड कर टेपरिकार्डर के माध्यम से प्राप्त कर सकते हैं ।

12.3.2 रेडियो

संस्कृत भाषा के प्रचार–प्रसार हेतु रेडियों का अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान है । इसके माध्यम से संस्कृत ज्ञान वृद्धि के साथ–साथ रुचि भी विकसित होती है ।

रेडियो पर प्रात:काल संस्कृत में समाचार प्रसारित किये जाते हैं । इसी प्रकार आकाशवाणी के जयपुर, बीकानेर केन्द्र से 'संस्कृत सौरभ ' कार्यक्रम भी प्रसारित किया जाता है, जिसमें संस्कृत साहित्य से सम्बन्धित विभिन्न वार्ताएँ प्रसारित की जाती हैं । इस प्रकार आकाशवाणी श्रोताओं को अपनी ओर एकाग्र कर लेती है और उनकी कल्पना शक्ति का विकास करती है।

12.3.3 चलचित्र

संस्कृत में नाटकों तथा कथाओं पर चलचित्र छात्रों को दिखाये जा सकते हैं । चलचित्र का प्रयोग रसानुभूति वाले पाठों, सौन्दयर्सनुभूति के स्थलों, कक्षा–शिक्षण, नाटक–शिक्षण में किया जा सकता है जिससे छात्रों में निरीक्षण शक्ति का विकास हो ।

12.3.4 कम्प्यूटर

संस्कृत शिक्षक अपने शिक्षण को रोचक, प्रभावी व सुग्राह्य बनाने के लिए संगणक का प्रयोग कर सकते हैं । वैज्ञानिकों के मुनसार संस्कृत भाषा कम्प्यूटर के लिए सर्वाधिक सफल भाषा है क्योंकि इस्का_ व्याकरण नियमबद्ध, सूत्रबद्ध तथा क्रमयुक्त है । व्याकरण सीखने के लिए इसमें Helpfile डाल सकते हैं तथा इसमें ध्वनि–उत्पन्न करने की व्यवस्था है । अत: संगणक से वार्तालाप भी किया जा सकता है । इस प्रकार कम्प्यूटर के माध्यम से विद्यार्थी सरलता से संस्कृत सीख सकते

12.3.5 लिंग्वाफोन

लिग्वाफोन का उपयोग भाषा–शिक्षण के हेतु किया जाता है । विशेष रूप से शुद्ध उच्चारण हेतु इसका प्रयोग किया जाता है । विभिन्न भाषाओं के शब्दों के शुद्ध उच्चारण रिकार्ड कर आवश्यकतानुसार छात्रों को सुनाये जा सकते हैं ।

संस्कृत शिक्षण में आदर्श वाचन, शब्दों का शुद्ध उच्चारण, विद्वानों द्वारा दिये गये संस्कृत के व्याख्यान आदि इसके माध्यम से कई बार सुने और समझे जा सकते हैं ।

इस प्रकार लिंग्वाफोन से व्यक्तिगत शिक्षण तथा समूह शिक्षण दोनों ही किये जा सकते हैं ।

1. इसके द्वारा भाषा सीखने में विद्यार्थी हेडफोन लगाते हैं और अपने टेपरिकार्डर की बात सुनने के बाद शिक्षक के टेपरिकार्डर की बात सुनते हैं ।
2. इसके प्रयोग से छात्रों का ध्यान सदैव विषय पर केन्द्रित रहता है । इसके माध्यम से छात्र अपनी गति, आवश्यकता, योग्यता और रुचि के अनुसार भाषा सीख सकते हैं ।
3. यह लिखित और मौखिक दोनों भाषा का विकास करने में उपयोगी है ।

12.3.6 अध्यापक निर्देशिका

संस्कृत शिक्षण के लिए अध्यापक निर्देशिका का बड़ा महत्व है । इसमें अध्यापकों के लिए संस्कृत शिक्षण के उद्देश्यों का निर्धारण करने, उपयुक्त शिक्षण विधि का चयन करने, उपयुक्त शिक्षण प्रक्रिया को अपनाने, उपयोगी सहायक शिक्षण सामग्री के चयन एवं उपयोग तथा मूल्यांकन हेतु उचित प्रविधियों के प्रयोग करने संबंधी निर्देश होते हैं ।

12.3.7 शब्दकोश एवं विश्वकोश

शिक्षकों के लिए इन दोनों का भी बड़ा भारी महत्व होता है । शब्दों के अर्थ, प्रयोग, रचना, व्युत्पत्ति आदि के संबंध में जानकारी शब्दकोश से ही प्राप्त होती है । विश्वकोश से व्यक्तियों, स्थानों, रचनाकारों, ग्रन्थों आदि की जानकारी प्राप्त होती

12.4 सारांश (Summary)

इस प्रकार संस्कृत शिक्षण की प्रक्रिया को सरल, स्पष्ट, रोचक, सुबोध व प्रभावी बनाने हेतु शिक्षण के उपुयक्त साधन विद्यार्थियों पर प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष रूप से प्रभाव डालते हैं । इनके सुनियोजित प्रयोग से विद्यार्थियों में संस्कृत विषय के प्रति रुचि व प्रेम उत्पन्न होता है तथा वे संस्कृत के प्रति आत्मविश्वासी बनते हैं ।

12.5 स्व परख प्रश्नों के उत्तर (Answer to Self Check Questions)

1. हाँ 2. हाँ 3. हों 4. हाँ

12.6 मूल्यांकन प्रश्न (Unit End Questions)

1. संस्कृत शिक्षण का महत्व स्पष्ट कीजिए ।
2. संस्कृत शिक्षण में समुदाय तथा वातावरण की क्या भूमिका है?
3. भाषा प्रयोगशाला की कार्यविधि बताइये ।

4. संग्रहालय से विद्यार्थियों को क्या–क्या लाभ होते हैं?
5. संस्कृत कक्ष की साज–सज्जा किस प्रकार करनी चाहिए
6. संस्कृत शिक्षण में पुस्तकालय की क्या भूमिका है?
7. भाषा प्रयोगशाला के माध्यम से छात्रों को किस प्रकार मौखिक–पठन व लिखित रचना–कौशल सुगमतापूर्वक सिखाया जा सकता है?
8. संग्रहालय द्वारा छात्रों के समक्ष ऐतिहासिक, भौगोलिक, वैज्ञानिक तथा सांस्पूरतिक महत्व के वास्तविक उद्देश्यों की किस प्रकार प्राप्ति होती है?
9. विद्यार्थियों के लिए विभिन्न विचारों को प्रस्तुत करने तथा सही पृष्ठभूमि प्रदान करने में पुस्तकालय का क्या महत्व है?
10. संस्कृत शिक्षण को प्रभावी बनाने हेतु श्रव्य–दृश्य साधनों का महत्व स्पष्ट कीजिए।

12.7 संदर्भ ग्रन्ध सूची तथा सहायक पुस्तकें

1. कृष्ण चन्द्र गौड़ डॉ श्रीमती सुनीता गौड़ – संस्कृत शिक्षण
2. पाण्डेय प्रो. रामफूल – संस्कृत शिक्षण
3. द्विवेदी प्रो. वाचस्पति – संस्कृत शिक्षण विधि
4. चतुर्वेदी श्री सीताराम – संस्कृत शिक्षण पद्धति
5. चौबे विजय नारायण – संस्कृत शिक्षण विधि

इकाई – 13 (Unit–13)

नवाचार – संस्कृत में नवाचार एवं उनका भविष्य

(Innvation:In Teaching of Sanskrit and its Future)

इकाई की रूपरेखा

- उद्देश्य एवं लक्ष्य
- नवाचार का अर्थ
- संस्कृत शिक्षणों में नवाचार
- सूक्ष्म शिक्षणोंपागम
- हिल्दा तबा महोदय का शिक्षण प्रतिमान (आगमनोपागम)
- समस्या समा धानोपागम
- दलशिक्षण
- पर्यवेक्षक अध्ययन
- सङ्गणकाधारित शिक्षण प्रतिमान
- सम्प्रेषणाधारित शिक्षण
- अभिक्रमितानुदेशन उपागम
- संग्रन्थनोपागम
- निदानात्मक परीक्षण एवं उपचारात्मक शिक्षण
- संस्कृत शिक्षण में नवाचारों का भविष्य
- कतिपय सुझाव
- सारांश
- स्वपरख प्रश्न
- मूल्यांकन प्रश्न
- सन्दर्भ गन्थ सूची

13.0 इकाई के उद्देश्य (Objectives of Unit)

- इस इकाई की समाप्ति पर आप ' संस्कृत शिक्षण में नवाचार ' की विस्तृत जानकारी प्राप्त कर सकेंगे ।
- आप विभिन्न उपागमों व प्रतिमानों के आधार पर संस्कृत शिक्षण में प्रयुक्त किए जा सकने वाले नवाचारो वर्गीकरण कर सकेंगे ।
- आप विभिन्न नवाचारों हेतु पाठ योजना निर्माण की प्रक्रिया समझ सकेंगे ।
- उक्त पाठयोजनाओं के आधार पर शिक्षण किस प्रकार किया जाता है, यह समझ सकेंगे ।
- नवाचारों द्वारा संस्कृत शिक्षण को रुचिकर, सरस एवं सुग्राह्य बना सकेंगे ।
- आप कक्षा के स्तरानुसार तथा पाठ की प्रकृति के अनुसार नवाचार के प्रयोग के सम्बन्ध में निर्णय ले सकेंगे

– संस्कृत शिक्षण में नवाचारों के भविष्य के विषय में चिन्तन कर सकेंगे ।

13.1 नवाचार का अर्थ (Meaning of Innovation)

वैज्ञानिक विकास ने एक ओर मनुष्य की शक्ति को अनन्त गुना बढ़ा दिया है तो दूसरी ओर उनके हृदय पक्ष को अकिञ्चन बना दिया है । मनुष्य का ज्ञान इस तेजी के साथ बढ़ने लगा, कि ज्ञान प्राप्ति के प्रचलित तौर–तरीके व्यर्थ हो गए । इन सबके फलस्वरूप भविष्यशास्त्र का जन्म हुआ । एलविन टॉफलर की 'फ्युचरशॉक' तथा स्वीडन के भविष्य–शास्त्र विशेषज्ञ टार्स्टन ह्यूसन की पुस्तक 'एज्युकेशन इन द इयर 2000' ने शिक्षा चिन्तन को भविष्योन्मुखी बनाया ।

वर्तमान शिक्षा को चुनौती देने वाली इस युग की दो और पुस्तकें उल्लेखनीय हैं, प्रो आर॰एच. हचिन्स द्वारा लिखित कथ 'द लर्निंग सोसाइटी' तथा मोशिये फारे की अध्यक्षता में यूनेस्को द्वारा नियुक्त शिक्षा आयोग का प्रतिवेदन 'लर्निंग टू बी' शिक्षा जगत के सामने प्रस्तुत की गई हैं । 'लर्निंग टू बी' नामक प्रतिवेदन में 21 राष्ट्रों की प्रचलित शिक्षा प्रणालियों का सर्वेक्षण करने के बाद दो महत्त्वपूर्ण बिन्दुओं पर बहुत बल दिया गया है – प्रथम तो जीवन पर्यन्तशिक्षा तथा द्वितीय शिक्षा की भविष्योन्मुखता ।

प्रचलित शिक्षा प्रणाली वर्तमान तथा भविष्य के परिप्रेक्ष्य में निरर्थक हो गई है तथा जनसमुदाय के जीवन की पूर्णता इसके द्वारा सम्भव नहीं है । संस्थागत औपचारिक शिक्षा के प्रति एक विचित्र कुण्ठा व्यास हो गई तथा वैकल्पिक शिक्षा प्रणालियों की खोज की जाने लगी जिसमें अनौपचारिक शिक्षा का विकल्प मुख्य रूप से उभर कर सामने आया ।

'नवाचार' यह शब्द दो शब्दों 'नव +आचार' से मिलकर बना है जिसका अर्थ है नया आचरण, नव चिन्तन, नया दृष्टिकोण । नवाचार, शैक्षिक चिन्तन, नूतन विधियाँ ये शब्द अन्योन्याश्रित हैं । अनेक बार औद्योगिक तथा सामाजिक क्षेत्रों में होने वाले परिवर्तन नवीन विधियों को जन्म देते हैं और नवीन विधियाँ नवाचारों में प्रतिबिम्बित होती हैं और अन्ततोगत्वा चिन्तन भी उससे प्रभावित हुए बिना नहीं रहता । अत: 21वीं सदी में शिक्षा जगत में आए क्रान्तिकारी परिवर्तन के कारण ही कक्षा–कक्ष हाईटेक का रूप लेते जा रहे हैं, अत: ऐसे कक्षा–कक्ष में शिक्षण प्रणाली में परिवर्तन होना स्वाभाविक है । इस परिवर्तन की प्रक्रिया के फलस्वरूप शिक्षण क्षेत्र में नवाचारों का प्रवेश हुआ ।

13.2 संस्कृत शिक्षण में नवाचार (Innovations in Teaching of Sanskrit)

जिस समय विश्व के अन्य देशों में लोग सांकेतिक भाषा से काम चला रहे थे उस समय भारत में संस्कृत भाषा द्वारा ब्रह्मज्ञान का प्रसार किया जा रहा था । इसके प्रयोग का क्षेत्र अत्यधिक विशाल था । इसका स्पष्ट वर्णन पतञ्जलि के महाभाष्य में मिलता है । शनै: शनै: देशकाल एवं वातावरण के प्रभाव के कारण संस्कृतभाषा प्राकृत, अपभ्रंश एवं आधुनिक बोलियों; जैसे–खड़ी बोली का रूप धारण करती हुई भी अपने निज स्वरूप से विचलित नहीं हुई, किन्तु स्थिति यहाँ तक पहुँची कि इसे कतिपय लोगों द्वारा मृतभाषा के रूप में सम्बोधित किया जाने लगा । प्राचीन काल में कण्ठस्थीकरण पर बल था तथा सूत्र प्रणाली का प्रयोग किया जाता

था । संस्कृत अव्याकृत थी अर्थात् प्रकृति–प्रत्यय आदि के विभाग से रहित होने के कारण उसका उपदेश प्रतिपद पाठ विधि से किया जाता था अर्थात् एक–एक करके शब्द पढ़े जाते थे– गौ:, अश्व:, पुरुष:, हस्ती आदि, किन्तु इस विधि से शिक्षण में अधिक समय लगता था । इस कठिनाई के निवारण हेतु उसके प्रत्येक शब्द को विभक्त कर अध्ययन की सुगमता के लिए वैज्ञानिक विधि का निर्माण किया गया और उसमें प्रकृति–प्रत्यय आदि की कल्पना की गई । इसी प्रकार प्राचीन व्याकरण ग्रन्थों में हमें निगमन विधि का रूप भी दृष्टिगत होता है । शास्त्रार्थ, तर्क–वितर्क, प्रश्नोत्तर द्वारा भी शिक्षण को रोचक बनाया जाता था ।

धीरे– धीरे शिक्षा पद्धति में परिवर्तन आया । ब्रिटिश काल से अब तक संस्कृत शिक्षण के क्षेत्र में पाठ्यपुस्तक विधि, प्रत्यक्ष विधि, विश्लेषणात्मक विधि, व्याख्या विधि एवं व्याकरण विधि का प्रचलन रहा । हम कई वर्षो से पाठ योजना निर्माण हेतु हरबर्ट की पञ्चपदी का अनुकरण करते आ रहे हैं । मूल्यांकन विधि को भी शिक्षाशास्त्रियों द्वारा अपनाया गया है । संस्कृत शिक्षण की विभिन्न विधियों के आधार प्य संयुक्त विधि का प्रयोग करने को भी हमारा प्रयास रहा है, तथापि छात्रों तथा अभिभावकों की यह धारणा कि संस्कृत भाषा रटने से ही आती है तथा भावी अध्यापकों की यह समस्या ।के छात्र संस्कृत समझते ही नहीं, वे संस्कृत पढ़ना ही नहीं चाहते, इनके समाधान के लिए संस्कृत शिक्षण में नवाचारों का प्रयोग अपेक्षित है ।

डॉ. सम्पूर्णानन्द ('आज' 9 जून 1963) ने भी कहा था - "व्यक्तिगत रूप से मेरा यह मत है कि संस्कृत इस देश की राष्ट्रभाषा होनी चाहिए । यदि लोग अँग्रेजी जैसी विदेशी भाषा को सीख सकते हैं तो वे संस्कृत क्यों नहीं सीख सकते, जो हमारी प्राचीन भाषा है ।"

संस्कृत एक वैज्ञानिक भाषा है । वैज्ञानिकों ने यह सिद्ध कर दिया है कि विश्व, की विभिन्न भाषाओं में से एक संस्कृत भाषा कम्प्यूटर के लिए सर्वाधिक उपयुक्त भाषा है, अत: संस्कृत शिक्षण को रोचक बनाने के लिए निम्नलिखित नवाचारों का प्रयोग किया जा सकता है–

13.3 सूक्ष्म शिक्षणोंपागम (Micro–Teaching Approach)

सूक्ष्म शिक्षण शिक्षक प्रशिक्षण की एक सरल, सुग्राह्य एवं मितव्ययी विधि है क्योंकि यह कम समय में भावी शिक्षकों में शिक्षण कौशलों का उन्मेष करती है ।

एलन (1979) ने सूक्ष्म, शिक्षण को पारिभाषित करते हुए स्पष्ट शब्दों में लिखा है, ' सूक्ष्म–शिक्षण प्रशिक्षण से सम्बन्धित एक सम्प्रत्यय है जिसका प्रयोग सेवारत एवं सेवापूर्व स्थितियों में शिक्षकों के व्यावसायिक विकास के लिए किया जा सकता है । सूक्ष्म शिक्षण शिक्षकों को शिक्षण के अभ्यास के लिए एक ऐसी स्थिति प्रदान करता है जो कक्षा–कक्ष की सामान्य जटिलताओं को कम कर देती है और जिसमें शिक्षक बहुत बड़ी मात्रा में अपने शिक्षण व्यंवहार के लिए प्रतिपुष्टि प्राप्त करता है ।"

सूक्ष्म शिक्षण के गुण (Characteristics of Micro Teaching)

1. यह एक व्यक्तिगत शिक्षण प्रविधि है । इसमें वास्तविक शिक्षण होता है, तथा पाठ्यवस्तु सरल होती है ।
2. इसमें कक्षा का आकार बहुत सीमित होता है ।
3. इसमें कालांश का समय 5– 10 मिनट तक का होता है ।

4. इसका उद्देश्य विशिष्ट शिक्षण कौशलों का विकास करना है ।
5. इसमें अभ्यास क्रम की प्रक्रिया पर अधिक नियन्त्रण रखा जाता है ।
6. इसके द्वारा कक्षा शिक्षण की जटिलताओं को कम किया जाता है ।
7. एक ही समय में किसी एक विशेष कार्य एवं कौशल के प्रशिक्षण पर बल दिया जाता है।
8. इस शिक्षण से छात्र–अध्यापकों में आत्मविश्वास जागृत होता है ।
9. इस उपागम में छात्राध्यापक के शिक्षण का वस्तुनिष्ठ मूल्यांकन किया जाता है ।
10. इसमें निरीक्षक छात्राध्यापक को परामर्शदाता के रूप में परामर्श देता है ।
11. इस का उद्देश्य सेवारत अध्यापकों के तकनीकी कौशल में विकास कर शिक्षण विधियों के प्रति दृष्टिकोण में नीवनता लाना होता है ।
12. इसका उद्देश्य व्यावसायिक परिपक्वता का विकास करना होता है ।
13. कुशल अध्यापकों के शिक्षण को रिकॉर्ड पर आदर्श पाठ के रूप में छात्राध्यापकों के समक्ष प्रस्तुत किया जा सकता है।
14. रिकार्डिंग कर अपने शिक्षण का स्वत: मूल्यांकन कर सुधार लाया जा सकता है ।
15. यह अध्यापकों के लिए निरन्तर प्रशिक्षण का साधन है ।
16. इसमें शिक्षण के सैद्धान्तिक एवं व्यावहारिक पक्ष का सुन्दर समन्वय किया जाता है ।
17. यह छात्राध्यापक की कमियों के परिपेक्षण का नया स्वरूप है ।
18. छात्राध्याकों को कक्षा में जाने से पूर्व प्रशिक्षण मिल जाता है । उनको अपने मित्रों के बीच नि:संकोच होकर न केवल अभ्यास करने का अवसर मिलता है अपितु, सैद्धान्तिक ज्ञान, प्रतिपोषण आदि को बार–बार जाँचने का अवसर भी प्राप्त होता है । '
19. इसमें तत्काल प्रतिपुष्टि प्रदान कर शिक्षण को अधिक प्रभावी बनाया जाता है ।

संस्कृत एक संश्लेषणात्मक भाषा है। इसमें क्रिया, प्रत्यय आदि मूलधातु के साथ जुड़े रहते हैं । व्याकरण के बिना भाषा शिक्षण असम्भव है, अत : जब हम संस्कृत शिक्षण में कोई भी नई विधि अपनाते हैं तब व्याकरण की उपेक्षा नहीं कर सकते । इसी प्रकार यह संसार रचना का संसार है । रचना एक ऐसा व्यापक शब्द है, जिसमें कथा, उपन्यास, कविता, निबन्ध,

1. Allen.D and Ryank,'Micro–Teaching'Addission Wesley 1969

पत्र, संस्मरण, रिपोर्ताज, नाटक आदि सभी सम्मिलित हैं । लेखक भाषा के माध्यम से जो कुछ भी लिखे, जो भी विचार अभिव्यक्त करे, वह रचना कहलायेगी । इस दृष्टि से रचना का सम्बन्ध लेखक के अभिव्यञ्जना कौशल से है । यह अभिव्यञ्जना कौशल मौखिक एवं लिखित दोनों रूपों में हो सकता है । अत : भाषा शिक्षण की दृष्टि से रचना एवं व्याकरण का अटूट सम्बन्ध है । कार्यरत अध्यापकों एवं पूर्व अध्यापकों में रचना तथा व्याकरण शिक्षण सम्बन्धी विभिन्न शिक्षण कौशलों के विकास का एक सरल, सुग्राह्य तथा मित्तव्ययी साधन है– सूक्ष्म शिक्षण । सूक्ष्म शिक्षण में सम्पूर्ण शिक्षण प्रक्रिया को अनेक कौशलों में विभक्त किया जाता है। उदाहरणस्वरूप यहाँ श्यामपट्ट कौशल की सूक्ष्म शिक्षण हेतु एक पाठयोजना प्रस्तुत की जा रही है

विषय: – संस्कृत कक्षा– सप्तम

प्रकरणम् – संख्यावाचक विशेषणानि अवधि:– दशनिमेषा:

(छात्राध्यापक: क्रमश: वाक्यानि श्यामपट्टे विलिख्य छात्रान् प्रक्ष्यति स्पष्टीकरणाय च श्यामपट्टे सारमपि लेखिष्यति) –

1. दिनेश : अष्टम्यां कक्षामां पठति ।

(अ) दिनेश : कस्यां कक्षामां पठति?	अष्टम्याम्
(ब) अष्टम्याम् इत्यत्र का विभक्ति :?	सप्तमी
(स) कक्षायाम् इत्यत्र का विभक्ति :?	सप्तमी
(द) अनयो: किंलिङ्गम्?	स्त्रीलिङ्गम्
(य) अत्र सप्तम्या: विभक्ते: वचनं किम्?	एकवचनम्
(र) एतयो : विशेषणपद किमस्ति?	अष्टम्यां
(ल) विशेष्णपदं किमस्ति?	कक्षायां
(व) विशेष्य विशेषणयो: लिङ्ग – वचन– विभक्तीना दृष्टया भेदोऽ स्ति न वा?	नास्ति ।

2. तत्र त्रीणि पुस्तकानि सन्ति । शिक्षक : प्रतिबच्छात्रमुत्थाप्य अत्र
3. अष्टौ छात्र : धावन्ति । विशेषणपद किम् ?विशेष्यं किम्?
4. इमानि पुस्तकानि द्वाध्यां शिशुभ्यां ददातु ।किं लिङ्म्? किं वचनमू? विशेष्यस्य
5. वने एक: मृग: भ्रमति । का विभक्ति :? किं लिङ्म् किं वचनम्? द्वयो : किं साम्यमू? एतादृशान् प्रश्नान् पृच्छति । श्यामपट्टस्य विकास करोति ।

शिक्षक – श्यामपट्ट सारं दृष्टवा वदतु–विशेषण विशेष्ययो : प्रयोगे वैशिष्ट्यं किम्?

छात्र:– छात्रा: उत्तर प्रदातुं प्रयत्न करिष्यन्ति ।

शिक्षक :–श्यामपट्टे नियम लेखिष्यन्ति –

यल्लिङ्ग यद्वचनं या च विभक्तिर्विशेष्यस्य ।
तल्लिङ्गं:, तद्वचनंसैव भिक्तिर्विशेष्यस्यापि । ।

नियमीकरणम्:– या विभक्ति:, यद् लिङ्ग, यद वचनं या च क्रिया विशेष्यस्य 'भवति सैव विभक्ति: तदेव लिङ्गं, तदेव वचनं सैव च क्रिया विशेषणस्यैं भवति ।

अभ्यासकार्यम् – द्वितीयाया: कक्षाया:, अष्टौ छात्रा:, एका बालिका, एकस्मिन् वने, नवसु फलेषु, चतुर: वानर: । एतानि वाक्यानि प्रस्तुत्य शिक्षक: प्रश्नान् पृच्छति ।

उपर्युक्त प्रश्नों के उत्तरों की सारिणी बनाई जाती है । श्यामपट्ट लेखन कौशल के तत्त्वों के आधार पर पर्यवेक्षक द्वारा आवृत्तियाँ लगाई जाती हैं तथा श्यामपट्ट कार्य के विभिन्न कौशल तत्वों की आवृत्ति के आधार पर उनका गुणात्मक मूल्यांकन करने हेतु सर्वोत्कृष्ट, बहुत अच्छा, साधारण, असन्तोषजनक इस वर्गीकरण को प्रयोग में लाया जाता है । इसके परिणाम के अनुसार छात्राध्यापक को प्रतिपुष्टि दी जाती है । इस प्रकार संस्कृत शिक्षकों में कौशलों के विकास के लिए सूक्ष्म शिक्षण का प्रयोग अत्यन्त उपयोगी है ।

13.4 हिल्दातबा महोदय का शिक्षण प्रतिमान (आगमनोपागम)

इस शिक्षण प्रतिमान के प्रवर्त्तक हिल्दा तबा हैं । तबा ने विभिन्न प्रयोगों के आधार पर इसका विकास किया है । इसका विकास अध्यापक शिक्षा के लिए किया गया है, जिससे छात्राध्यापक अधिगम की समस्या का विश्लेषण कर उसका निदान तथा उपचार कर सकें । इस प्रतिमान में विशेषत: तथ्यों एवं सूचनाओं का संग्रह किया जाता है, अत : इसका प्रयोग विभिन्न विषयों की सूचनाओं को एकत्रित करने के लिए तथा संस्कृत शिक्षपा में व्याकरण पढ़ाते समय किया जा सकता है ।

इस प्रतिमान हेतु 'हिल्दा तबा ने तीन शिक्षण व्यूह बताए हैं–

1. सम्प्रत्यय का निर्माण करना (Concept Formation)
2. आँकड़ो की व्याख्या करना (Interpretation of Data)
3. सिद्धान्तों का प्रयोग करना (The Application of Principles)

उद्देश्य अथवा केन्द्र बिन्दु – इस शिक्षण प्रतिमान का मुख्य उद्देश्य मानसिक क्रियाओं का विकास करना तथा सिद्धान्तों का बोध करने की क्षमता का विकास करना है । इस प्रतिमान का मुख्य उद्देश्य चिन्तन का विकास करना है ।

संरचना – इस प्रतिमान में ऐसी परिस्थितियों उत्पन्न की जाती हैं जिनसे मानसिक प्रक्रियाओं का विकास हो सके । इस प्रतिमान की संरचना विशेषत: तीन कौशलों पर निर्भर करती है । (1) व्याख्या (2) पहचान (3) उपकल्पना

सामाजिक प्रणाली – इसमें शिक्षक व छात्रों का पारस्परिक सहयोग बना रहता है । शिक्षक शिक्षण की सभी क्रियाओं पर नियन्त्रण करता है, किन्तु कक्षा में सहयोग की भावना रहती है । इसमें छात्र सक्रिय रहते हैं तथा शिक्षक पथप्रदर्शक के रूप में कार्य करता है ।

संभरण व्यवस्था – इसकी सफलता हेतु पर्याप्त साहित्य तथा उपकरणों की आवश्यकता होती है। अध्यापक को इन उपकरणों का प्रयोग करने में दक्ष होना चाहिए ।

मूल्यांकन – मूल्यांकनार्थ प्रयोगात्मक परीक्षाएँ, निबन्धात्मक, लघूत्तरात्मक तथा वस्तुनिष्ठ प्रश्नों को पूछा जाता है ।

उपयोग – इसकी सहायता से छात्रों में सृजनात्मकता तथा उत्पादन चिन्तन की क्षमता का विकास किया जाता है अत: संस्कृत जैसे साहित्यिक विषयों के लिए भी यह उपयोगी सिद्ध होगा।

<u>हिल्दा तबा महोदय के शिक्षण प्रतिमान पर आधारित पाठ योजना</u>

विषय – संस्कृतम् (व्याकरणम्) दिनाङ्क :.....

प्रकरणम् – सम्प्रदानकारकम् कक्षा – अष्टमी

केन्द्र बिन्दु (पूर्वचिन्तनस्य कृते)

छात्राध्यापक : कक्षाया श्यामपट्टे एकं वाक्यं लिखिति -

<u>नृप: निर्धनेभ्य: वस्त्राणी ददाति</u>

प्र. क: निर्धनेभ्य: वस्त्राणि ददाति? उ. नृप :

प्र. नृप: निर्धनेभ्य: कानि ददाति? उ. वस्त्राणि

प्र. नृप: केभ्य : वस्त्राणि ददाति? उ. निर्धनेभ्य: :

प्र. निर्धनेभ्य : इत्यस्मिन् शब्दे का विभक्ति: उ. .....

संरचना - प्रस्तुतीकरणम्–

1. कृषक: तरुभ्यं : जलं ददातिं ।
2. शिष्य: गुरुभ्यां दक्षिणा ददाति ।
3. गीता धेनवे रोटिकां ददाति ।
4. शिक्षक: छात्रेभ्य: पुस्तकानि ददाति ।
5. भक्त: भानवे अर्ध्यं ददाति ।

सामाजिक प्रणाली – छात्राध्यापक: क्रमश: उपर्युक्तानि वाक्यानि प्रस्तुत्य छात्रान् प्रश्नान् पृच्छति। छात्रा: उत्तराणि ददति । शिक्षक : श्यामपट्टसारस्य विकास करोति कारयति च ।

संभरण व्यवस्था – छात्राध्यापक: सहायकोपकरणाना समुचित प्रयोग करोति; यथा–श्यामपट्ट :, सुधाखण्डा:, मार्जनी, संकेतयष्टि:, आकुञ्चन श्यामफलकम्, उदाहरणानामालेखपत्रम्। (Chart)

श्यामपट्टकार्यम

कर्त्ता	कर्म	सम्प्रदानकारकम्	वचनम्	क्रिया	विभक्ति:
कृषक:	जलं	तरुभ्य :	बहु वचनमू	ददाति	चतुर्थी
शिष्य:	दक्षिणां.	गुरुभ्यां	द्विवचनम्	ददाति	चतुर्थी
गीता	रोटिका:	धेनवे	एकवचनम्,	ददाति	चतुर्थी
शिक्षक:	पुस्तकानि	छात्रेभ्य:	बहु वचनम्	ददाति	चतुर्थी
भक्त:	अर्ध्यं	भानवे	एकवचनम्	ददाति	चतुर्थी

मूल्यांङ्कनम् – शिक्षक:– श्यामपट्टसारं दृष्ट्वा वदतु – चतुर्थी – विभक्त्या: प्रयोग: कस्मिन्नऽर्थे भवति?

नियम : – कर्मणा यमभिप्रैति स सम्प्रदानम् (पा. सू (1/4/32) दानस्य कर्मणा यमभिप्रैति स सम्प्रदानसंज्ञ : स्यात् ।

चतुर्थी सम्प्रदाने – सम्प्रदानकारके चतुर्थीविभक्तिर्भवति ।

उपयोग : – छात्राध्यापक अभ्यासस्य कृते छात्रान् प्रश्नान् पृच्छति –

क्रम सं		**वाक्यानी**	**कारकम्**	**स्पष्टीकरणम्**
1.	(अ)	अध्यक्ष: बालकेभ्य: पुरस्कारं ददाति ।.....		
	(ब)	भाता भगिन्यै धन ददाति ।.....		
2.	(1) चतुर्थी विभक्ति : कस्मिन्नर्थे प्रयुक्ता भवति?			
	(2) 'मात्रे' इत्यस्मिन् शब्दे विभक्ति: का?			
	(3) वारिभ्याम् इत्यस्मिन् शब्दे वचनं किम्?			

गृहकार्यम् –

1. सप्तवाक्येषु सम्प्रदानकारकस्य प्रयोग कुर्वन्तु ।
2. स्वपात्यपुस्तकात् सम्प्रदानकारकस्य कतिपयानि वाक्यानि चित्वा लिखन्तु ।

स्व–परख प्रश्न (Self Check Questions)

1. नवाचार का क्या अर्थ है?
2. सूक्ष्म शिक्षण की परिभाषा दीजिए ।
3. सूक्ष्म शिक्षण एवं हिल्दा तबा –शिक्षण प्रतिमान का उपयोग लिखिए ।
4. सूक्ष्म शिक्षण के कोई दो गुण लिखिए ।

13.5 समस्या समाधानोपागम (Problem Solving Approach)

समस्या समाधान एक जटिल व्यवहार है । इस व्यवहार में अनेक मनोवैज्ञानिक प्रक्रियायें सम्मिलित रहती हैं । छात्र के समक्ष ऐसी समस्यात्मक परिस्थितियाँ उत्पन्न की जाती हैं जिनमें वह स्वयं चिन्तन, तर्क तथा निरीक्षण के माध्यम से समस्या का हल ढूँढ सके । सुकरात ने भी आध्यात्मिक संवादों में इसका प्रयोग किया था । समस्या समाधान सार्थक ज्ञान को प्रदर्शित करता है । इसमें मौलिक चिन्तन निहित होता है । इसके लिए शिक्षण की व्यवस्था चिन्तन स्तर पर की जाती है ।

बासिंग ने समस्या समाधान प्रविधि के निम्नलिखित सोपान बताए हैं–

अ. कठिनाई या समस्या की अभिस्वीकृति

ब. कठिनाई की समस्या के रूप में व्याख्या

स. समस्या समाधान के लिए कार्य करना ।

समस्या समाधान में निम्नलिखित प्रक्रिया का अनुसरण किया जाता है–

तथ्यों का संग्रह करना – संगठन करना – विश्लेषण कराना – निष्कर्ष निकालना – निष्कर्षों को प्रयोग में लाना ।

संस्कृत शिक्षण में इसका प्रयोग छात्रों के समक्ष व्याकरण के सूत्रों का प्रस्तुतीकरण करके तथा समस्यापूर्ति हेतु कतिपय पंक्तियाँ अथवा एक पंक्ति देकर किया जा सकता है ।

समस्या समाधान उपागम पर आधारित पाठ योजना के सोपान – (द्विगु समास हेतु)

1. औपचारिक बिन्दव: – विष :, कक्षा, दिनांङ्क:, प्रकरणम् ।
2. समस्याया : प्रस्तुतीकरणम् – समास : पञ्चधा । तत्र समसनं –समास: ।

   अ केवल सशस :

   ब. अव्ययी भाव समास :

   स. तत्पुरुष समास → द्वितीया, तृतीया, चतुर्थी, पञ्चमी, षष्ठी, सप्तमी
   → कर्मधारय समास :
   → द्विगुसमास :

   द. बहु ब्रीहि समास :

   य. द्वन्द्व समास :

   इत्थं कक्षाया: स्तरानुसार शिक्षक: समासान भेदान् वदति छात्रान् अपि पृच्छति ।
3. **शिक्षणम्** – द्विगु समास: – 'संख्या पूर्वो द्विगु: ' ।

   उदाहरणानि – पंचगतम्, नवत्नम्, त्रिभुवनम् चतुर्युगन्, पञ्चपात्रम्

शिक्षक: पृच्छति – श्यामपट्टसारं दृष्टवा वदतु -द्विगुसमासः कस्मिन् रुपे भवति?

नियमीकरणम् – द्विगुरेकवचनम् स नपुंसकम्? किसी समाहार का द्योतक भी द्विगु होता है और वह सदा नपुंसकलिङ्ग, एक वचन में रहता है ।

पुन : कतिपयानि उदाहरणानि प्रस्तुत्य समास विग्रहं कारयति

अध्यापक : – त्रिलोकी, पञ्चमूली, पञ्चवटी

शिक्षक : पृच्छति – श्यामपट्टसारं दृष्टवा वदतु – एतेषूदाहरणेषु वैशिष्ट्यम किम्?

नियमीकरणम् – अकारान्तोत्तरपदो द्विगुः स्त्रियामिष्टः। पात्राद्यन्तस्य न। वट, लोक, भूत आदि अकारान्त शब्दों के साथ समाहार द्विगु में समस्त पद ईकारान्त स्त्रीलिङ्ग होता है, किन्तु पात्र, मुख, युग इन पदों में स्त्रिलिंग नहीं होता ।

मूल्यांङ्कन प्रश्ना :

प्रश्न – 1 निम्नलिखतानां समस्त पदाना समास विग्रह कुवैन्तु –

अ. सप्तखट्वम् ब. पञ्चकुमारि

प्रश्न –2. निम्नलिखिताना पदानां समास कुर्वन्तु –

अ. अष्टानां तक्ष्णां समाहार

ब. दशानां पूलानां समाहार :

स. अष्ठानाम् अध्यायानां समाहार :

प्रश्न –3. द्विगुसमास : कदा भवति?

13.6 प्रायोजना कार्य (Project Work)

प्रायोजना कार्य करने के लिए छात्रों के समक्ष कुछ समस्याएँ प्रस्तुत की जाती हैं और उनको इस बात की स्वतन्त्रता प्रदान की जाती है, कि वे समस्या का समाधान करने के लिए आकड़े तथा अन्य सम्बन्धित सामग्री एकत्रित करें । इसमें जो समस्या छात्रों को दी जाती है वह यथासम्भव जीवन की यथार्थता से सम्बन्धित होती है ।

प्रायोजना विधि का स्वरूप रूसो ने अपनी पुस्तक 'एमील' में, फ्रॉबेल ने अपनी पुस्तक 'एज्यूकेशन ऑफ मैन' में शिक्षा के लिए क्रियाओं को बल देकर किया है । इसी प्रकार विलियन कॉबेट ने 'एडवान्स टू यंग मैंन' नामक पुस्तक में अपने स्वयं के बच्चों के लिए ग्रामीण योजनाओं (Rural Projects) का वर्णन किया है । 1908 में शिक्षा के मैसेचुसेट्स स्टेट बोर्ड ने इस शब्द का प्रयोग फुलवारी एवं मुर्गी पालन जैसे गृहकार्य के लिए किया । सामान्य शिक्षा के क्षेत्र में इस विचारधारा का श्रेय अमरीका के कोलम्बिया विश्वविद्यालय के शिक्षा शास्त्र के प्रोफेसर जॉन डीवी को है, किन्तु पद्धति के रूप में सन् 1918 में डीवी के प्रयोजनवाद के सिद्धान्तों पर इसके निर्माण तथा विकास का श्रेय विलियम किल्पैट्रिक को जाता है ।

किलपैट्रिक के शब्दों में – 'आयोजना सामाजिक वातावरण में पूर्ण संलग्नता से किया जाने वाला उद्देश्यपूर्ण' कार्य है ।"

प्रायोजना के प्रकार – प्रायोजनाओं का वर्गीकरण हम निम्नलिखित रूप से कर सकते हैं–

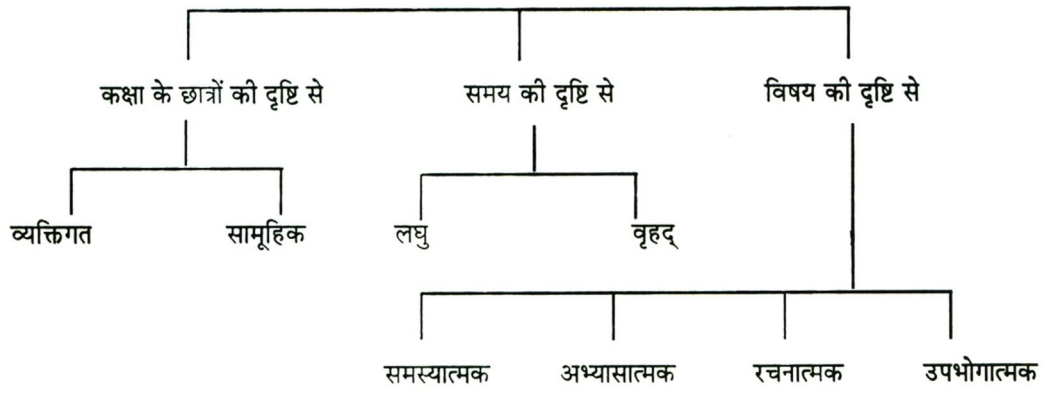

संस्कृत शिक्षक संस्कृत में विभिन्न प्रकार का प्रायोजना कार्य छात्रों को देकर उनकी रुचि इस विषय में बढ़ा सकते हैं।

प्रायोजना कार्य के सोपान – किसी भी प्रायोजना कार्य को सफल बनाने हेतु निम्नलिखित सोपानों का अनुसरण किया जाता है

1. परिस्थिति का निर्माण
2. प्रायोजना का चयन एवं उद्देश्य निर्धारण
3. प्रायोजना का कार्यक्रम बनाना
4. प्रायोजना का विवरण देना
5. प्रायोजना का मूल्यांङ्कन
6. प्रायोजना का विवरण

प्रायोजना कार्य पर आधारित पाठयोजना

विषय : संस्कृतम् कक्षा – एकादशी

प्रकरणम् – उपमा कालिदासस्य

उद्देश्यानि–
1. छात्रेषु संस्कृतकाव्य प्रत्यनुरागोत्पादनम् ।
2. छात्राणां काव्यगत सौन्दर्यानुभूत्यै अभिप्रेरणम् ।
3. महाकविकालिदासेन विरचितानां ग्रन्थानामध्ययनाय छात्राणाम् अभिप्रेरणाम्।
4. उपमालङ्कारस्य प्रयोगविषये ज्ञानप्रदानम् ।
5. छात्रेषु निरीक्षणशक्तेरुजागरणम् ।

आवश्यकोयकरणानि – पाठ्यपुस्तकम् कालिदासेन विरचिता: ग्रंथा: ।

परिस्थित्या निर्माणम् – उपमालङ्कारस्य परिभाषा का? अस्यालङ्कारस्य प्रयोग: कदा भवति? कथं भवति? अस्यालङ्कारस्य कतिपयानि उदाहरणानि ददतु ।

प्रायोजनाया चयनम् – शि. – उपमा कालिदासस्य इयमुक्ति : केन कारणेन प्रसिद्धा?

छा – छात्रा : उत्तर दातुं प्रयत्न करिष्यन्ति ।

कार्यस्थ विभाजनम् – शिक्षक: निर्देश: दास्यति यत् – पञ्च पञ्च छात्रा: सम्मील्य कालिदास विरचितात् पृथक्–पृथक कथात् उपमासम्बद्धानि उदाहरणानि चिन्वन्तु

कार्यस्य प्रतिवेदनम् – सर्वे छात्रा. प्रायोजनार्कार्यस्य प्रतिवेदनं सजीकृत्य कक्षायां प्रस्तोष्यन्ति ।

प्रायोजनाया: लाभ: – साहित्यस्य ज्ञानवर्धनाय, निरीक्षणशक्ते: विकासाय, अन्येषु विषयेषु नूतनचिन्तनजागरणाय च इयं प्रायोजना महत्त्वपूर्णा ।

इसी प्रकार संस्कृत शिक्षक कक्षा छ:, सात एवं आठ में छात्रों को छोटे –छोटे प्रायोजना कार्य दे सकते हैं; जैसे -

(1) अपनी पाठ्यपुस्तक में से यणसन्धि युक्त पदों को छाँटे । इसी प्रकार छात्रों के स्तरानुसार किसी और सन्धि से संबन्धित संकलन भी करवाया जा सकता है ।

(2) समास, प्रत्यय, उपसर्ग, कारक सम्बन्धी प्रायोजनाएँ ।

(3) लेखकों व कवि की विशेषताओं सेर सम्बन्धित प्रायोजनाएं ।

(4) भाषाचक्र, प्रहेलिका, समस्यापूर्त्ति, शब्दक्रीड़ा आदि से सम्बन्धित प्रायोजनाएँ ।

13.7 दलशिक्षण(Team Teaching)

दल शिक्षण शैक्षणिक संगठन का एक ऐसा रूप होता है जिसमें कक्षा में एक अध्यापक के स्थान पर विभिन्न विषयों के विशेषज्ञ अध्यापक एवं उनके सहायक होते हैं और ये सब मिलकर प्रभावी रूप से शिक्षण कार्य करते हैं । इसे कुछ विद्वानों ने समूह शिक्षण (Team Teaching) तथा सहकारिता शिक्षण (Co–operative Teaching) आदि नाम भी दिए हैं । लाफॉसी और रिचर ने दल शिक्षण को परिभाषित करते हुए कहा है – दल शिक्षण प्रणाली एक संगठनात्मक युक्ति है जिसके द्वारा कई व्यक्ति मिलकर सम्बन्धित अनुदेशनात्मक क्रियाओं के समान शैक्षिक उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए एकजुट होकर प्रयास करते हैं । इस प्रत्यय में यह विश्वास अन्तर्निहित है, कि उद्देश्यों की सर्वोत्तम प्राप्ति असम्बद्ध व्यक्तिगत प्रयासों की तुलना में सुसम्बद्ध – सम्मिलित प्रयासों द्वारा की जा सकती है ।' '

दल शिक्षण का सैद्धान्तिक आधार
(Theoretical Basis of Team Teaching)

दल शिक्षण के सैद्धान्तिक पक्ष के निम्नलिखित तीन प्रमुख घटक हैं –

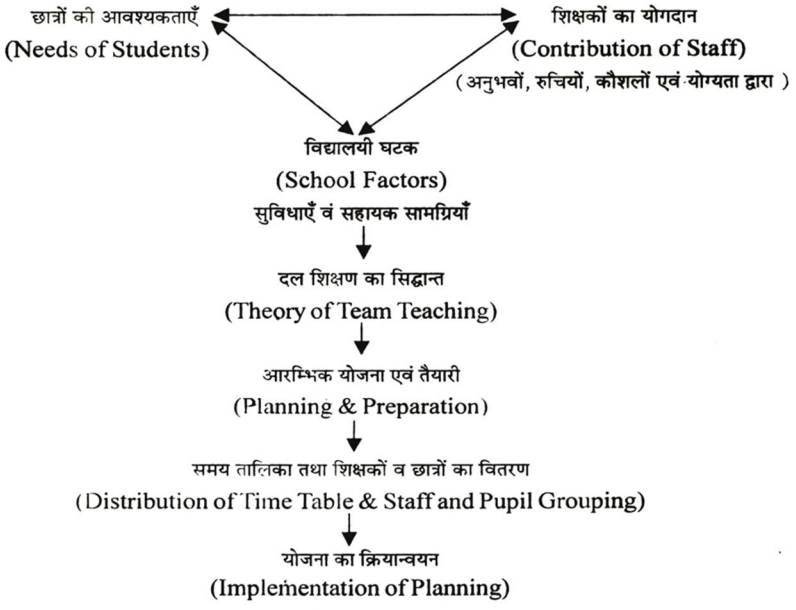

दल का गठन – दल शिक्षण करते समय एक साथ कितने सदस्यों को रखा जाए यह विद्यालय के स्तर, विद्यालय में उपलब्ध सुविधाओं तथा विषय पर निर्भर करता है ।

दल शिक्षण उपागम संस्कृत शिक्षण को रोचक बनाने के लिए भी उपयोगी है । एतदर्थ दल का गठन निम्नलिखित ढंग से किया जा सकता है

(1) एक ही विभाग के शिक्षकों का दल – जैसे एक विद्यालय में संस्कृत के तीन अध्यापक हैं । वे तीनों अध्यापक 'दलशिक्षण' हेतु एक साथ मिलजुलकर कार्य करेंगे । इनकेसाथ तकनीशियन अथवा लिपिक आदि भी आवश्यकतानुसार रहेंगे ।

(2) एक ही संस्था के विभिन्न विभागों के शिक्षकों का दल – जैसे संस्कृत शिक्षण हेतु संस्कृत, हिन्दी, अँग्रेजी भाषाओं के अध्यापकों का दल गठित कर संस्कृत शिक्षण करवाया जाए । इस दल का प्रयोग प्रशिक्षण संस्थाओं हेतु अधिक लाभदायक है।

(3) विभिन्न संस्थाओं के एक ही विभाग के शिक्षकों का दल – जब अपने विद्यालय में एक विषय का एक ही अध्यापक हो तब दूसरे विद्यालयों से उस विषय विशेष के अध्यापकों को आमन्त्रित कर दल का गठन किया जाए तथा छात्रों को 'दल शिक्षण' के माध्यम से प्रभावशाली शिक्षकों से पढ़ने का अवसर प्रदान किया जाए ।

दल शिक्षण हेतु पाठ नियोजन

यदि हमें संस्कृत में छात्रों को 'धूर्तः श्रृगालः काकश्च' यह कथा पढ़ानी है तब उपर्युक्त वर्णित दल शिक्षण की कार्यविधि से तीनों सोपानों का अनुसरण करना ही होगा तथा कथा की पाठ योजना के अनुसार पाठ योजना बनानी होगी किन्तु दलानुसार उचित कार्य विभाजन करना ही इसका महत्वपूर्ण पक्ष है ।

बिन्दुओं का निर्धारण – (1) कथा पढ़ने के लिए प्रेरित करना प्रस्तावना प्रश्नों द्वारा (2) मुख्य कथा का प्रस्तुतीकरण श्रवण कौशल उत्पन्न करने के लिए (3) कथा को समझाना चित्रों द्वारा (4) कठिन व नीवन शब्दों का अर्थ बताना (5) शुद्धोच्चारण करवाना (6) समान भाव की कथा को दूसरी भाषा में सुनाना ध्वनि अभिलेख द्वारा (7) मूल्यांकन हेतु कतिपय प्रश्न पूछना ।

दल सदस्यों का निर्धारण

1. **संस्कृत भाषा विशेषज्ञ** – सरल संस्कृत भाषा में कथा के प्रस्तुतीकरण हेतु, प्रश्न पूछने हेतु तथा सम्पूर्ण कालांश में समन्वयक की भूमिका निभाने हेतु ।
2. **संस्कृत भाषा विशेषज्ञ** – प्रस्तावनात्मक रूप में कोई समान भाव की कथा व घटना स्वयं सनाने हेतु तथा बीच– बीच में बोध प्रश्नों को पूछने व श्यामपट्ट का प्रयोग करने के लिए ।
3. **चित्रकला विशेषज्ञ** – कठिन शब्दों का अर्थ समझाने के लिए चित्र बनाने हेतु; जैसे– भल्लूकः, सिंहः, व्याघ्रः आदि ।
4. **तकनीशियन** – ध्वनि अभिलेख (Tape Recorder) में रिकॉर्ड कथा को सुनाने तथा छात्रों द्वारा अशुद्धोच्चरित शब्दों का अभिलेख करने हेतु कैसेट लगाने व सुनाने की व्यवस्था करने हेतु । कथा के वीडियो कैसेट्स को दूरदर्शन सैट पर दिखाने की व्यवस्था

हेतु यदि चित्र पूर्व में तैयार करवाए गए हैं, तब कक्षा में उनके प्रदर्शन की समुचित व्यवस्था हेतु ।

5. **हिन्दी भाषा विशेषज्ञ** – संस्कृत में पढ़ाई गई कथा के समान भाव की अन्य कथा तथा उस ही कथा को हिन्दी में सुनाने हेतु ।
6. **कार्यालय सहायक** – टंकण करने हेतु, छात्रों द्वारा अशुद्धोच्चरित शब्दों का अभिलेख रखने हेतु । छात्रों की महत्वपूर्ण प्रतिक्रियाओं के टंकणार्थ ।

उपर्युक्त गठित दल के द्वारा कक्षा में जाने से पूर्व सभा की जानी चाहिए तथा दल के प्रत्येक सदस्य को स्वयं द्वारा कक्षा में की जाने वाली क्रियाओं को स्पष्ट रूप से समझ लेना चाहिए तथा प्रत्येक विशेषज्ञ को समय की सीमा तथा छात्रों के स्तर का ध्यान रखते हुए कुछ महत्त्वपूर्ण बिन्दुओं का निर्धारण कर लेना चाहिए ताकि अनावश्यक आवृत्ति से बचा जा सके ।

स्व–परख प्रश्न (Self Check Questions)

1. समस्या समाधान उपागम के सोपानों का उल्लेख कीजिए ।
2. दल शिक्षण का क्या अर्थ है ।
3. दल शिक्षण कब उपयोगी होता है?

13.8 पर्यवेक्षक अध्ययन (Supervised Study)

पर्यवेक्षण अध्ययन शिक्षण की एक ऐसी पद्धति है जिसमें परम्परागत शिक्षण के दोषों को दूर करने का प्रयासकिया जाता है । इसमें शिक्षक अध्यापन करने के स्थान पर पथप्रदर्शक की भूमिका निभाता है । कुछ विद्वान इसे निर्देशित अध्ययन विधि भी कहते हैं । संस्कृत शिक्षण करते समय पर्यवेक्षण अध्ययन उपागम का प्रयोग रचना, लेखन तथा उपचारात्मक शिक्षण हेतु किया जा सकता है । यहाँ व्याकरण शिक्षण हेतु इस उपागम का एक प्रारूप प्रस्तुत किया जा रहा है–

विषय :– संस्कृतम् कक्षा –अष्टमी

प्रकरणम् – प्रत्यय: (क्त्वा, ल्यप्)

अध्ययन कार्यस्य निर्धारणम् – श्यामपट्टे उपसर्गयुक्तान् शब्दान् विलिरव्य मूल धातो: उपसर्गस्य च विश्लेषण शिक्षक: छात्राणां साहय्येन कारयिष्यति । अन्नतरं च प्रत्ययस्य विषये जिज्ञासोत्पादनाय तानेव शब्दान् कक्षायां विचारयिष्यति यथा – आगत्य, विहाय, आश्रित्य, अनुसूत्य, अवतीर्य, कृत्वा, भूत्वा, ज्ञात्वा, स्नात्वा, इत्यादय: अनन्तरं प्रस्तावनाप्रश्नान् प्रक्ष्यति; यथा–

प्रश्न 1. प्रत्ययस्य परिभाषा का?

प्रश्न 2 प्रत्ययस्य कतिपयानि नामानि लिखन्तु

प्रश्न 3. एषु प्रत्ययेषु 'क्त्वा', 'ल्यप् इति प्रत्ययी कस्मिन् अर्थे प्रयुक्तौ भक्त:?

अध्ययनायनिर्देश: – प्रत्ययस्य विषये अध्ययनाय का कथयिष्यति । संस्कृत भाषायां यानि व्याकरण पुस्तकानि सन्ति तेष्वपि उदाहरणानि द्रष्टुं प्रेरयिष्यति । पुस्तकालये ईदृशा: के–के ग्रन्धा: सन्ति तेषां परिचय प्रदास्यति ।

शिक्षकेन पर्यवेक्षणम् – शिक्षक: पाठ्यपुस्तकात् क्त्वा, ल्यप् इति प्रत्यययुक्तान् शब्दान् अन्वेहुं छात्रेध्य: सहायक: भविष्यति । तेषां शङ्कनां समाधान मार्गनिर्देशन च करिष्यति ।

अभ्यासकार्यम् – कोष्ठकेषु स्थितानि पदानी सावधानेन पठित्वा तेषां सहाथ्येन रिक्तस्थानानां पूर्ति कुर्वन्तु –

उदाहरणम् – (पठ+त्वा+पठित्वा) सः पठित्वा विद्यालय गच्छति ।

1. (दृश + त्वा) दीन: भोजन ..... प्रसीदति ।
2. (गम् + त्वा) सा गृह ..... भोजनं करोति ।

उदाहरणम् – आ न दा न् (ल्यप्) य = आदाय

सीताम् **आदाय** राम: वनम्आगच्छत्।

1. (उत् + स्था + ल्यप्) स : ..... अवदत्।
2. (सम +पठ् + ल्यप्) बालका: शास्त्रं ..... पण्डिताः भवन्ति ।

पुनरावृत्तिप्रश्ना :

प्रश्न 1 क्त्वा, ल्यप् इति प्रत्ययो: प्रयोगो कुत्र भवतः?

क उपसर्गरहितधातुभि: सह ..... प्रत्यय: योज्यते ।

ख उपसर्गसहितधातुभि सह ....प्रत्यय: योज्यते ।

प्रश्न 2. 'क्त्वा' इति प्रत्यय: कस्मिन् अर्थे प्रयुक्त: भवति?

प्रश्न 3. निम्नलिखितै: धातुभिs सह क्ला प्रत्यय योज्यन्तु ।

पा, धा, भू, कृ.....

13.9 सङ्गणकाधारित शिक्षण प्रतिमान

भाषा प्रयोगशाला में संगणक एक नवीन उपलब्धि है । यह हमारे जीवन का अभिन्न अंग बनता जा रहा है । यह यन्त्र मशीनी अनुवाद, कृत्रिम वाक् संश्लेषण, पाठ विश्लेषण, कोश निर्माण विज्ञान आदि अनेक क्षेत्रों में सार्थक रूप से उपयोग में आ रहा है । भाषा शिक्षण में इसकी महती भूमिका है । नई भाषा सीखने के उत्सुक छात्र इसकी सहायता से प्रभावी रूप में कम समय में इसके माध्यम से भाषा सीख सकते हैं, क्योंक इसके द्वारा छात्रों को भाषा दक्षता सम्बन्धी सूचना की विस्तृत जानकारी प्राप्त हो जाती है । इन प्राप्त सूचनाओं के आधार पर छात्र विशेष की आवश्यकतानुसार पाठ निर्देश और पाठ अभ्यास मिल सकते हैं ।

भाषा शिक्षण के लिए संगणक में निम्नलिखित योग्यताओं का होना आवश्यक है–

1. **समृद्ध संगणक स्मृति कोश** – एक भाषिक पाठ के लिए स्मृतिकोश की आवश्यकता होती है । प्रतिप्राप्ति के कई स्तर, त्रुटिविश्लेषण में अच्छे ढंग से समर्थ और व्याकरणिक विवरण के एक अच्छे विधान के साथ बीस वाक्यों वाले अभ्यास के लिए हमें 30 लाख सूचना अंश ' बिट्स ऑफ इन्फोर्मेशन ' चाहिए । कम्प्यूटर की तकनीकी शब्दावली में इसके लिए 375 किलो बाइट की अपेक्षा रहइाई है ।

2. **गति की तीव्रता** – संगणक साधित भाषा पाठ के लिए यह आवश्यक है, कि छात्रों के प्रत्युत्तर की स्वीकृति, उचित प्रति–प्राप्ति, नए प्रश्नों के चुनाव आदि में कम्प्यूटर कई क्षण न लगाए ।
3. **संगणक भाषा की सक्षमता** – 'संगणक भाषा' वह भाषा है जिसके माध्यम से प्रोग्रामर मशीन से बात करता है । इस भाषा को इतना सक्षम होना चाहिए कि वह छात्रों के प्रत्युत्तर का 'भाविक विश्लेषण' कर सके, जैसे मूलधातु या शब्द से उपसर्ग व प्रत्यय अलग कर सके, सही शब्द क्रम की पहचान कर सके, कोशीय त्रुटियों को वर्त्तनी की अशुद्धियों से अलग कर सके । यह सब गुण संस्कृत भाषा में विद्यमान हैं ।
4. **सहज कुंजीपटल** – टंकणयन्त्र की भाँति इसके कुंजीपटल में अक्षरों और मात्राओं की एक सही वैज्ञानिक और प्रभावी व्यवस्था होनी चाहिए और अंको में 0 से 9 तक की सुविधा उपलब्ध होनी चाहिए ।
5. **दिग्दर्शक फलक की सुविधा.** बाह्य उपकरणों को सक्रिय करने की कम्प्यूटर में ऐसी सुविधा होनी चाहिए जिससे स्लाइड का चुनाव हो सके । टेपरिकॉर्डरं और वीडियो टेप का संचालन सम्भव हो सके ।

इस शिक्षण प्रतिमान का प्रतिपादन सन् 1965 में लारेन्स स्टालसे तथा डेनियल डेविस ने किया । इस प्रतिमान में कम्प्यूटर शिक्षक का स्थान ग्रहण कर लेता है और फिर वही निर्णय निश्चित करता है तथा शिक्षण प्रदान करता है । इस प्रतिमान को सबसे जटिल प्रतिमान माना जाता है । इसमें सम्पूर्ण शिक्षण प्रक्रिया को दो स्तरों में विभाजित किया जाता है– (1) पूर्व शिक्षण काल, (2) शिक्षण काल ।

प्रथम बिन्दु के अन्तर्गत विशिष्ट छात्र के लिए विशिष्ट कार्यक्रम का निर्माण किया जाता है तथा दूसरे बिन्दु के अन्तर्गत निश्चित कार्यक्रम क्रियान्वित किए जाते हैं । इस प्रतिमान में मुख्यत. तीन तत्व निहित होते हैं– (1) विद्यार्थी का पूर्व व्यवहार (2) अनुदेशन के उद्देश्यों का निर्धारण (3) शिक्षण पक्ष ।

यह प्रतिमान निदानात्मक परीक्षण एवं उपचारात्मक शिक्षण का ही क्रियात्मक रूप है, जो संगणक द्वारा किया जाता है । विभिन्न शोधकार्यों से यह सिद्ध हो गया है कि संस्कृत भाषा कम्प्यूटर के लिए सर्वाधिक उपयुक्त भाषा है, अत: संस्कृत शिक्षण हेतु इस प्रतिमान का प्रयोग किया जाना चाहिए, क्योंकि इसमें शिक्षण तथा निदान की क्रियाएँ एक साथ चलती हैं । इस कारण कम्प्यूटर द्वारा ही शिक्षक छात्रों का निदान कर सकते हैं । उन्हें अलग से निदानात्मक परीक्षण पत्र की आवश्यकता नहीं है । कम्प्यूटर में संग्रह करने की अद्वितीय क्षमता होती है, अत: एक स्तर के अनेक छात्रों की सामान्य त्रुटियों का संग्रह शिक्षण के साथ स्वत: ही कम्यूटर में होता रहता है । उन संकलित त्रुटियों के आधार पर शिक्षक कम्प्यूटर पर उपचारात्मक प्रोग्राम पस्तुत कर सकता है और उपचारात्मक अनुदेशन प्रदान करता हुआ छात्रों की शंकाओं का समाधान कर सकता है ।

13.10 सम्प्रेषणाधारित शिक्षण

सम्प्रेषण आधारित शिक्षण द्वारा छात्रों में सम्भाषण कौशल की योग्यता उत्पन्न की जा सकती है। इस शिक्षण के लिए सम्प्रेषण विधि उपयुक्त है । सम्प्रेषण विधि विभिन्न सामाजिक परिस्थितियों में उपयुक्त भाषा के प्रयोग हेतु आवश्यक नियमों के शिक्षण की विधि है । भाषा के छात्रों में सम्प्रेषण शक्ति का विकास करना ही इस विधि का प्रमुख लक्ष्य है । सम्प्रेणशक्ति के विकास में संस्कृत सम्भाषण का प्रमुख महत्व है । भाषा के चार कौशलों में भाषण कौशल प्रधान है । श्रवण, पठन, लेखन कौशल से युक्त होने पर भी कोई व्यक्ति भाषण कौशल में भी उतना ही सक्षम हो यह आवश्यक नहीं है, किन्तु जो भाषण कौशल में प्रवीण होता है उसमें उपर्युक्त तीनों कौशल का होना स्वाभाविक ही है । सम्प्रेषण आधारित शिक्षण की सफलता के लिए प्रयोग प्रविधियाँ –

1. **संस्कृत सम्भाषण शिविरो का आयोजन** – प्रारम्भिक स्तर पर भाषा भाषण के माध्यम से ही पढ़ाई जानी चाहिए । विद्यालयों में संस्कृत वातावरण बनाए रखने के लिए संस्कृत सम्भाषण आवश्यक है । वर्तमान समय में भारत में संस्कृत शिक्षण में अनुवादपद्धति की प्रधानता दिखाई देती है । दूसरी कक्षा से बारहवीं कक्षा तक तीन करोड छात्र संस्कृत अनुवाद विधि तथा दूसरी भाषा के माध्यम से पढ़ते हैं । वस्तुत: सभी भाषाएँ उस ही भाषा माध्यम से पढ़ाई जानी चाहिए तथा परीक्षा भी उस ही भाषा में होनी चाहिए । संस्कृत भाषा के प्रति रुचि एवं स्नेह उत्पन्न करने के लिए संस्कृत सम्भाषण शिविरों का विशेष स्थान है जिनके द्वारा छात्रों की संस्कृत सम्बन्धी कठिनाईयाँ दूर होती हैं, तथा अभिव्यक्ति सशक्त होती है । ।भाषा संवादोन्मुखी होती है । यह भाषा विज्ञान का प्रमुख सिद्धान्त है । संस्कृत के सुनने से भाषण कौशल का तथा भाषण से श्रवण कौशल का विकास होता है । अत: विषय शिक्षण से पहले भाषा शिक्षण होना चाहिए । सम्भाषण शिविरों में भाषण कला प्रशिक्षण, सर्जनात्मक रचना प्रशिक्षण, स्मरणशक्ति प्रशिक्षण पठन, कौशल प्रशिक्षण भी दिया जाना चाहिए। इन क्रियाओं द्वारा छात्रों में सम्प्रेषण कौशल का विकास होगा ।

2. **भाषा से सम्बन्ध** – प्रतियोगिताओं का आयोजन – इन प्रतियोगिताओं के आयोजन से छात्रों में सम्प्रेषण कौशल का विकास होता है । सम्प्रेषण के लिए अपेक्षित शब्द विकास में लाभदायक होते हैं; जैसे खाली स्थान की पूर्ति, भाषण, कथा कथन, समस्यापूर्ति, प्रश्नोत्तरी इत्यादि ।

3. **अभिनय प्रशिक्षण का आयोजन** – इसमें छात्रों के जोड़े तथा समूह विभिन्न पात्रों के रूप धारण करके विभिन्न भाषाओं के प्रयोग सीखते हैं । कक्षा में शिक्षक, छात्र, छात्र–छात्र, शिक्षक–छात्रों–छात्र–छत्रों के बीच विभिन्न पात्रों की भूमिका निभाते हुए सम्भाषण करते हैं । इससे प्रशिक्षणार्थियों की अभिव्यक्ति सशक्त होती है ।

4. **सम्प्रेषण क्रियाओं का आयोजन** – चर्चा, परिचर्चा वाद–विवाद, लघु नाटक आदि गतिविधियों के माध्यम से विभिन्न संदर्भो के अनुकूल संवादों का, उच्चारण शैली का और वार्तालाप का अभ्यास छात्रों को करवाया जाना चाहिए । चित्रों की समानता एवं विषमता का वर्णन करना भी छात्रों की अभिव्यक्ति को सशक्त बनाता है ।

5. **मौखिक अभ्यास** – लिङ्ग कथन, व्युत्पत्तिकथन, समास कथन, समकालिक अँग्रेजी पद, संस्कृत रूप कथन प्रतियोगिताओं के माध्यम से तथा विभिन्न पदों, वाक्यों और गीतों के मौखिक अभ्यास से भी सम्प्रेषण शक्ति का विकास होता

6. **सङ्गणक का प्रयोग** – संस्कृत– भारती द्वारा संस्कृत शिक्षण के लिए 'भाषिका' नामक दो सीडी तैयार की गई हैं । इन सान्द्रमुद्रिकाओ (सीडीज़) के सात विभाग हैं जिनमें से 'सम्भाषण पाठ' इस नाम का एक उपविभाग है । इसमें प्रतिदिन प्रयोग में आने वाले 24 सम्भाषण हैं, जिसमें दुकान, कार्यालय, घर, मन्दिर आदि स्थानों पर किए जाने वाले वार्तालाप को सचित्र दिखाया गया है । प्रत्येक सम्भाषण के विषय में विवरण, अभ्यास (श्रवण एवं पठन) शब्दार्थ आदि सहायक सामग्री भी हैं ।

इस ही क्रम में राष्ट्रिय–संस्कृत–संस्थानम् नई दिल्ली द्वारा चलाए जा रहे अनौपचारिक शिक्षण केन्द्रों में प्रथम, द्वितीय, तृतीय दीक्षा की पुस्तकें तथा संस्थान द्वारा बनाई गई सम्भाषण सान्द्रमुद्रिकाएँ भी सम्भाषण कौशल के विकास में सहायक हैं ।

13.11 अभिक्रमितानुदेशन उपागम (Programmed Instruction)

शिक्षण प्रक्रिया में शिक्षक तथा छात्र के मध्य अन्त:क्रिया अपना महत्वपूर्ण स्थान रखती है । समुचित रूप से अन्त:क्रिया न होने पर शिक्षक अपने उद्देश्यों को प्राप्त करने में विफल रहता है । समुचित अन्त:क्रिया हेतु यह आवश्यक है कि शिक्षक अपने छात्रों पर भलीभर्गत ध्यान दे, किन्तु आज निरन्तर बढ़ती हुई जनसंख्या तथा ज्ञान के विविध क्षेत्रों में तीव्र गति से हुए विकास के कारण प्रत्येक छात्र पर शिक्षक ध्यान देने में स्वयं को असमर्थ अनुभव कर रहा है । ऐसी परिस्थिति में शिक्षण की नीवनतम विधियों की खोज की ओर शिक्षा शास्त्रियों का ध्यान आकर्षित हुआ है ।

'अभिक्रमित अधिगम' अथवा 'अभिक्रमित अनुदेशन' इस सम्प्रत्यय के आविर्भाव का श्रेय बीसवीं सदी के दूसरे दशक में अमेरिकन मनोवैज्ञानिकों को दिया जाता है । सर्वप्रथम 'शिक्षण मशीन' का विकास ओहियो स्टेट विश्वविद्यालय के मनोवैज्ञानिक सिडनी, एल प्रेसे ने 1920 में किया । इस मशीन की सहायता से छात्रों के समक्ष प्रश्न एक क्रम में प्रस्तुत किए जाते थे तथा छात्रों की प्रतिक्रिया की जाँच की जाती थी किन्तु उस समय इस मशीन पर अधिक सफलत नहीं मिली । 1932 में इसका काम लगभग बन्द हो गया ।. आधुनिक समय में इसका प्रयोग कम्प्यूटर पर सफलतापूर्वक किया जा रहा है । आर.एविल के अनुसार – 'अभिक्रमित अनुदेशन केवल स्वाध्याय हेतु निर्मित पाठ्यवस्तु ही नहीं है, अपितु यह एक शिक्षण प्रविधि भी है ।"

अभिक्रमिताधिगम की विशेषताएँ–

1. यह स्वशिक्षण की पद्धति है जिसके द्वारा छात्र स्वयं पड़ता हुआ आत्ममूल्यांकन कर सकता है।
2. इस आधार पर पाठ्यपुस्तक में पाठों की विशेष संरचना की जाती है ।
3. यह पत्राचार द्वारा तथा व्यक्तिगत रूप से पढ़ने वाले छात्रों के लिए अत्यन्त उपयोगी होती है ।

4. इसमें जटिल बिन्दुओं को छोटे–छोटे भागों में बाँटकर छात्रों के लिए सुग्राह्य बनाया जाता है ।
5. इसमें 'सरल से कठिन की ओर' के सिद्धान्त का अनुसरण किया जाता है ।

अभिक्रभिताधिगम के प्रकार

अभिक्रमिताधिगम हेतु विभिन्न प्रकार के अभिक्रम बनाए जाते हैं; जैसे–

1. रेखीय अभिक्रम
2. शाखीय अभिक्रम
3. मैथेटिक्स अभिक्रम
4. स्वनिर्देशित अभिक्रम
5. संगणक (कम्प्यूटर) आधारित अभिक्रम

रेखीय अभिक्रम – इस अभिक्रम को श्रृंखला अभिक्रम अथवा बाह्य अनुदेशन भी कहते हैं । इसमें विषयवस्तु को छोटे–छोटे पदों में विभक्त कर दिया जाता है । इन पदों में तीन तत्त्व निहित होते हैं – 1. उद्दीपन 2 अनुक्रिया 3. पुनर्बलन ।

संस्कृत साहित्य की विभिन्न विधाओं में से यह अभिक्रम 'व्याकरण शिक्षण' हेतु सर्वाधिक उपयुक्त है । रेखीय अभिक्रम का प्रारूप यहाँ प्रस्तुत है–

रेखीयाभिक्रमस्य प्रारूपम् –

विषय :– संस्कृतम् (व्याकरणम्) कक्षा–षष्ठी

प्रकरणम् – स्वरसन्धि: (दीर्घ:)

निर्देशा:

1. प्रकरणेन सम्बद्धां सूचना सम्यक् पठित्वा उत्तराणि ददतु ।
2. पदानि अवधानपूर्वक पठन्तु ।
3. प्रश्नस्योपक्रमे दत्तान् निर्देशान् अवधानेन पठन्तु ।
4. स्वोत्तराणां मूल्याङ्कनं प्रदत्तेनोत्तरेण स्वत: कुर्वन्तु ।
5. त्रुटिनिवारणाय पदानि पुन: ध्यानेन पठन्तु ।
6. सम्यक् विचिन्त्य उत्तराणि ददतु ।
7. सर्वेषां पदानामुन्तरं ददतु ।

प्रस्तावनाभिक्रमौ (Introductory Frames)

1. प्रथमाभिक्रम (First Frame)

मानव की वाणी के उस छोटे से छोटे अंश को ध्वनि कहते हैं जिसके टुकड़े न किये जा सकें । ध्वनि के उस छोटे से लिखित अंश को वर्ण अथवा अक्षर कहते हैं । 'वर्ण' भाषा की सबसे सूक्ष्म इकाई है इसे ध्वनि भी कहते हैं । यही ध्वनि ईश्वर की तरह सर्वत्र व्यास मानी जाती है, अत : ये वर्ण भी सर्वत्र विद्यमान रहते हैं । अक्षर कभी नष्ट नहीं होता ।

(1) भाषाया: लघुतम: एकक: (Unit) कोऽस्ति? उत्तरम्

वर्ण:	व्यञ्जनम	भाषा	स्वर:	वर्ण:

(2) वर्णस्य स्वरूप कीदृशम्?

नित्य:	अनित्य:	नित्यानित्य:	अन्यथा	नित्य:

2. द्वितीयाभिक्रम: (Second Frame)

संस्कृत में मूलरूप में वर्णों के दो प्रमुख भेद होते हैं– स्वर तथा व्यञ्जन । स्वर मे अ, आ, इ, ई आदि आते हैं, जबकिव्यञ्जन में क ख, ग, घ आदि आते हैं । स्वर का उच्चारण बिना किसी व्यञ्जन की सहायता से किया जाता है तथा व्यञ्जन का उच्चारण स्वरों की सहायता से होता है। दो वर्णो के मेल से जो विकार उत्पन्न होता है उसे सन्धि कहते हैं । जब यह विकास दो स्वरवर्णों के परस्पर मिलने पर उत्पन्न होता है, तब उसे स्वर सन्धि कहते हैं ।

1. वर्णस्य भेदा: भवन्ति।उत्तरम

द्वौ	चत्वारि	षड्	त्रीणि	द्वौ

2. एतेषु स्वरौ: स्त।:

ग,घ	य,र	प,फ	अ,आ	अ, आ

3. क,ख, ग एते वर्णा: सन्ति।

स्तरा:	विसर्गा:	व्यञ्जनानि	सन्धियक्तपदानी	व्यञ्जनानि

4. द्वयो: वर्णयो: मेलणेन भवति।

सन्धि:	समास:	विसर्ग:	स्वर:	सन्धि:

5. स्वर सन्धि: भवति ।

स्वरव्यञ्जनयों: मेलनेन	स्वरयों: मेलनेन	व्यञ्जनयों: मेलनेन	व्यञ्जस्वरणे: मेलनेन	स्वरयों: मेलनेन

6. स्वर सन्धि: अस्ति।

कृष्+न	नि:+सार:	परम+आनंद:	सत्+जन:	परम+आनंद:

शिक्षणाभिक्रम: (Teaching Frames)

3. तृतीयभिक्रम:(Third Frame)

स्वर सन्धि के आठ भेद हैं– दीर्घ, गुण, यण् वृद्धि, अयादि, पूर्वरूप तथा प्रकृति भाव आदि।

1. स्वर सन्धे : भेद सन्ति । उत्तरम्

चत्वार:	अष्टौ	द्वौ	षट्	अष्टौ

2. स्वरसन्धि : भेद : नास्ति ।

दीर्घसन्धि:	गुणसन्धि:	यणसन्धि:	व्यञ्जन सन्धि:	व्यञ्जन सन्धि:

3. स्वरसन्धि : नास्ति ।

रामस्+शेते	देव+आलय:	प्रति+एक:	महा+उत्सव:	रामस्+शेते

अभ्यासकार्यम्

प्र.1 निम्नलिखित पदेषु स्वरसन्धियुक्तानि पदानि कानि सन्ति?

नदी + ईश:, कवि + इन्द्र:, सत् + चरित्र:, दिक्+ गज:,

सदा+एवं, पर+ उपकार:, वन+औषधि :, क: + चित्

उ.1 ....

. ...

चतुर्थाभिक्रम: (Fourth Frame)

4. दीर्घ सन्धि: – 'अक: सवर्णे दीर्घ:'

अ, इ, उ, ऋ इत्येतै हस्वदीर्घवर्णे: सह स्वर्णस्वर मेलनेन दीर्घसन्धि: भवति यथा–

(अ) अ + अ = आ (ब) इ + इ = ई (स) उ + उ = ऊ (द) ऋ+ ऋ=ॠ

अ + अ = आ इ + इ = ई उ + उ = ऊ ऋ+ ऋ=ॠ

अ + अ = आ इ + इ = ई उ + उ = ऊ ऋ+ ऋ=ॠ

अ + अ = आ इ + इ = ई उ + उ = ऊ ऋ+ ऋ=ॠ

1. मेघालय: इत्यस्य शब्दस्य सन्धिविच्छेदोअस्ति ।उत्तरम्

मेघ + आलय:	मेघा+लय:	मेघ+लय:	मेघा+आलय:	मेघ + आलय:

2. अनयो: द्वयो: स्वरयो: मेलनेन दीर्घसन्धि न भवति ।

आ+अ	ए+ऐ	ऊ+ऊ	अ+इ	अ+इ

3. अनयो: पदयो: मेलनेन दीर्घसन्धि: न भवति ।

हिम+आलय:	रमा+ईश:	श्री+ईश:	वधू+उत्सव:	रमा+ईश:

अभ्याससकार्यम्

1. सन्धिविच्छेद कुर्वन्तु

सुधीन्द्र:	पितृणम्	गिरीन्द्र:,	लघूर्णि
.....	.....	.....	.....
सुधी+ इन्द्र,	पितृ + ऋणम्,	गिरि + इन्द्र:	लघु + ऊर्मि :

परीक्षणाभिक्रम: (Testing Frames)

1. वर्णस्य कतिभेदा: सन्ति?

पञ्च	द्वौ	अष्टौ	त्रय:

2. स्वरयो: मेलनेन भवति ।

स्वर सन्धि:	व्यञ्जन सन्धि:	विसर्ग सन्धि:	समास:

3. देवालय : शब्देडस्मिन सन्धि: क:?

गुण:	दीर्घ:	यण्	वृद्धि:

4. अ + आ इत्यनयो : स्वरयो : मेलनेन किं भवति?

ए	ओ	औ	आ

2. **शखिय अभिक्रम** – इस अभिक्रम में छात्र को एक फ्रेम पढ़ने को दिया जाता है तत्पश्चात् प्रश्न पूछा जाता है जिसका उत्तर छात्र दिए गए विकल्पों में से चुनकर देता है । छात्र यदि गलत उत्तर चुनता है तब उसका निदानात्मक शिक्षण करने के लिए अन्य फ्रेम पढ़वाए जाते हैं । सही उत्तर के चयन अभिक्रम परम्परागत ट्यूटोरियल पद्धति पर आधारित है, जिसमें अन्त:क्रिया सम्बन्धों पर विशेष ध्यान दिया जाता है । संस्कृत शिक्षण हेतु इस अभिक्रम का प्रारूप यहाँ प्रस्तुत है–

शाखीयाभिक्रमस्य प्रारूपम् –

विषय :– संस्कृतम व्याकरणम्

प्रकरणम – स्वरसन्धि: दीर्घ: कक्षा–सप्तमी

उद्देश्यम् – परीक्षणम्

निर्देशा: भवद्भि: स्वरसन्धे: कतिपयाना भेदाना विषये पठितम् । भवन्त: जानन्ति एव यत् सन्धि: कदा भवति? तस्य भेदा: के? दीर्घसन्धे: नियमा के? गुणसन्धे: वैशिष्टय किम्? यण् सन्धि: कदाभवति? अस्मिन् अभिक्रमे बहु विकल्पात्मक प्रश्ना: सन्ति ।

भवन्त : समुचितमुत्तरमन्विष्य स्वोत्तरस्य परीक्षण निम्नलिखितामीश्रित्य कुर्वन्तु यथा–

प्रथमाभिक्रम : (First Frame)

प्र .1 गिरि+ ईश ' इत्यनयो: शब्दयो: क: सन्धि:?

		वर्ग:
क	गिरि ईश:	प्रथम
ख	गिरिश:	द्वितीय:
ग	गिरिश:	तृतीय्:
घ	गिरिश:	चतुर्थ:

प्रथम: वर्ग:

भवतामुत्तरम यद्यरित गिरिईश : । उत्तरेऽस्मिन् पुन : विचारणीयम् – अत्र द्वौ शब्दौ स्त: 'गिरि' ईश: च । गिरि इत्यस्यान्ते एक: स्वर: वतेने ईश: 'इत्यस्याग्रे: अन्य: स्वर: । उभौ मिलित्वा किं रूपं भविष्यति? चिन्तयतु । पुन : उत्तरमन्वेषयतु ।

द्वितीय: वर्ग :

यदि भवतामुत्तरम् अस्ति 'गिरिश:' । उत्तरेऽस्मिन् पुन: विचारयन्तु– अत्र द्वौ शब्दौ स्त: । गिरि + ईश: । 'गिरि' इत्यस्यान्ते 'इ' स्वर: तथा च ईश: इत्यस्याग्रे 'ई' स्वर: । द्वौ स्वरौ मिलित्वा किं रूपं, भविष्यति? चिन्तयन्तु । उत्तरदातुं प्रयत्नशीला: भवन्तु ।

तृतीय: वर्ग:

अत्रापि यदि भवतामुत्तरमस्ति 'गीरीश:' । अत्र भवतां प्रमारा: शोभन:, किन्तु अत्र 'गिरि' ईश: + इति द्वौ शब्द्वौस्त:। तत्र 'गिरि' शब्दे 'गि ' इति हरत : वर्तते, किन्तु भवद्भि : ' गी' इति दीर्घ : कृत ' । इदमनुचितम् अत्र पुन : विचारयन्तु, को दोष :?

चतुर्थ: वर्ग:

यदि भवतामुत्तरम् अस्ति गिरीश: । तर्हि सुष्ठतमोऽयम्–प्रयास:। यतोहि 'गिरि' ईश: इत्यनयो: मध्ये 'इ+ई' इति मिलित्वा 'ई' भवति ।

स्पष्टीकरणम् – अत्र प्रथमे उत्तरे सन्धे: अभाव: अस्ति, द्वितीये च गिरिश: इत्यत्र रकारे इकार: दीर्घ: स्यात् तृतीये तु 'गी' इत्यत्र 'गि' इति भवेत् । यद्यपि सन्धि तु उचितमेवस्ति । चतुर्थे च शोभानगुत्तमस्ति । अत्र दीर्घ सन्धे: नियमानुसार इ + ई इति मिलित्वा अपि दीर्घ: एवं ईकार: भवति । एवम् इ + ई, ई + इ, ई + ई अत्रापि ईकार एवं ।

13.12 संग्रन्थनोपागम (Structural Approach)

आज भाषावेत्ता भाषा शिक्षण करते समय वर्णों एवं शब्दों के स्थान पर वाक्यों को अधिक महत्य देते हैं । भाषा वैज्ञानिकों ने इसे सर्वसम्मति से स्वीकार किया है कि शब्दों का यथार्थ अर्थ वाक्य में ही उपलब्ध होता है । अत: संस्कृत शिक्षण के नवीनतम उपागमों का अन्वेषण करते हुए शिक्षाशास्त्रियों ने इसे स्वीकार किया है कि वाक्यों को आधार बनाका संस्कृत का ज्ञान सरलतम ढंग से प्रदान किया जा सकता है ।

संग्रन्धन उपागम की विशेषताएँ –

1. इसमें भाषा शिक्षण की मनोवैज्ञानिक शैली को अपनाया जाता है ।
2. बालक सक्रिय रहते हैं उन्हें व्याकरण के नियम सरलता से समझ आ जाते हैं ।
3. इससे बालक की मौखिक अभिव्यक्ति सशक्त होती है ।
4. इससे व्याकरण के नियम का व्यावहारिक ज्ञान छात्रों को हो जाता है ।
5. संकथन उपागम में थॉर्नडाइक के सीखने के नियमों में से अभ्यास के नियम को विशेषत: प्रयोग में लाया जाता है । छात्रों का उच्चारण शुद्ध होता है ।
6. उनके शब्द भण्डार में वृद्धि होती है ।

संग्रन्थनों के निर्माण की प्रक्रिया – किसी भी वाक्य खण्ड में पदों के रूप तथा क्रम को संग्रन्थन कहते हैं इसमें तीन तत्त्व निहित होते हैं–

1. पदों का क्रम
2. उपसर्ग, निपात आदि अव्ययों का प्रयोग
3. विभक्तियों के रूप

यहाँ संग्रन्थन उपागम के आधार पर एक पाठ योजना प्रस्तुत है–

पाठ योजना

विषय :– संस्कृतम् कक्षा–षष्ठी

प्रकरणम् – संवाद : (परिचय:)

सामान्योद्देश्यानि

1. संस्कृतभाषा प्रति छात्राणा प्रोत्साहनम् ।
2. छात्रेषु श्रवण – वाचन – भाषण – लेखन कौशलानामू उत्पादनम् ।

नोट– अन्य अभिक्रमों की जानकारी हेतु संस्कृत शिक्षण,डॉ.सन्तोष मित्तल पढ़े।

3. छात्रेभ्य: वाकयरचना शैल्या: परिचयप्रदानम् ।
4. छात्राणां शब्दकोशे अभिवर्धनम् ।
5. व्याकरणनियमानी परिचय: ।

विशिष्टोद्देश्यम् – वार्तालापे सरल संस्कृत – प्रयोगस्य अभिप्रेरणम् ।

सहायकोपकरणानि – श्यामपट्ट:, सुधाखण्डा:, मार्जनी, सङ्केतयष्टि :, आकुञ्चनश्यामफलकम् उदाहरणानामालेखपत्रम् (Chart)

पूर्वज्ञानम् – छात्रा : कतिपयान् संस्कृतशब्दान् जानन्ति ।

प्रस्तावना – छात्राध्यापक: आलेखपत्रे चित्रं प्रस्तुत्य छात्रान् प्रक्ष्यति –

शि. अयं क :?
छा. अयं गणेश : ।
शि. स. कुत्र निवसति?
छा. स : नेहरुनगरे निवसति ।
शि. स : कुत्र गच्छति ।
छा. स : विद्यालय गच्छति ।
शि. तस्य पितु: नाम किम्?
छा. तस्य पितु: नाम सुरेश: अस्ति ।
शि. तस्य विद्यालयस्य नाम क्रिम?
छा. तस्य विद्यालयस्य नाम 'नवोदय–विद्यालय:' अस्ति ।

उद्देश्यकथनम् – अद्य वयं संवाद: परिचय;' इत्यस्व पाठस्याधारेण सरल संस्कृत भाषाया वार्तालाप करिष्याम: तथा च संस्कृतस्य सामान्य नियमाना विषये ज्ञानं प्राक्याम: ।

प्रस्तुतीकरणम्	**प्रश्नोत्तरप्रणालया प्रश्ना:**	**पाठप्रवर्धनम्**
प्रथमसंग्रन्धनम्	1. अयं क :?	अयं गज : ।
	2. अयं क :?	अयं वृक्ष : ।
	3. अयं क :?	अयं शिक्षक : ।
	4. अयं क :?	अयं विडाल : ।

स्पष्टीकरणम्–

1. एतेषु वाक्येषु गजः, वृक्ष: शिक्षक:, विडालादय: शब्दा: प्रथमाविभक्तौ, पुंल्लिङ्गे च वर्तन्ते ।
2. प्रथमे संग्रन्थने 'इदम्' इत्यस्व सर्वनामशब्दस्य पुंल्लिङ्गे एक वच्चने प्रथमाविभक्तौ प्रयोगोऽस्ति तस्य रूपं वर्तते 'अयं', हिन्दी भाषायामस्पार्थोऽस्ति – 'यह' ।

द्वितीयसंग्रन्थनम् –

प्रश्ना :	उत्तराणि
1. अयं कुत्र गच्छति?	अयं गह गच्छति ।
2. अयं कुत्र गच्छति?	अयं चिकित्सालय गच्छति ।

3. अयं कुत्र गच्छति? अयं कार्यालय गच्छति ।

स्पष्टीकरणम् –

1. एतेषु वाक्येषु 'गच्छति' इयं क्रिया वर्तते । 'गच्छति' इत्यस्मिन् पदे 'गम्' धातो: लट्लकारस्य, प्रथमपुराषस्य, एकवचनस्य च प्रयोगोऽस्ति ।
2. गृह, चिकित्सालयं, कार्यालयम् इत्यादय शब्दा: कर्मकारके सन्ति । कर्मकारके द्वितीयाविभक्त्या: प्रयोगो भवति अस्य चिन्हम अस्ति 'को' ।

अभ्यासकार्यम् – 1 संवाद : (परिचय:) पाठेऽस्मिन् ये शब्दा: प्रथमाविभक्तौ पुंल्लिङ्गो च सन्ति तान् लिखन्तु ।

.....

.....

गृहकार्यम् – 'इदम्' शब्दस्य पुंल्लिङ्गे सर्वासु विभक्तिषु रूपाणि लिखन्तु ।

इस प्रकार विभिन्न कारकों, लकारों, सर्वनाम शब्दों, प्रश्नवाचक शब्दों, वाच्य परिवर्तन आदि से सम्बन्धित बिन्दुओं को पढ़ाने में संग्रन्थन उपागम विशेषत: उपयोगी होता है ।

13.13 निदानात्मक परीक्षण एवं उपचारात्मक शिक्षण (Diagnostic Test and Remedial Teaching)

"सामान्य स्थिति में आए विकार को पहचानने की प्रक्रिया को निदान कहते हैं 1 शिक्षा की प्रक्रिया में जो विकार आ गए हैं उन्हें पहचानने के लिए या भाषा की अशुद्धियाँ कभी स्पष्ट होती हैं, कभी अस्पष्ट । इन स्पष्ट या अस्पष्ट कारणों का पता लगाने के लिए निदानात्मक परीक्षण कार्य करते हैं । इन त्रुटियों एवं विकारों के इस निदान के पश्चात् ही उपचार (अर्थात विकारों को दूर करने का कार्य) सम्भव है । अत: हम कह सकते हैं, कि निदानात्मक परीक्षण का उद्देश्य विशेष में किसी विद्यार्थी की कमजोरियों एवं क्षमताओं को ज्ञात करना है । एक अच्छा निदानात्मक परीक्षण इसी उद्देश्य को ध्यान में रखकर बनाया व नियोजित किया जाता है ।" विन्टर

निदानात्मक परीक्षणपत्र का निर्माण – संस्कृत भाषा के विविध पक्षों पर निदानात्मक परीक्षण तैयार कर शिक्षक अपने शिक्षण को प्रभावी एवं सोद्देश्य बना सकता है । माध्यमिक स्तर के छात्रों की लिखित अभिव्यक्ति में सामान्यत: वर्त्तनी सम्बन्धी होने वाली त्रुटियों को ज्ञात करने के लिए निदानात्मक परीक्षण पत्र निर्माण की प्रक्रिया यहाँ प्रस्तुत है–

1. त्रुटियों का संकलन करना । (कक्षा कार्य, गृहकार्य और परीक्षाओं के आधार पर)
2. त्रुटियों का वर्गीकरण करना । (त्रुटियों की प्रकृति के आधार पर)
3. त्रुटियों का कारण (शिक्षक एवं छात्रों की दृष्टि से, व्यवस्था की दृष्टि से)

नील पत्र निर्माण – त्रुटियों के सकलनोपरान्त तथा उनके सम्भावित कारणों का सिंहावलोकन करने के बाद निदानात्मक परीक्षण पत्रों के नील पत्रों का निर्माण किया जाता है । नील पत्र निर्माण के बाद निदानात्मक परी क्षण पत्र तैयार किया जाता है । निदानात्मक परीक्षण पत्र को

प्रमापीकृत करने के लिए उसकी वैधता, विश्वसनीयता तथा मानक ज्ञात किया जाना आवश्यक है । यहाँ नील पत्र के आधार पर निर्मित निदानात्मक परीक्षण पत्र का प्रारूप प्रस्तुत है–

निदानात्मक परीक्षण पत्रम्

नाम..... लिङ्गम्..... अवस्था.....

कक्षा..... विभाग :..... दिनाङ्क :.....

विद्यालयस्य नाम..... स्थानम्.....

विवरणम्

प्रश्न संख्या.....

परीक्षकस्य हस्ताक्षरम्

द्रष्टव्यम् – अस्य प्रश्नपत्रस्यारम्भापूर्व निम्नङ्कितान निर्देशान् ध्यानपूर्वक पठत ।

निर्देशा :.....

प्रश्न : 1. प्रति वाक्ययुग्मयो: एक वाक्य शुद्धमस्ति । शुद्धवाक्य चिलाङ्कित (√) करु.....

प्रश्न : 2. कोष्ठके निर्दिष्टशब्देषु एकमादाय रिक्तस्थानि पूरयत.....

प्रश्न : 3. निम्नलिखितयुगलेषु शुद्धरूपं (√) इति चिन्हेन निर्दिशत.....

प्रश्न : 4. निम्नलिखितशब्दाना लिङ्ग : लिखित.....

प्रश्न : 5. यस्य शब्दस्य या लिङ्ग: तेन सह योजयत.....

प्रश्न : 6. कोष्ठकात् उपयुक्तसर्वनामशब्द गृहीत्वा रिक्तस्थानानि पूरयत.....

प्रश्न : 7. रुपाणि लिखन्तु – यथा – लिख– वर्तमानकाले, प्रथमपुरुषस्य एकवचने

प्रश्न : 8. निम्नलिखितानि वाक्यानि संशोधयत.....

प्रश्न : 9. रिक्तस्थानानि पूरयत – विशेषणशब्दै :

प्रश्न :10. क–ख भाग संयोज्य युगलशब्दान् लिखत.....

प्रश्न 11. अधोलिखित क्रियापदाना पुरुषान् रिक्तस्थानानि पूरयत.....

उपर्युक्त प्रारूप में कारक, धातुरूप, शब्दरूप, लिङ्ग, प्रत्यय, सर्वनामशब्द, क्रिया, विशेषण, पुरुष आदि से **सम्बन्धित शब्द** एवं वाक्य देकर छात्रों की त्रुटियों का निदान किया जा सकता है ।

उपचारात्मक शिक्षण – छात्रों द्वारा की जाने वाली त्रुटियों के निवारणार्थ समुचित शिक्षण प्रक्रिया अपनाना ही उपचारात्मक शिक्षण है । शैक्षणिक निदान एवं उपचारात्मक शिक्षण एक ही शिक्षण प्रक्रिया के दो अभिन्न पहलू हैं । एक के अभाव में दूसरे का अस्तित्व निरर्थक है । शैक्षणिक निदान ही उपचारात्मक शिक्षण की आधार भूमि प्रस्तुत करता है ।

उपचारात्मक विधि का अर्थ स्पष्ट करते हुए स्किनर ने लिखा है– "उपचारात्मक विधि साधारणत : विशेष प्रकार के सीखने, व्यक्तित्व या आचरण सम्बन्धी जटिलताओं का अध्ययन करने और उनके अनुकूल विभिन्न प्रकार की उपचारात्मक विधि का प्रयोग करने के लिए काम में लाई जाती है । इस विधि का प्रयोग करने वालों का उद्देश्य यह ज्ञात करना होता है कि व्यक्ति की विशिष्ट आवश्यकताएँ क्या हैं, उसमें उत्पन्न होने वाली जटिलताओं के क्या कारण हैं और उनको दूर करके व्यक्ति को किस प्रकार सहायता दी जा सकती है ।"

उपचारात्मक शिक्षण के उद्देश्य –

1. छात्रों की व्यक्तिगत कठिनाइयों को दूर करना ।
2. पिछड़े बालकों को हीन भावना से बचाना ।
3. समय एवं शक्ति की बचत करना ।
4. अपराधी प्रवृत्ति के बालकों का उचित मार्ग निर्देशन करना ।
5. हकलाने, तुतलाने वाले बालकों की समस्या दूर करना ।
6. छात्रों को उनकी प्रगति का ज्ञान करवाकर पढ़ने के लिए प्रेरित करना ।
7. विषय के प्रति रुचि उत्पन्न करना ।
8. व्यक्तिगत विभिन्नता के आधार पर पढ़ाना ।
9. भाषा के स्तर को उन्नत करना ।
10. शिक्षण में मनोविज्ञान के सिद्धान्तों का अनुस्मण करना ।
11. छात्रों में प्रतिस्पर्धा की भावना भरना ।

उपचारात्मक शिक्षण की प्रक्रिया – में निम्नलिखित सिद्धान्तों का अनुकरण करना चाहिए–

1. प्रत्येक विषय में छात्र के स्तर के अनुसार उपचार का कार्य आरम्भ किया जाना चाहिए।
2. छात्र को उसकी प्रगति के विषय में प्रति सप्ताह सूचित किया जाना चाहिए।
3. उपचारात्मक शिक्षण देते समय छात्र को यह कभी न कहा जाए कि वह कमजोर अथवा पिछड़ा हुआ है। इससे उसमें हीन भावना उत्पन्न हो जाएगी, जिससे उसका अधिगम प्रभावित होगा।

उपचारात्मक अभ्यास मालाओं के निर्माण की प्रक्रिया –

1. निदानात्मक परीक्षणों से प्राप्त 'छात्रों की –त्रुटियों का विश्लेषण किया जाना चाहिए ।
2. त्रुटियों के कारणों का अध्ययन कर अलग– अलग अभ्यासमाला बनाई जानी चाहिए ।
3. एक प्रकार की त्रुटि पर विविध प्रकार के प्रश्न बनाए जाएँ ताकि सम्पूर्ण अभ्यास करवाया जा सके, जिनमें पर्याप्त विविधता हो ।
4. अभ्यासमालाओं में रखे गये अभ्यास पदों का उद्देश्य एवं त्रुटि के प्रकार और उसके कारणों को ध्यान में रखते हुए निर्माण किया जाए ।
5. अभ्यासमालाओं के निर्माण में शिक्षण–सूत्रों का अनुसरण किया जाए ।
6. अभ्यासमालाएँ परिवर्तनीय हों । अध्यापक को पूर्ण स्वतन्त्रता होनी चाहिए कि वह छात्रों पर प्रयोग कर उनमें संशोधन, परिवर्तन अथवा परिवर्धन कर सके ।

इस प्रकार निदानात्मक परीक्षणों के प्रत्येक विषय के आधार पर उपचारात्मक अभ्यासमालाएँ तैयार की जाती हैं । यहाँ उदाहरणस्वरूप. 'अयादि सन्धि' से सम्बन्धित उपचारात्मक अभ्यासमाला की एक कड़ी प्रस्तुत की जा रही है–

उपचारात्मक अभ्यासमाला

अयादि सन्धि:

प्रश्न 1. स्वरसन्धे: कति भेदा: सन्ति?

प्रश्न 2. 'भो + अति' इत्यक् पूर्वपदस्य अन्ते क: स्वर:?

प्रश्न 3. उत्तरपदस्य च आदौ कः स्वरः?

प्रश्न 4. द्वयो मेलनेन किं रूपं भवति?

प्रश्न 5. यदा ए, ऐ, ओ, औ इति स्वराणां परे कोऽपि स्वराः आयान्ति तदा कानि–कानि परिवर्तनानि भवन्ति?

अभ्यासः

सन्धि कुरु – उदा ने + अनम् (ए + अ = अय) न् + ए + अनम् = नयनम् (ए + अ = अय) हरे + ए = ... ।

जे + अः = ...। शे + अवम्..... ।

उदाहरण – (नै + अकः) (ऐ + अ = आय) न् + ऐ+ अक= नायकः

(ऐ + अ = आय) पै + अकः = ... । गै + अति = ...।

तस्मैं + अपि = ... । वध्वै फं इदम् = ... ।

उदाहरण – पो + इत्रम् = (पू + ओ + इत्रम्) प् + अव् + इत्रम् = पवित्रम् ।

(ओ + अ = अव) लो + अनम् = ... । भो + अति = ... ।

स्तो + अनम् = ... ।

उदाहरण – पौ + अक = प + औ + अकः (प + आव् + अकः) = पावकः

(औ + अ= आव) तौ + अपि – .... ।

नरौ + आप्नुतः = ... ।

द्वौ + अंत्र = ... ।

बालौ + इच्छा= ..... ।

पुनरावृत्ति प्रश्ना :

प्रश्न 1. सन्धिः कदा भवति?

प्रश्न 2. सन्धि विच्छेदं कुरु – नयनम् ,पवित्रम् ,लवित्रम् ।

प्रश्न 3. सन्धि कुरु – ए + अ, ऐ+ अ, ओ + अ, ओ + अ ।

13.14 संस्कृत शिक्षण में नवाचारों का भविष्य (Future of Innovation)

संस्कृत शिक्षण को रोचक बनाने के लिए विविध नवाचारों का उल्लेख पाठयोजनाओं सहित विस्तार से इस इकाई में दिया गया है । जहाँ तक इनके भविष्य का प्रश्न है इसका उत्तर स्पष्ट है, कि आज के इस हाईटेक युग में संस्कृत शिक्षण के लिए आधुनिक उपकरणो यथा –दूरदर्शन, संगणक आदि का विविध उपागमों तथा प्रतिमानों के अन्तर्गत प्रयोग किया जायेगा तब शिक्षण तो सरल, सुग्राह्य होगा ही साथ ही समाज में प्रचलित धारणा भी समाप्त हो जाएगी कि संस्कृत एक कठिन भाषा है । अधिकाधिक छात्र इस भाषा को पढ़ने के लिए प्रेरित होंगे ।

13.15 कतिपय सुझाव

1. जिस नवाचार से पढ़ाया जाने वाला पाठ रुचिकर बन सके उस पाठ विशेष के लिए उस ही नवाचार का प्रयोग करना चाहिए ।
2. नवाचार विशेष को आधार बनाकर पाठ योजना पूर्व में तैयार कर लेनी चाहिए ।
3. शिक्षण में जिन उपकरणों का प्रयोग किया जाना है उनको पूर्व में जाँच लेना चाहिए ।
4. शिक्षक को उस ही नवाचार का प्रयोग करना चाहिए जिसमें उसे आत्मविश्वास हो तथा जिसके प्रयोग में वह दक्ष हो ।

स्व–परख प्रश्न (Self Check Questions)

1. अभिक्रमित अनुदेशन की परिभाषा दीजिए ।
2. अभिक्रमित अनुदेशन के प्रकारों का उल्लेख कीजिए ।
3. संग्रन्थन उपागम के सोपान लिखिए ।
4. उपचारात्मक शिक्षण क्या है?
5. निदानात्मक परीक्षण का अर्थ लिखिए ।

13.16 सारांश (Summary)

प्रस्तुत इकाई में नवाचारों एवं उनका संस्कृत शिक्षण में उपयोग पर चर्चा की गई है ।

नवाचार का अर्थ – नव + अचार अर्थात् नव चिन्तन, नया आचरण, नया, दृष्टिकोण । शिक्षा में होने वाले नूतन आचारों को शैक्षिक नवाचार कहा जाता है ।

संस्कृत शिक्षण में नवाचार – संस्कृत शिक्षण में नवाचारों का प्रयोग पतञ्जलि के समय से ही प्रारम्भ हो गया था । तब से अब तक कई नये प्रयोग संस्कृत शिक्षण में समय–समय पर होते रहे हैं ।

विभिन्न नवाचार :

1. **सूक्ष्म शिक्षण –** शिक्षण कौशलों के प्रशिक्षण की एक विधि जिसमें शिक्षण की अवधि, विषय सामग्री एवं छात्र संख्या अल्प होती है ।
2. **हिल्दातबा का शिक्षण प्रतिमान –** यह भी अध्यापक शिक्षा के विकास की एक प्रविधि है जिसमें छात्र– अध्यापक अधिगम की समस्या का विश्लेषण कर उसका निदान तथा उपचार किया जाता है।
3. **समस्या–समाधान उपागम –** यह चिन्तन को बढ़ाने वाला उपागम है । इसके सोपान हैं– 1 समस्या या कठिनाई की अभिस्वीकृति 2 कठिनाई की समस्या के रूप में व्याख्या 3 समस्या समाधान के लिए कार्य । इसकी प्रक्रिया है– तथ्यों का संकलन, संगठन करना – विश्लेषण करना– निष्कर्ष निकालना – निष्कर्षों को प्रयोग में लाना ।
4. **प्रायोजनाकार्य –** प्रायोजना सामाजिक वातावरण में पूर्ण संलग्नता से किया जाने वाला उद्देश्य पूर्ण कार्य है ।

प्रकार :– 1. छात्रों की दृष्टि से – व्यक्तिगत एवं सामूहिक ।
2. समय की दृष्टि से – लघु एवं वृहद्

3. विषय की दृष्टि से – समस्यात्मक, अभ्यासात्मक, रचनात्मक एवं उपयोगात्मक ।

1. **दल शिक्षण –** ऐसी प्रणाली जिसमें कई व्यक्ति मिलकर सम्बन्धित अनुदेशात्मक क्रियाएँ कर शैक्षिक उद्देश्यों की प्राप्ति का प्रयास करते हैं ।
2. **पर्यवेक्षित अध्ययन –** ऐसी पद्धति जिसमें परम्परागत शिक्षण के दोषों को दूर करने का प्रयास किया जाता है । इसमें छात्र अध्यापक के मार्गदर्शन में अध्ययन करते हैं ।
3. **संगणकाधारित शिक्षण प्रतिमान –** कम्प्यूटर की सहायता से शिक्षण करना ।
4. **अभिक्रमित अनुदेशन –** स्वाधाय हेतु निर्मित पाठ्यवस्तु एवं शिक्षण की एक प्रविधि ।

प्रकार: – 1. रेखीय 2. शाखीय, 3. मैथेटिकसं, 4. कम्प्यूटराधारित ।

5. **संग्रन्धनोपागम –** वाक्यों के माध्यम सें भाषा शिक्षण की एक विधि ।
6. **निदानात्मक परीक्षण –** शिक्षा की प्रक्रिया में आये विकार को पहचानने की एक प्रक्रिया या विषय विशेष में किसी विद्यार्थी की कमजोरियों एवं अक्षमताओं को पहचानने की एक प्रक्रिया ।
7. **उपचारात्मक शिक्षण –** छात्रों द्वारा की जाने वाली त्रुटियों के निधरणार्थ किया जाने वाला शिक्षण।

13.17 स्व–परख प्रश्नों के उत्तर (Answer to Self Check Questions)

नोट. इस हेतु संबंधित अध्ययन सामग्री खण्ड का पुन: अध्ययन करें ।

13.18 मूल्यांकन प्रश्न (Unit End Questions)

1. 'नवाचार' को पारिभाषित कीजिए ।
2. संस्कृतशिक्षण में नवाचारों का क्या महत्व है?
3. 'सूक्ष्म शिक्षण उपागम' का प्रयोग भाषा शिक्षण के लिए विशेषत: उपयोगी है, कैसे?
4. ' हिल्दातबा महोदय के शिक्षण प्रतिमान' को और किस नाम से जाना जाता है?
5. संस्कृतशिक्षण में प्रायोजना कार्य हेतु कुछ शीर्षक निर्धारित कीजिए ।
6. दलशिक्षण के लाभ बताइए ।
7. सम्प्रेषण कौशल के विकास हेतु संस्कृत शिक्षक को कौन–कौन सी गतिविधियों का आयोजन विद्यालय में करना चाहिए ।
8. निदानात्मक परीक्षण किसे कहते हैं?
9. द्वितीय विभक्ति को लेकर संग्रन्थनोपागम के आधार पर एक पाठ योजना बनाइए ।
10. संस्कृत शिक्षण को रुचिकर बनाने में सङ्गणक की क्या भूमिका है?

13.19 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची एवं आगे अध्ययन हेतु पुस्तकें (References)

1. जॉयस एण्ड मार्शवेल — 'मॉडल्स ऑफ टीचिंग', प्रेन्टिस हाल, ब्रूसी इन्क, एन्ग्लेवुड क्लिप्स, न्यूजर्सी 1972
2. एलेन, डवाइटएण्ड रेयन, के .ए. — 'माइक्रो टीचिंग' रीडिंग मास.(यू एस .ए.) एडीशन – वेसले 1969
3. भाई योगेन्द्रजीत — 'शिक्षा के नवाचार' और नवीन प्रवृत्तियाँ 'विनोद पुस्तक मन्दिर'आगरा, 1992
4. कथूरिया, आर. पी. — 'माइक्रोटीचिग ट्रेनिंग फॉर इफेक्टिव टीचिंग' विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा, 1988 –89
5. ओड़, एल. के. — 'शिक्षा के नूतन आयाम' राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर – 1990
6. मित्तल सन्तोष — 'भाषाशिक्षणे नवाचारा:' 'नवचेतना पब्लिकेशन 7/398 मालवीय नगर, जयपुर, प्रथम संस्करण 2005
7. मित्तल सन्तोष — 'शैक्षिक तकनीकी एवं कक्षा कक्ष प्रबन्ध' राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर चतुर्थ संशोधित संस्करण, 2006

आदर्श पाठ योजना– 1

कक्षा–अष्टम विषय– संस्कृत विधा– गद्य प्रकरण–राजस्थानीय: मेला

शिक्षण उद्देश्य	व्यवहारगत परिवर्तन
1. ज्ञानात्मक्रम:–	
(अ)भाषा तत्वानां ज्ञानम्	i. छात्र भाषा तत्वानाम् प्रत्यभिज्ञानम्,प्रत्यास्मरण् च कर्तुम् शक्ष्यन्ति।
(ब) विषय वस्तुनां ज्ञानम्	ii. छात्रा: गधांशस्य सम्यक् ज्ञानम् कर्तुम् शक्ष्यन्ति।
	iii. छात्रा: नवीन कठिन शब्दानाम् च ज्ञानम् कर्तुम् शक्ष्यन्ति।
2. अर्थगृहण:–	i. छात्रा: धैर्य मनोयोग पूर्वक च श्रोतुम् कर्तुम् शक्ष्यन्ति।
(अ) श्रुत्वा अर्थग्रहणम्	ii. छात्र: श्रवणे शिष्टाचारस्य पालनम् करिष्यन्ति।
(ब)पठित्वा अर्थग्रहणम्	iii. छात्रा: पठित्वा भाषा तत्वानाम् अर्थग्रहणम् कर्तुम् शक्ष्यन्ति ।
	iv. छात्रा: केन्द्रीय भाव ग्रहणम् कर्तुम् समर्था: भविष्यन्ति।
3. अभिव्यक्तिकरणम् : –	i. छात्रा: शुद्ध वाचनं करिष्यन्ति।
(अ) वदित्वा अभिव्यक्तिकरणम्	ii. छात्रा: शुद्धभाषानाम् उत्तर दातुम् समर्था: भविष्यन्ती।
(ब) लिखित्वा अभिव्यक्तिकरणम्	iii. छात्रा: शब्दानाम् शुद्ध वर्तनी लिखितुं शक्ष्यन्ति|
	iv. छात्रा: व्याकरण सम्बद्ध भाषाया: प्रयोगा: कर्तुम समर्था भविष्यन्ती।
4. अभिवृतिम्:–	i. छात्रा: देश साहित्यं च प्रति आस्था निष्ठा च व्यक्त कर्तुम् समर्था: भविष्यन्ती।
उदात्तभावनाया: विकासम्	ii. छात्राणाम् सामाजिक मूल्येषु आस्था वर्धिष्य।
5. कौशलम्:– शुद्धस्पष्टश्च वाचनस्थदक्षता	**i.** छात्रा: शब्दानाम् वाक्यनाम् च विश्लेषण सश्लेषणं च कर्तुम् शक्ष्यन्ति

उद्योतन समग्रय: प्रोच्छनं वस्त्र,लपेट फ़लकं सामान्य कक्षोपयोगी उपकरणानि च।

पूर्वज्ञानम् : छात्रा: राजस्थानीया: मेला विषयो: समान्यरुपेण पूर्वमेव परिचिता सन्ति।

पाठोस्थापनम्

सं.	छात्राध्यापक क्रिया:	छात्रा: क्रिया:
1.	वयं कस्मिन प्रदेशे निवसाम:?	उ. वयं राजस्थान प्रदेशे निवसाम:|
2.	राजस्थानस्य प्रमुख लोक देवता: का: का: सन्ति?	उ. राजस्थानस्य प्रमुख लोक देवता वीर तेजाजी: गोगाजी: बाबा रामदेवजी सन्ति।
3.	तेषु सम्बन्धे जना: किं आयोजन्ते?	उ. तेषु समबन्धे जना: मेला: आयोजन्ते|
4.	मिलायाम् जना: किं कुर्वन्ति?	उ. मिलायाम् जना: परस्परं मिलन्ति|
5.	राजस्थानीया: मेला: किमरथम् प्रसद्धा सन्ति?	उ.समस्थमूलक
पाठ्यानिसुचम: अध वयं राजस्थानीया: मेला: सम्बन्धे अध्ययनं करिष्याम:।		

मानव समाजे -	ज्ञानात्मक वादित्वा अभि व्यक्तिकरणम्	आदर्शवाचनम्–छात्राध्यापक: उचित गत्यानुसाराम गधान्शस्थ आदर्शवाचनम् करिष्यति	छात्रा: मनोयोग पूर्वकं श्रोष्यन्ति।		
		अनुकरण वाचनम्–छात्राध्यापक: कतिपयन् छात्राण् गद्यान्शस्य वाचनाय आदेष्यति	निर्दिष्टा: छात्रा: उचित गत्यानुसारं वाचनम् करिष्यन्ति।	कथन प्रविधि	1. काश्चिन्मेला: 2. कस्मिंचिद् 3. समायोज्यन्ते 4. तत्रेत्यै:
समायोज्यन्ते स्म।	वादित्वा अभि व्यक्तिकरणम्	अशुद्धिसंशोधनम्–छात्राध्यापक: छात्रै अशुद्ध उच्चारित शब्दान श्यामपट्टोपेरि । लेखिष्यति। छात्र सहयोगेन शुद्धं कायित्व श्यामपट्टोपेरि लेखिष्यति च। बोध प्रश्ना:–	छात्रा: तेषाम् शुद्धोंच्चारणं करिष्यन्ति।	कथन प्रविधि	
		1. जना: स्वस्थानात् समगत्य कुत्र सम्मिलन्ति?	उ. जना: स्वस्थानात् समगत्य मेलायाम् सम्मिलन्ति।	प्रश्नोत्तर प्रविधि	
		2. करौली नगरे कस्य स्थाने मेला: समायोज्यते?	उ.करौली नगरे कैलुदिव्या: स्थाने मेला: समायोज्यते।		
		काठिन्य निवारणम्			
कठिन शब्दानां सश्लेषणं विश्लेषणं च।	ज्ञानात्मक्	**शब्दा**	**अर्था:** आकार के	**विधि/प्रविधि** संधि विच्छेद	**श्यामपट्टकार्यम** सम+आ+ गम+ल्यप्

		1. समगत्य 2. आगंतुकनाम् 3. समायोज्यते 4. तत्रेत्यैः 5. सर्वविदित	आने वालों का आयोजित किए जाते हैं। वहाँ इनके द्वारा सब जानते हैं	विधि वाक्य प्रयोग वाक्य प्रयोग संधि विच्छेद वाक्य प्रयोग	कोई <u>आगंतुक</u> द्वार पर खड़ा है। गरबा नृत्य के <u>समायोजन</u> पर सबने डांडिया किया। तत्र+एत्यैः मै आपको पढ़ा रहा हूँ यह बात आप सबको विदित है।
	लिखित्वा अभि व्यक्तिकरणम्				
	पठित्वा– अर्थग्रहणम्	मोनपढ़नम् – छात्राध्यापकः छात्रान् गदयांशस्थ मौन पाठयान आदिष्यति। निरीक्षणं करिष्यति च।	छात्राः गद्याशस्थ मौन पठनम् करिष्यति।		
		विचार विश्लेषणात्मक प्रश्नाः–			
		1. मानव समाजे केषाम् महत्वं प्रायः सर्वविदितमस्ति?	उ. मानव समाजे मेलानां महत्वं प्रायः सर्वविदितमस्ति		
मानव समाजे———— ———————— ————————		2. जनाः स्वस्थानात् समगत्या कुत्र सम्मिलन्ति?	उ. जनाः स्वस्थानात् समगत्या मेलायां सर्वविदितमस्ति		

—————————— —————— समायोज्यन्ते	वादित्वा अभिव्यक्तिकरणम्	3. मेलयाम् केषाम् आगमनस्य उद्देस्यमपि एकमेव भवते।	उ. मेलयाम् आगन्तुकनाम आगमनस्य उद्देस्यमपि एकमेव भवते।		प्रश्नोत्तर प्रविधि
		4. राजस्थान प्रान्ते श्री महावीरजी नामक नगरे कस्थ स्थाने मेला: समायोज्यते?	उ. राजस्थान प्रान्ते श्री महावीरजी नामक नगरे भगवतो महावीरस्य: स्थाने मेला: समायोज्यते।		
		5. वेणेश्वरमेला: कस्य नगरे समायोज्यते?	उ. वेणेश्वरमेला: डूंगरपुर मंडले समायोज्यते।		
		6. अजायमेरौ कस्य मेला: समायोज्यते?	अजायमेरौ ख्वाजा साहब मुइनूद्दीन चितस्य: मेला: समायोज्यते।		
		7. जैसलमर नगरे कस्य मेला: समायोज्यते?	जैसलमर नगरे बाबा रामदेवस्य: मेला: समायोज्यते		
		8. पर्वत सरस्थाने कस्य मेला भवति?	पर्वतसर स्थाने पशुमेला भवति।		

मूल्यांकन प्रश्ना:

1. कैलादेव्या: मेला कस्मिन् नगरे समायोजिता भवति?
   (अ) बीकानेर नगरे (ब)करौली नगरे

(स)जैसलमर नगरे (द)डुंगरपुर नगरे (ब)

2. जैसल्मेरुमण्डले कस्या: मेलाया: आयोजनं भवति?

(अ)श्री रामदेवस्य (ब)महावीरस्य

(स)कैलादिव्या: (द)वेणेश्वरस्थ (अ)

3. रिक्त स्थानानि पूर्तिं करुत–

(1) काश्चित् मेला: व्यापार: प्रमुखा:_ _ _ _ _।(भवति/भवन्ति)

(2) सर्वा: मेला: _ _ _ _ _ _एवं समायोजिता: भवन्ति। (आर्थिकभावनया/धार्मिकभावनया)

4. उपसर्गस्य निर्देशनं कुरुत–

(1) समागत्य–सम्+आ+गम्+ल्यप् प्रत्यय

(2) आगमनस्य–आ+गम् धातु।

5. संस्कृत मे अनुवाद कीजिये?

प्र. वेणेश्वर मेला कहाँ आयोजित होता है?

उ. वेणेश्वर मेला कुत्र समायोजित भवति?

गृहकार्यम–

प्र.राजस्थान प्रान्ते का: का: मेला: समायोजित: भवन्ति?

आदर्श पाठ योजना– 2

कक्षा– नवम् विषय– संस्कृत विधा– पद्य प्रकरण– मनुवचनम

उद्देश्य व्यवहारगतपरिवर्तनानि च।

शिक्षण उद्देश्य	**व्यवहारगत परिवर्तन**
1. **ज्ञानात्मक्रम:–**	(i) छात्रा : कठिन शब्द : उच्चारणस्य चभाषा तत्वानां ज्ञानम् प्रत्याभिज्ञानंकर्तुं शक्ष्यन्ति ।
(i) भाषा तत्वानां ज्ञानम्	(ii) छात्रा : कठिनशब्द : उच्चारणस्य च प्रत्यास्मरणंकर्तु शक्ष्यन्ति ।
(अ) उच्चारण, वर्तन	(iii) छात्रा: नवीन कठिन शब्दानां च ज्ञानं कर्तुंशक्ष्यन्ति ।
(ब) कठिन शब्दा:	(v) छात्रा: पद्यांशस्य ज्ञानंकर्तु शक्ष्यन्ति।
(iv) विषय-वस्तुन:ज्ञानम्	(vi) छात्रा : शुद्ध उच्चारण वर्तनी चविषये ज्ञास्यन्ति।
2. अर्थगृहण: –	(i) छात्रा : मनोयोगपूर्वक श्रोष्यन्ति ।
(अ) श्रुत्वा अर्थगृहणम्	(ii) छात्रा : श्रवणैशिष्टाचारस्य पालन करिष्यन्ति।
(ब) पठित्वा अर्थगृहणम्	(iii) छात्रा : कठिन शब्दान् पठित्वा अर्थग्रहण कर्तुं शक्ष्यन्ति।
3. अभिव्यक्तिकरणम् :–	(i) छात्रा: पद्यांश सुश्रव्यवाणयां वक्तुं शक्ष्यन्ति।
(अ) वदित्वा अभिव्यक्तिकरणम्	(ii) छात्रा: शुद्धभाषानाम् उत्तर दातुं समर्था: भविष्यन्ति।
(ब) लिखित्वा अभिव्यक्तिकरणम्	(iii) छात्राणं लेखन शोभनं सुपाठ्यं च भविष्यति।
	(iv) छात्रा: शब्दानां शुद्ध वर्तनी लेखितुम् शक्ष्यन्ति।
4. अभिवृतिम् : –	(i) छात्राणा संस्कृत भाषा साहित्यं च प्रति रुचि वर्धिष्यते ।
संस्कृत भाषां साहित्य च प्रति रुचि जागरणम् ।	(ii) छात्रा: नीतिसूक्तिना संग्रह कर्तुं शक्ष्यन्ति ।
5. कौशलम्: –	(i) छात्रा : भावानुकूल उचित लयस्वर यति–गति पूर्वक च वाचन कर्तुं समर्था: भविष्यन्ति ।
शुद्ध स्पष्टश्च वाचनस्थ दक्षता	(ii) छात्रा: शुद्ध स्पष्टश्च भाषाया वाचन कर्तुं शक्ष्यन्ति ।
6. अभिवृतिम्	(i) छात्रा: सद्वृतिं सम्मतं आचरणं कर्तुं

	शक्ष्यन्ति
उदात्तभावनाया: विकासम्	(ii) छात्रा: स्वकार्यं निष्ठापूर्वकं कर्तुं शक्ष्यन्ति ।

उद्योतन समग्रय: प्रोच्छनं वस्त्र,लपेट फ़लकं सामान्य कक्षोपयोगी उपकरणानि च।

पूर्वज्ञानम् : छात्रा: राजस्थानीया: मेला विषयो: समान्यरुपेण पूर्वमेव परिचिता सन्ति।

पाठोस्थापनम्

सं	**छात्राध्यापक क्रिया:**	**छात्रा: क्रिया:**
1.	सनातन धर्म: क: अस्ति?	उ. सत्यं ब्रूयात् प्रियं ब्रूयात् एष: धर्म: सनातन:।
2.	भुक्ता किं न आचरेत्?	उ. भुक्ला सान न आचरेत् ।
3.	प्रसन्नता शब्दस्य पर्यायवाची शब्द: किं अस्ति?	उ. खुशी, उत्साह, आनन्द आदि:।
4.	य: पुरुष: दुर् आचरण करोति तान् क: कथ्यते?	उ. य: पुरुष: दुर आचरण करोति तान् दुराचारी कथ्यते ।
5.	दुराचारी पुरुषस्य विषये यूयं किं जानीथ?	उ. संभावित उत्तर ।

पाठ्यामिसूचनाम् : अध वयं मनु–वचनम् पद्यांशे संतोषी, दुराचारी पुरुषस्य विषये अध्ययन करिष्याम ।

शिक्षण बिन्दु/उद्देश्य	छात्राध्यापक क्रियायें	छात्र क्रियाएं	विधि/प्रविधि सहायक सामग्री	श्यामपट्ट सारांश
ज्ञानात्मक - भाषा तत्वानां ज्ञानम् कठिन शब्दा ———अल्पायुरेव॥ यांततापितरों—— वर्षशतैरापि॥ पठित्वाअर्थग्रहणं पठित्वाअर्थग्रहणं लिखित्वा अभिव्यक्तिकरणं । पठित्वाअर्थग्रहणं लिखित अभिव्यक्तिकरणं।	**आदर्शवाचनम्–** छात्राध्यापिका पदयांशस्य यति–यति आरोह अवरोह पूर्वकं आदर्शवाचन करिष्यति। **अनुवाचनम्–** छात्राध्यापिका पदयांशस्य पदान्वयकृत्वा वाचनं करिष्यति छात्रान् अनुवाचनाय आदिष्यति च। **अनुकरणवाचनम** छात्राध्यापिका छात्रान् पदयांशस्य यति–यति आरोह–अवरोह पूर्वक वाचनाय आदिष्यति। **परच्छेदः–** परमस्थाय -परम+ आस्थाय व्याधितोअल्पायुरेव– व्याधितः+अल्प+आयुः+एव। वर्षशतैरापि–वर्ष+शतै+अपि। **अपेक्षितशब्दार्थः** छात्राध्यापिके पदद्ये आगत	छात्र मनोयोग पूर्वक श्रोष्यन्ति। छात्राः निर्देशानुसारं अनुवाचनं करिष्यन्ति। छात्राः निर्देशानुसारं अनुकरणवाचनं करिष्यन्ति। छात्राः स्व–स्व उत्तर -		
			शबदः	अर्थः
			आस्थाय	स्वीकृत करने वाला

लिखित्वा अभिव्यक्तिकरणं।	कठिनशब्दान् अर्थान् श्यामपट्टे प्रस्तुतं करिष्यन्ति छात्रान् लेखितुम् निर्देश दास्यति च। **लिखित एवं निरीक्षणकार्यम्** छात्राध्यापिका छात्रै: लिखित कार्यस्य निरीक्षणं कार्यं करिष्यति। **अपेक्षितशब्दार्थ :** **पुनःसस्वरवाचनम्** छात्राध्यापिका पदयांशस्य यति–गति आरोह–अवरोह	पुस्तिकासु कठिन शब्दान् अर्थान् लेखिष्यन्ति छात्र श्रोष्यन्ति। स्वीकार करके।	सुखार्थी संयतों विपर्यय दुराचर: लोके निन्दित दु:खभागी सततं मातापितरौ संभवे क्लेशं सहेते नृणाम् निष्कृति वर्षशतै: अपि	सुख को चाहने वाला। संयमशील विपरीत बुरा आचरण। संसार मे। अपयश दु:ख को प्राप्त करनेवाला। निरन्तर माता और पिता होने मे। दु:ख। सहते हैं। मनुष्य को छुटकारा प्रायश्चित सौ वर्षों तक भी

श्रुत्वा अर्थग्रहणं श्रुत्वा अर्थग्रहणं उक्त्वा अभिव्यक्तिकरणं श्रुत्वा अर्थग्रहणं लिखित्वा अभिव्यक्तिकरणं	पूर्वकं पुनः सस्वर वाचनं करिष्यति। भाव बोध प्रश्न : – 1. आस्थाय पदस्य किं अर्थमस्ति? 2. सुखम् इच्छित: किं कथयाते? 3. क: पुरुष: लोके निन्दित: भवति? 4. दुराचारी कानि उतणीडितोअस्ति? 5. मातापितरौं कान् क्लेशं सहेते? सौंदर्यनुभूति प्रश्ना: 1.किं परमास्थाय? 2. सुखं मूलं किमस्ति? 3. दु:खं मूलं किमस्ति? 4.असंतोष: कस्य मूलमस्ति? 5.क: सततं दु:खभागी अस्ति? 6.कार्यव्याधितोअल्पायु: एव	सुखार्थी। दुराचारी। व्याधित:। नृणाम् संभवे। संतोषं। संतोषं। असंतोषं। दु:खस्य। दुराचारी। दुराचारी पुरुषस्य। मातापितरौ।		

	भवति? 7.नृणाम् संभवे का क्लेशं सहेते? 8.तस्य निष्कृति कर्तुं वर्षै अपि?	वर्षशतै:अपि		

मूल्यांकन प्रश्ना:

सही उत्तर दीजिये:–

1. संतोषंमूलं ही अस्ति -
   (अ)सुखं (ब)दु:खं
   (स)कार्यं (द)भ्रमणं (अ)
2. दु:ख मूलं विपर्यय:।(जीवनं/ दु:ख)
3. लोके भवति निन्दित:।(कीर्ति/ दु:ख)
4. यं मातापितरौ क्लेशं सहेते। (मातापितरौ/कर्मण्यौ)
5. कर्तुं शक्या: वर्ष शतैं अपि ।(दशै:/शतै:)

गृहकार्यम्–

–कठिनशब्दानां उच्चारंकृत्य लिखत:।